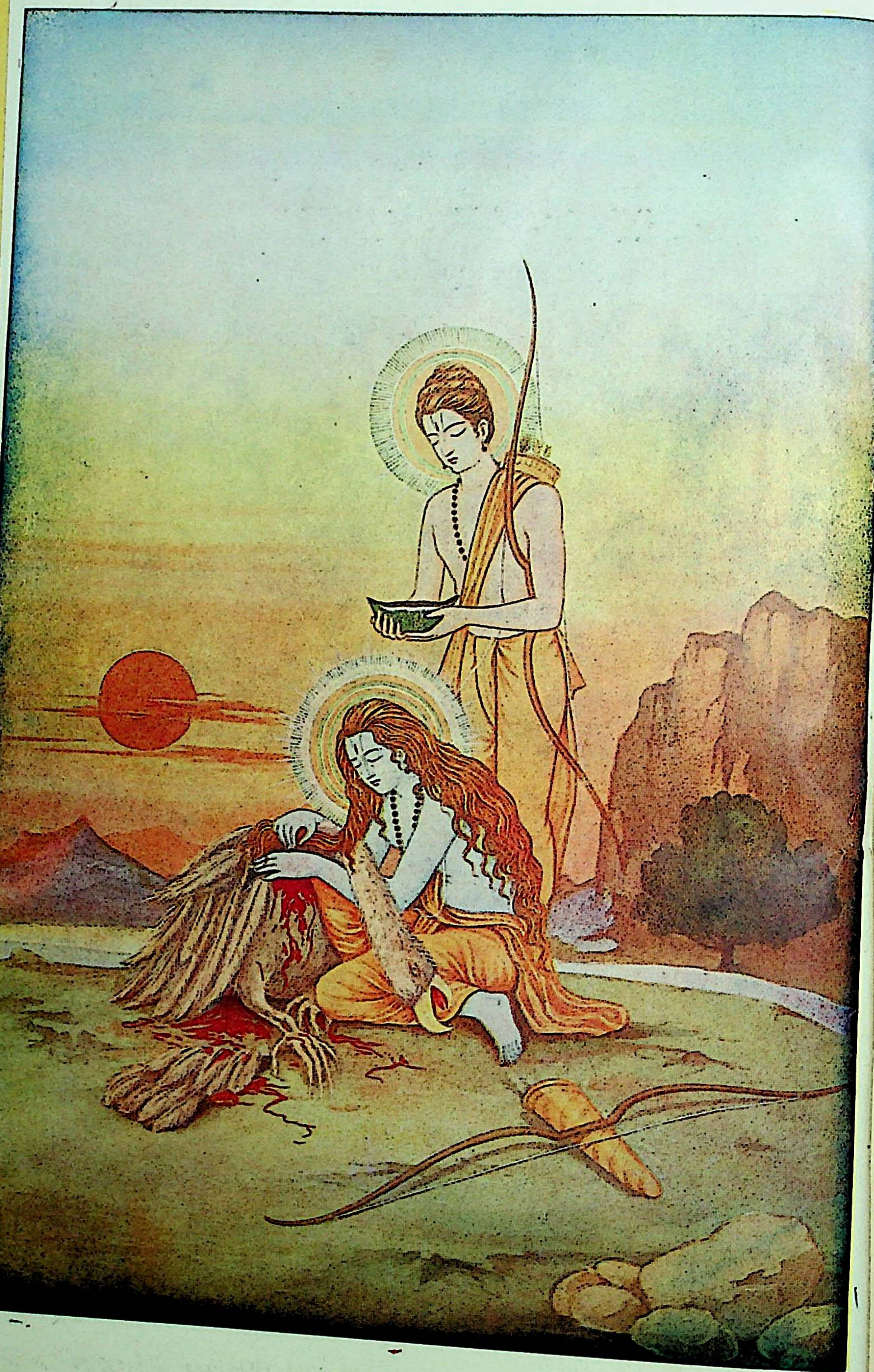
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri



श्रीराम-जटायु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

तृतीय सोपान

अरण्यकाण्ड

श्लोक

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम् ।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ स्वःसम्भवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलङ्कशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥ १ ॥

धर्मरूपी वृक्षके मूल, विवेकरूपी समुद्रको आनन्द देनेवाले पूर्णचन्द्र, वैराग्यरूपी कमलके [विकसित करनेवाले] सूर्य, पापरूपी घोर अन्धकारको निश्चय ही मिटानेवाले, तीनों तापोंको हरनेवाले, मोहरूपी बादलोंके समूहको छिन्न-भिन्न करनेकी विधि (क्रिया) में आकाशसे उत्पन्न पवनस्वरूप, ब्रह्माजीके वंशज (आत्मज) तथा कलङ्कनाशक, महाराज श्रीरामचन्द्रजीके प्रिय श्रीशंकरजीकी मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

सान्द्रानन्दपयोदसौभगतनुं पीताम्बरं सुन्दरं
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारं वरम् ।
राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं भजे ॥ २ ॥

जिनका शरीर जलयुक्त मेघोंके समान सुन्दर (श्यामवर्ण) एवं आनन्दघन है, जो सुन्दर [वल्कलका] पीतवस्त्र धारण किये हैं, जिनके हाथोंमें बाण और धनुष हैं, कमर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम तरकसके भारसे सुशोभित है, कमलके समान विशाल नेत्र हैं और मस्तक जटाजूट धारण किये हैं, उन अत्यन्त शोभायमान श्रीसीताजी और लक्ष्मणजीसहि मार्गमें चलते हुए, आनन्द देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको मैं भजता हूँ ॥ २ ॥

सो०—उमा राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति ।
पावहिं मोह बिमूढ़ जे हरि बिमुख न धर्म रति ॥

हे पार्वती ! श्रीरामजीके गुण गूढ़ हैं, पण्डित और मुनि उन्हें समझकर वैरा प्राप्त करते हैं । परन्तु जो भगवान्‌से विमुख हैं और जिनका धर्ममें प्रेम नहीं है, महामूढ़ [उन्हें सुनकर] मोहको प्राप्त होते हैं ।

चौ०—पुर नर भरत प्रीति मैं गाई । मति अनुरूप अनूप सुहाई ।
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन । करत जे बन सुर नर मुनि भावन ।

पुरवासियोंके और भरतजीके अनुपम और सुन्दर प्रेमका मैंने अपनी बुद्धि अनुसार गान किया । अब देवता, मनुष्य और मुनियोंके मनको भानेवाले प्र श्रीरामचन्द्रजीके वे अत्यन्त पवित्र चरित्र सुनो, जिन्हें वे वनमें कर रहे हैं ॥ १ ॥

एक बार चुनि कुसुम सुहाए । निज कर भूषन राम बनाए ।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर । बैठे फटिक सिला पर सुंदर ।

एक बार सुन्दर फूल चुनकर श्रीरामजीने अपने हाथोंसे भाँति-भाँतिके गहने बना और सुन्दर स्फटिकशिलापर बैठे हुए प्रभुने आदरके साथ वे गहने श्रीसीताजीको पहनाये ।२

सुरपति सुत धरि बायस बेषा । सठ चाहत रघुपति बल देखा ।
जिमि पिपीलिका सागर थाहा । महा मंदमति पावन चाहा ।

देवराज इन्द्रका मूर्ख पुत्र जयन्त कौएका रूप धरकर श्रीरघुनाथजीका बल देखना चाहता है । जैसे महान् मन्दबुद्धि चींटी समुद्रका थाह पाना चाहती हो ॥ ३ ॥

सीता चरन चोंच हति भागा । मूढ़ मंदमति कारन कागा ।
चला रुधिर रघुनायक जाना । सींक धनुष सायक संधाना ॥

वह मूढ़, मन्दबुद्धि कारणसे (भगवान्‌के बलकी परीक्षा करनेके लिये) बना हुआ कौआ सीताजीके चरणोंमें चोंच मारकर भागा । जब रक्त बह चला, तब श्रीरघुनाथजीने जाना और धनुषपर सींक (सरकंडे) का बाण सन्धान किया ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—अति कृपाल रघुनायक सदा दीन पर नेह ।
ता सन आइ कीन्ह छलु मूरख अवगुन गेह ॥ १ ॥

श्रीरघुनाथजी, जो अत्यन्त ही कृपालु हैं और जिनका दीनोंपर सदा प्रेम रहता है, उनसे भी उस अवगुणोंके घर मूर्ख जयन्तने आकर छल किया ॥ १ ॥

चौ०—प्रेरित मंत्र ब्रह्मसर धावा । चला भाजि बायस भय पावा ॥
धरि निज रूप गयउ पितु पाहीं । राम बिमुख राखा तेहि नाहीं ॥

मन्त्रसे प्रेरित होकर वह ब्रह्मबाण दौड़ा । कौआ भयभीत होकर भाग चला । वह अपना असली रूप धरकर पिता इन्द्रके पास गया, पर श्रीरामजीका विरोधी जानकर इन्द्रने उसको नहीं रक्खा ॥ १ ॥

भा निरास उपजी मन त्रासा । जथा चक्र भय रिषि दुर्बासा ॥
ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोका । फिरा श्रमित ब्याकुल भय सोका ॥

तब वह निराश हो गया, उसके मनमें भय उत्पन्न हो गया; जैसे दुर्वासा ऋषिको चक्रसे भय हुआ था । वह ब्रह्मलोक, शिवलोक आदि समस्त लोकोंमें थका हुआ और भय-शोकसे व्याकुल होकर भागता फिरा ॥ २ ॥

काहूँ बैठन कहा न ओही । राखि को सकइ राम कर द्रोही ॥
मातु मृत्यु पितु समन समाना । सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना ॥

[पर रखना तो दूर रहा] किसीने उसे बैठनेतकके लिये नहीं कहा ! श्रीरामजीके द्रोहीको कौन रख सकता है ? [काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़ ! सुनिये, उसके लिये माता मृत्युके समान, पिता यमराजके समान और अमृत विषके समान हो जाता है ।

मित्र करइ सत रिपु कै करनी । ता कहँ बिबुधनदी बैतरनी ॥
सब जगु ताहि अनलहु ते ताता । जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता ॥

मित्र सैकड़ों शत्रुओंकी-सी करनी करने लगता है । देवनदी गङ्गाजी उसके लिये वैतरणी (यमपुरीकी नदी) हो जाती है । हे भाई ! सुनिये, जो श्रीरघुनाथजीके विमुख होता है, समस्त जगत् उसके लिये अग्निसे भी अधिक गरम (जलानेवाला) हो जाता है ।

नारद देखा बिकल जयंता । लागि दया कोमल चित संता ॥
पठवा तुरत राम पहिं ताही । कहेसि पुकारि प्रनत हित पाही ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नारदजीने जयन्तको व्याकुल देखा तो उन्हें दया आ गयी; क्योंकि संतोंका हृ
बड़ा कोमल होता है। उन्होंने उसे [समझाकर] तुरंत श्रीरामजीके पास भेज दिया। उ
[जाकर] पुकारकर कहा—हे शरणागतके हितकारी ! मेरी रक्षा कीजिये ॥ ५ ॥

आतुर सभय गहेसि पद जाई। त्राहि त्राहि दयाल रघुराई॥
अतुलित बल अतुलित प्रभुताई। मैं मतिमंद जानि नहिं पाई॥

आतुर और भयभीत जयन्तने जाकर श्रीरामजीके चरण पकड़ लिये [और कहा—
हे दयालु रघुनाथजी ! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये। आपके अतुलित बल और आपक
अतुलित प्रभुता (सामर्थ्य) को मैं मन्दबुद्धि जान नहीं पाया था ॥ ६ ॥

निज कृत कर्म जनित फल पायउँ। अब प्रभु पाहि सरन तकि आयउँ॥
सुनि कृपाल अति आरत बानी। एकनयन करि तजा भवानी॥

अपने किये हुए कर्मसे उत्पन्न हुआ फल मैंने पा लिया। अब हे प्रभु ! मेरी
रक्षा कीजिये ! मैं आपकी शरण तककर आया हूँ। [शिवजी कहते हैं—] हे
पार्वती ! कृपालु श्रीरघुनाथजीने उसकी अत्यन्त आर्त्त (दुःखभरी) वाणी सुनकर
उसे एक आँखका काना करके छोड़ दिया ॥ ७ ॥

सो०—कीन्ह मोह बस द्रोह जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुबीर सम ॥ २ ॥

उसने मोहवश द्रोह किया था, इसलिये यद्यपि उसका वध ही उचित था, पर
प्रभुने कृपा करके उसे छोड़ दिया। श्रीरामजीके समान कृपालु और कौन होगा ? ॥ २ ॥

चौ०—रघुपति चित्रकूट बसि नाना। चरित किए श्रुति सुधा समाना॥
बहुरि राम अस मन अनुमाना। होइहि भीर सबहिं मोहि जाना॥

चित्रकूटमें बसकर श्रीरघुनाथजीने बहुत-से चरित्र किये, जो कानोंको अमृतके
समान [प्रिय] हैं। फिर (कुछ समय पश्चात्) श्रीरामजीने मनमें ऐसा अनुमान किया
कि मुझे सब लोग जान गये हैं, इससे [यहाँ] बड़ी भीड़ हो जायगी ॥ १ ॥

सकल मुनिन्ह सन बिदा कराई। सीता सहित चले द्वौ भाई॥
अत्रि के आश्रम जब प्रभु गयऊ। सुनत महामुनि हरषित भयऊ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[इसलिये] सब मुनियोंसे विदा लेकर सीताजीसहित दोनों भाई चले। जब प्रभु अत्रिजीके आश्रममें गये, तो उनका आगमन सुनते ही महामुनि हर्षित हो गये॥ २॥

पुलकित गात अत्रि उठि धाए। देखि रामु आतुर चलि आए॥
करत दंडवत मुनि उर लाए। प्रेम बारि द्वौ जन अन्हवाए॥

शरीर पुलकित हो गया, अत्रिजी उठकर दौड़े। उन्हें दौड़े आते देखकर श्रीरामजी और भी शीघ्रतासे चले आये। दण्डवत् करते हुए ही श्रीरामजीको [उठाकर] मुनिने हृदयसे लगा लिया और प्रेमाश्रुओंके जलसे दोनों जनोंको (दोनों भाइयोंको) नहला दिया॥ ३॥

देखि राम छबि नयन जुड़ाने। सादर निज आश्रम तब आने॥
करि पूजा कहि बचन सुहाए। दिए मूल फल प्रभु मन भाए॥

श्रीरामजीकी छबि देखकर मुनिके नेत्र शीतल हो गये। तब वे उनको आदरपूर्वक अपने आश्रममें ले आये। पूजन करके, सुन्दर वचन कहकर मुनिने मूल और फल दिये, जो प्रभुके मनको बहुत रुचे॥ ४॥

सो०—प्रभु आसन आसीन भरि लोचन सोभा निरखि।
मुनिबर परम प्रबीन जोरि पानि अस्तुति करत॥ ३॥

प्रभु आसनपर विराजमान हैं। नेत्र भरकर उनकी शोभा देखकर परम प्रवीण मुनिश्रेष्ठ हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे—॥ ३॥

छं०—नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं॥
भजामि ते पदांबुजं। अकामिनां स्वधामदं॥ १॥

हे भक्तवत्सल! हे कृपालु! हे कोमल स्वभाववाले! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निष्काम पुरुषोंको अपना परमधाम देनेवाले आपके चरणकमलोंको मैं भजता हूँ॥ १॥

निकाम श्याम सुंदरं। भवांबुनाथ मंदरं॥
प्रफुल्ल कंज लोचनं। मदादि दोष मोचनं॥ २॥

आप नितान्त सुन्दर, श्याम, संसार (आवागमन) रूपी समुद्रको मथनेके लिये मन्दराचलरूप, फूले हुए कमलके समान नेत्रोंवाले और मद आदि दोषोंसे छुड़ानेवाले हैं। २।

प्रलंब बाहु विक्रमं। प्रभोऽप्रमेय वैभवं॥
निषंग चाप सायकं। धरं त्रिलोक नायकं॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे प्रभो ! आपकी लंबी भुजाओंका पराक्रम और आपका ऐश्वर्य अप्रमेय (बुद्धिके परे अथवा असीम) है। आप तरकस और धनुष-बाण धारण करनेवाले तीनों लोकोंके स्वामी,।३।

दिनेश वंश मंडनं। महेश चाप खंडनं॥
मुनींद्र संत रंजनं। सुरारि बृंद भंजनं॥ ४॥

सूर्यवंशके भूषण, महादेवजीके धनुषको तोड़नेवाले, मुनिराजों और संतोंको आनन्द देनेवाले तथा देवताओंके शत्रु असुरोंके समूहका नाश करनेवाले हैं ॥ ४॥

मनोज वैरि वंदितं। अजादि देव सेवितं॥
विशुद्ध बोध विग्रहं। समस्त दूषणापहं॥ ५॥

आप कामदेवके शत्रु महादेवजीके द्वारा वन्दित, ब्रह्मा आदि देवताओंसे सेवित, विशुद्ध ज्ञानमय विग्रह और समस्त दोषोंको नष्ट करनेवाले हैं ॥ ५॥

नमामि इंदिरा पतिं। सुखाकरं सतां गतिं॥
भजे सशक्ति सानुजं। शची पति प्रियानुजं॥ ६॥

हे लक्ष्मीपते ! हे सुखोंकी खान और सत्पुरुषोंकी एकमात्र गति ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे शचीपति (इन्द्र) के प्रिय छोटे भाई (वामनजी) ! स्वरूपा-शक्ति, श्रीसीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित आपको मैं भजता हूँ ॥ ६॥

त्वदंघ्रि मूल ये नराः। भजंति हीन मत्सराः॥
पतंति नो भवार्णवे। वितर्क वीचि संकुले॥ ७॥

जो मनुष्य मत्सर (डाह) रहित होकर आपके चरणकमलोंका सेवन करते हैं, वे तर्क-वितर्क (अनेक प्रकारके सन्देह) रूपी तरंगोंसे पूर्ण संसाररूपी समुद्रमें नहीं गिरते (आवागमनके चक्करमें नहीं पड़ते) ॥ ७॥

विविक्त वासिनः सदा। भजंति मुक्तये मुदा॥
निरस्य इंद्रियादिकं। प्रयांति ते गतिं स्वकं॥ ८॥

जो एकान्तवासी पुरुष मुक्तिके लिये, इन्द्रियादिका निग्रह करके (उन्हें विषयोंसे हटा-कर) प्रसन्नतापूर्वक आपको भजते हैं वे स्वकीयगतिको (अपने स्वरूपको) प्राप्त होते हैं॥ ८॥

तमेकमद्भुतं प्रभुं। निरीहमीश्वरं विभुं॥
जगद्गुरुं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं॥ ९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन (आप) को जो एक (अद्वितीय), अद्भुत (मायिक जगत्से विलक्षण), प्रभु (सर्वसमर्थ), इच्छारहित, ईश्वर (सबके स्वामी), व्यापक, जगद्गुरु, सनातन (नित्य), तुरीय (तीनों गुणोंसे सर्वथा परे) और केवल (अपने स्वरूपमें स्थित) हैं ॥९॥

भजामि भाव वल्लभं । कुयोगिनां सुदुर्लभं ॥
स्वभक्त कल्प पादपं । समं सुसेव्यमन्वहं ॥१०॥

[तथा] जो भावप्रिय, कुयोगियों (विषयी पुरुषों) के लिये अत्यन्त दुर्लभ, अपने भक्तोंके लिये कल्पवृक्ष (अर्थात् उनकी समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाले), सम (पक्षपातरहित) और सदा सुखपूर्वक सेवन करनेयोग्य हैं, मैं निरन्तर भजता हूँ ॥१०॥

अनूप रूप भूपतिं । नतोऽहमुर्विजा पतिं ॥
प्रसीद मे नमामि ते । पदाब्ज भक्ति देहि मे ॥११॥

हे अनुपम सुन्दर ! हे पृथ्वीपति ! हे जानकीनाथ ! मैं आपको प्रणाम करता हूँ । मुझ-पर प्रसन्न होइये, मैं आपको नमस्कार करता हूँ । मुझे अपने चरणकमलोंकी भक्ति दीजिये ।

पठंति ये स्तवं इदं । नरादरेण ते पदं ॥
व्रजंति नात्र संशयं । त्वदीय भक्ति संयुताः ॥१२॥

जो मनुष्य इस स्तुतिको आदरपूर्वक पढ़ते हैं, वे आपकी भक्तिसे युक्त होकर आपके परमपदको प्राप्त होते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥१२॥

दो०—बिनती करि मुनि नाइ सिरु कह कर जोरि बहोरि ।
चरन सरोरुह नाथ जनि कबहुँ तजै मति मोरि ॥ ४ ॥

मुनिने [इस प्रकार] विनती करके और फिर सिर नवाकर, हाथ जोड़कर कहा—हे नाथ ! मेरी बुद्धि आपके चरणकमलोंको कभी न छोड़े ॥ ४ ॥

चौ०—अनुसुइया के पद गहि सीता । मिली बहोरि सुसील बिनीता ॥
रिषिपतिनी मन सुख अधिकाई । आसिष देइ निकट बैठाई ॥

फिर परम शीलवती और विनम्र श्रीसीताजी [अत्रिजीकी पत्नी] अनसूयाजीके चरण पकड़कर उनसे मिलीं । ऋषिपत्नीके मनमें बड़ा सुख हुआ । उन्होंने आशिष देकर सीताजीको पास बैठा लिया—॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दिब्य बसन भूषन पहिराए। जे नित नूतन अमल सुहाए॥
कह रिषिबधू सरस मृदु बानी। नारिधर्म कछु ब्याज बखानी॥

और उन्हें ऐसे दिव्य वस्त्र और आभूषण पहनाये, जो नित्य-नये निर्मल और सुहावने बने रहते हैं। फिर ऋषिपत्नी उनके बहाने मधुर और कोमल वाणीसे स्त्रियोंके कुछ धर्म बखानकर कहने लगीं—॥ २॥

मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी॥
अमित दानि भर्ता बयदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही॥

हे राजकुमारी! सुनिये—माता, पिता, भाई सभी हित करनेवाले हैं, परन्तु ये सब एक सीमातक ही [सुख] देनेवाले हैं। परन्तु हे जानकी! पति तो [मोक्षरूप] असीम [सुख] देनेवाला है। वह स्त्री अधम है जो ऐसे पतिकी सेवा नहीं करती॥ ३॥

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी॥
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना॥

धैर्य, धर्म, मित्र और स्त्री—इन चारोंकी विपत्तिके समय ही परीक्षा होती है। वृद्ध, रोगी, मूर्ख, निर्धन, अंधा, बहरा, क्रोधी और अत्यन्त ही दीन—॥ ४॥

ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना॥
एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा॥

ऐसे भी पतिका अपमान करनेसे स्त्री यमपुरमें भाँति-भाँतिके दुःख पाती है। शरीर, वचन और मनसे पतिके चरणोंमें प्रेम करना स्त्रीके लिये, बस, यह एक ही धर्म है, एक ही व्रत है और एक ही नियम है॥ ५॥

जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं॥
उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं॥

जगत्‌में चार प्रकारकी पतिव्रताएँ हैं। वेद, पुराण और संत सब ऐसा कहते हैं कि उत्तम श्रेणीकी पतिव्रताके मनमें ऐसा भाव बसा रहता है कि जगत्‌में [मेरे पतिको छोड़कर] दूसरा पुरुष स्वप्नमें भी नहीं है॥ ६॥

मध्यम परपति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें॥
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकिष्ट त्रिय श्रुति अस कहई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मध्यम श्रेणीकी पतिव्रता पराये पतिको कैसे देखती है, जैसे वह अपना सगा भाई, पिता या पुत्र हो। (अर्थात् समान अवस्थावालेको वह भाईके रूपमें देखती है, बड़ेको पिताके रूपमें और छोटेको पुत्रके रूपमें देखती है।) जो धर्मको विचारकर और अपने कुलकी मर्यादा समझकर बची रहती है वह निकृष्ट (निम्न श्रेणीकी) स्त्री है, ऐसा वेद कहते हैं ॥ ७ ॥

बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई ॥
पति बंचक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प सत परई ॥

और जो स्त्री मौका न मिलनेसे या भयवश पतिव्रता बनी रहती है, जगत्में उसे अधम स्त्री जानना। पतिको धोखा देनेवाली जो स्त्री पराये पतिसे रति करती है, वह तो सौ कल्पतक रौरव नरकमें पड़ी रहती है ॥ ८ ॥

छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी ॥
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिब्रत धर्म छाड़ि छल गहई ॥

क्षणभरके सुखके लिये जो सौ करोड़ (असंख्य) जन्मोंके दुःखको नहीं समझती, उसके समान दुष्टा कौन होगी! जो स्त्री छल छोड़कर पातिव्रत-धर्मको ग्रहण करती है, वह बिना ही परिश्रम परम गतिको प्राप्त करती है ॥ ९ ॥

पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई ॥

किन्तु जो पतिके प्रतिकूल चलती है वह जहाँ भी जाकर जन्म लेती है, वहीं जवानी पाकर (भरी जवानीमें) विधवा हो जाती है ॥ १० ॥

सो०—सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥ ५(क) ॥

स्त्री जन्मसे ही अपवित्र है, किन्तु पतिकी सेवा करके वह अनायास ही शुभ गति प्राप्त कर लेती है। [पातिव्रत-धर्मके कारण ही] आज भी 'तुलसीजी' भगवान्को प्रिय हैं और चारों वेद उनका यश गाते हैं ॥ ५ (क) ॥

सुनु सीता तव नाम सुमिरि नारि पतिब्रत करहिं।
तोहि प्रानप्रिय राम कहिउँ कथा संसार हित ॥ ५(ख) ॥

हे सीता! सुनो, तुम्हारा तो नाम ही ले-लेकर स्त्रियाँ पातिव्रत-धर्मका पालन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करेंगी । तुम्हें तो श्रीरामजी प्राणोंके समान प्रिय हैं; (यह पातिव्रत-धर्मकी) कथा तो मैंने संसारके हितके लिये कही है ॥ ५ (ख) ॥

चौ०—सुनि जानकीं परम सुखु पावा । सादर तासु चरन सिरु नावा ।
तब मुनि सन कह कृपानिधाना । आयसु होइ जाउँ बन आना ।

जानकीजीने सुनकर परम सुख पाया और आदरपूर्वक उनके चरणोंमें सिर नवाया तब कृपाकी खान श्रीरामजीने मुनिसे कहा—आज्ञा हो तो अब दूसरे वनमें जाऊँ ॥ १ ॥

संतत मो पर कृपा करेहू । सेवक जानि तजेहु जनि नेहू ।
धर्म धुरंधर प्रभु कै बानी । सुनि सप्रेम बोले मुनि ग्यानी ।

मुझपर निरन्तर कृपा करते रहियेगा और अपना सेवक जानकर स्नेह न छोड़ियेगा धर्मधुरन्धर प्रभु श्रीरामजीके वचन सुनकर ज्ञानी मुनि प्रेमपूर्वक बोले—॥ २ ॥

जासु कृपा अज सिव सनकादी । चहत सकल परमारथ बादी ॥
ते तुम्ह राम अकाम पिआरे । दीन बंधु मृदु बचन उचारे ॥

ब्रह्मा, शिव और सनकादि सभी परमार्थवादी (तत्त्ववेत्ता) जिनकी कृपा चाहते हैं, हे रामजी ! आप वही निष्काम पुरुषोंके भी प्रिय और दीनोंके बन्धु भगवान् हैं जो इस प्रकार कोमल वचन बोल रहे हैं ॥ ३ ॥

अब जानी मैं श्री चतुराई । भजी तुम्हहि सब देव बिहाई ॥
जेहि समान अतिसय नहिं कोई । ता कर सील कस न अस होई ॥

अब मैंने लक्ष्मीजीकी चतुराई समझी, जिन्होंने सब देवताओंको छोड़कर आपहीको भजा । जिसके समान [सब बातोंमें] अत्यन्त बड़ा और कोई नहीं है, उसका शील, भला ऐसा क्यों न होगा ? ॥ ४ ॥

केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी । कहहु नाथ तुम्ह अंतरजामी ॥
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा । लोचन जल बह पुलक सरीरा ॥

मैं किस प्रकार कहूँ कि हे स्वामी ! आप अब जाइये ? हे नाथ ! आप अन्तर्यामी हैं, आप ही कहिये । ऐसा कहकर धीर मुनि प्रभुको देखने लगे । मुनिके नेत्रोंसे (प्रेमाश्रुओंका) जल बह रहा है और शरीर पुलकित है ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—तन पुलक निर्भर प्रेम पूरन नयन मुख पंकज दिए।
मन ग्यान गुन गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किए॥
जप जोग धर्म समूह तें नर भगति अनुपम पावई।
रघुबीर चरित पुनीत निसि दिन दास तुलसी गावई॥

मुनि अत्यन्त प्रेमसे पूर्ण हैं; उनका शरीर पुलकित है और नेत्रोंको श्रीरामजीके मुख-कमलमें लगाये हुए हैं। [मनमें विचार रहे हैं कि] मैंने ऐसे कौन-से जप-तप किये थे जिसके कारण मन, ज्ञान, गुण और इन्द्रियोंसे परे प्रभुके दर्शन पाये। जप, योग और धर्मसमूहसे मनुष्य अनुपम भक्तिको पाता है। श्रीरघुवीरके पवित्र चरित्रको तुलसीदास रात-दिन गाता है।

दो०—कलिमल समन दमन मन राम सुजस सुखमूल।
सादर सुनहिं जे तिन्ह पर राम रहहिं अनुकूल॥ ६ (क)॥

श्रीरामचन्द्रजीका सुन्दर यश कलियुगके पापोंका नाश करनेवाला, मनको दमन करनेवाला और सुखका मूल है। जो लोग इसे आदरपूर्वक सुनते हैं उनपर श्रीरामजी प्रसन्न रहते हैं॥ ६ (क)॥

सो०—कठिन काल मल कोस धर्म न ग्यान न जोग जप।
परिहरि सकल भरोस रामहि भजहिं ते चतुर नर॥ ६ (ख)॥

यह कठिन कलिकाल पापोंका खजाना है; इसमें न धर्म है, न ज्ञान है और न योग तथा जप ही है। इसमें तो जो लोग सब भरोसोंको छोड़कर श्रीरामजीको ही भजते हैं, वे ही चतुर हैं॥ ६ (ख)॥

चौ०—मुनि पद कमल नाइ करि सीसा। चले बनहि सुर नर मुनि ईसा॥
आगें राम अनुज पुनि पाछें। मुनि बर बेष बने अति काछें॥

मुनिके चरणकमलोंमें सिर नवाकर देवता, मनुष्य और मुनियोंके स्वामी श्रीरामजी वनको चले। आगे श्रीरामजी हैं और उनके पीछे छोटे भाई लक्ष्मणजी हैं। दोनों ही मुनियोंका सुन्दर वेष बनाये अत्यन्त सुशोभित हैं॥ १॥

उभय बीच श्री सोहइ कैसी। ब्रह्म जीव बिच माया जैसी॥
सरिता बन गिरि अवघट घाटा। पति पहिचानि देहिं बर बाटा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दोनोंके बीचमें श्रीजानकीजी कैसी सुशोभित हैं, जैसे ब्रह्म और जीव
बीच माया हो। नदी, वन, पर्वत और दुर्गम घाटियाँ, सभी अपने स्वामी
पहचानकर सुन्दर रास्ता दे देते हैं॥ २॥

जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया। करहिं मेघ तहँ तहँ नभ छाया
मिला असुर बिराध मग जाता। आवतहीं रघुबीर निपाता

जहाँ-जहाँ देव श्रीरघुनाथजी जाते हैं, वहाँ-वहाँ बादल आकाशमें छाया क
जाते हैं। रास्तेमें जाते हुए विराध राक्षस मिला। सामने आते ही रघुनाथजीने उसे मार डा

तुरतहिं रुचिर रूप तेहिं पावा। देखि दुखी निज धाम पठावा।
पुनि आए जहँ मुनि सरभंगा। सुंदर अनुज जानकी संगा।

[श्रीरामजीके हाथसे मरते ही] उसने तुरंत सुन्दर (दिव्य) रूप प्राप्त क
लिया। दुखी देखकर प्रभुने उसे अपने परम धामको भेज दिया। फिर वे सुन्द
छोटे भाई लक्ष्मणजी और सीताजीके साथ वहाँ आये जहाँ मुनि शरभंगजी थे॥ ४।

दो०—देखि राम मुख पंकज मुनिबर लोचन भृंग।
सादर पान करत अति धन्य जन्म सरभंग॥ ७॥

श्रीरामचन्द्रजीका मुख-कमल देखकर मुनिश्रेष्ठके नेत्ररूपी भौंरे अत्यन्त आदर
पूर्वक उसका [मकरन्दरस] पान कर रहे हैं। शरभंगजीका जन्म धन्य है॥ ७॥

चौ०—कह मुनि सुनु रघुबीर कृपाला। संकर मानस राजमराला।
जात रहेउँ बिरंचि के धामा। सुनेउँ श्रवन बन ऐहहिं रामा।

मुनिने कहा—हे कृपालु रघुवीर! हे शंकरजीके मनरूपी मानसरोवरके
राजहंस! सुनिये, मैं ब्रह्मलोकको जा रहा था। [इतनेमें] कानोंसे सुना कि
श्रीरामजी वनमें आवेंगे॥ १॥

चितवत पंथ रहेउँ दिन राती। अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती।
नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्ही कृपा जानि जन दीना।

तबसे मैं दिन-रात आपकी राह देखता रहा हूँ। अब (आज) प्रभुको
देखकर मेरी छाती शीतल हो गयी। हे नाथ! मैं सब साधनोंसे हीन हूँ। आपने
अपना दीन सेवक जानकर मुझपर कृपा की है॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो कछु देव न मोहि निहोरा। निज पन राखेउ जन मन चोरा॥
तब लगि रहहु दीन हित लागी। जब लगि मिलौं तुम्हहि तनु त्यागी॥

हे देव! यह कुछ मुझपर आपका एहसान नहीं है। हे भक्त-मन-चोर! ऐसा करके आपने अपने प्रणकी ही रक्षा की है। अब इस दीनके कल्याणके लिये तबतक यहाँ ठहरिये जबतक मैं शरीर छोड़कर आपसे [आपके धाममें न] मिलूँ॥ ३॥

जोग जग्य जप तप ब्रत कीन्हा। प्रभु कहँ देइ भगति बर लीन्हा॥
एहि बिधि सर रचि मुनि सरभंगा। बैठे हृदयँ छाड़ि सब संगा॥

योग, यज्ञ, जप, तप जो कुछ व्रत आदि भी मुनिने किया था, सब प्रभुको समर्पण करके बदलेमें भक्तिका वरदान ले लिया। इस प्रकार [दुर्लभ भक्ति प्राप्त करके फिर] चिता रचकर मुनि शरभंगजी हृदयसे सब आसक्ति छोड़कर उसपर जा बैठे।४।

दो०—सीता अनुज समेत प्रभु नील जलद तनु स्याम।
मम हियँ बसहु निरंतर सगुनरूप श्रीराम॥ ८॥

हे नीले मेघके समान श्याम शरीरवाले सगुणरूप श्रीरामजी! सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित प्रभु (आप) निरन्तर मेरे हृदयमें निवास कीजिये॥ ८॥

चौ०—अस कहि जोग अगिनि तनु जारा। राम कृपाँ बैकुंठ सिधारा॥
ताते मुनि हरि लीन न भयऊ। प्रथमहिं भेद भगति बर लयऊ॥

ऐसा कहकर शरभंगजीने योगाग्निसे अपने शरीरको जला डाला और श्रीरामजीकी कृपासे वे वैकुण्ठको चले गये। मुनि भगवान्‌में लीन इसलिये नहीं हुए कि उन्होंने पहले ही भेद-भक्तिका वर ले लिया था॥ १॥

रिषि निकाय मुनिबर गति देखी। सुखी भए निज हृदयँ बिसेषी॥
अस्तुति करहिं सकल मुनि बृंदा। जयति प्रनत हित करुना कंदा॥

ऋषिसमूह मुनिश्रेष्ठ शरभंगजीकी यह [दुर्लभ] गति देखकर अपने हृदयमें विशेषरूपसे सुखी हुए। समस्त मुनिवृन्द श्रीरामजीकी स्तुति कर रहे हैं [और कह रहे हैं] शरणागतहितकारी करुणाकन्द (करुणाके मूल) प्रभुकी जय हो!॥ २॥

पुनि रघुनाथ चले बन आगे। मुनिबर बृंद बिपुल सँग लागे॥
अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया॥

 CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर श्रीरघुनाथजी आगे वनमें चले। श्रेष्ठ मुनियोंके बहुत-से समूह उनके स
हो लिये। हड्डियोंका ढेर देखकर श्रीरघुनाथजीको बड़ी दया आयी, उन्होंने मुनियोंसे पूछा।

जानतहूँ पूछिअ कस स्वामी। सबदरसी तुम्ह अंतरजामी
निसिचर निकर सकल मुनि खाए। सुनि रघुबीर नयन जल छाए

[मुनियोंने कहा—] हे स्वामी! आप सर्वदर्शी (सर्वज्ञ) और अन्तर्यामी (सबके हृदयकी जाननेवाले) हैं। जानते हुए भी [अनजानकी तरह] हमसे कैसे पूछ रहे हैं? राक्षसों दलोंने सब मुनियोंको खा डाला है [ये सब उन्हींकी हड्डियोंके ढेर हैं]। यह सुनते ही श्रीरघुवीरके नेत्रोंमें जल छा गया (उनकी आँखोंमें करुणाके आँसू भर आये)॥ ४

दो०—निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह॥ ९॥

श्रीरामजीने भुजा उठाकर प्रण किया कि मैं पृथ्वीको राक्षसोंसे रहित कर दूँ फिर समस्त मुनियोंके आश्रमोंमें जा-जाकर उनको [दर्शन एवं सम्भाषणका] सुख दिया।९

चौ०—मुनि अगस्ति कर सिष्य सुजाना। नाम सुतीछन रति भगवाना।
मन क्रम बचन राम पद सेवक। सपनेहुँ आन भरोस न देवक।

मुनि अगस्त्यजीके एक सुतीक्षण नामक सुजान (ज्ञानी) शिष्य थे, उनकी भगवान्‌में प्रीति थी। वे मन, वचन और कर्मसे श्रीरामजीके चरणोंके सेवक थे। उन्हें स्वप्नमें भी किसी दूसरे देवताका भरोसा नहीं था॥ १॥

प्रभु आगवनु श्रवन सुनि पावा। करत मनोरथ आतुर धावा।
हे बिधि दीनबंधु रघुराया। मो से सठ पर करिहहिं दाया।

उन्होंने ज्यों ही प्रभुका आगमन कानोंसे सुन पाया, त्यों ही अनेक प्रकारके मनोरथ करते हुए वे आतुरता (शीघ्रता) से दौड़ चले। हे विधाता! क्या दीनबन्धु श्रीरघुनाथजी मुझ-जैसे दुष्टपर भी दया करेंगे?॥ २॥

सहित अनुज मोहि राम गोसाईं। मिलिहहिं निज सेवक की नाईं।
मोरे जियँ भरोस दृढ़ नाहीं। भगति बिरति न ग्यान मन माहीं।

क्या स्वामी श्रीरामजी छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित मुझसे अपने सेवककी तरह मिलेंगे? मेरे हृदयमें दृढ़ विश्वास नहीं होता; क्योंकि मेरे मनमें भक्ति, वैराग्य या ज्ञान कुछ भी नहीं है

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहिं सतसंग जोग जप जागा। नहिं दृढ़ चरन कमल अनुरागा॥
एक बानि करुनानिधान की। सो प्रिय जाकें गति न आन की॥

मैंने न तो सत्सङ्ग, योग, जप अथवा यज्ञ ही किये हैं और न प्रभुके चरणकमलोंमें मेरा दृढ़ अनुराग ही है। हाँ, दयाके भण्डार प्रभुकी एक बान है कि जिसे किसी दूसरेका सहारा नहीं है वह उन्हें प्रिय होता है॥४॥

होइहैं सुफल आजु मम लोचन। देखि बदन पंकज भव मोचन॥
निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी॥

[भगवान्‌की इस बानका स्मरण आते ही मुनि आनन्दमग्न होकर मन-ही-मन कहने लगे—] अहा! भवबन्धनसे छुड़ानेवाले प्रभुके मुखारविन्दको देखकर आज मेरे नेत्र सफल होंगे। [शिवजी कहते हैं—] हे भवानी! ज्ञानी मुनि प्रेममें पूर्णरूपसे निमग्न हैं। उनकी वह दशा कही नहीं जाती॥५॥

दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा। को मैं चलेउँ कहाँ नहिं बूझा॥
कबहुँक फिरि पाछें पुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई॥

उन्हें दिशा-विदिशा (दिशाएँ और उनके कोण आदि) और रास्ता, कुछ भी नहीं सूझ रहा है। मैं कौन हूँ और कहाँ जा रहा हूँ, यह भी नहीं जानते (इसका भी ज्ञान नहीं है)। वे कभी पीछे घूमकर फिर आगे चलने लगते हैं और कभी [प्रभुके] गुण गा-गाकर नाचने लगते हैं॥६॥

अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई। प्रभु देखैं तरु ओट लुकाई॥
अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा। प्रगटे हृदयँ हरन भव भीरा॥

मुनिने प्रगाढ़ प्रेमाभक्ति प्राप्त कर ली। प्रभु श्रीरामजी वृक्षकी आड़में छिपकर [भक्तकी प्रेमोन्मत्त दशा] देख रहे हैं। मुनिका अत्यन्त प्रेम देखकर भवभय (आवागमनके भय) को हरनेवाले श्रीरघुनाथजी मुनिके हृदयमें प्रकट हो गये॥७॥

मुनि मग माझ अचल होइ बैसा। पुलक सरीर पनस फल जैसा॥
तब रघुनाथ निकट चलि आए। देखि दसा निज जन मन भाए॥

[हृदयमें प्रभुके दर्शन पाकर] मुनि बीच रास्तेमें अचल (स्थिर) होकर बैठ गये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनका शरीर रोमाञ्चसे कटहलके फलके समान [कण्टकित] हो गया। तब श्रीरघुनाथजी उनके पास चले आये और अपने भक्तकी प्रेमदशा देखकर मनमें बहुत प्रसन्न हुए॥ ८॥

मुनिहि राम बहु भाँति जगावा। जाग न ध्यानजनित सुख पावा॥
भूप रूप तब राम दुरावा। हृदयँ चतुर्भुज रूप देखावा॥

श्रीरामजीने मुनिको बहुत प्रकारसे जगाया, पर मुनि नहीं जागे; क्योंकि उन्हें प्रभुके ध्यानका सुख प्राप्त हो रहा था। तब श्रीरामजीने अपने राजरूपको छिपा लिया और उनके हृदयमें अपना चतुर्भुजरूप प्रकट किया॥९॥

मुनि अकुलाइ उठा तब कैसें। बिकल हीन मनि फनिबर जैसें॥
आगें देखि राम तन स्यामा। सीता अनुज सहित सुख धामा॥

तब (अपने इष्ट-स्वरूपके अन्तर्धान होते ही) मुनि कैसे व्याकुल होकर उठे, जैसे श्रेष्ठ (मणिधर) सर्प मणिके बिना व्याकुल हो जाता है। मुनिने अपने सामने सीताजी और लक्ष्मणजीसहित श्यामसुन्दरविग्रह सुखधाम श्रीरामजीको देखा॥ १०॥

परेउ लकुट इव चरनन्हि लागी। प्रेम मगन मुनिबर बड़भागी॥
भुज बिसाल गहि लिए उठाई। परम प्रीति राखे उर लाई॥

प्रेममें मग्न हुए वे बड़भागी श्रेष्ठ मुनि लाठीकी तरह गिरकर श्रीरामजीके चरणोंमें लग गये। श्रीरामजीने अपनी विशाल भुजाओंसे पकड़कर उन्हें उठा लिया और बड़े प्रेमसे हृदयसे लगा रक्खा॥११॥

मुनिहि मिलत अस सोह कृपाला। कनक तरुहि जनु भेंट तमाला॥
राम बदनु बिलोक मुनि ठाढ़ा। मानहुँ चित्र माझ लिखि काढ़ा॥

कृपालु श्रीरामचन्द्रजी मुनिसे मिलते हुए ऐसे शोभित हो रहे हैं मानो सोनेके वृक्षसे तमालका वृक्ष गले लगकर मिल रहा हो। मुनि [निस्तब्ध] खड़े हुए [टकटकी लगाकर] श्रीरामजीका मुख देख रहे हैं। मानो चित्रमें लिखकर बनाये गये हों॥१२॥

दो०—तब मुनि हृदयँ धीर धरि गहि पद बारहिं बार।
निज आश्रम प्रभु आनि करि पूजा बिबिध प्रकार॥ १०॥

तब मुनिने हृदयमें धीरज धरकर बार-बार चरणोंको स्पर्श किया। फिर प्रभुको अपने आश्रममें लाकर अनेक प्रकारसे उनकी पूजा की॥१०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी। अस्तुति करौं कवन बिधि तोरी॥
महिमा अमित मोरि मति थोरी। रबि सन्मुख खद्योत अँजोरी॥

मुनि कहने लगे—हे प्रभो! मेरी विनती सुनिये। मैं किस प्रकारसे आपकी स्तुति करूँ? आपकी महिमा अपार है और मेरी बुद्धि अल्प है। जैसे सूर्यके सामने जुगनूका उजाला!॥ १॥

श्याम तामरस दाम शरीरं। जटा मुकुट परिधन मुनिचीरं॥
पाणि चाप शर कटि तूणीरं। नौमि निरंतर श्रीरघुवीरं॥

हे नीलकमलकी मालाके समान श्याम शरीरवाले! हे जटाओंका मुकुट और मुनियोंके (वल्कल) वस्त्र पहने हुए, हाथोंमें धनुष-बाण लिये तथा कमरमें तरकस कसे हुए श्रीरामजी! मैं आपको निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥ २॥

मोह बिपिन घन दहन कृशानुः। संत सरोरुह कानन भानुः॥
निशिचर करि वरूथ मृगराजः। त्रातु सदा नो भव खग बाजः॥

जो मोहरूपी घने वनको जलानेके लिये अग्नि हैं, संतरूपी कमलोंके वनके प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्य हैं, राक्षसरूपी हाथियोंके समूहके पछाड़नेके लिये सिंह हैं और भव (आवागमन) रूपी पक्षीके मारनेके लिये बाजरूप हैं, वे प्रभु सदा हमारी रक्षा करें॥ ३॥

अरुण नयन राजीव सुवेशं। सीता नयन चकोर निशेशं॥
हर हृदि मानस बाल मरालं। नौमि राम उर बाहु विशालं॥

हे लाल कमलके समान नेत्र और सुन्दर वेषवाले! सीताजीके नेत्ररूपी चकोरके चन्द्रमा, शिवजीके हृदयरूपी मानसरोवरके बालहंस, विशाल हृदय और भुजावाले श्रीरामचन्द्रजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

संशय सर्प ग्रसन उरगादः। शमन सुकर्कश तर्क विषादः॥
भव भंजन रंजन सुर यूथः। त्रातु सदा नो कृपा वरूथः॥

जो संशयरूपी सर्पको ग्रसनेके लिये गरुड़ हैं, अत्यन्त कठोर तर्कसे उत्पन्न होनेवाले विषादका नाश करनेवाले हैं, आवागमनको मिटानेवाले और देवताओंके समूहको आनन्द देनेवाले हैं, वे कृपाके समूह श्रीरामजी सदा हमारी रक्षा करें॥ ५॥

निर्गुण सगुण विषम सम रूपं। ज्ञान गिरा गोतीतमनूपं॥
अमलमखिलमनवद्यमपारं। नौमि राम भंजन महि भारं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे निर्गुण, सगुण, विषम और समरूप! हे ज्ञान वाणी और इन्द्रिये अतीत! हे अनुपम, निर्मल, सम्पूर्ण, दोषरहित, अनन्त एवं पृथ्वीका भार उतारनेवा श्रीरामचन्द्रजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ ॥ ६ ॥

भक्त कल्पपादप आरामः। तर्जन क्रोध लोभ मद कामः।
अति नागर भव सागर सेतुः। त्रातु सदा दिनकर कुल केतुः।

जो भक्तोंके लिये कल्पवृक्षके बगीचे हैं; क्रोध, लोभ, मद और कामको डरानेवाले हैं, अत्यन्त ही चतुर और संसाररूपी समुद्रसे तरनेके लिये सेतुरूप वे सूर्यकुलकी ध्वजा श्रीरामजी सदा मेरी रक्षा करें ॥ ७ ॥

अतुलित भुज प्रताप बल धामः। कलि मल विपुल विभंजन नामः।
धर्म वर्म नर्मद गुण ग्रामः। संतत शं तनोतु मम रामः।

जिनकी भुजाओंका प्रताप अतुलनीय है, जो बलके धाम हैं, जिनका ना कलियुगके बड़े भारी पापोंका नाश करनेवाला है, जो धर्मके कवच (रक्षक) हैं औ जिनके गुणसमूह आनन्द देनेवाले हैं, वे श्रीरामजी निरन्तर मेरे कल्याणका विस्तार करें॥८

जदपि बिरज ब्यापक अबिनासी। सब के हृदयँ निरंतर बासी।
तदपि अनुज श्री सहित खरारी। बसतु मनसि मम काननचारी।

यद्यपि आप निर्मल, व्यापक अविनाशी और सबके हृदयमें निरन्तर निवा करनेवाले हैं; तथापि हे खरारि श्रीरामजी! लक्ष्मणजी और सीताजी सहित वन विचरनेवाले आप इसी रूपमें मेरे हृदयमें निवास कीजिये ॥ ९ ॥

जे जानहिं ते जानहुँ स्वामी। सगुन अगुन उर अंतरजामी॥
जो कोसल पति राजिव नयना। करउ सो राम हृदय मम अयना॥

हे स्वामी! आपको जो सगुण, निर्गुण और अन्तर्यामी जानते हों, वे जाना करें मेरे हृदयको तो कोसलपति कमलनयन श्रीरामजी ही अपना घर बनावें॥ १० ॥

अस अभिमान जाइ जनि भोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे॥
सुनि मुनि बचन राम मन भाए। बहुरि हरषि मुनिबर उर लाए॥

ऐसा अभिमान भूलकर भी न छूटे कि मैं सेवक हूँ और श्रीरघुनाथजी मेरे स्वामी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

। मुनिके वचन सुनकर श्रीरामजी मनमें बहुत प्रसन्न हुए । तब उन्होंने हर्षित होकर श्रेष्ठ मुनिको हृदयसे लगा लिया ॥ ११ ॥

परम प्रसन्न जानु मुनि मोही । जो बर मागहु देउँ सो तोही ॥
मुनि कह मैं बर कबहुँ न जाचा । समुझि न परइ झूठ का साचा ॥

[और कहा—] हे मुनि ! मुझे परम प्रसन्न जानो । जो वर माँगो, वही मैं तुम्हें दूँ । मुनि सुतीक्ष्णजीने कहा—मैंने तो वर कभी माँगा ही नहीं ! मुझे समझ ही नहीं पड़ता कि क्या झूठ है और क्या सत्य है (क्या माँगूँ, क्या नहीं) ॥ १२ ॥

तुम्हहि नीक लागै रघुराई । सो मोहि देहु दास सुखदाई ॥
अबिरल भगति बिरति बिग्याना । होहु सकल गुन ग्यान निधाना ॥

[अतः] हे रघुनाथजी ! हे दासोंको सुख देनेवाले ! आपको जो अच्छा लगे मुझे वही दीजिये । [श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे मुनि !] तुम प्रगाढ़ भक्ति, वैराग्य, विज्ञान और समस्त गुणों तथा ज्ञानके निधान हो जाओ ॥ १३ ॥

प्रभु जो दीन्ह सो बरु मैं पावा । अब सो देहु मोहि जो भावा ॥

[तब मुनि बोले—] प्रभुने जो वरदान दिया वह तो मैंने पा लिया । अब मुझे जो अच्छा लगता है वह दीजिये— ॥ १४ ॥

दो०—अनुज जानकी सहित प्रभु चाप बान धर राम ।
मम हिय गगन इंदु इव बसहु सदा निहकाम ॥ ११ ॥

हे प्रभो ! हे श्रीरामजी ! छोटे भाई लक्ष्मणजी और सीताजीसहित धनुष-बाणधारी आप निष्काम (स्थिर) होकर मेरे हृदयरूपी आकाशमें चन्द्रमाकी भाँति सदा निवास कीजिये ।

चौ०—एवमस्तु करि रमानिवासा । हरषि चले कुंभज रिषि पासा ॥
बहुत दिवस गुर दरसनु पाएँ । भए मोहि एहिं आश्रम आएँ ॥

'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) ऐसा उच्चारण कर लक्ष्मीनिवास श्रीरामचन्द्रजी हर्षित होकर अगस्त्य ऋषिके पास चले । [तब सुतीक्ष्णजी बोले—] गुरु अगस्त्यजीका दर्शन पाये और इस आश्रममें आये मुझे बहुत दिन हो गये ॥ १ ॥

अब प्रभु संग जाउँ गुर पाहीं । तुम्ह कहँ नाथ निहोरा नाहीं ॥
देखि कृपानिधि मुनि चतुराई । लिए संग बिहसे द्वौ भाई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अब मैं भी प्रभु (आप) के साथ गुरुजीके पास चलता हूँ। इसमें हे ना आपपर मेरा कोई एहसान नहीं है। मुनिकी चतुरता देखकर कृपाके भण्डार श्रीराम उनको साथ ले लिया और दोनों भाई हँसने लगे ॥ २ ॥

पंथ कहत निज भगति अनूपा। मुनि आश्रम पहुँचे सुरभूपा॥
तुरत सुतीछन गुर पहिं गयऊ। करि दंडवत कहत अस भयऊ॥

रास्तेमें अपनी अनुपम भक्तिका वर्णन करते हुए, देवताओंके राजराजे श्रीरामजी अगस्त्य मुनिके आश्रमपर पहुँचे। सुतीक्ष्ण तुरंत ही गुरु अगस्त्यजी पास गये और दण्डवत् करके ऐसा कहने लगे—॥ ३ ॥

नाथ कोसलाधीस कुमारा। आए मिलन जगत आधारा॥
राम अनुज समेत बैदेही। निसि दिनु देव जपत हहु जेही॥

हे नाथ ! अयोध्याके राजा दशरथजीके कुमार जगदाधार श्रीरामचन्द्रजी भाई लक्ष्मणजी और सीताजीसहित आपसे मिलने आये हैं, जिनका हे देव ! आ रात-दिन जप करते रहते हैं ॥ ४ ॥

सुनत अगस्ति तुरत उठि धाए। हरि बिलोकि लोचन जल छाए॥
मुनि पद कमल परे द्वौ भाई। रिषि अति प्रीति लिए उर लाई॥

यह सुनते ही अगस्त्यजी तुरंत ही उठ दौड़े। भगवान्‌को देखते ही उनके नेत्रों [आनन्द और प्रेमके आँसुओंका] जल भर आया। दोनों भाई मुनिके चरणकमलों गिर पड़े ! ऋषिने [उठाकर] बड़े प्रेमसे उन्हें हृदयसे लगा लिया ॥ ५ ॥

सादर कुसल पूछि मुनि ग्यानी। आसन बर बैठारे आनी॥
पुनि करि बहु प्रकार प्रभु पूजा। मोहि सम भाग्यवंत नहिं दूजा॥

ज्ञानी मुनिने आदरपूर्वक कुशल पूछकर उनको लाकर श्रेष्ठ आसनपर बैठाया। फि बहुत प्रकारसे प्रभुकी पूजा करके कहा—मेरे समान भाग्यवान् आज दूसरा कोई नहीं है

जहँ लगि रहे अपर मुनि बृंदा। हरषे सब बिलोकि सुखकंदा॥

वहाँ जहाँतक (जितने भी) अन्य मुनिगण थे, सभी आनन्दकन्द श्रीरामजीके दर्शन करके हर्षित हो गये ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—मुनि समूह महँ बैठे सन्मुख सब की ओर ।
सरद इंदु तन चितवत मानहुँ निकर चकोर ॥ १२ ॥

मुनियोंके समूहमें श्रीरामचन्द्रजी सबकी ओर सम्मुख होकर बैठे हैं (अर्थात् प्रत्येक मुनिको श्रीरामजी अपने ही सामने मुख करके बैठे दिखायी देते हैं और सब मुनि टकटकी लगाये उनके मुखको देख रहे हैं) । ऐसा जान पड़ता है मानो चकोरोंका समुदाय शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी ओर देख रहा हो ॥ १२ ॥

चौ०—तब रघुबीर कहा मुनि पाहीं । तुम्ह सन प्रभु दुराव कछु नाहीं ॥
तुम्ह जानहु जेहि कारन आयउँ । ताते तात न कहि समुझायउँ ॥

तब श्रीरामजीने मुनिसे कहा—हे प्रभो ! आपसे तो कुछ छिपाव है नहीं । मैं जिस कारणसे आया हूँ, वह आप जानते ही हैं । इसीसे हे तात ! मैंने आपसे समझाकर कुछ नहीं कहा ॥ १ ॥

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही । जेहि प्रकार मारौं मुनिद्रोही ॥
मुनि मुसुकाने सुनि प्रभु बानी । पूछेहु नाथ मोहि का जानी ॥

हे प्रभो ! अब आप मुझे वही मन्त्र (सलाह) दीजिये, जिस प्रकार मैं मुनियोंके द्रोही राक्षसोंको मारूँ । प्रभुकी वाणी सुनकर मुनि मुसकराये और बोले—हे नाथ ! आपने क्या समझकर मुझसे यह प्रश्न किया है ? ॥ २ ॥

तुम्हरेइँ भजन प्रभाव अघारी । जानउँ महिमा कछुक तुम्हारी ॥
ऊमरि तरु बिसाल तव माया । फल ब्रह्मांड अनेक निकाया ॥

हे पापोंका नाश करनेवाले ! मैं तो आपहीके भजनके प्रभावसे आपकी कुछ थोड़ी-सी महिमा जानता हूँ । आपकी माया गूलरके विशाल वृक्षके समान है, अनेकों ब्रह्माण्डोंके समूह ही जिसके फल हैं ॥ ३ ॥

जीव चराचर जंतु समाना । भीतर बसहिं न जानहिं आना ॥
ते फल भच्छक कठिन कराला । तव भयँ डरत सदा सोउ काला ॥

चर और अचर जीव [गूलरके फलके भीतर रहनेवाले छोटे-छोटे] जन्तुओंके समान उन [ब्रह्माण्डरूपी फलों] के भीतर बसते हैं और वे [अपने उस छोटे-से जगत्के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिवा] दूसरा कुछ नहीं जानते। उन फलोंका भक्षण करनेवाला कठिन
कराल काल है। वह काल भी सदा आपसे भयभीत रहता है॥ ४॥

ते तुम्ह सकल लोकपति साईं। पूँछेहु मोहि मनुज की नाईं
यह बर मागउँ कृपानिकेता। बसहु हृदयँ श्री अनुज समेता

उन्हीं आपने समस्त लोकपालोंके स्वामी होकर भी मुझसे मनुष्यकी तरह प्र
किया। हे कृपाके धाम! मैं तो यह वर माँगता हूँ कि आप श्रीसीताजी और
भाई लक्ष्मणजीसहित मेरे हृदयमें [सदा] निवास कीजिये॥ ५॥

अबिरल भगति बिरति सतसंगा। चरन सरोरुह प्रीति अभंगा
जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता। अनुभव गम्य भजहिं जेहि संता।

मुझे प्रगाढ़ भक्ति, वैराग्य, सत्सङ्ग और आपके चरणकमलोंमें अटूट प्रेम प्रा
हो। यद्यपि आप अखण्ड और अनन्त ब्रह्म हैं, जो अनुभवसे ही जाननेमें आते
और जिनका संतजन भजन करते हैं; ॥ ६॥

अस तव रूप बखानउँ जानउँ। फिरि फिरि सगुन ब्रह्म रति मानउँ।
संतत दासन्ह देहु बड़ाई। तातें मोहि पूँछेहु रघुराई॥

यद्यपि मैं आपके ऐसे रूपको जानता हूँ और उसका वर्णन भी करता हूँ तो भ
लौट-लौटकर मैं सगुण ब्रह्ममें (आपके इस सुन्दर स्वरूपमें) ही प्रेम मानता हूँ। आ
सेवकोंको सदा ही बड़ाई दिया करते हैं, इसीसे हे रघुनाथजी! आपने मुझसे पूछा है॥७॥

है प्रभु परम मनोहर ठाऊँ। पावन पंचबटी तेहि नाऊँ॥
दंडक बन पुनीत प्रभु करहू। उग्र साप मुनिबर कर हरहू॥

हे प्रभो! एक परम मनोहर और पवित्र स्थान है; उसका नाम पञ्चवटी है। हे
प्रभो! आप दण्डकवनको [जहाँ पञ्चवटी है] पवित्र कीजिये और श्रेष्ठ मुनि
गौतमजीके कठोर शापको हर लीजिये॥ ८॥

बास करहु तहँ रघुकुल राया। कीजे सकल मुनिन्ह पर दाया॥
चले राम मुनि आयसु पाई। तुरतहिं पंचबटी निअराई॥

हे रघुकुलके स्वामी! आप सब मुनियोंपर दया करके वहीं निवास कीजिये। मुनिकी
आज्ञा पाकर श्रीरामचन्द्रजी वहाँसे चल दिये और शीघ्र ही पञ्चवटीके निकट पहुँच गये॥९॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—गीधराज सैं भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ ।
गोदावरी निकट प्रभु रहे परन गृह छाइ ॥ १३ ॥

वहाँ गृध्रराज जटायुसे भेंट हुई । उसके साथ बहुत प्रकारसे प्रेम बढ़ाकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी गोदावरीजीके समीप पर्णकुटी छाकर रहने लगे ॥ १३ ॥

चौ०—जब ते राम कीन्ह तहँ बासा । सुखी भए मुनि बीती त्रासा ॥
गिरि बन नदीं ताल छबि छाए । दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए ॥

जबसे श्रीरामजीने वहाँ निवास किया तबसे मुनि सुखी हो गये, उनका डर जाता रहा । पर्वत, वन, नदी और तालाब शोभासे छा गये । वे दिनोंदिन अधिक सुहावने [मालूम] होने लगे ॥ १ ॥

खग मृग बृंद अनंदित रहहीं । मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं ॥
सो बन बरनि न सक अहिराजा । जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा ॥

पक्षी और पशुओंके समूह आनन्दित रहते हैं और भौंरे मधुर गुंजार करते हुए शोभा पा रहे हैं । जहाँ प्रत्यक्ष श्रीरामजी विराजमान हैं उस वनका वर्णन सर्पराज शेषजी भी नहीं कर सकते ॥ २ ॥

एक बार प्रभु सुख आसीना । लछिमन बचन कहे छलहीना ॥
सुर नर मुनि सचराचर साईं । मैं पूछउँ निज प्रभु की नाईं ॥

एक बार प्रभु श्रीरामजी सुखसे बैठे हुए थे । उस समय लक्ष्मणजीने उनसे छलरहित (सरल) वचन कहे—हे देवता, मनुष्य, मुनि और चराचरके स्वामी ! मैं अपने प्रभुकी तरह (अपना स्वामी समझकर) आपसे पूछता हूँ ॥ ३ ॥

मोहि समुझाइ कहहु सोइ देवा । सब तजि करौं चरन रज सेवा ॥
कहहु ग्यान बिराग अरु माया । कहहु सो भगति करहु जेहिं दाया ॥

हे देव ! मुझे समझाकर वही कहिये, जिससे सब छोड़कर मैं आपकी चरणरजकी ही सेवा करूँ । ज्ञान, वैराग्य और मायाका वर्णन कीजिये; और उस भक्तिको कहिये जिसके कारण आप दया करते हैं ॥ ४ ॥

दो०—ईस्वर जीव भेद प्रभु सकल कहौ समुझाइ ।
जातें होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ ॥ १४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे प्रभो ! ईश्वर और जीवका भेद भी सब समझाकर कहिये, जिससे आपके चरणोंमें मेरी प्रीति हो और शोक, मोह तथा भ्रम नष्ट हो जायँ ॥ १४ ॥

चौ०—थोरेहि महँ सब कहउँ बुझाई। सुनहु तात मति मन चित लाई॥
मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया॥

[श्रीरामजीने कहा—] हे तात ! मैं थोड़ेहीमें सब समझाकर कहे देता हूँ। तुम मन, चित्त और बुद्धि लगाकर सुनो। मैं और मेरा, तू और तेरा—यही माया है, जिसने समस्त जीवोंको वशमें कर रक्खा है ॥ १ ॥

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ॥

इन्द्रियोंके विषयोंको और जहाँतक मन जाता है, हे भाई ! उस सबको माया जानना। उसके भी—एक विद्या और दूसरी अविद्या, इन दोनों भेदोंको तुम सुनो—॥ २॥

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भव कूपा॥
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें॥

एक (अविद्या) दुष्ट (दोषयुक्त) है और अत्यन्त दुःखरूप है जिसके वश होकर जीव संसाररूपी कुएँमें पड़ा हुआ है। और एक (विद्या) जिसके वशमें गुण है और जो जगत्‌की रचना करती है, वह प्रभुसे ही प्रेरित होती है; उसके अपना बल कुछ भी नहीं है ॥ ३॥

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माहीं॥
कहिअ तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी॥

ज्ञान वह है जहाँ (जिसमें) मान आदि एक भी [दोष] नहीं है और जो सबमें समानरूपसे ब्रह्मको देखता है। हे तात ! उसीको परम वैराग्यवान् कहना चाहिये जो सारी सिद्धियोंको और तीनों गुणोंको तिनकेके समान त्याग चुका हो ॥ ४ ॥

[जिसमें मान, दम्भ, हिंसा, क्षमाराहित्य, टेढ़ापन, आचार्यसेवाका अभाव, अपवित्रता, अस्थिरता, मनका निगृहीत न होना, इन्द्रियोंके विषयमें आसक्ति, अहंकार, जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधिमय जगत्‌में सुखबुद्धि, स्त्री-पुत्र-घर आदिमें आसक्ति तथा ममता, इष्ट और अनिष्टकी प्राप्तिमें हर्ष-शोक, भक्तिका अभाव, एकान्तमें मन न लगना, विषयी मनुष्योंके संगमें प्रेम—ये अठारह न हों और नित्य अध्यात्म (आत्मा) में स्थिति तथा तत्त्वज्ञानके अर्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(तत्त्वज्ञानके द्वारा जाननेयोग्य) परमात्माका नित्य दर्शन हो, वही ज्ञान कहलाता है। देखिये गीता अ० १३। ७ से ११]

दो०—माया ईस न आपु कहुँ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छ प्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव॥ १५॥

जो मायाको, ईश्वरको और अपने स्वरूपको नहीं जानता, उसे जीव कहना चाहिये। जो [कर्मानुसार] बन्धन और मोक्ष देनेवाला, सबसे परे और मायाका प्रेरक है वह ईश्वर है

चौ०—धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना॥
जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई॥

धर्म [के आचरण] से वैराग्य और योगसे ज्ञान होता है तथा ज्ञान मोक्षका देनेवाला है—ऐसा वेदोंने वर्णन किया है। और हे भाई! जिससे मैं शीघ्र ही प्रसन्न होता हूँ, वह मेरी भक्ति है जो भक्तोंको सुख देनेवाली है॥ १॥

सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना॥
भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला॥

वह भक्ति स्वतन्त्र है, उसको [ज्ञान-विज्ञान आदि किसी] दूसरे साधनका सहारा (अपेक्षा) नहीं है। ज्ञान और विज्ञान तो उसके अधीन हैं। हे तात! भक्ति अनुपम एवं सुखकी मूल है; और वह तभी मिलती है जब संत अनुकूल (प्रसन्न) होते हैं॥ २॥

भगति कि साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी॥
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती॥

अब मैं भक्तिके साधन विस्तारसे कहता हूँ—यह सुगम मार्ग है, जिससे जीव मुझको सहज ही पा जाते हैं। पहले तो ब्राह्मणोंके चरणोंमें अत्यन्त प्रीति हो और वेदकी रीतिके अनुसार अपने-अपने [वर्णाश्रमके] कर्मोंमें लगा रहे॥ ३॥

एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा॥
श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं॥

इसका फल, फिर विषयोंसे वैराग्य होगा। तब (वैराग्य होनेपर) मेरे धर्म (भागवत धर्म) में प्रेम उत्पन्न होगा। तब श्रवण आदि नौ प्रकारकी भक्तियाँ दृढ़ होंगी और मनमें मेरी लीलाओंके प्रति अत्यन्त प्रेम होगा॥ ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा॥

जिसका संतोंके चरणकमलोंमें अत्यन्त प्रेम हो; मन, वचन और कर्मसे भजनका दृढ़ नियम हो और जो मुझको ही गुरु, पिता, माता, भाई, पति और देवता सब कुछ जाने और सेवामें दृढ़ हो, ॥ ५ ॥

मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा॥
काम आदि मद दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें॥

मेरा गुण गाते समय जिसका शरीर पुलकित हो जाय, वाणी गद्गद हो जाय और नेत्रोंसे [प्रेमाश्रुओंका] जल बहने लगे और काम, मद और दम्भ आदि जिसमें न हों, हे भाई ! मैं सदा उसके वशमें रहता हूँ ॥ ६ ॥

दो०—बचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिश्राम ॥ १६ ॥

जिनको कर्म, वचन और मनसे मेरी ही गति है; और जो निष्काम भावसे मेरा भजन करते हैं, उनके हृदय-कमलमें मैं सदा विश्राम किया करता हूँ ॥ १६ ॥

चौ०—भगति जोग सुनि अति सुख पावा। लछिमन प्रभु चरनन्हि सिरु नावा॥
एहि बिधि गए कछुक दिन बीती। कहत बिराग ग्यान गुन नीती॥

इस भक्तियोगको सुनकर लक्ष्मणजीने अत्यन्त सुख पाया और उन्होंने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें सिर नवाया। इस प्रकार वैराग्य, ज्ञान, गुण और नीति कहते हुए कुछ दिन बीत गये ॥ १ ॥

सूपनखा रावन कै बहिनी। दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी॥
पंचबटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा॥

शूर्पणखा नामक रावणकी एक बहिन थी, जो नागिनके समान भयानक और दुष्ट हृदयकी थी। वह एक बार पञ्चवटीमें गयी और दोनों राजकुमारोंको देखकर विकल (कामसे पीड़ित) हो गयी ॥ २ ॥

भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी॥
होइ बिकल सक मनहि न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहि बिलोकी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(काकभुशुण्डिजी कहते हैं—) हे गरुड़जी ! [शूर्पणखा-जैसी राक्षसी, धर्मज्ञान-शून्य कामान्ध] स्त्री मनोहर पुरुषको देखकर, चाहे वह भाई, पिता, पुत्र ही हो, विकल हो जाती है और मनको नहीं रोक सकती। जैसे सूर्यकान्तिमणि सूर्यको देखकर द्रवित हो जाती है (ज्वालासे पिघल जाती है)॥ ३॥

रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई॥
तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग बिधि रचा बिचारी॥

वह सुन्दर रूप धरकर प्रभुके पास जाकर और बहुत मुसकराकर वचन बोली—न तो तुम्हारे समान कोई पुरुष है, न मेरे समान स्त्री ! विधाताने यह संयोग (जोड़ा) बहुत विचारकर रचा है॥ ४॥

मम अनुरूप पुरुष जग माहीं। देखेउँ खोजि लोक तिहु नाहीं॥
तातें अब लगि रहिउँ कुमारी। मनु माना कछु तुम्हहि निहारी॥

मेरे योग्य पुरुष (वर) जगत्‌भरमें नहीं है, मैंने तीनों लोकोंको खोज देखा। इसीसे मैं अबतक कुमारी (अविवाहित) रही। अब तुम्हें देखकर कुछ मन माना (चित्त ठहरा) है।५।

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता। अहइ कुआर मोर लघु भ्राता॥
गइ लछिमन रिपु भगिनी जानी। प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी॥

सीताजीकी ओर देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने यह बात कही कि मेरा छोटा भाई कुमार है। तब वह लक्ष्मणजीके पास गयी। लक्ष्मणजी उसे शत्रुकी बहिन समझकर और प्रभुकी ओर देखकर कोमलवाणीसे बोले—॥ ६॥

सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुपासा॥
प्रभु समर्थ कोसलपुर राजा। जो कछु करहिं उनहि सब छाजा॥

हे सुन्दरी ! सुन, मैं तो उनका दास हूँ। मैं पराधीन हूँ, अतः तुम्हें सुभीता (सुख) न होगा। प्रभु समर्थ हैं, कोसलपुरके राजा हैं, वे जो कुछ करें, उन्हें सब फबता है॥ ७॥

सेवक सुख चह मान भिखारी। ब्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी॥
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी॥

सेवक सुख चाहे, भिखारी सम्मान चाहे, व्यसनी (जिसे जूए, शराब आदिका व्यसन हो) धन और व्यभिचारी शुभगति चाहे, लोभी यश चाहे और अभिमानी चारों फल अर्थ,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धर्म, काम, मोक्ष चाहे, तो ये सब प्राणी आकाशको दुहकर दूध लेना चाहते (अर्थात् असम्भव बातको सम्भव करना चाहते हैं) ॥ ८ ॥

पुनि फिरि राम निकट सो आई । प्रभु लछिमन पहिं बहुरि पठाई ॥
लछिमन कहा तोहि सो बरई । जो तृन तोरि लाज परिहरई ॥

वह लौटकर फिर श्रीरामजीके पास आयी । प्रभुने फिर उसे लक्ष्मणजी पास भेज दिया । लक्ष्मणजीने कहा—तुम्हें वही बरेगा जो लज्जाको तृण तोड़ (अर्थात् प्रतिज्ञा करके) त्याग देगा (अर्थात् जो निपट निर्लज्ज होगा) ॥ ९ ॥

तब खिसिआनि राम पहिं गई । रूप भयंकर प्रगटत भई ॥
सीतहि सभय देखि रघुराई । कहा अनुज सन सयन बुझाई ॥

तब वह खिसियायी हुई (क्रुद्ध होकर) श्रीरामजीके पास गयी और उसने अप भयङ्कर रूप प्रकट किया । सीताजीको भयभीत देखकर श्रीरघुनाथजीने लक्ष्मणजी इशारा देकर कहा ॥ १० ॥

दो०—लछिमन अति लाघवँ सो नाक कान बिनु कीन्हि ।
ताके कर रावन कहँ मनौ चुनौती दीन्हि ॥ १७ ॥

लक्ष्मणजीने बड़ी फुर्तीसे उसको बिना नाक-कानकी कर दिया । मानो उस हाथ रावणको चुनौती दी हो ! ॥ १७ ॥

चौ०—नाक कान बिनु भइ बिकरारा । जनु स्रव सैल गेरु कै धारा ॥
खर दूषन पहिं गइ बिलपाता । धिग धिग तव पौरुष बल भ्राता ॥

बिना नाक-कानके वह विकराल हो गयी । [उसके शरीरसे रक्त इस प्रका बहने लगा] मानो [काले] पर्वतसे गेरूकी धारा बह रही हो । वह विलाप करत हुई खर-दूषणके पास गयी [और बोली—] हे भाई ! तुम्हारे पौरुष (वीरता) धिक्कार है, तुम्हारे बलको धिक्कार है ॥ १ ॥

तेहिं पूछा सब कहेसि बुझाई । जातुधान सुनि सेन बनाई ॥
धाए निसिचर निकर बरूथा । जनु सपच्छ कज्जल गिरि जूथा ॥

उन्होंने पूछा, तब शूर्पणखाने सब समझाकर कहा । सब सुनकर राक्षसोंने सेन तैयार की । राक्षससमूह झुंड-के-झुंड दौड़े । मानो पंखधारी काजलके पर्वतोंका झुंड हो ॥ २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाना बाहन नानाकारा। नानायुध धर घोर अपारा॥
सूपनखा आगें करि लीनी। असुभ रूप श्रुति नासा हीनी॥

वे अनेकों प्रकारकी सवारियोंपर चढ़े हुए तथा अनेकों आकार (सूरतों) के हैं। वे अपार हैं और अनेकों प्रकारके असंख्य भयानक हथियार धारण किये हुए हैं। उन्होंने नाक-कान कटी हुई अमङ्गलरूपिणी शूर्पणखाको आगे कर लिया॥ ३॥

असगुन अमित होहिं भयकारी। गनहिं न मृत्यु बिबस सब झारी॥
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं। देखि कटकु भट अति हरषाहीं॥

अनगिनत भयङ्कर अशकुन हो रहे हैं। परन्तु मृत्युके वश होनेके कारण वे सब-के-सब उनको कुछ गिनते ही नहीं। गरजते हैं, ललकारते हैं और आकाशमें उड़ते हैं। सेना देखकर योद्धालोग बहुत ही हर्षित होते हैं॥ ४॥

कोउ कह जिअत धरहु द्वौ भाई। धरि मारहु तिय लेहु छड़ाई॥
धूरि पूरि नभ मंडल रहा। राम बोलाइ अनुज सन कहा॥

कोई कहता है दोनों भाइयोंको जीता ही पकड़ लो, पकड़कर मार डालो और स्त्रीको छीन लो। आकाशमण्डल धूलसे भर गया। तब श्रीरामजीने लक्ष्मणको बुलाकर उनसे कहा।

लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर। आवा निसिचर कटकु भयंकर॥
रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी। चले सहित श्री सर धनु पानी॥

राक्षसोंकी भयानक सेना आ गयी है। जानकीजीको लेकर तुम पर्वतकी कन्दरामें चले जाओ। सावधान रहना। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर लक्ष्मणजी हाथमें धनुष-बाण लिये श्रीसीताजीसहित चले॥ ६॥

देखि राम रिपुदल चलि आवा। बिहसि कठिन कोदंड चढ़ावा॥

शत्रुओंकी सेना [समीप] चली आयी है, यह देखकर श्रीरामजीने हँसकर कठिन धनुषको चढ़ाया॥ ७॥

छं०—कोदंड कठिन चढ़ाइ सिर जट जूट बाँधत सोह क्यों।
मरकत सयल पर लरत दामिनि कोटि सों जुग भुजग ज्यों॥
कटि कसि निषंग बिसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारि कै।
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गजराज घटा निहारि कै॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कठिन धनुष चढ़ाकर सिरपर जटाका जूड़ा बाँधते हुए प्रभु कैसे शोभित हो रहे हैं, जैसे मरकतमणि (पन्ने) के पर्वतपर करोड़ों बिजलियोंसे दो साँप लड़ रहे हों। कमरमें तरकस कसकर, विशाल भुजाओंमें धनुष लेकर और बाण सुधारकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी राक्षसोंकी ओर देख रहे हैं। मानो मतवाले हाथियोंके समूहको [आता] देखकर सिंह [उनकी ओर] ताक रहा हो।

सो०—आइ गए बगमेल धरहु धरहु धावत सुभट।
जथा बिलोकि अकेल बाल रबिहि घेरत दनुज ॥ १८ ॥

'पकड़ो-पकड़ो' पुकारते हुए राक्षस योद्धा बाग छोड़कर (बड़ी तेजीसे) दौड़े हुए आ[ये] [और उन्होंने श्रीरामजीको चारों ओरसे घेर लिया], जैसे बालसूर्य (उदयकालीन सूर्य) [को] अकेला देखकर मन्देह नामक दैत्य घेर लेते हैं ॥ १८ ॥

चौ०—प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनीचर धारी॥
सचिव बोलि बोले खर दूषन। यह कोउ नृपबालक नर भूषन॥

[सौन्दर्य-माधुर्यनिधि] प्रभु श्रीरामजीको देखकर राक्षसोंकी सेना थकित रह गयी। [वे] उनपर बाण नहीं छोड़ सके। मन्त्रीको बुलाकर खर-दूषणने कहा—यह राजकुमार को[ई] मनुष्योंका भूषण है ॥ १ ॥

नाग असुर सुर नर मुनि जेते। देखे जिते हते हम केते॥
हम भरि जन्म सुनहु सब भाई। देखी नहिं असि सुंदरताई॥

जितने भी नाग, असुर, देवता, मनुष्य और मुनि हैं, उनमेंसे हमने न जा[ने] कितने ही देखे, जीते और मार डाले हैं। पर हे सब भाइयो! सुनो, हमने जन्मभर[में] ऐसी सुन्दरता कहीं नहीं देखी ॥ २ ॥

जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा। बध लायक नहिं पुरुष अनूपा॥
देहु तुरत निज नारि दुराई। जीअत भवन जाहु द्वौ भाई॥

यद्यपि इन्होंने हमारी बहिनको कुरूप कर दिया तथापि ये अनुपम पुरुष वध करने यो[ग्य] नहीं हैं। 'छिपायी हुई अपनी स्त्री हमें तुरंत दे दो और दोनों भाई जीते-जी घर लौट जाओ'

मोर कहा तुम्ह ताहि सुनावहु। तासु बचन सुनि आतुर आवहु॥
दूतन्ह कहा राम सन जाई। सुनत राम बोले मुसुकाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरा यह कथन तुमलोग उसे सुनाओ और उसका वचन (उत्तर) सुनकर शीघ्र आओ। दूतोंने जाकर यह सन्देश श्रीरामचन्द्रजीसे कहा। उसे सुनते ही श्रीरामचन्द्रजी मुसकराकर बोले—॥ ४ ॥

हम छत्री मृगया बन करहीं। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं॥
रिपु बलवंत देखि नहिं डरहीं। एक बार कालहु सन लरहीं॥

हम क्षत्रिय हैं, वनमें शिकार करते हैं और तुम्हारे-सरीखे दुष्ट पशुओंको तो ढूँढ़ते ही फिरते हैं। हम बलवान् शत्रुको देखकर नहीं डरते। [लड़नेको आवे तो] एक बार तो हम कालसे भी लड़ सकते हैं॥ ५ ॥

जद्यपि मनुज दनुज कुल घालक। मुनि पालक खल सालक बालक॥
जौं न होइ बल घर फिरि जाहू। समर बिमुख मैं हतउँ न काहू॥

यद्यपि हम मनुष्य हैं, परन्तु दैत्यकुलका नाश करनेवाले और मुनियोंकी रक्षा करनेवाले हैं। हम बालक हैं, परन्तु हैं दुष्टोंको दण्ड देनेवाले। यदि बल न हो तो घर लौट जाओ। संग्राममें पीठ दिखानेवाले किसीको मैं नहीं मारता॥ ६ ॥

रन चढ़ि करिअ कपट चतुराई। रिपु पर कृपा परम कदराई॥
दूतन्ह जाइ तुरत सब कहेऊ। सुनि खर दूषन उर अति दहेऊ॥

रणमें चढ़ आकर कपट-चतुराई करना और शत्रुपर कृपा करना (दया दिखाना) तो बड़ी भारी कायरता है। दूतोंने लौटकर तुरंत सब बातें कहीं, जिन्हें सुनकर खर-दूषणका हृदय अत्यन्त जल उठा॥ ७ ॥

छं०—उर दहेउ कहेउ कि धरहु धाए बिकट भट रजनीचरा।
सर चाप तोमर सक्ति सूल कृपान परिघ परसु धरा॥
प्रभु कीन्हि धनुष टकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
भए बधिर ब्याकुल जातुधान न ग्यान तेहि अवसर रहा॥

[खर-दूषणका] हृदय जल उठा। तब उन्होंने कहा—पकड़ लो (कैद कर लो)। [यह सुनकर] भयानक राक्षस योद्धा बाण, धनुष, तोमर, शक्ति (साँग), शूल (बरछी), कृपाण (कटार), परिघ और फरसा धारण किये हुए दौड़ पड़े। प्रभु श्रीरामजीने पहले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धनुषका बड़ा कठोर, घोर और भयानक टङ्कार किया, जिसे सुनकर राक्षस बहरे और व्याकुल हो गये। उस समय उन्हें कुछ भी होश न रहा।

दो०—सावधान होइ धाए जानि सबल आराति।
लागे बरषन राम पर अस्त्र सस्त्र बहुभाँति ॥१९(क)॥

फिर वे शत्रुको बलवान् जानकर सावधान होकर दौड़े और श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बहुत प्रकारके अस्त्र-शस्त्र बरसाने लगे ॥ १९ (क)॥

तिन्ह के आयुध तिल सम करि काटे रघुबीर।
तानि सरासन श्रवन लगि पुनि छाँड़े निज तीर ॥ १९(ख)॥

श्रीरघुवीरजीने उनके हथियारोंको तिलके समान (टुकड़े-टुकड़े) करके काट डाले। फिर धनुषको कानतक तानकर अपने तीर छोड़े॥ १९ (ख)॥

छं०—तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु ब्याल ॥
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिख निसित निकाम ॥

तब भयानक बाण ऐसे चले मानो फुफकारते हुए बहुत-से सर्प जा रहे हैं। श्रीरामचन्द्रजी संग्राममें क्रुद्ध हुए और अत्यन्त तीक्ष्ण बाण चले ॥ १ ॥

अवलोकि खरतर तीर। मुरि चले निसिचर बीर ॥
भए क्रुद्ध तीनिउ भाइ। जो भागि रन ते जाइ ॥

अत्यन्त तीक्ष्ण बाणोंको देखकर राक्षस वीर पीठ दिखाकर भाग चले। तब खर, दूषण और त्रिशिरा तीनों भाई क्रुद्ध होकर बोले—जो रणसे भागकर जायगा, ॥ २ ॥

तेहि बधब हम निज पानि। फिरे मरन मन महुँ ठानि ॥
आयुध अनेक प्रकार। सनमुख ते करहिं प्रहार ॥

उसका हम अपने हाथों वध करेंगे। तब मनमें मरना ठानकर भागते हुए राक्षस लौट पड़े और सामने होकर वे अनेकों प्रकारके हथियारोंसे श्रीरामजीपर प्रहार करने लगे ॥३॥

रिपु परम कोपे जानि। प्रभु धनुष सर संधानि ॥
छाँड़े बिपुल नाराच। लगे कटन बिकट पिसाच ॥

शत्रुको अत्यन्त कुपित जानकर प्रभुने धनुषपर बाण चढ़ाकर बहुत-से बाण छोड़े, जिनसे भयानक राक्षस कटने लगे ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उर सीस भुज कर चरन। जहँ तहँ लगे महि परन॥
चिक्करत लागत बान। धर परत कुधर समान॥

उनकी छाती, सिर, भुजा, हाथ और पैर जहाँ-तहाँ पृथ्वीपर गिरने लगे। बाण लगते ही वे हाथीकी तरह चिग्घाड़ते हैं। उनके पहाड़के समान धड़ कट-कटकर गिर रहे हैं॥ ५॥

भट कटत तन सत खंड। पुनि उठत करि पाखंड॥
नभ उड़त बहु भुज मुंड। बिनु मौलि धावत रुंड॥

योद्धाओंके शरीर कटकर सैकड़ों टुकड़े हो जाते हैं। वे फिर माया करके उठ खड़े होते हैं। आकाशमें बहुत-सी भुजाएँ और सिर उड़ रहे हैं तथा बिना सिरके धड़ दौड़ रहे हैं॥ ६॥

खग कंक काक सृगाल। कटकटहिं कठिन कराल॥

चील [या क्रौंच], कौए आदि पक्षी और सियार कठोर और भयङ्कर कट-कट शब्द कर रहे हैं॥ ७॥

छं०—कटकटहिं जंबुक भूत प्रेत पिसाच खर्पर संचहीं।
बेताल बीर कपाल ताल बजाइ जोगिनि नंचहीं॥
रघुबीर बान प्रचंड खंडहिं भटन्ह के उर भुज सिरा।
जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं धर धरु धरु करहिं भयकर गिरा॥ १॥

सियार कटकटाते हैं, भूत, प्रेत और पिशाच खोपड़ियाँ बटोर रहे हैं [अथवा खप्पर भर रहे हैं]। वीर-बैताल खोपड़ियोंपर ताल दे रहे हैं और योगिनियाँ नाच रही हैं। श्रीरघुवीरके प्रचण्ड बाण योद्धाओंके वक्षःस्थल, भुजा और सिरोंके टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं। उनके धड़ जहाँ-तहाँ गिर पड़ते हैं; फिर उठते और लड़ते हैं और 'पकड़ो-पकड़ो' का भयङ्कर शब्द करते हैं॥ १॥

अंतावरीं गहि उड़त गीध पिसाच कर गहि धावहीं।
संग्राम पुर बासी मनहुँ बहु बाल गुड़ी उड़ावहीं॥
मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट कहँरत परे।
अवलोकि निज दल बिकल भट तिसिरादि खर दूषन फिरे॥ २॥

अँतड़ियोंके एक छोरको पकड़कर गीध उड़ते हैं और उन्हींका दूसरा छोर हाथसे पकड़कर पिशाच दौड़ते हैं। ऐसा मालूम होता है मानो संग्रामरूपी नगरके निवासी बहुत-से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बालक पतंग उड़ा रहे हों। अनेकों योद्धा मारे और पछाड़े गये। बहुत-से जिनके हृदय विदीर्ण हो गये हैं, पड़े कराह रहे हैं। अपनी सेनाको व्याकुल देखकर त्रिशिरा और खर-दूषण आदि योद्धा श्रीरामजीकी ओर मुड़े ॥ २ ॥

सर सक्ति तोमर परसु सूल कृपान एकहि बारहीं।
करि कोप श्रीरघुबीर पर अगनित निसाचर डारहीं ॥
प्रभु निमिष महुँ रिपु सर निवारि पचारि डारे सायका।
दस दस बिसिख उर माझ मारे सकल निसिचर नायका ॥ ३ ॥

अनगिनत राक्षस क्रोध करके बाण, शक्ति, तोमर, फरसा, शूल और कृपाण एक ही बारमें श्रीरघुवीरपर छोड़ने लगे। प्रभुने पलभरमें शत्रुओंके बाणोंको काटकर, ललकारकर उनपर अपने बाण छोड़े। सब राक्षस-सेनापतियोंके हृदयमें दस-दस बाण मारे ॥ ३ ॥

महि परत उठि भट भिरत मरत न करत माया अति घनी।
सुर डरत चौदह सहस प्रेत बिलोकि एक अवध धनी ॥
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक कर्‌यो।
देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपु दल लरि मर्‌यो ॥ ४ ॥

योद्धा पृथ्वीपर गिर पड़ते हैं। फिर उठकर भिड़ते हैं। मरते नहीं, बहुत प्रकारकी अतिशय माया रचते हैं। देवता यह देखकर डरते हैं कि प्रेत (राक्षस) चौदह हजार हैं और अयोध्यानाथ श्रीरामजी अकेले हैं। देवता और मुनियोंको भयभीत देखकर मायाके स्वामी प्रभुने एक बड़ा कौतुक किया, जिससे शत्रुओंकी सेना एक-दूसरेको रामरूप देखने लगी और आपसमें ही युद्ध करके लड़ मरी ॥ ४ ॥

दो०—राम राम कहि तनु तजहिं पावहिं पद निर्बान।
करि उपाय रिपु मारे छन महुँ कृपानिधान ॥ २० (क) ॥

सब ['यही राम है, इसे मारो' इस प्रकार] राम-राम कहकर शरीर छोड़ते हैं और निर्वाण (मोक्ष) पद पाते हैं। कृपानिधान श्रीरामजीने यह उपाय करके क्षणभरमें शत्रुओंको मार डाला ॥ २० (क) ॥

हरषित बरषहिं सुमन सुर बाजहिं गगन निसान।
अस्तुति करि करि सब चले सोभित बिबिध बिमान ॥ २० (ख) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देवता हर्षित होकर फूल बरसाते हैं, आकाशमें नगाड़े बज रहे हैं। फिर वे सब स्तुति कर-करके अनेकों विमानोंपर सुशोभित हुए चले गये॥ २० (ख)॥

चौ०—जब रघुनाथ समर रिपु जीते। सुर नर मुनि सब के भय बीते॥
तब लछिमन सीतहि लै आए। प्रभु पद परत हरषि उर लाए॥

जब श्रीरघुनाथजीने युद्धमें शत्रुओंको जीत लिया तथा देवता, मनुष्य और मुनि सबके भय नष्ट हो गये, तब लक्ष्मणजी सीताजीको ले आये। चरणोंमें पड़ते हुए उनको प्रभुने प्रसन्नतापूर्वक उठाकर हृदयसे लगा लिया॥ १॥

सीता चितव स्याम मृदु गाता। परम प्रेम लोचन न अघाता॥
पंचबटीं बसि श्रीरघुनायक। करत चरित सुर मुनि सुखदायक॥

सीताजी श्रीरामजीके श्याम और कोमल शरीरको परम प्रेमके साथ देख रही हैं, नेत्र अघाते नहीं हैं। इस प्रकार पञ्चवटीमें बसकर श्रीरघुनाथजी देवताओं और मुनियोंको सुख देनेवाले चरित्र करने लगे॥ २॥

धुआँ देखि खरदूषन केरा। जाइ सुपनखाँ रावन प्रेरा॥
बोली बचन क्रोध करि भारी। देस कोस कै सुरति बिसारी॥

खर-दूषणका विध्वंस देखकर शूर्पणखाने जाकर रावणको भड़काया। वह बड़ा क्रोध करके वचन बोली—तूने देश और खजानेकी सुधि ही भुला दी॥ ३॥

करसि पान सोवसि दिनु राती। सुधि नहिं तव सिर पर आराती॥
राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा॥
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ॥
संग तें जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान तें लाजा॥

शराब पी लेता है और दिन-रात पड़ा सोता रहता है। तुझे खबर नहीं है कि शत्रु तेरे सिरपर खड़ा है? नीतिके बिना राज्य और धर्मके बिना धन प्राप्त करनेसे, भगवान्‌को समर्पण किये बिना उत्तम कर्म करनेसे और विवेक उत्पन्न किये बिना विद्या पढ़नेसे परिणाममें श्रम ही हाथ लगता है। विषयोंके सङ्गसे संन्यासी, बुरी सलाहसे राजा, मानसे ज्ञान, मदिरापानसे लज्जा,॥ ४-५॥

प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नम्रताके बिना (नम्रता न होनेसे) प्रीति और मद (अहंकार) से गुणवान् शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं, इस प्रकार नीति मैंने सुनी है ॥ ६ ॥

सो०—रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि ।
अस कहि बिबिध बिलाप करि लागी रोदन करन ॥ २१ (क) ॥

शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी और सर्पको छोटा करके नहीं समझना चाहिये। ऐसा कहकर शूर्पणखा अनेक प्रकारसे विलाप करके रोने लगी ॥ २१ (क) ॥

दो०—सभा माझ परि ब्याकुल बहु प्रकार कह रोइ ।
तोहि जिअत दसकंधर मोरि कि असि गति होइ ॥ २१ (ख) ॥

[रावणकी] सभाके बीच वह व्याकुल होकर पड़ी हुई बहुत प्रकारसे रो-रोकर कह रही है कि अरे दशग्रीव ! तेरे जीते-जी मेरी क्या ऐसी दशा होनी चाहिये ? ॥ २१ (ख) ॥

चौ०—सुनत सभासद उठे अकुलाई । समुझाई गहि बाँह उठाई ॥
कह लंकेस कहसि निज बाता । केइँ तव नासा कान निपाता ॥

शूर्पणखाके वचन सुनते ही सभासद् अकुला उठे। उन्होंने शूर्पणखाकी बाँह पकड़कर उसे उठाया और समझाया। लङ्कापति रावणने कहा—अपनी बात तो बता। किसने तेरे नाक-कान काट लिये ? ॥ १ ॥

अवध नृपति दसरथ के जाए । पुरुष सिंघ बन खेलन आए ॥
समुझि परी मोहि उन्ह कै करनी । रहित निसाचर करिहहिं धरनी ॥

[वह बोली—] अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र, जो पुरुषोंमें सिंहके समान हैं, वनमें शिकार खेलने आये हैं। मुझे उनकी करनी ऐसी समझ पड़ी है कि वे पृथ्वीको राक्षसोंसे रहित कर देंगे ॥ २ ॥

जिन्ह कर भुजबल पाइ दसानन । अभय भए बिचरत मुनि कानन ॥
देखत बालक काल समाना । परम धीर धन्वी गुन नाना ॥

जिनकी भुजाओंका बल पाकर हे दशमुख! मुनिलोग वनमें निर्भय होकर विचरने लगे हैं। वे देखनेमें तो बालक हैं, पर हैं कालके समान। वे परम धीर, श्रेष्ठ धनुर्धर और अनेकों गुणोंसे युक्त हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतुलित बल प्रताप द्वौ भ्राता। खल बध रत सुर मुनि सुखदाता ॥
सोभा धाम राम अस नामा। तिन्ह के संग नारि एक स्यामा ॥

दोनों भाइयोंका बल और प्रताप अतुलनीय है। वे दुष्टोंके वध करनेमें लगे हैं और देवता तथा मुनियोंको सुख देनेवाले हैं। वे शोभाके धाम हैं, 'राम' ऐसा उनका नाम है। उनके साथ एक तरुणी सुन्दरी स्त्री है ॥ ४ ॥

रूप रासि बिधि नारि सँवारी। रति सत कोटि तासु बलिहारी ॥
तासु अनुज काटे श्रुति नासा। सुनि तव भगिनि करहिं परिहासा ॥

विधाताने उस स्त्रीको ऐसी रूपकी राशि बनाया है कि सौ करोड़ रति (कामदेवकी स्त्री) उसपर निछावर हैं। उन्हींके छोटे भाईने मेरे नाक-कान काट डाले। मैं तेरी बहिन हूँ, यह सुनकर वे मेरी हँसी करने लगे ॥ ५ ॥

खर दूषन सुनि लगे पुकारा। छन महुँ सकल कटक उन्ह मारा ॥
खर दूषन तिसिरा कर घाता। सुनि दससीस जरे सब गाता ॥

मेरी पुकार सुनकर खर-दूषण सहायता करने आये। पर उन्होंने क्षणभरमें सारी सेनाको मार डाला। खर, दूषण और त्रिशिराका वध सुनकर रावणके सारे अङ्ग जल उठे ॥ ६ ॥

दो०—सूपनखहि समुझाइ करि बल बोलेसि बहु भाँति।
गयउ भवन अति सोचबस नीद परइ नहिं राति ॥२२॥

उसने शूर्पणखाको समझाकर बहुत प्रकारसे अपने बलका बखान किया, किन्तु [मनमें] वह अत्यन्त चिन्तावश होकर अपने महलमें गया, उसे रातभर नींद नहीं पड़ी ॥ २२ ॥

चौ०—सुर नर असुर नाग खग माहीं। मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं ॥
खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता ॥

[वह मन-ही-मन विचार करने लगा—] देवता, मनुष्य, असुर, नाग और पक्षियोंमें कोई ऐसा नहीं जो मेरे सेवकको भी पा सके। खर-दूषण तो मेरे ही समान बलवान् थे। उन्हें भगवान्‌के सिवा और कौन मार सकता है? ॥ १ ॥

सुर रंजन भंजन महि भारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा ॥
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ ॥

देवताओंको आनन्द देनेवाले और पृथ्वीका भार हरण करनेवाले भगवान्‌ने ही यदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवतार लिया है तो मैं जाकर उनसे हठपूर्वक वैर करूँगा और प्रभुके बा
[के आघात] से प्राण छोड़कर भवसागरसे तर जाऊँगा ॥ २ ॥

होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा।
जौं नररूप भूपसुत कोऊ। हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ।

इस तामस शरीरसे भजन तो होगा नहीं; अतएव मन, वचन और कर्म
यही दृढ़ निश्चय है । और यदि वे मनुष्यरूप कोई राजकुमार होंगे तो उन दोनों
रणमें जीतकर उनकी स्त्रीको हर लूँगा ॥ ३ ॥

चला अकेल जान चढ़ि तहवाँ। बस मारीच सिंधु तट जहवाँ।
इहाँ राम जसि जुगुति बनाई। सुनहु उमा सो कथा सुहाई।

[यों विचारकर] रावण रथपर चढ़कर अकेला ही वहाँ चला जहाँ समुद्र
तटपर मारीच रहता था [शिवजी कहते हैं कि—] हे पार्वती ! यहाँ श्रीरामचन्द्रजी
जैसी युक्ति रची, वह सुन्दर कथा सुनो ॥ ४ ॥

दो०—लछिमन गए बनहिं जब लेन मूल फल कंद।
जनकसुता सन बोले बिहसि कृपा सुख बृंद ॥ २३ ॥

लक्ष्मणजी जब कन्द-मूल-फल लेनेके लिये वनमें गये, तब [अकेलेमें
कृपा और सुखके समूह श्रीरामचन्द्रजी हँसकर जानकीजीसे बोले—॥ २३ ॥

चौ०—सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नरलीला।
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा।

हे प्रिये ! हे सुन्दर पातिव्रत-धर्मका पालन करनेवाली सुशीले ! सुनो ।
अब कुछ मनोहर मनुष्यलीला करूँगा । इसलिये जबतक मैं राक्षसोंका नाश कर
तबतक तुम अग्निमें निवास करो ॥ १ ॥

जबहिं राम सब कहा बखानी। प्रभु पद धरि हियँ अनल समानी।
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता। तैसइ सील रूप सुबिनीता।

श्रीरामजीने ज्यों ही सब समझाकर कहा, त्यों ही श्रीसीताजी प्रभुके चरणों
हृदयमें धरकर अग्निमें समा गयीं । सीताजीने अपनी ही छायामूर्ति वहाँ रख
जो उनके-जैसे ही शील-स्वभाव और रूपवाली तथा वैसे ही विनम्र थी ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लछिमनहूँ यह मरमु न जाना। जो कछु चरित रचा भगवाना॥
दसमुख गयउ जहाँ मारीचा। नाइ माथ स्वारथ रत नीचा॥

भगवान्ने जो कुछ लीला रची, इस रहस्यको लक्ष्मणजीने भी नहीं जाना। स्वार्थ-परायण और नीच रावण वहाँ गया जहाँ मारीच था और उसको सिर नवाया॥ ३॥

नवनि नीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई॥
भयदायक खल कै प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी॥

नीचका झुकना (नम्रता) भी अत्यन्त दुःखदायी होता है। जैसे अंकुश, धनुष, साँप और बिल्लीका झुकना। हे भवानी! दुष्टकी मीठी वाणी भी [उसी प्रकार] भय देनेवाली होती है, जैसे बिना ऋतुके फूल!॥ ४॥

दो०—करि पूजा मारीच तब सादर पूछी बात।
कवन हेतु मन ब्यग्र अति अकसर आयहु तात॥ २४॥

तब मारीचने उसकी पूजा करके आदरपूर्वक बात पूछी—हे तात! आपका मन किस कारण इतना अधिक व्यग्र है और आप अकेले आये हैं?॥ २४॥

चौ०—दसमुख सकल कथा तेहि आगें। कही सहित अभिमान अभागें॥
होहु कपट मृग तुम्ह छलकारी। जेहि बिधि हरि आनौं नृपनारी॥

भाग्यहीन रावणने सारी कथा अभिमानसहित उसके सामने कही [और फिर कहा—] तुम छल करनेवाले कपटमृग बनो, जिस उपायसे मैं उस राजवधूको हर लाऊँ॥ १॥

तेहिं पुनि कहा सुनहु दससीसा। ते नररूप चराचर ईसा॥
तासों तात बयरु नहिं कीजै। मारें मरिअ जिआएँ जीजै॥

तब उसने (मारीचने) कहा—हे दशशीश! सुनिये। वे मनुष्यरूपमें चराचरके ईश्वर हैं। हे तात! उनसे वैर न कीजिये। उन्हींके मारनेसे मरना और उनके जिलानेसे जीना होता है (सबका जीवन-मरण उन्हींके अधीन है)॥ २॥

मुनि मख राखन गयउ कुमारा। बिनु फर सर रघुपति मोहि मारा॥
सत जोजन आयउँ छन माहीं। तिन्ह सन बयरु किएँ भल नाहीं॥

यही राजकुमार मुनि विश्वामित्रके यज्ञकी रक्षाके लिये गये थे। उस समय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरघुनाथजीने बिना फलका बाण मुझे मारा था, जिससे मैं क्षणभरमें सौ योजन
आ गिरा। उनसे वैर करनेमें भलाई नहीं है ॥ ३ ॥

भइ मम कीट भृंग की नाई। जहँ तहँ मैं देखउँ दोउ भाई॥
जौं नर तात तदपि अति सूरा। तिन्हहि बिरोधि न आइहि पूरा॥

मेरी दशा तो भृंगीके कीड़ेकी-सी हो गयी है। अब मैं जहाँ-तहाँ श्रीराम-लक्ष्मण दोनों भाइयोंको ही देखता हूँ। और हे तात! यदि वे मनुष्य हैं, तो भी बड़े शूरवीर हैं। उनसे विरोध करनेमें पूरा न पड़ेगा (सफलता नहीं मिलेगी) ॥ ४ ॥

दो०—जेहिं ताड़का सुबाहु हति खंडेउ हर कोदंड।
खर दूषन तिसिरा बधेउ मनुज कि अस बरिबंड ॥ २५ ॥

जिसने ताड़का और सुबाहुको मारकर शिवजीका धनुष तोड़ दिया और खर, दूषण और त्रिशिराका वध कर डाला, ऐसा प्रचण्ड बली भी कहीं मनुष्य हो सकता है ॥ २५ ॥

चौ०—जाहु भवन कुल कुसल बिचारी। सुनत जरा दीन्हिसि बहु गारी॥
गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा। कहु जग मोहि समान को जोधा॥

अतः अपने कुलकी कुशल विचारकर आप लौट जाइये। यह सुनकर रावण जल उठा और उसने बहुत-सी गालियाँ दीं (दुर्वचन कहे)। [कहा—] अरे मूर्ख! तू गुरुकी तरह मुझे ज्ञान सिखाता है? बता तो, संसारमें मेरे समान योद्धा कौन है? ॥ १ ॥

तब मारीच हृदयँ अनुमाना। नवहि बिरोधें नहिं कल्याना॥
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कबि भानस गुनी॥

तब मारीचने हृदयमें अनुमान किया कि शस्त्री (शस्त्रधारी), मर्मी (भेद जाननेवाला), समर्थ स्वामी, मूर्ख, धनवान्, वैद्य, भाट, कवि और रसोइया—इन नौ व्यक्तियोंसे विरोध (वैर) करनेमें कल्याण (कुशल) नहीं होता ॥ २ ॥

उभय भाँति देखा निज मरना। तब ताकिसि रघुनायक सरना॥
उतरु देत मोहि बधब अभागें। कस न मरौं रघुपति सर लागें॥

जब मारीचने दोनों प्रकारसे अपना मरण देखा, तब उसने श्रीरघुनाथजीकी शरण तकी (अर्थात् उनकी शरण जानेमें ही कल्याण समझा)। [सोचा कि] उत्तर देते ही (नाहीं करते ही) यह अभागा मुझे मार डालेगा। फिर श्रीरघुनाथजीके बाण लगनेसे ही क्यों न मरूँ? ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अस जियँ जानि दसानन संगा। चला राम पद प्रेम अभंगा॥
मन अति हरष जनाव न तेही। आजु देखिहउँ परम सनेही॥

हृदयमें ऐसा समझकर वह रावणके साथ चला। श्रीरामजीके चरणोंमें उसका अखण्ड प्रेम है। उसके मनमें इस बातका अत्यन्त हर्ष है कि आज मैं अपने परम स्नेही श्रीरामजीको देखूँगा; किन्तु उसने यह हर्ष रावणको नहीं जनाया॥ ४॥

छं०—निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौं।
श्री सहित अनुज समेत कृपानिकेत पद मन लाइहौं॥
निर्बान दायक क्रोध जा कर भगति अबसहि बसकरी।
निज पानि सर संधानि सो मोहि बधिहि सुखसागर हरी॥

[वह मन-ही-मन सोचने लगा—] अपने परम प्रियतमको देखकर नेत्रोंको सफल करके सुख पाऊँगा। जानकीजीसहित और छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत कृपानिधान श्रीरामजीके चरणोंमें मन लगाऊँगा। जिनका क्रोध भी मोक्ष देनेवाला है, और जिनकी भक्ति उन अवश (किसीके वशमें न होनेवाले, स्वतन्त्र भगवान्) को भी वशमें करनेवाली है, अहा! वे ही आनन्दके समुद्र श्रीहरि अपने हाथोंसे बाण सन्धानकर मेरा वध करेंगे!

दो०—मम पाछें धर धावत धरें सरासन बान।
फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहउँ धन्य न मो सम आन॥ २६॥

धनुष-बाण धारण किये मेरे पीछे-पीछे पृथ्वीपर (पकड़नेके लिये) दौड़ते हुए प्रभुको मैं फिर-फिरकर देखूँगा। मेरे समान धन्य दूसरा कोई नहीं है॥ २६॥

चौ०—तेहि बन निकट दसानन गयऊ। तब मारीच कपटमृग भयऊ॥
अति बिचित्र कछु बरनि न जाई। कनक देह मनि रचित बनाई॥

जब रावण उस वनके (जिस वनमें श्रीरघुनाथजी रहते थे) निकट पहुँचा, तब मारीच कपटमृग बन गया। वह अत्यन्त ही विचित्र था, कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। सोनेका शरीर मणियोंसे जड़कर बनाया था॥ १॥

सीता परम रुचिर मृग देखा। अंग अंग सुमनोहर बेषा॥
सुनहु देव रघुबीर कृपाला। एहि मृग कर अति सुंदर छाला॥

सीताजीने उस परम सुन्दर हिरनको देखा, जिसके अंग-अंगकी छटा अत्यन्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनोहर थी। [वे कहने लगीं—] हे देव ! हे कृपालु रघुवीर ! सुनिये। इस मृग
छाल बहुत ही सुन्दर है ॥ २ ॥

सत्यसंध प्रभु बधि करि एही। आनहु चर्म कहति बैदेही॥
तब रघुपति जानत सब कारन। उठे हरषि सुर काजु सँवारन॥

जानकीजीने कहा—हे सत्यप्रतिज्ञ प्रभो ! इसको मारकर इसका चमड़ा
दीजिये। तब श्रीरघुनाथजी [मारीचके कपटमृग बननेका] सब कारण जानते
भी, देवताओंका कार्य बनानेके लिये हर्षित होकर उठे ॥ ३ ॥

मृग बिलोकि कटि परिकर बाँधा। करतल चाप रुचिर सर साँधा॥
प्रभु लछिमनहि कहा समुझाई। फिरत बिपिन निसिचर बहु भाई॥

हिरनको देखकर श्रीरामजीने कमरमें फेंटा बाँधा और हाथमें धनुष लेकर उ
सुन्दर (दिव्य) बाण चढ़ाया। फिर प्रभुने लक्ष्मणजीको समझाकर कहा—हे भा
वनमें बहुत-से राक्षस फिरते हैं ॥ ४ ॥

सीता केरि करेहु रखवारी। बुधि बिबेक बल समय बिचारी॥
प्रभुहि बिलोकि चला मृग भाजी। धाए रामु सरासन साजी॥

तुम बुद्धि और विवेकके द्वारा बल और समयका विचार करके सीताकी रखवाली क
प्रभुको देखकर मृग भाग चला। श्रीरामचन्द्रजी भी धनुष चढ़ाकर उसके पीछे दौड़े ॥

निगम नेति सिव ध्यान न पावा। मायामृग पाछें सो धावा॥
कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई। कबहुँक प्रगटइ कबहुँ छपाई॥

वेद जिनके विषयमें 'नेति-नेति' कहकर रह जाते हैं और शिवजी भी जिन्हें ध्या
नहीं पाते (अर्थात् जो मन और वाणीसे नितान्त परे हैं), वे ही श्रीरामजी मायासे
हुए मृगके पीछे दौड़ रहे हैं ! वह कभी निकट आ जाता है और फिर दूर भाग
है। कभी तो प्रकट हो जाता है और कभी छिप जाता है ॥ ६ ॥

प्रगटत दुरत करत छल भूरी। एहि बिधि प्रभुहि गयउ लै दूरी॥
तब तकि राम कठिन सर मारा। धरनि परेउ करि घोर पुकारा॥

इस प्रकार प्रकट होता और छिपता हुआ तथा बहुतेरे छल करता हुआ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुको दूर ले गया। तब श्रीरामचन्द्रजीने तककर (निशाना साधकर) कठोर बाण मारा, [जिसके लगते ही] वह घोर शब्द करके पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥७॥

लछिमन कर प्रथमहिं लै नामा। पाछें सुमिरेसि मन महुँ रामा॥
प्रान तजत प्रगटेसि निज देहा। सुमिरेसि रामु समेत सनेहा॥

पहले लक्ष्मणजीका नाम लेकर उसने पीछे मनमें श्रीरामजीका स्मरण किया। प्राण त्याग करते समय उसने अपना (राक्षसी) शरीर प्रकट किया और प्रेमसहित श्रीरामजीका स्मरण किया ॥८॥

अंतर प्रेम तासु पहिचाना। मुनि दुर्लभ गति दीन्हि सुजाना॥

सुजान (सर्वज्ञ) श्रीरामजीने उसके हृदयके प्रेमको पहचानकर उसे वह गति (अपना परमपद) दी जो मुनियोंको भी दुर्लभ है ॥९॥

दो०—बिपुल सुमन सुर बरषहिं गावहिं प्रभु गुन गाथ।
निज पद दीन्ह असुर कहुँ दीनबंधु रघुनाथ ॥२७॥

देवता बहुत-से फूल बरसा रहे हैं और प्रभुके गुणोंकी गाथाएँ (स्तुतियाँ) गा रहे हैं [कि] श्रीरघुनाथजी ऐसे दीनबन्धु हैं कि उन्होंने असुरको भी अपना परमपद दे दिया ॥२७॥

चौ०—खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा। सोह चाप कर कटि तूनीरा॥
आरत गिरा सुनी जब सीता। कह लछिमन सन परम सभीता॥

दुष्ट मारीचको मारकर श्रीरघुवीर तुरंत लौट पड़े। हाथमें धनुष और कमरमें तरकस शोभा दे रहा है। इधर जब सीताजीने दुःखभरी वाणी (मरते समय मारीचकी 'हा लक्ष्मण' की आवाज) सुनी तो वे बहुत ही भयभीत होकर लक्ष्मणजीसे कहने लगीं—॥१॥

जाहु बेगि संकट अति भ्राता। लछिमन बिहसि कहा सुनु माता॥
भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई। सपनेहुँ संकट परइ कि सोई॥

तुम शीघ्र जाओ, तुम्हारे भाई बड़े संकटमें हैं। लक्ष्मणजीने हँसकर कहा— माता! सुनो, जिनके भ्रुकुटिविलास (भौंके इशारे) मात्रसे सारी सृष्टिका लय (प्रलय) हो जाता है, वे श्रीरामजी क्या कभी स्वप्नमें भी संकटमें पड़ सकते हैं ?॥२॥

मरम बचन जब सीता बोला। हरि प्रेरित लछिमन मन डोला॥
बन दिसि देव सौंपि सब काहू। चले जहाँ रावन ससि राहू॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसपर जब सीताजी कुछ मर्म-वचन (हृदयमें चुभनेवाले वचन) कहने लगीं, त
भगवान्‌की प्रेरणासे लक्ष्मणजीका मन भी चञ्चल हो उठा। वे श्रीसीताजीको वन अ
दिशाओंके देवताओंको सौंपकर वहाँ चले जहाँ रावणरूपी चन्द्रमाके लिये राहुरूप श्रीरामजी

सून बीच दसकंधर देखा। आवा निकट जती कें बेषा
जाकें डर सुर असुर डेराहीं। निसि न नीद दिन अन्न न खाहीं

रावण सूना मौका देखकर यति (संन्यासी) के वेषमें श्रीसीताजीके सम
आया। जिसके डरसे देवता और दैत्यतक इतना डरते हैं कि रातको नींद न
आती और दिनमें [भरपेट] अन्न नहीं खाते ॥४॥

सो दससीस स्वान की नाईं। इत उत चितइ चला भड़िहाईं
इमि कुपंथ पग देत खगेसा। रह न तेज तन बुधि बल लेसा

वही दस सिरवाला रावण कुत्तेकी तरह इधर-उधर ताकता हुआ भड़िहाई* (चो
के लिये चला। [काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़जी ! इस प्रकार कुमार्गपर
रखते ही शरीरमें तेज तथा बुद्धि एवं बलका लेश भी नहीं रह जाता ॥५॥

* सूना पाकर कुत्ता चुपके-से बर्तन-भाँड़ोंमें मुँह डालकर कुछ चुरा ले ज
है उसे 'भड़िहाई' कहते हैं।

नाना बिधि करि कथा सुहाई। राजनीति भय प्रीति देखाई
कह सीता सुनु जती गोसाईं। बोलेहु बचन दुष्ट की नाईं

रावणने अनेकों प्रकारकी सुहावनी कथाएँ रचकर सीताजीको राजनीति, भय और
दिखलाया। सीताजीने कहा—हे यति गोसाईं ! सुनो, तुमने तो दुष्टकी तरह वचन कहे ॥६

तब रावन निज रूप देखावा। भई सभय जब नाम सुनावा
कह सीता धरि धीरजु गाढ़ा। आइ गयउ प्रभु रहु खल ठाढ़ा

तब रावणने अपना असली रूप दिखलाया, और जब नाम सुनाया तब तो सीत
भयभीत हो गयीं। उन्होंने गहरा धीरज धरकर कहा—अरे दुष्ट ! खड़ा तो रह, प्रभु आ गय

जिमि हरिबधुहि छुद्र सस चाहा। भएसि कालबस निसिचर नाहा
सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना

जैसे सिंहकी स्त्रीको तुच्छ खरगोश चाहे, वैसे ही अरे राक्षसराज ! तू [मेरी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करके] कालके वश हुआ है। ये वचन सुनते ही रावणको क्रोध आ गया। परन्तु मनमें उसने सीताजीके चरणोंकी वन्दना करके सुख माना॥ ८॥

दो०—क्रोधवंत तब रावन लीन्हिसि रथ बैठाइ।
चला गगनपथ आतुर भयँ रथ हाँकि न जाइ॥ २८॥

फिर क्रोधमें भरकर रावणने सीताजीको रथपर बैठा लिया और वह बड़ी उतावलीके साथ आकाशमार्गसे चला; किन्तु डरके मारे उससे रथ हाँका नहीं जाता था॥ २८॥

चौ०—हा जग एक बीर रघुराया। केहिं अपराध बिसारेहु दाया॥
आरति हरन सरन सुखदायक। हा रघुकुल सरोज दिननायक॥

[सीताजी विलाप कर रही थीं—] हा जगत्‌के अद्वितीय वीर श्रीरघुनाथजी! आपने किस अपराधसे मुझपर दया भुला दी। हे दुःखोंके हरनेवाले, हे शरणागतको सुख देनेवाले, हा रघुकुलरूपी कमलके सूर्य!॥ १॥

हा लछिमन तुम्हार नहिं दोसा। सो फलु पायउँ कीन्हेउँ रोसा॥
बिबिध बिलाप करति बैदेही। भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही॥

हा लक्ष्मण! तुम्हारा दोष नहीं है। मैंने क्रोध किया, उसका फल पाया। श्रीजानकीजी बहुत प्रकारसे विलाप कर रही हैं—[हाय!] प्रभुकी कृपा तो बहुत है, परन्तु वे स्नेही प्रभु बहुत दूर रह गये हैं॥ २॥

बिपति मोरि को प्रभुहि सुनावा। पुरोडास चह रासभ खावा॥
सीता कै बिलाप सुनि भारी। भए चराचर जीव दुखारी॥

प्रभुको मेरी यह विपत्ति कौन सुनावे? यज्ञके अन्नको गदहा खाना चाहता है! सीताजीका भारी विलाप सुनकर जड़-चेतन सभी जीव दुखी हो गये॥ ३॥

गीधराज सुनि आरत बानी। रघुकुलतिलक नारि पहिचानी॥
अधम निसाचर लीन्हें जाई। जिमि मलेछ बस कपिला गाई॥

गृध्रराज जटायुने सीताजीकी दुःखभरी वाणी सुनकर पहचान लिया कि ये रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीकी पत्नी हैं। [उसने देखा कि] नीच राक्षस इनको [बुरी तरह] लिये जा रहा है, जैसे कपिला गाय म्लेच्छके पाले पड़ गयी हो॥ ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा। करिहउँ जातुधान कर नासा
धावा क्रोधवंत खग कैसें। छूटइ पबि परबत कहुँ जैसें

[वह बोला—] हे सीते पुत्री ! भय मत कर। मैं इस राक्षसका नाश करूँगा
[यह कहकर] वह पक्षी क्रोधमें भरकर कैसे दौड़ा, जैसे पर्वतकी ओर वज्र छूटता है

रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही। निर्भय चलेसि न जानेहि मोही
आवत देखि कृतांत समाना। फिरि दसकंधर कर अनुमाना

[उसने ललकारकर कहा—] रे-रे दुष्ट ! खड़ा क्यों नहीं होता ? निडर हो
चल दिया ! मुझे तूने नहीं जाना ? उसको यमराजके समान आता हुआ देख
रावण घूमकर मनमें अनुमान करने लगा—॥ ६ ॥

की मैनाक कि खगपति होई। मम बल जान सहित पति सोई
जाना जरठ जटायू एहा। मम कर तीरथ छाँड़िहि देहा

यह या तो मैनाक पर्वत है, या पक्षियोंका स्वामी गरुड़। पर वह (गरुड़) तो अ
स्वामी विष्णुसहित मेरे बलको जानता है ! [कुछ पास आनेपर] रावणने उसे पह
लिया [और बोला—] यह तो बूढ़ा जटायु है ! यह मेरे हाथरूपी तीर्थमें शरीर छोड़े

सुनत गीध क्रोधातुर धावा। कह सुनु रावन मोर सिखाव
तजि जानकिहि कुसल गृह जाहू। नाहिं त अस होइहि बहुबा

यह सुनते ही गीध क्रोधमें भरकर बड़े वेगसे दौड़ा और बोला—रावण !
सिखावन सुन। जानकीजीको छोड़कर कुशलपूर्वक अपने घर चला जा। नहीं
बहुत भुजाओंवाले ! ऐसा होगा कि—॥ ८ ॥

राम रोष पावक अति घोरा। होइहि सकल सलभ कुल तो
उतरु न देत दसानन जोधा। तबहिं गीध धावा करि क्रो

श्रीरामजीके क्रोधरूपी अत्यन्त भयानक अग्निमें तेरा सारा वंश पतिंगा [होकर भ
हो जायगा। योद्धा रावण कुछ उत्तर नहीं देता। तब गीध क्रोध करके दौड़ा ॥ ९ ॥

धरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा। सीतहि राखि गीध पुनि फि
चोचन्ह मारि बिदारेसि देही। दंड एक भइ मुरुछा ते

उसने [रावणके] बाल पकड़कर उसे रथके नीचे उतार लिया, रावण पृथ्वीप

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पड़ा। गीध सीताजीको एक ओर बैठाकर फिर लौटा और चोंचोंसे मार-मारकर रावणके शरीरको विदीर्ण कर डाला। इससे उसे एक घड़ीके लिये मूर्छा हो गयी॥ १०॥

तब सक्रोध निसिचर खिसिआना। काढ़ेसि परम कराल कृपाना॥
काटेसि पंख परा खग धरनी। सुमिरि राम करि अद्भुत करनी॥

तब खिसियाये हुए रावणने क्रोधयुक्त होकर अत्यन्त भयानक कटार निकाली और उससे जटायुके पंख काट डाले। पक्षी (जटायु) श्रीरामजीकी अद्भुत लीलाका स्मरण करके पृथ्वीपर गिर पड़ा॥ ११॥

सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी। चला उताइल त्रास न थोरी॥
करति बिलाप जाति नभ सीता। ब्याध बिबस जनु मृगी सभीता॥

सीताजीको फिर रथपर चढ़ाकर रावण बड़ी उतावलीके साथ चला, उसे भय कम न था! सीताजी आकाशमें विलाप करती हुई जा रही हैं। मानो व्याधेके वशमें पड़ी हुई (जालमें फँसी हुई) कोई भयभीत हिरनी हो!॥ १२॥

गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी। कहि हरि नाम दीन्ह पट डारी॥
एहि बिधि सीतहि सो लै गयऊ। बन असोक महँ राखत भयऊ॥

पर्वतपर बैठे हुए बंदरोंको देखकर सीताजीने हरिनाम लेकर वस्त्र डाल दिया। इस प्रकार वह सीताजीको ले गया और उन्हें अशोकवनमें जा रक्खा॥ १३॥

दो०—हारि परा खल बहु बिधि भय अरु प्रीति देखाइ।
तब असोक पादप तर राखिसि जतन कराइ॥ २९(क)॥

सीताजीको बहुत प्रकारसे भय और प्रीति दिखलाकर जब वह दुष्ट हार गया, तब उन्हें यत्न कराके (सब व्यवस्था ठीक कराके) अशोकके वृक्षके नीचे रख दिया॥ २९ (क)॥

नवाह्नपारायण, छठा विश्राम

जेहि बिधि कपट कुरंग सँग धाइ चले श्रीराम।
सो छबि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम॥ २९(ख)॥

जिस प्रकार कपटमृगके साथ श्रीरामजी दौड़ चले थे, उसी छबिको हृदयमें रखकर वे हरिनाम (रामनाम) रटती रहती हैं॥ २९ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—रघुपति अनुजहि आवत देखी। बाहिज चिंता कीन्हि बिसेषी॥
जनकसुता परिहरिहु अकेली। आयहु तात बचन मम पेली॥

[इधर] श्रीरघुनाथजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको आते देखकर बाहरसे बहुत चिन्ता की [और कहा—] हे भाई! तुमने जानकीको अकेली छोड़ दि और मेरी आज्ञाका उल्लङ्घन कर यहाँ चले आये!॥ १॥

निसिचर निकर फिरहिं बन माहीं। मम मन सीता आश्रम नाहीं॥
गहि पद कमल अनुज कर जोरी। कहेउ नाथ कछु मोहि न खोरी॥

राक्षसोंके झुंड वनमें फिरते रहते हैं। मेरे मनमें ऐसा आता है कि सी आश्रममें नहीं है। छोटे भाई लक्ष्मणजीने श्रीरामजीके चरणकमलोंको पकड़कर ह जोड़कर कहा—हे नाथ! मेरा कुछ भी दोष नहीं है॥ २॥

अनुज समेत गए प्रभु तहवाँ। गोदावरि तट आश्रम जहवाँ॥
आश्रम देखि जानकी हीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना॥

लक्ष्मणजीसहित प्रभु श्रीरामजी वहाँ गये जहाँ गोदावरीके तटपर उनका आश्र था। आश्रमको जानकीजीसे रहित देखकर श्रीरामजी साधारण मनुष्यकी भाँति व्याकु और दीन (दुखी) हो गये॥ ३॥

हा गुन खानि जानकी सीता। रूप सील ब्रत नेम पुनीता॥
लछिमन समुझाए बहु भाँती। पूछत चले लता तरु पाँती॥

[वे विलाप करने लगे—] हा गुणोंकी खान जानकी! हा रूप, शील, और नियमोंमें पवित्र सीते! लक्ष्मणजीने बहुत प्रकारसे समझाया। तब श्रीरामजी लत और वृक्षोंकी पंक्तियोंसे पूछते हुए चले—॥ ४॥

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी॥
खंजन सुक कपोत मृग मीना। मधुप निकर कोकिला प्रबीना॥

हे पक्षियो! हे पशुओ! हे भौंरोंकी पंक्तियो! तुमने कहीं मृगनयनी सीताको है? खंजन, तोता, कबूतर, हिरन, मछली, भौंरोंका समूह, प्रवीण कोयल,॥ ५॥

कुंद कली दाड़िम दामिनी। कमल सरद ससि अहिभामिनी॥
बरुन पास मनोज धनु हंसा। गज केहरि निज सुनत प्रसंसा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुन्दकली, अनार, बिजली, कमल, शरद्‌का चन्द्रमा और नागिनी, वरुणका पाश, कामदेवका धनुष, हंस, गज और सिंह, ये सब आज अपनी प्रशंसा सुन रहे हैं ॥ ६ ॥

श्रीफल कनक कदलि हरषाहीं । नेकु न संक सकुच मन माहीं ॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू । हरषे सकल पाइ जनु राजू ॥

बेल, सुवर्ण और केला हर्षित हो रहे हैं । इनके मनमें जरा भी शङ्का और संकोच नहीं है । हे जानकी ! सुनो, तुम्हारे बिना ये सब आज ऐसे हर्षित हैं मानो राज पा गये हैं । (अर्थात् तुम्हारे अंगोंके सामने ये सब तुच्छ, अपमानित और लज्जित थे । आज तुम्हें न देखकर ये अपनी शोभाके अभिमानमें फूल रहे हैं) ॥ ७ ॥

किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं । प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं ॥
एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी । मनहुँ महा बिरही अति कामी ॥

तुमसे यह अनख (स्पर्धा) कैसे सही जाती है ? हे प्रिये ! तुम शीघ्र ही प्रकट क्यों नहीं होती ? इस प्रकार [अनन्त ब्रह्माण्डोंके अथवा महामहिमामयी स्वरूपाशक्ति श्रीसीताजीके] स्वामी श्रीरामजी सीताजीको खोजते हुए [इस प्रकार] विलाप करते हैं मानो कोई महाविरही और अत्यन्त कामी पुरुष हो ॥ ८ ॥

पूरनकाम राम सुख रासी । मनुजचरित कर अज अबिनासी ॥
आगें परा गीधपति देखा । सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा ॥

पूर्णकाम, आनन्दकी राशि, अजन्मा और अविनाशी श्रीरामजी मनुष्योंके-से चरित्र कर रहे हैं । आगे [जानेपर] उन्होंने गृध्रपति जटायुको पड़ा देखा । वह श्रीरामजीके चरणोंका स्मरण कर रहा था, जिनमें [ध्वजा, कुलिश आदिकी] रेखाएँ (चिह्न) हैं ॥ ९ ॥

दो०—कर सरोज सिर परसेउ कृपासिंधु रघुबीर ।
निरखि राम छबि धाम मुख बिगत भई सब पीर ॥ ३० ॥

कृपासागर श्रीरघुवीरने अपने कर-कमलसे उसके सिरका स्पर्श किया (उसके सिरपर कर-कमल फेर दिया) । शोभाधाम श्रीरामजीका [परम सुन्दर] मुख देखकर उसकी सब पीड़ा जाती रही ॥ ३० ॥

चौ०—तब कह गीध बचन धरि धीरा । सुनहु राम भंजन भव भीरा ॥
नाथ दसानन यह गति कीन्ही । तेहिं खल जनकसुता हरि लीन्ही ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब धीरज धरकर गीधने यह वचन कहा—हे भव! (जन्म-मृत्यु) के भय
नाश करनेवाले श्रीरामजी! सुनिये। हे नाथ! रावणने मेरी यह दशा की है।
दुष्टने जानकीजीको हर लिया है॥ १॥

लै दच्छिन दिसि गयउ गोसाईं। बिलपति अति कुररी की नाईं
दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना। चलन चहत अब कृपा निधाना

हे गोसाईं! वह उन्हें लेकर दक्षिण दिशाको गया है। सीताजी कुररी (कु
की तरह अत्यन्त विलाप कर रही थीं। हे प्रभो! मैंने आपके दर्शनोंके लिये
प्राण रोक रक्खे थे। हे कृपानिधान! अब ये चलना ही चाहते हैं॥ २॥

राम कहा तनु राखहु ताता। मुख मुसुकाइ कही तेहिं बाता
जा कर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे तात! शरीरको बनाये रखिये। तब
मुसकराते हुए मुँहसे यह बात कही—मरते समय जिनका नाम मुखमें आ जाने
अधम (महान् पापी) भी मुक्त हो जाता है, ऐसा वेद गाते हैं—॥ ३॥

सो मम लोचन गोचर आगें। राखौं देह नाथ केहि खाँ
जल भरि नयन कहहिं रघुराई। तात कर्म निज तें गति पा

वही (आप) मेरे नेत्रोंके विषय होकर सामने खड़े हैं। हे नाथ! अ
किस कमी [की पूर्ति] के लिये देहको रक्खूँ? नेत्रोंमें जल भरकर श्रीरघुनाथजी
लगे—हे तात! आपने अपने श्रेष्ठ कर्मोंसे [दुर्लभ] गति पायी है॥ ४॥

परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु ना
तनु तजि तात जाहु मम धामा। देउँ काह तुम्ह पूरनका

जिनके मनमें दूसरेका हित बसता है (समाया रहता है), उनके लिये जगत
कुछ भी (कोई भी गति) दुर्लभ नहीं है। हे तात! शरीर छोड़कर आप मेरे
धाममें जाइये। मैं आपको क्या दूँ? आप तो पूर्णकाम हैं (सब कुछ पा चुके हैं

दो०—सीता हरन तात जनि कहहु पिता सन जाइ।
जौं मैं राम त कुल सहित कहिहि दसानन आइ॥ ३१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे तात ! सीताहरणकी बात आप जाकर पिताजीसे न कहियेगा। यदि मैं राम हूँ तो दशमुख रावण कुटुम्बसहित वहाँ आकर स्वयं ही कहेगा ॥ ३१ ॥

चौ०-गीध देह तजि धरि हरि रूपा। भूषन बहु पट पीत अनूपा ॥
स्याम गात बिसाल भुज चारी। अस्तुति करत नयन भरि बारी ॥

जटायुने गीधकी देह त्यागकर हरिका रूप धारण किया और बहुत-से अनुपम (दिव्य) आभूषण और [दिव्य] पीताम्बर पहन लिये। श्याम शरीर है, विशाल चार भुजाएँ हैं और नेत्रोंमें [प्रेम तथा आनन्दके आँसुओंका] जल भरकर वह स्तुति कर रहा है—॥ १ ॥

छं०-जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही।
दससीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मंडन मही ॥
पाथोद गात सरोज मुख राजीव आयत लोचनं।
नित नौमि रामु कृपाल बाहु बिसाल भव भय मोचनं ॥ १ ॥

हे रामजी ! आपकी जय हो ! आपका रूप अनुपम है; आप निर्गुण हैं, सगुण हैं, और सत्य ही गुणोंके (मायाके) प्रेरक हैं। दस सिरवाले रावणकी प्रचण्ड भुजाओंको खण्ड-खण्ड करनेके लिये प्रचण्ड बाण धारण करनेवाले, पृथ्वीको सुशोभित करनेवाले, जलयुक्त मेघके समान श्याम शरीरवाले, कमलके समान मुख और [लाल] कमलके समान विशाल नेत्रोंवाले; विशाल भुजाओंवाले और भव-भयसे छुड़ानेवाले कृपालु श्रीरामजीको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

बलमप्रमेयमनादिमजमब्यक्तमेकमगोचरं।
गोबिंद गोपर द्वंद्वहर बिग्यानघन धरनीधरं ॥
जे राम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं।
नित नौमि राम अकाम प्रिय कामादि खल दल गंजनं ॥ २ ॥

आप अपरिमित बलवाले हैं; अनादि, अजन्मा, अव्यक्त (निराकार), एक, अगोचर (अलक्ष्य), गोविन्द (वेदवाक्योंद्वारा जानने योग्य), इन्द्रियोंसे अतीत, [जन्म-मरण, सुख-दुःख, हर्ष-शोकादि] द्वन्द्वोंको हरनेवाले, विज्ञानकी घन मूर्ति और पृथ्वीके आधार हैं। तथा जो संत राम-मन्त्रको जपते हैं, उन अनन्त सेवकोंके मनको आनन्द देनेवाले हैं। उन निष्कामप्रिय (निष्कामजनोंके प्रेमी अथवा उन्हें प्रिय) तथा काम आदि दुष्टों(दुष्टवृत्तियों)के दलका दलन करनेवाले श्रीरामजीको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जेहि श्रुति निरंजन ब्रह्म ब्यापक बिरज अज कहि गावहीं ।
करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं ॥
सो प्रगट करुना कंद सोभा बृंद अग जग मोहई ।
मम हृदय पंकज भृंग अंग अनंग बहु छबि सोहई ॥ ३ ॥

जिनको श्रुतियाँ निरञ्जन (मायासे परे), ब्रह्म, व्यापक, निर्विकार और जन्मरहित कहकर गान करती हैं। मुनि जिन्हें ध्यान, ज्ञान, वैराग्य और योग आदि अनेक साधन करके पाते हैं । वे ही करुणाकन्द, शोभाके समूह [स्वयं श्रीभगवान्] प्रकट होकर जड-चेतन समस्त जगत्को मोहित कर रहे हैं । मेरे हृदय-कमलके भ्रमररूप उनके अङ्ग-अङ्गमें बहुत-से कामदेवोंकी छबि शोभा पा रही है ॥ ३ ॥

जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा ।
पस्यंति जं जोगी जतन करि करत मन गो बस सदा ॥
सो राम रमा निवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी ।
मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी ॥ ४ ॥

जो अगम और सुगम हैं, निर्मलस्वभाव हैं, विषम और सम हैं और सदा शीतल (शान्त) हैं। मन और इन्द्रियोंको सदा वशमें करते हुए योगी बहुत साधन करनेपर जिन्हें देख पाते हैं । वे तीनों लोकोंके स्वामी, रमानिवास श्रीरामजी निरन्तर अपने दासोंके वशमें रहते हैं। वे ही मेरे हृदयमें निवास करें, जिनकी पवित्र कीर्ति आवागमनको मिटानेवाली है ॥ ४ ॥

दो०—अबिरल भगति मागि बर गीध गयउ हरिधाम ।
तेहि की क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम ॥ ३२ ॥

अखण्ड भक्तिका वर माँगकर गृध्रराज जटायु श्रीहरिके परमधामको चला गया। श्रीरामचन्द्रजीने उसकी [दाहकर्म आदि सारी] क्रियाएँ यथायोग्य अपने हाथोंसे कीं ॥ ३२ ॥

चौ०—कोमल चित अति दीनदयाला । कारन बिनु रघुनाथ कृपाला ॥
गीध अधम खग आमिष भोगी । गति दीन्ही जो जाचत जोगी ॥

श्रीरघुनाथजी अत्यन्त कोमल चित्तवाले, दीनदयालु और बिना ही कारण कृपालु हैं । गीध [पक्षियोंमें भी] अधम पक्षी और मांसाहारी था, उसको भी वह दुर्लभ गति दी जिसे योगीजन माँगते रहते हैं ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनहु उमा ते लोग अभागी । हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी ॥
पुनि सीतहि खोजत द्वौ भाई । चले बिलोकत बन बहुताई ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे पार्वती ! सुनो, वे लोग अभागे हैं जो भगवान्‌को छोड़कर विषयोंसे अनुराग करते हैं । फिर दोनों भाई सीताजीको खोजते हुए आगे चले । वे वनकी सघनता देखते जाते हैं ॥ २ ॥

संकुल लता बिटप घन कानन । बहु खग मृग तहँ गज पंचानन ॥
आवत पंथ कबंध निपाता । तेहिं सब कही साप कै बाता ॥

वह सघन वन लताओं और वृक्षोंसे भरा है । उसमें बहुत-से पक्षी, मृग, हाथी और सिंह रहते हैं । श्रीरामजीने रास्तेमें आते हुए कबंध राक्षसको मार डाला । उसने अपने शापकी सारी बात कही ॥ ३ ॥

दुरबासा मोहि दीन्ही सापा । प्रभु पद पेखि मिटा सो पापा ॥
सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही । मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही ॥

[वह बोला—] दुर्वासाजीने मुझे शाप दिया था । अब प्रभुके चरणोंको देखनेसे वह पाप मिट गया । [श्रीरामजीने कहा—] हे गन्धर्व ! सुनो, मैं तुम्हें कहता हूँ, ब्राह्मणकुलसे द्रोह करनेवाला मुझे नहीं सुहाता ॥ ४ ॥

दो०—मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव ।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव ॥ ३३ ॥

मन, वचन और कर्मसे कपट छोड़कर जो भूदेव ब्राह्मणोंकी सेवा करता है, मुझसमेत ब्रह्मा, शिव आदि सब देवता उसके वशमें हो जाते हैं ॥ ३३ ॥

चौ०—सापत ताड़त परुष कहंता । बिप्र पूज्य अस गावहिं संता ॥
पूजिअ बिप्र सील गुन हीना । सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना ॥

शाप देता हुआ, मारता हुआ और कठोर वचन कहता हुआ भी ब्राह्मण पूजनीय है, ऐसा संत कहते हैं । शील और गुणसे हीन भी ब्राह्मण पूजनीय है । और गुणगणोंसे युक्त और ज्ञानमें निपुण भी शूद्र पूजनीय नहीं है ॥ १ ॥

कहि निज धर्म ताहि समुझावा । निज पद प्रीति देखि मन भावा ॥
रघुपति चरन कमल सिरु नाई । गयउ गगन आपनि गति पाई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामजीने अपना धर्म (भागवत धर्म) कहकर उसे समझाया। अपने चरण
प्रेम देखकर वह उनके मनको भाया। तदनन्तर श्रीरघुनाथजीके चरण-कमलोंमें
नवाकर वह अपनी गति (गन्धर्वका स्वरूप) पाकर आकाशमें चला गया ॥ २ ॥

ताहि देइ गति राम उदारा। सबरी कें आश्रम पगु धारा॥
सबरी देखि राम गृहँ आए। मुनि के बचन समुझि जियँ भाए॥

उदार श्रीरामजी उसे गति देकर शबरीजीके आश्रममें पधारे। शबरी
श्रीरामचन्द्रजीको घरमें आये देखा, तब मुनि मतङ्गजीके वचनोंको याद करके उ
मन प्रसन्न हो गया ॥ ३ ॥

सरसिज लोचन बाहु बिसाला। जटा मुकुट सिर उर बनमाला॥
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई। सबरी परी चरन लपटाई॥

कमलसदृश नेत्र और विशाल भुजावाले, सिरपर जटाओंका मुकुट और हृदयपर व
माला धारण किये हुए सुन्दर साँवले और गोरे दोनों भाइयोंके चरणोंमें शबरीजी लिपट पड़ीं

प्रेम मगन मुख बचन न आवा। पुनि पुनि पद सरोज सिर नावा॥
सादर जल लै चरन पखारे। पुनि सुंदर आसन बैठारे॥

वे प्रेममें मग्न हो गयीं, मुखसे वचन नहीं निकलता। बार-बार चरण-कम
सिर नवा रही हैं। फिर उन्होंने जल लेकर आदरपूर्वक दोनों भाइयोंके चरण ध
और फिर उन्हें सुन्दर आसनोंपर बैठाया ॥ ५ ॥

दो०—कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि ॥ ३४ ॥

उन्होंने अत्यन्त रसीले और स्वादिष्ट कन्द, मूल और फल लाकर श्रीरामजी
दिये। प्रभुने बार-बार प्रशंसा करके उन्हें प्रेमसहित खाया ॥ ३४ ॥

चौ०—पानि जोरि आगें भइ ठाढ़ी। प्रभुहि बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी॥
केहि बिधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़मति भारी॥

फिर वे हाथ जोड़कर आगे खड़ी हो गयीं। प्रभुको देखकर उनका
अत्यन्त बढ़ गया। [उन्होंने कहा—] मैं किस प्रकार आपकी स्तुति करूँ
नीच जातिकी और अत्यन्त मूढ़बुद्धि हूँ ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अधम ते अधम अधम अति नारी । तिन्ह महँ मैं मतिमंद अघारी ॥
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता । मानउँ एक भगति कर नाता ॥

जो अधमसे भी अधम हैं, स्त्रियाँ उनमें भी अत्यन्त अधम हैं; और उनमें भी पापनाशन ! मैं मन्दबुद्धि हूँ। श्रीरघुनाथजीने कहा—हे भामिनि ! मेरी बात सुन । मैं तो केवल एक भक्तिहीका सम्बन्ध मानता हूँ ॥ २ ॥

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुन चतुराई ॥
भगति हीन नर सोहइ कैसा । बिनु जल बारिद देखिअ जैसा ॥

जाति, पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल, कुटुम्ब, गुण और चतुरता--इन सबके होनेपर भी भक्तिसे रहित मनुष्य कैसा लगता है, जैसे जलहीन बादल [शोभाहीन] दिखायी पड़ता है ॥ ३ ॥

नवधा भगति कहउँ तोहि पाहीं । सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा । दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥

मैं तुझसे अब अपनी नवधा भक्ति कहता हूँ। तू सावधान होकर सुन और मनमें धारण कर। पहली भक्ति है संतोंका सत्सङ्ग। दूसरी भक्ति है मेरे कथाप्रसङ्गमें प्रेम ॥ ४ ॥

दो०—गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान ।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान ॥ ३५ ॥

तीसरी भक्ति है कि अभिमानरहित होकर गुरुके चरणकमलोंकी सेवा। और चौथी भक्ति यह है कि कपट छोड़कर मेरे गुणसमूहोंका गान करे ॥ ३५ ॥

चौ०—मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा । पंचम भजन सो बेद प्रकासा ॥
छठ दम सील बिरति बहु करमा । निरत निरंतर सज्जन धरमा ॥

मेरे (राम) मन्त्रका जाप और मुझमें दृढ़ विश्वास—यह पाँचवीं भक्ति है, जो वेदोंमें प्रसिद्ध है। छठी भक्ति है इन्द्रियोंका निग्रह, शील (अच्छा स्वभाव या चरित्र), बहुत कार्योंसे वैराग्य और निरन्तर संतपुरुषोंके धर्म (आचरण) में लगे रहना ॥ १ ॥

सातवँ सम मोहि मय जग देखा । मोतें संत अधिक करि लेखा ॥
आठवँ जथालाभ संतोषा । सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सातवीं भक्ति है जगत्‌भरको समभावसे मुझमें ओतप्रोत (राममय) दे
और संतोंको मुझसे भी अधिक करके मानना । आठवीं भक्ति है जो कुछ मिल
उसीमें सन्तोष करना और स्वप्नमें भी पराये दोषोंको न देखना ॥ २ ॥

नवम सरल सब सन छलहीना । मम भरोस हियँ हरष न दीना
नव महुँ एकउ जिन्ह कें होई । नारि पुरुष सचराचर को

नवीं भक्ति है सरलता और सबके साथ कपटरहित बर्ताव करना, हृदयमें
भरोसा रखना और किसी भी अवस्थामें हर्ष और दैन्य (विषाद) का न होना।
नवोंमेंसे जिनके एक भी होती है, वह स्त्री-पुरुष, जड़-चेतन, कोई भी हो—॥ ३ ॥

सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें । सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें
जोगि बृंद दुरलभ गति जोई । तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई

हे भामिनि ! मुझे वही अत्यन्त प्रिय है । फिर तुझमें तो सभी प्रकारकी भक्ति
है । अतएव जो गति योगियोंको भी दुर्लभ है, वही आज तेरे लिये सुलभ हो गयी है ॥ ४

मम दरसन फल परम अनूपा । जीव पाव निज सहज सरूपा
जनकसुता कइ सुधि भामिनी । जानहि कहु करिबरगामिनी

मेरे दर्शनका परम अनुपम फल यह है कि जीव अपने सहज स्वरूपको प्राप्त हो जाता
हे भामिनि ! अब यदि तू गजगामिनी जानकीकी कुछ खबर जानती हो, तो बता ॥ ५ ॥

पंपा सरहि जाहु रघुराई । तहँ होइहि सुग्रीव मिताई
सो सब कहिहि देव रघुबीरा । जानतहूँ पूछहु मतिधीरा

[शबरीने कहा—] हे रघुनाथजी ! आप पंपा नामक सरोवरको जाइये । व
आपकी सुग्रीवसे मित्रता होगी । हे देव ! हे रघुवीर ! वह सब हाल बतावेगा।
धीरबुद्धि ! आप सब जानते हुए भी मुझसे पूछते हैं ! ॥ ६ ॥

बार बार प्रभु पद सिरु नाई । प्रेम सहित सब कथा सुनाई ।

बार-बार प्रभुके चरणोंमें सिर नवाकर, प्रेमसहित उसने सब कथा सुनायी ॥ ७

छं०—कहि कथा सकल बिलोकि हरि मुख हृदयँ पद पंकज धरे ।
तजि जोग पावक देह हरि पद लीन भइ जहँ नहिं फिरे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू ।
बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू ॥

सब कथा कहकर भगवान्‌के मुखके दर्शन कर, हृदयमें उनके चरणकमलोंको रण कर लिया और योगाग्निसे देहको त्यागकर (जलाकर) वह उस दुर्लभ हरिपदमें ीन हो गयी, जहाँसे लौटना नहीं होता । तुलसीदासजी कहते हैं कि अनेकों प्रकारके र्म, अधर्म और बहुत-से मत, ये सब शोकप्रद हैं; हे मनुष्यो ! इनका त्याग कर दो ौर विश्वास करके श्रीरामजीके चरणोंमें प्रेम करो ।

दो०—जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि असि नारि ।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥ ३६ ॥

जो नीच जातिकी और पापोंकी जन्मभूमि थी, ऐसी स्त्रीको भी जिन्होंने मुक्त कर दिया, अरे महादुर्बुद्धि मन ! तू ऐसे प्रभुको भूलकर सुख चाहता है ? ॥ ३६ ॥

ौ०—चले राम त्यागा बन सोऊ । अतुलित बल नर केहरि दोऊ ॥
बिरही इव प्रभु करत बिषादा । कहत कथा अनेक संबादा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने उस वनको भी छोड़ दिया और वे आगे चले । दोनों भाई तुलनीय बलवान् और मनुष्योंमें सिंहके समान हैं । प्रभु विरहीकी तरह विषाद करते ए अनेकों कथाएँ और संवाद कहते हैं—॥ १ ॥

लछिमन देखु बिपिन कइ सोभा । देखत केहि कर मन नहिं छोभा ॥
नारि सहित सब खग मृग बृंदा । मानहुँ मोरि करतहहिं निंदा ॥

हे लक्ष्मण ! जरा वनकी शोभा तो देखो; इसे देखकर किसका मन क्षुब्ध नहीं होगा ? क्षी और पशुओंके समूह सभी स्त्रीसहित हैं । मानो वे मेरी निन्दा कर रहे हैं ॥ २ ॥

हमहि देखि मृग निकर पराहीं । मृगीं कहहिं तुम्ह कहँ भय नाहीं ॥
तुम्ह आनंद करहु मृग जाए । कंचन मृग खोजन ए आए ॥

हमें देखकर [जब डरके मारे] हिरनोंके झुंड भागने लगते हैं, तब हिरनियाँ नसे कहती हैं—तुमको भय नहीं है । तुम तो साधारण हिरनोंसे पैदा हुए हो, अतः म आनन्द करो । ये तो सोनेका हिरन खोजने आये हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संग लाइ करिनीं करि लेहीं। मानहुँ मोहि सिखावनु दें
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ
हाथी हथिनियोंको साथ लगा लेते हैं। वे मानो मुझे शिक्षा देते हैं [कि स्त्रीको क
अकेली नहीं छोड़ना चाहिये]। भलीभाँति चिन्तन किये हुए शास्त्रको भी बार-बार दे
रहना चाहिये। अच्छी तरह सेवा किये हुए भी राजाको वशमें नहीं समझना चाहिये॥

राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं
देखहु तात बसंत सुहावा। प्रिया हीन मोहि भय उपजा
और स्त्रीको चाहे हृदयमें ही क्यों न रक्खा जाय; परन्तु युवती स्त्री, शास्त्र
राजा किसीके वशमें नहीं रहते। हे तात! इस सुन्दर वसन्तको तो देखो। प्रि
बिना मुझको यह भय उत्पन्न कर रहा है॥ ५॥

दो०—बिरह बिकल बलहीन मोहि जानेसि निपट अकेल।
सहित बिपिन मधुकर खग मदन कीन्ह बगमेल॥३७(क)॥

मुझे विरहसे व्याकुल, बलहीन और बिल्कुल अकेला जानकर कामदेवने
भौंरों और पक्षियोंको साथ लेकर मुझपर धावा बोल दिया॥ ३७ (क)॥

देखि गयउ भ्राता सहित तासु दूत सुनि बात।
डेरा कीन्हेउ मनहुँ तब कटकु हटकि मनजात॥३७(ख)॥

परन्तु जब उसका दूत यह देख गया कि मैं भाईके साथ हूँ (अकेला नहीं हूँ),
उसकी बात सुनकर कामदेवने मानो सेनाको रोककर डेरा डाल दिया है॥ ३७ (ख)॥

चौ०—बिटप बिसाल लता अरुझानी। बिबिध बितान दिए जनु तानी
कदलि ताल बर धुजा पताका। देखि न मोह धीर मन जाका
विशाल वृक्षोंमें लताएँ उलझी हुई ऐसी मालूम होती हैं मानो नाना प्रक
तंबू तान दिये गये हैं। केला और ताड़ सुन्दर ध्वजा-पताकाके समान हैं।
देखकर वही नहीं मोहित होता, जिसका मन धीर है॥ १॥

बिबिध भाँति फूले तरु नाना। जनु बानैत बने बहु बाना
कहुँ कहुँ सुंदर बिटप सुहाए। जनु भट बिलग बिलग होइ छाए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेकों वृक्ष नाना प्रकारसे फूले हुए हैं। मानो अलग-अलग बाना (वर्दी) धारण किये हुए बहुत-से तीरंदाज हों। कहीं-कहीं सुन्दर वृक्ष शोभा दे रहे हैं मानो योद्धालोग अलग-अलग होकर छावनी डाले हों ॥ २ ॥

कूजत पिक मानहुँ गज माते। ढेक महोख ऊँट बिसराते ॥
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत मराल सब ताजी ॥

कोयलें कूज रही हैं, वही मानो मतवाले हाथी [चिग्घाड़ रहे] हैं। ढेक और महोख पक्षी मानो ऊँट और खच्चर हैं। मोर, चकोर, तोते, कबूतर और हंस मानो सब सुन्दर ताजी (अरबी) घोड़े हैं ॥ ३ ॥

तीतिर लावक पदचर जूथा। बरनि न जाइ मनोज बरूथा ॥
रथ गिरि सिला दुंदुभीं झरना। चातक बंदी गुन गन बरना ॥

तीतर और बटेर पैदल सिपाहियोंके झुंड हैं। कामदेवकी सेनाका वर्णन नहीं हो सकता। पर्वतोंकी शिलाएँ रथ और जलके झरने नगाड़े हैं। पपीहे भाट हैं, जो गुणसमूह (विरदावली) का वर्णन करते हैं ॥ ४ ॥

मधुकर मुखर भेरि सहनाई। त्रिबिध बयारि बसीठीं आई ॥
चतुरंगिनी सेन सँग लीन्हें। बिचरत सबहि चुनौती दीन्हें ॥

भौंरोंकी गुंजार भेरी और शहनाई है। शीतल, मन्द और सुगन्धित हवा मानो दूतका काम लेकर आयी है। इस प्रकार चतुरङ्गिणी सेना साथ लिये कामदेव मानो सबको चुनौती देता हुआ विचर रहा है ॥ ५ ॥

लछिमन देखत काम अनीका। रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका ॥
एहि कें एक परम बल नारी। तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी ॥

हे लक्ष्मण ! कामदेवकी इस सेनाको देखकर जो धीर बने रहते हैं, जगत्‌में उन्हींकी [वीरोंमें] प्रतिष्ठा होती है। इस कामदेवके एक स्त्रीका बड़ा भारी बल है। उससे जो बच जाय, वही श्रेष्ठ योद्धा है ॥ ६ ॥

दो०—तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ ॥ ३८ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे तात ! काम, क्रोध और लोभ—ये तीन अत्यन्त प्रबल दुष्ट हैं। ये विज्ञानके धाम मुनियोंके भी मनोंको पलभरमें क्षुब्ध कर देते हैं ॥ ३८ (क) ॥

लोभ कें इच्छा दंभ बल काम कें केवल नारि।
क्रोध कें परुष बचन बल मुनिबर कहहिं बिचारि ॥ ३८ (ख)॥

लोभको इच्छा और दम्भका बल है, कामको केवल स्त्रीका बल है और क्रोधको कठोर वचनोंका बल है; श्रेष्ठ मुनि विचारकर ऐसा कहते हैं ॥ ३८ (ख) ॥

चौ०—गुनातीत सचराचर स्वामी। राम उमा सब अंतरजामी॥
कामिन्ह कै दीनता देखाई। धीरन्ह कें मन बिरति दृढ़ाई॥

[शिवजी कहते हैं—] हे पार्वती ! श्रीरामचन्द्रजी गुणातीत (तीनों गुणोंसे परे), चराचर जगत्‌के स्वामी और सबके अन्तरकी जाननेवाले हैं [उपर्युक्त बातें कहकर] उन्होंने कामीलोगोंकी दीनता (बेबसी) दिखलायी है और धीर (विवेकी) पुरुषोंके मनमें वैराग्यको दृढ़ किया है ॥ १ ॥

क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहिं सकल राम कीं दाया॥
सो नर इंद्रजाल नहिं भूला। जा पर होइ सो नट अनुकूला॥

क्रोध, काम, लोभ, मद और माया—ये सभी श्रीरामजीकी दयासे छूट जाते हैं। वह नट (नटराज भगवान्) जिसपर प्रसन्न होता है, वह मनुष्य इन्द्रजाल (माया) में नहीं भूलता ॥ २ ॥

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजनु जगत सब सपना॥
पुनि प्रभु गए सरोबर तीरा। पंपा नाम सुभग गंभीरा॥

हे उमा ! मैं तुम्हें अपना अनुभव कहता हूँ— हरिका भजन ही सत्य है, यह सारा जगत् तो स्वप्न [की भाँति झूठा] है। फिर प्रभु श्रीरामजी पंपा नामक सुन्दर और गहरे सरोवरके तीरपर गये ॥ ३ ॥

संत हृदय जस निर्मल बारी। बाँधे घाट मनोहर चारी॥
जहँ तहँ पिअहिं बिबिध मृग नीरा। जनु उदार गृह जाचक भीरा॥

उसका जल संतोंके हृदय-जैसा निर्मल है। मनको हरनेवाले सुन्दर चार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बँधे हुए हैं। भाँति-भाँतिके पशु जहाँ-तहाँ जल पी रहे हैं। मानो उदार दानी पुरुषोंके घर याचकोंकी भीड़ लगी हो ! ॥ ४ ॥

दो०—पुरइनि सघन ओट जल बेगि न पाइअ मर्म।
मायाछन्न न देखिऐ जैसें निर्गुन ब्रह्म ॥ ३९ (क)॥

घनी पुरइनों (कमलके पत्तों) की आड़में जलका जल्दी पता नहीं मिलता। जैसे मायासे ढके रहनेके कारण निर्गुण ब्रह्म नहीं दीखता ॥ ३९ (क) ॥

सुखी मीन सब एकरस अति अगाध जल माहिं।
जथा धर्मसीलन्ह के दिन सुख संजुत जाहिं ॥ ३९ (ख)॥

उस सरोवरके अत्यन्त अथाह जलमें सब मछलियाँ सदा एकरस (एक समान) सुखी रहती हैं। जैसे धर्मशील पुरुषोंके सब दिन सुखपूर्वक बीतते हैं ॥ ३९ (ख) ॥

चौ०—बिकसे सरसिज नाना रंगा। मधुर मुखर गुंजत बहु भृंगा ॥
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा। प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा ॥

उसमें रंग-बिरंगे कमल खिले हुए हैं! बहुत-से भौंरे मधुर स्वरसे गुंजार कर रहे हैं। जलके मुर्गे और राजहंस बोल रहे हैं। मानो प्रभुको देखकर उनकी प्रशंसा कर रहे हों ॥ १ ॥

चक्रबाक बक खग समुदाई। देखत बनइ बरनि नहिं जाई ॥
सुंदर खग गन गिरा सुहाई। जात पथिक जनु लेत बोलाई ॥

चक्रवाक, बगुले आदि पक्षियोंका समुदाय देखते ही बनता है, उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दर पक्षियोंकी बोली बड़ी सुहावनी लगती है, मानो [रास्तेमें] जाते हुए पथिकको बुलाये लेती हो ॥ २ ॥

ताल समीप मुनिन्ह गृह छाए। चहु दिसि कानन बिटप सुहाए ॥
चंपक बकुल कदंब तमाला। पाटल पनस परास रसाला ॥

उस झील (पंपासरोवर) के समीप मुनियोंने आश्रम बना रक्खे हैं। उसके चारों ओर वनके सुन्दर वृक्ष हैं। चम्पा, मौलसिरी, कदम्ब, तमाल, पाटल, कटहल, ढाक और आम आदि—॥ ३ ॥

नव पल्लव कुसुमित तरु नाना। चंचरीक पटली कर गाना ॥
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ। संतत बहइ मनोहर बाऊ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहुत प्रकारके वृक्ष नये-नये पत्तों और [सुगन्धित] पुष्पोंसे युक्त हैं, [जिनप
भौंरोंके समूह गुंजार कर रहे हैं। स्वभावसे ही शीतल, मन्द, सुगन्धित एवं मनको ह
वाली हवा सदा बहती रहती है ॥ ४ ॥

कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं। सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं

कोयलें 'कुहू', 'कुहू' का शब्द कर रही हैं। उनकी रसीली बोली सुनकर मुनिये
भी ध्यान टूट जाता है ॥ ५ ॥

दो०—फल भारन नमि बिटप सब रहे भूमि निअराइ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ ॥ ४०॥

फलोंके बोझसे झुककर सारे वृक्ष पृथ्वीके पास आ लगे हैं। जैसे परोपकारी पु
बड़ी सम्पत्ति पाकर [विनयसे] झुक जाते हैं ॥ ४० ॥

चौ०—देखि राम अति रुचिर तलावा। मज्जनु कीन्ह परम सुख पावा
देखी सुंदर तरुबर छाया। बैठे अनुज सहित रघुराया

श्रीरामजीने अत्यन्त सुन्दर तालाब देखकर स्नान किया और परम सुख पाया।
सुन्दर उत्तम वृक्षकी छाया देखकर श्रीरघुनाथजी छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित बैठ गये॥

तहँ पुनि सकल देव मुनि आए। अस्तुति करि निज धाम सिधाए
बैठे परम प्रसन्न कृपाला। कहत अनुज सन कथा रसाला

फिर वहाँ सब देवता और मुनि आये और स्तुति करके अपने-अपने धामको
गये। कृपालु श्रीरामजी परम प्रसन्न बैठे हुए छोटे भाई लक्ष्मणजीसे रसीली कथाएँ कह
रहे हैं ॥ २ ॥

बिरहवंत भगवंतहि देखी। नारद मन भा सोच बिसेषी
मोर साप करि अंगीकारा। सहत राम नाना दुख भारा

भगवान्‌को विरहयुक्त देखकर नारदजीके मनमें विशेषरूपसे सोच हुआ। [उन्
विचार किया कि] मेरे ही शापको स्वीकार करके श्रीरामजी नाना प्रकारके दुःखोंका
सह रहे हैं (दुःख उठा रहे हैं) ॥ ३ ॥

ऐसे प्रभुहि बिलोकउँ जाई। पुनि न बनिहि अस अवसरु आई
यह बिचारि नारद कर बीना। गए जहाँ प्रभु सुख आसीना

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे (भक्तवत्सल) प्रभुको जाकर देखूँ। फिर ऐसा अवसर न बन आवेगा। यह विचारकर नारदजी हाथमें वीणा लिये हुए वहाँ गये जहाँ प्रभु सुखपूर्वक बैठे हुए थे॥ ४॥

गावत राम चरित मृदु बानी। प्रेम सहित बहु भाँति बखानी॥
करत दंडवत लिए उठाई। राखे बहुत बार उर लाई॥

वे कोमल वाणीसे प्रेमके साथ बहुत प्रकारसे बखान-बखानकर रामचरितका गान कर [ते हुए चले आ] रहे थे। दण्डवत् करते देखकर श्रीरामचन्द्रजीने नारदजीको उठा लिया और बहुत देरतक हृदयसे लगाये रक्खा॥ ५॥

स्वागत पूँछि निकट बैठारे। लछिमन सादर चरन पखारे॥

फिर स्वागत (कुशल) पूछकर पास बैठा लिया। लक्ष्मणजीने आदरके साथ उनके चरण धोये॥ ६॥

दो०—नाना बिधि बिनती करि प्रभु प्रसन्न जियँ जानि।
नारद बोले बचन तब जोरि सरोरुह पानि॥ ४१॥

बहुत प्रकारसे विनती करके और प्रभुको मनमें प्रसन्न जानकर तब नारदजी कमल-के समान हाथोंको जोड़कर वचन बोले—॥ ४१॥

चौ०—सुनहु उदार सहज रघुनायक। सुंदर अगम सुगम बर दायक॥
देहु एक बर मागउँ स्वामी। जद्यपि जानत अंतरजामी॥

हे स्वभावसे ही उदार श्रीरघुनाथजी! सुनिये! आप सुन्दर अगम और सुगम वरके देनेवाले हैं। हे स्वामी! मैं एक वर माँगता हूँ, वह मुझे दीजिये, यद्यपि आप अन्तर्यामी होनेके नाते सब जानते ही हैं॥ १॥

जानहु मुनि तुम्ह मोर सुभाऊ। जन सन कबहुँ कि करउँ दुराऊ॥
कवन बस्तु असि प्रिय मोहि लागी। जो मुनिबर न सकहु तुम्ह मागी॥

[श्रीरामजीने कहा—] हे मुनि! तुम मेरा स्वभाव जानते ही हो! क्या मैं अपने भक्तोंसे कभी कुछ छिपाव करता हूँ? मुझे ऐसी कौन-सी वस्तु प्रिय लगती है, जिसे हे मुनिश्रेष्ठ! तुम नहीं माँग सकते?॥ २॥

जन कहुँ कछु अदेय नहिं मोरें। अस बिस्वास तजहु जनि भोरें॥
तब नारद बोले हरषाई। अस बर मागउँ करउँ ढिठाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुझे भक्तके लिये कुछ भी अदेय नहीं है। ऐसा विश्वास भूलकर भी मत छो
तब नारदजी हर्षित होकर बोले—मैं ऐसा वर माँगता हूँ, यह धृष्टता करता हूँ—।

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एक तें एक
राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका

यद्यपि प्रभुके अनेकों नाम हैं और वेद कहते हैं कि वे सब एक-से-एक बढ़कर हैं, तो भी हे नाथ! रामनाम सब नामोंसे बढ़कर हो और पापरूपी पक्षियोंके समूहके लिये वधिकके समान हो ॥ ४ ॥

दो०—राका रजनी भगति तव राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उडगन बिमल बसहुँ भगत उर ब्योम ॥ ४२ (क)

आपकी भक्ति पूर्णिमाकी रात्रि है; उसमें 'राम' नाम यही पूर्ण चन्द्रमा होकर और अन्य सब नाम तारागण होकर भक्तोंके हृदयरूपी निर्मल आकाशमें निवास करें ॥ ४ २(क)

एवमस्तु मुनि सन कहेउ कृपासिंधु रघुनाथ।
तब नारद मन हरष अति प्रभु पद नायउ माथ ॥ ४२ (ख)

कृपासागर श्रीरघुनाथजीने मुनिसे 'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) कहा। तब नारदजीने मनमें अत्यन्त हर्षित होकर प्रभुके चरणोंमें मस्तक नवाया ॥ ४ २ (ख) ॥

चौ०—अति प्रसन्न रघुनाथहि जानी। पुनि नारद बोले मृदु बानी
राम जबहिं प्रेरेउ निज माया। मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया

श्रीरघुनाथजीको अत्यन्त प्रसन्न जानकर नारदजी फिर कोमल वाणी बोले— हे रामजी! हे रघुनाथजी! सुनिये, जब आपने अपनी मायाको प्रेरित करके मुझे मोहित किया था, ॥ १ ॥

तब बिबाह मैं चाहउँ कीन्हा। प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा
सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा

तब मैं विवाह करना चाहता था। हे प्रभु! आपने मुझे किस कारण विवाह नहीं करने दिया? [प्रभु बोले—] हे मुनि! सुनो, मैं तुम्हें हर्षके साथ कहता हूँ कि जो समस्त आशा-भरोसा छोड़कर केवल मुझको ही भजते हैं, ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी॥
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई। तहँ राखइ जननी अरगाई॥

मैं सदा उनकी वैसे ही रखवाली करता हूँ जैसे माता बालककी रक्षा करती है। छोटा बच्चा जब दौड़कर आग और साँपको पकड़ने जाता है, तो वहाँ माता उसे [अपने हाथों] अलग करके बचा लेती है॥ ३॥

प्रौढ़ भएँ तेहि सुत पर माता। प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता॥
मोरें प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी॥

सयाना हो जानेपर उस पुत्रपर माता प्रेम तो करती है, परन्तु पिछली बात नहीं रहती (अर्थात् मातृपरायण शिशुकी तरह फिर उसको बचानेकी चिन्ता नहीं करती, क्योंकि वह मातापर निर्भर न कर अपनी रक्षा आप करने लगता है)। ज्ञानी मेरे प्रौढ़ (सयाने) पुत्रके समान है और [तुम्हारे-जैसा] अपने बलका मान न करनेवाला सेवक मेरे शिशु पुत्रके समान है॥ ४॥

जनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही॥
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहुँ ग्यान भगति नहिं तजहीं॥

मेरे सेवकको केवल मेरा ही बल रहता है और उसे (ज्ञानीको) अपना बल होता है। पर काम-क्रोधरूपी शत्रु तो दोनोंके लिये हैं। [भक्तके शत्रुओंको मारनेकी जिम्मेवारी मुझपर रहती है, क्योंकि वह मेरे परायण होकर मेरा ही बल मानता है; परन्तु अपने बलको माननेवाले ज्ञानीके शत्रुओंका नाश करनेकी जिम्मेवारी मुझपर नहीं है।] ऐसा विचारकर पण्डितजन (बुद्धिमान् लोग) मुझको ही भजते हैं। वे ज्ञान प्राप्त होनेपर भी भक्तिको नहीं छोड़ते॥ ५॥

दो०—काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि॥ ४३॥

काम, क्रोध, लोभ और मद आदि मोह (अज्ञान) की प्रबल सेना है। इनमें मायारूपिणी (मायाकी साक्षात् मूर्ति) स्त्री तो अत्यन्त दारुण दुःख देनेवाली है॥ ४३॥

चौ०—सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता॥
जप तप नेम जलाश्रय झारी। होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे मुनि ! सुनो, पुराण, वेद और संत कहते हैं कि मोहरूपी वन [को विक
करने] के लिये स्त्री वसन्तऋतुके समान है। जप, तप, नियमरूपी सम्पूर्ण जलके स्था
को स्त्री ग्रीष्मरूप होकर सर्वथा सोख लेती है ॥ १ ॥

काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहि हरषप्रद बरषा एक
दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदा

काम, क्रोध, मद और मत्सर (डाह) आदि मेढक हैं। इनको वर्षाऋतु होकर
प्रदान करनेवाली एकमात्र यही (स्त्री) है। बुरी वासनाएँ कुमुदोंके समूह हैं। उ
सदैव सुख देनेवाली यह शरद्‌ऋतु है ॥ २ ॥

धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहइ नारि सिसिर रितु पा

समस्त धर्म कमलोंके झुंड हैं। यह नीच (विषयजन्य) सुख देनेवाली स्त्री हिम
होकर उन्हें जला डालती है। फिर ममतारूपी जवासका समूह (वन) स्त्रीरूपी शि
ऋतुको पाकर हरा-भरा हो जाता है ॥ ३ ॥

पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड़ रजनी अँधिआरी
बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना

पापरूपी उल्लुओंके समूहके लिये यह स्त्री सुख देनेवाली घोर अन्धकारमयी र
है। बुद्धि, बल, शील और सत्य—ये सब मछलियाँ हैं। और उन [को फँसाकर
करने] के लिये स्त्री बंसीके समान है, चतुर पुरुष ऐसा कहते हैं ॥ ४ ॥

दो०—अवगुन मूल सूलप्रद प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जियँ जानि ॥ ४४ ॥

युवती स्त्री अवगुणोंकी मूल, पीड़ा देनेवाली और सब दुःखोंकी खान है। इसलि
हे मुनि ! मैंने जीमें ऐसा जानकर तुमको विवाह करनेसे रोका था ॥ ४४ ॥

चौ०—सुनि रघुपति के बचन सुहाए। मुनि तन पुलक नयन भरि आए
कहहु कवन प्रभु कै असि रीती। सेवक पर ममता अरु प्रीती

श्रीरघुनाथजीके सुन्दर वचन सुनकर मुनिका शरीर पुलकित हो गया और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रेमाश्रुओंके जलसे] भर आये। [वे मन-ही-मन कहने लगे—] कहो तो किस प्रभुकी ऐसी रीति है, जिसका सेवकपर इतना ममत्व और प्रेम हो ॥ १ ॥

जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी। ग्यान रंक नर मंद अभागी ॥
पुनि सादर बोले मुनि नारद। सुनहु राम बिग्यान बिसारद ॥

जो मनुष्य भ्रमको त्यागकर ऐसे प्रभुको नहीं भजते, वे ज्ञानके कंगाल, दुर्बुद्धि और अभागे हैं। फिर नारद मुनि आदरसहित बोले—हे विज्ञानविशारद श्रीरामजी! सुनिये—।

संतन्ह के लच्छन रघुबीरा। कहहु नाथ भव भंजन भीरा ॥
सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ। जिन्ह ते मैं उन्ह कें बस रहऊँ ॥

हे रघुवीर ! हे भव-भय (जन्म-मरणके भय) का नाश करनेवाले मेरे नाथ ! अब कृपा कर संतोंके लक्षण कहिये। [श्रीरामजीने कहा—] हे मुनि ! सुनो, मैं संतोंके गुणोंको कहता हूँ, जिनके कारण मैं उनके वशमें रहता हूँ ॥ ३ ॥

षट बिकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ॥
अमितबोध अनीह मितभोगी। सत्यसार कबि कोबिद जोगी ॥

वे संत [काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर—इन] छः विकारों (दोषों) को जीते हुए, पापरहित, कामनारहित, निश्चल (स्थिरबुद्धि), अकिञ्चन (सर्वत्यागी), बाहर-भीतरसे पवित्र, सुखके धाम, असीम ज्ञानवान्, इच्छारहित, मिताहारी, सत्यनिष्ठ, कवि, विद्वान्, योगी, ॥ ४ ॥

सावधान मानद मदहीना। धीर धर्म गति परम प्रबीना ॥

सावधान, दूसरोंको मान देनेवाले, अभिमानरहित, धैर्यवान्, धर्मके ज्ञान और आचरणमें अत्यन्त निपुण, ॥ ५ ॥

दो०—गुनागार संसार दुख रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहुँ देह न गेह ॥ ४५ ॥

गुणोंके घर, संसारके दुःखोंसे रहित और सन्देहोंसे सर्वथा छूटे हुए होते हैं। मेरे चरणकमलोंको छोड़कर उनको न देह ही प्रिय होती है, न घर ही ॥ ४५ ॥

चौ०—निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं ॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती ॥

कानोंसे अपने गुण सुननेमें सकुचाते हैं, दूसरोंके गुण सुननेसे विशेष हर्षित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होते हैं। सम और शीतल हैं, न्यायका कभी त्याग नहीं करते। सरलस्वभाव हैं और सभीसे प्रेम रखते हैं॥ १॥

जप तप ब्रत दम संजम नेमा। गुरु गोबिंद बिप्र पद प्रेमा॥
श्रद्धा छमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया॥

वे जप, तप, व्रत, दम, संयम और नियममें रत रहते हैं और गुरु, गोविन्द तथा ब्राह्मणोंके चरणोंमें प्रेम रखते हैं। उनमें श्रद्धा, क्षमा, मैत्री, दया, मुदिता (प्रसन्नता) और मेरे चरणोंमें निष्कपट प्रेम होता है,॥ २॥

बिरति बिबेक बिनय बिग्याना। बोध जथारथ बेद पुराना॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ॥

तथा वैराग्य, विवेक, विनय, विज्ञान (परमात्माके तत्त्वका ज्ञान) और वेद-पुराणका यथार्थ ज्ञान रहता है। वे दम्भ, अभिमान और मद कभी नहीं करते और भूलकर भी कुमार्गपर पैर नहीं रखते॥ ३॥

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला॥
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते। कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते॥

सदा मेरी लीलाओंको गाते-सुनते हैं और बिना ही कारण दूसरोंके हितमें लगे रहनेवाले होते हैं। हे मुनि! सुनो, संतोंके जितने गुण हैं उनको सरस्वती और वेद भी नहीं कह सकते॥ ४॥

छं०—कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपाल अपने भगत गुन निज मुख कहे॥
सिरु नाइ बारहिं बार चरनन्हि ब्रह्मपुर नारद गए।
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरि रँग रँए॥

'शेष और शारदा भी नहीं कह सकते' यह सुनते ही नारदजीने श्रीरामजीके चरणकमल पकड़ लिये। दीनबन्धु कृपालु प्रभुने इस प्रकार अपने श्रीमुखसे अपने भक्तोंके गुण कहे। भगवान्‌के चरणोंमें बार-बार सिर नवाकर नारदजी ब्रह्मलोकको चले गये। तुलसीदासजी कहते हैं कि वे पुरुष धन्य हैं जो सब आशा छोड़कर केवल श्रीहरिके रंगमें रँग गये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—रावनारि जसु पावन गावहिं सुनहिं जे लोग ।
राम भगति दृढ़ पावहिं बिनु बिराग जप जोग ॥ ४६ (क)॥

जो लोग रावणके शत्रु श्रीरामजीका पवित्र यश गावेंगे और सुनेंगे, वे वैराग्य, जप और योगके बिना ही श्रीरामजीकी दृढ़ भक्ति पावेंगे ॥ ४६ (क)॥

दीप सिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग ॥४६ (ख)॥

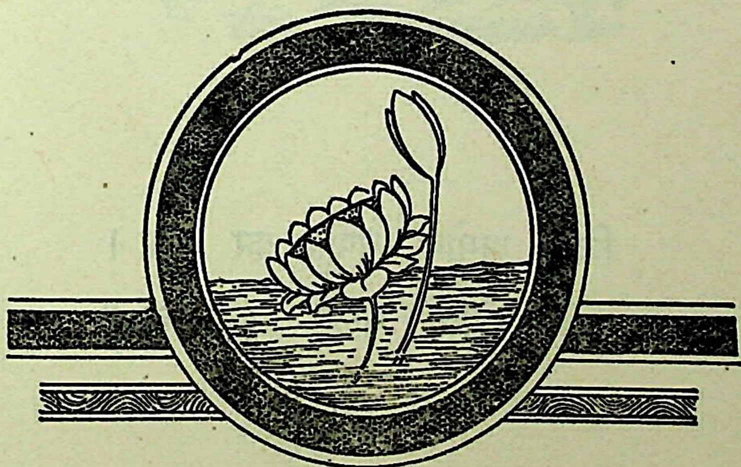
युवती स्त्रियोंका शरीर दीपककी लौके समान है; हे मन ! तू उसका पतिंगा न बन। काम और मदको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर और सदा सत्सङ्ग कर॥ ४६ (ख)॥

मासपारायण, बाईसवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने तृतीयः सोपानः समाप्तः ।

कलियुगके सम्पूर्ण पापोंको विध्वंस करनेवाले श्रीरामचरितमानसका यह तीसरा सोपान समाप्त हुआ ।

(अरण्यकाण्ड समाप्त)



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हनुमान्जीका प्रयाण



जिमि अमोघ रघुपति कर बाना ।
एही भाँति चलेउ हनुमाना ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri





CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri



एकु मैं मद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान ।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

चतुर्थ सोपान

किष्किन्धाकाण्ड

श्लोक

कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ ।
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवर्मौ हितौ
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥ १ ॥

कुन्दपुष्प और नील कमलके समान सुन्दर गौर एवं श्यामवर्ण, अत्यन्त बलवान्, विज्ञानके धाम, शोभासम्पन्न, श्रेष्ठ धनुर्धर, वेदोंके द्वारा वन्दित, गौ एवं ब्राह्मणोंके समूहके प्रिय [अथवा प्रेमी], मायासे मनुष्यरूप धारण किये हुए, श्रेष्ठ धर्मके लिये कवचस्वरूप, सबके हितकारी, श्रीसीताजीकी खोजमें लगे हुए, पथिकरूप रघुकुलके श्रेष्ठ श्रीरामजी और श्रीलक्ष्मणजी दोनों भाई निश्चय ही हमें भक्तिप्रद हों ॥ १ ॥

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा ।
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥ २ ॥

वे सुकृती (पुण्यात्मा पुरुष) धन्य हैं जो वेदरूपी समुद्र [के मथने] से उत्पन्न हुए कलियुगके मलको सर्वथा नष्ट कर देनेवाले, अविनाशी, भगवान् श्रीशम्भुके सुन्दर एवं श्रेष्ठ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुखरूपी चन्द्रमामें सदा शोभायमान, जन्म-मरणरूपी रोगके औषध, सबको सुख देने और श्रीजानकीजीके जीवनस्वरूप श्रीरामनामरूपी अमृतका निरन्तर पान करते रहते हैं॥

सो०—मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न॥

जहाँ श्रीशिव-पार्वती बसते हैं, उस काशीको मुक्तिकी जन्मभूमि, ज्ञानकी खान और पापोंका नाश करनेवाली जानकर उसका सेवन क्यों न किया जाय?

जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस॥

जिस भीषण हलाहल विषसे सब देवतागण जल रहे थे, उसको जिन्होंने पान कर लिया, रे मन्द मन! तू उन शंकरजीको क्यों नहीं भजता? उनके समान कृपालु [और] कौन है?

चौ०—आगें चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक पर्बत निअराया॥
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा। आवत देखि अतुल बल सींवा॥

श्रीरघुनाथजी फिर आगे चले। ऋष्यमूक पर्वत निकट आ गया। वहाँ (ऋष्यमूक पर्वतपर) मन्त्रियोंसहित सुग्रीव रहते थे। अतुलनीय बलकी सीमा श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको आते देखकर—॥ १ ॥

अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल रूप निधाना॥
धरि बटु रूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई॥

सुग्रीव अत्यन्त भयभीत होकर बोले—हे हनुमान्! सुनो, ये दोनों पुरुष बल और रूपके निधान हैं। तुम ब्रह्मचारीका रूप धारण करके जाकर देखो। अपने हृदयमें उनकी यथार्थ बात जानकर मुझे इशारेसे समझाकर कह देना॥ २ ॥

पठए बालि होहिं मन मैला। भागौं तुरत तजौं यह सैला॥
बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ। माथ नाइ पूछत अस भयऊ॥

यदि वे मनके मलिन बालिके भेजे हुए हों तो मैं तुरंत ही इस पर्वतको छोड़कर भाग जाऊँ। [यह सुनकर] हनुमान्जी ब्राह्मणका रूप धरकर वहाँ गये और मस्तक नवाकर इस प्रकार पूछने लगे—॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा। छत्री रूप फिरहु बन बीरा॥
कठिन भूमि कोमल पद गामी। कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी॥

हे वीर! साँवले और गोरे शरीरवाले आप कौन हैं, जो क्षत्रियके रूपमें वनमें फिर रहे हैं? हे स्वामी! कठोर भूमिपर कोमल चरणोंसे चलनेवाले आप किस कारण वनमें विचर रहे हैं?॥ ४॥

मृदुल मनोहर सुंदर गाता। सहत दुसह बन आतप बाता॥
की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ। नर नारायन की तुम्ह दोऊ॥

मनको हरण करनेवाले आपके सुन्दर, कोमल अंग हैं और आप वनके दुःसह धूप और वायुको सह रहे हैं! क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश—इन तीन देवताओंमेंसे कोई हैं, या आप दोनों नर और नारायण हैं?॥ ५॥

दो०—जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार॥ १॥

अथवा आप जगत्के मूल कारण और सम्पूर्ण लोकोंके स्वामी स्वयं भगवान् हैं, जिन्होंने लोगोंको भवसागरसे पार उतारने तथा पृथ्वीका भार नष्ट करनेके लिये मनुष्यरूपमें अवतार लिया है?॥ १॥

चौ०—कोसलेस दसरथ के जाए। हम पितु बचन मानि बन आए॥
नाम राम लछिमन दोउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई॥

[श्रीरामचन्द्रजीने कहा—] हम कोसलराज दशरथजीके पुत्र हैं और पिताका वचन मानकर वन आये हैं। हमारे राम-लक्ष्मण नाम हैं, हम दोनों भाई हैं। हमारे साथ सुन्दर सुकुमारी स्त्री थी॥ १॥

इहाँ हरी निसिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही॥
आपन चरित कहा हम गाई। कहहु बिप्र निज कथा बुझाई॥

यहाँ (वनमें) राक्षसने [मेरी पत्नी] जानकीको हर लिया। हे ब्राह्मण! हम उसे ही खोजते-फिरते हैं। हमने तो अपना चरित्र कह सुनाया। अब हे ब्राह्मण! अपनी कथा समझाकर कहिये॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना॥
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना॥

प्रभुको पहचानकर हनुमान्‌जी उनके चरण पकड़कर पृथ्वीपर गिर। (उन्होंने साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम किया)। [शिवजी कहते हैं—] हे पार्वती! वह सुख वर्णन नहीं किया जा सकता। शरीर पुलकित है, मुखसे वचन नि निकलता। वे प्रभुके सुन्दर वेषकी रचना देख रहे हैं! ॥ ३ ॥

पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदयँ निज नाथहि चीन्ही॥
मोर न्याउ मैं पूछा साईं। तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं॥

फिर धीरज धरकर स्तुति की। अपने नाथको पहचान लेनेसे हृदयमें हर्ष री रहा है। [फिर हनुमान्‌जीने कहा—] हे स्वामी! मैंने जो पूछा वह मेरा पूछ तो न्याय था, [वर्षोंके बाद आपको देखा, वह भी तपस्वीके वेषमें और मेरी वान बुद्धि, इससे मैं तो आपको पहचान न सका और अपनी परिस्थितिके अनुसार आपसे पूछा] परन्तु आप मनुष्यकी तरह कैसे पूछ रहे हैं? ॥ ४ ॥

तव माया बस फिरउँ भुलाना। ता ते मैं नहिं प्रभु पहिचाना॥

मैं तो आपकी मायाके वश भूला फिरता हूँ, इसीसे मैंने अपने स्वामी (आ को नहीं पहचाना ॥ ५ ॥

दो०—एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान ॥ २ ॥

एक तो मैं यों ही मन्द हूँ, दूसरे मोहके वशमें हूँ, तीसरे हृदयका कु और अज्ञान हूँ; फिर हे दीनबन्धु भगवान्! प्रभु (आप) ने भी मुझे भुला दिया!॥

चौ०—जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें॥
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा॥

हे नाथ! यद्यपि मुझमें बहुत-से अवगुण हैं, तथापि सेवक स्वामीकी विस्मृ न पड़े (आप उसे न भूल जायँ)। हे नाथ! जीव आपकी मायासे मोहित है। आपहीकी कृपासे निस्तार पा सकता है ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ता पर मैं रघुबीर दोहाई। जानउँ नहिं कछु भजन उपाई ॥
सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें ॥

उसपर हे रघुवीर ! मैं आपकी दुहाई (शपथ) करके कहता हूँ कि मैं भजन-साधन छ नहीं जानता। सेवक स्वामीके और पुत्र माताके भरोसे निश्चिन्त रहता है। प्रभुको वकका पालन-पोषण करते ही बनता है (करना ही पड़ता है) ॥ २ ॥

अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई ॥
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा ॥

ऐसा कहकर हनुमान्‌जी अकुलाकर प्रभुके चरणोंपर गिर पड़े, उन्होंने अपना असली रीर प्रकट कर दिया। उनके हृदयमें प्रेम छा गया। तब श्रीरघुनाथजीने उन्हें उठा- र हृदयसे लगा लिया और अपने नेत्रोंके जलसे सींचकर शीतल किया ॥ ३ ॥

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना। तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना ॥
समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्यगति सोऊ ॥

[फिर कहा—] हे कपि ! सुनो, मनमें ग्लानि मत मानना (मन छोटा न करना)। म मुझे लक्ष्मणसे भी दूने प्रिय हो। सब कोई मुझे समदर्शी कहते हैं (मेरे लिये न कोई य है, न अप्रिय), पर मुझको सेवक प्रिय है; क्योंकि वह अनन्य गति होता है मुझे छोड़कर उसको कोई दूसरा सहारा नहीं होता) ॥ ४ ॥

दो०—सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत ॥ ३ ॥

और हे हनुमान् ! अनन्य वही है जिसकी ऐसी बुद्धि कभी नहीं टलती कि मैं वक हूँ और यह चराचर (जड़-चेतन) जगत् मेरे स्वामी भगवान्‌का रूप है ॥ ३ ॥

०—देखि पवनसुत पति अनुकूला। हृदयँ हरष बीती सब सूला ॥
नाथ सैल पर कपिपति रहई। सो सुग्रीव दास तव अहई ॥

स्वामीको अनुकूल (प्रसन्न) देखकर पवनकुमार हनुमान्‌जीके हृदयमें हर्ष छा ा और उनके सब दुःख जाते रहे। [उन्होंने कहा—] हे नाथ ! इस पर्वतपर नरराज सुग्रीव रहता है, वह आपका दास है ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेहि सन नाथ मयत्री कीजे। दीन जानि तेहि अभय करीजे
सो सीता कर खोज कराइहि। जहँ तहँ मरकट कोटि पठाइहि
हे नाथ! उससे मित्रता कीजिये और उसे दीन जानकर निर्भय कर दीजि
वह सीताजीकी खोज करावेगा और जहाँ-तहाँ करोड़ों वानरोंको भेजेगा॥ २॥

एहि बिधि सकल कथा समुझाई। लिए दुऔ जन पीठि चढ़ाई
जब सुग्रीवँ राम कहुँ देखा। अतिसय जन्म धन्य करि लेखा
इस प्रकार सब बातें समझाकर हनुमान्‌जीने (श्रीराम-लक्ष्मण) दोनों जनोंको पी
चढ़ा लिया। जब सुग्रीवने श्रीरामचन्द्रजीको देखा तो अपने जन्मको अत्यन्त धन्य समझ

सादर मिलेउ नाइ पद माथा। भेंटेउ अनुज सहित रघुनाथा
कपि कर मन बिचार एहि रीती। करिहहिं बिधि मो सन ए प्रीती
सुग्रीव चरणोंमें मस्तक नवाकर आदरसहित मिले। श्रीरघुनाथजी भी
भाईसहित उनसे गले लगकर मिले। सुग्रीव मनमें इस प्रकार सोच रहे हैं
विधाता! क्या ये मुझसे प्रीति करेंगे?॥ ४॥

दो०—तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ॥ ४॥

तब हनुमान्‌जीने दोनों ओरकी सब कथा सुनाकर अग्निको साक्षी देकर परस
करके प्रीति जोड़ दी (अर्थात् अग्निकी साक्षी देकर प्रतिज्ञापूर्वक उनकी मैत्री करवा दी)

चौ०—कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा। लछिमन राम चरित सब भा
कह सुग्रीव नयन भरि बारी। मिलिहि नाथ मिथिलेसकुमा
दोनोंने [हृदयसे] प्रीति की, कुछ भी अन्तर नहीं रक्खा। तब लक्ष्मण
श्रीरामचन्द्रजीका सारा इतिहास कहा। सुग्रीवने नेत्रोंमें जल भरकर कहा—हे न
मिथिलेशकुमारी जानकीजी मिल जायँगी॥ १॥

मंत्रिन्ह सहित इहाँ एक बारा। बैठ रहेउँ मैं करत बिचा
गगन पंथ देखी मैं जाता। परबस परी बहुत बिलपा
मैं एक बार यहाँ मन्त्रियोंके साथ बैठा हुआ कुछ विचार कर रहा था। तब मैंने
(शत्रु) के वशमें पड़ी बहुत विलाप करती हुई सीताजीको आकाशमार्गसे जाते देखा था

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राम राम हा राम पुकारी। हमहि देखि दीन्हेउ पट डारी॥
मागा राम तुरत तेहिं दीन्हा। पट उर लाइ सोच अति कीन्हा॥

हमें देखकर उन्होंने 'राम! राम! हा राम!' पुकारकर वस्त्र गिरा दिया था। श्रीरामजीने उसे माँगा, तब सुग्रीवने तुरंत ही दे दिया। वस्त्रको हृदयसे लगाकर रामचन्द्रजीने बहुत ही सोच किया॥ ३॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। तजहु सोच मन आनहु धीरा॥
सब प्रकार करिहउँ सेवकाई। जेहि बिधि मिलिहि जानकी आई॥

सुग्रीवने कहा—हे रघुवीर! सुनिये। सोच छोड़ दीजिये और मनमें धीरज लाइये। सब प्रकारसे आपकी सेवा करूँगा, जिस उपायसे जानकीजी आकर आपको मिलें॥ ४॥

दो०—सखा बचन सुनि हरषे कृपासिंधु बलसींव।
कारन कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीव॥ ५॥

कृपाके समुद्र और बलकी सीमा श्रीरामजी सखा सुग्रीवके वचन सुनकर हर्षित हुए। [और बोले--] हे सुग्रीव! मुझे बताओ, तुम वनमें किस कारण रहते हो?॥ ५॥

चौ०—नाथ बालि अरु मैं द्वौ भाई। प्रीति रही कछु बरनि न जाई॥
मय सुत मायावी तेहि नाऊँ। आवा सो प्रभु हमरें गाऊँ॥

[सुग्रीवने कहा—] हे नाथ! बालि और मैं दो भाई हैं। हम दोनोंमें ऐसी प्रीति थी कि वर्णन नहीं की जा सकती। हे प्रभो! मय दानवका एक पुत्र था, उसका नाम मायावी था। एक बार वह हमारे गाँवमें आया॥ १॥

अर्ध राति पुर द्वार पुकारा। बाली रिपु बल सहै न पारा॥
धावा बालि देखि सो भागा। मैं पुनि गयउँ बंधु सँग लागा॥

उसने आधी रातको नगरके फाटकपर आकर पुकारा (ललकारा)। बालि शत्रुके बल (ललकार) को सह नहीं सका, वह दौड़ा। उसे देखकर मायावी भागा। मैं भी भाईके सङ्ग लगा चला गया॥ २॥

गिरिबर गुहाँ पैठ सो जाई। तब बालीं मोहि कहा बुझाई॥
परिखेसु मोहि एक पखवारा। नहिं आवौं तब जानेसु मारा॥

वह मायावी एक पर्वतकी गुफामें जा घुसा। तब बालिने मुझे समझाकर कहा—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुम एक पखवाड़े (पंद्रह दिन) तक मेरी बाट देखना । यदि मैं उतने दिनों
आऊँ तो जान लेना कि मैं मारा गया ॥ ३ ॥

मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी । निसरी रुधिर धार तहँ भा
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई । सिला देइ तहँ चलेउँ परा

हे खरारि ! मैं वहाँ महीनेभरतक रहा । वहाँ (उस गुफामेंसे) रक्तकी बड़ी
धारा निकली । [तब मैंने समझा कि] उसने बालिको मार डाला, अब आकर
मारेगा । इसलिये मैं वहाँ (गुफाके द्वारपर) एक शिला लगाकर भाग आया ॥

मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं । दीन्हेउ मोहि राज बरिआ
बाली ताहि मारि गृह आवा । देखि मोहि जियँ भेद बढ़ा

मन्त्रियोंने नगरको बिना स्वामी (राजा) का देखा, तो मुझको जबर्दस्ती
दे दिया । बालि उसे मारकर घर आ गया । मुझे [राजसिंहासनपर] देखकर उसने
भेद बढ़ाया (बहुत ही विरोध माना) [उसने समझा कि यह राज्यके लोभसे ही गु
द्वारपर शिला दे आया था, जिससे मैं बाहर न निकल सकूँ; और यहाँ आकर राजा बन

रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी । हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु ना
ताकें भय रघुबीर कृपाला । सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाल

उसने मुझे शत्रुके समान बहुत अधिक मारा और मेरा सर्वस्व तथा मेरी स्त्री
छीन लिया । हे कृपालु रघुवीर ! मैं उसके भयसे समस्त लोकोंमें बेहाल होकर फिरता रहा

इहाँ साप बस आवत नाहीं । तदपि सभीत रहउँ मन माहीं
सुनि सेवक दुख दीनदयाला । फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला

वह शापके कारण यहाँ नहीं आता । तो भी मैं मनमें भयभीत रहता हूँ । सेवकका
सुनकर दीनोंपर दया करनेवाले श्रीरघुनाथजीकी दोनों विशाल भुजाएँ फड़क उठीं ॥

दो०—सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान ।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गएँ न उबरिहिं प्रान ॥ ६ ॥

[उन्होंने कहा—] हे सुग्रीव ! सुनो मैं एक ही बाणसे बालिको मार डालूँ
ब्रह्मा और रुद्रकी शरणमें जानेपर भी उसके प्राण न बचेंगे ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

०–जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥

जो लोग मित्रके दुःखसे दुखी नहीं होते, उन्हें देखनेसे ही बड़ा पाप लगता । अपने पर्वतके समान दुःखको धूलके समान और मित्रके धूलके समान दुःखको मेरु (बड़े भारी पर्वत) के समान जाने ॥ १ ॥

जिन्ह कें असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा॥

जिन्हें स्वभावसे ही ऐसी बुद्धि प्राप्त नहीं है, वे मूर्ख हठ करके क्यों किसीसे त्रता करते हैं ? मित्रका धर्म है कि वह मित्रको बुरे मार्गसे रोककर अच्छे मार्गपर लावे। उसके गुण प्रकट करे और अवगुणोंको छिपावे ॥ २ ॥

देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई॥
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा॥

देने-लेनेमें मनमें शंका न रक्खे। अपने बलके अनुसार सदा हित ही करता है। विपत्तिके समयमें तो सदा सौगुना स्नेह करे। वेद कहते हैं कि संत (श्रेष्ठ) त्रके गुण (लक्षण) ये हैं ॥ ३ ॥

आगें कह मृदु बचन बनाई। पाछें अनहित मन कुटिलाई॥
जा कर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई॥

जो सामने तो बना-बनाकर कोमल वचन कहता है और पीठ पीछे बुराई रता है तथा मनमें कुटिलता रखता है—हे भाई ! [इस तरह] जिसका मन पकी चालके समान टेढ़ा है, ऐसे कुमित्रको तो त्यागनेमें ही भलाई है ॥ ४ ॥

सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी॥
सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरें॥

मूर्ख सेवक, कंजूस राजा, कुलटा स्त्री और कपटी मित्र—ये चारों शूलके समान पीड़ा देनेवाले] हैं। हे सखा ! मेरे बलपर अब तुम चिन्ता छोड़ दो। मैं सब कारसे तुम्हारे काम आऊँगा (तुम्हारी सहायता करूँगा) ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। बालि महाबल अति रनधी
दुंदुभि अस्थि ताल देखराए। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहा

सुग्रीवने कहा—हे रघुवीर! सुनिये, बालि महान् बलवान् और अत्यन्त र
है। फिर सुग्रीवने श्रीरामजीको दुन्दुभि राक्षसकी हड्डियाँ और तालके वृक्ष दिखल
श्रीरघुनाथजीने उन्हें बिना ही परिश्रमके (आसानीसे) ढहा दिया॥ ६॥

देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती। बालि बधब इन्ह भइ परती
बार बार नावइ पद सीसा। प्रभुहि जानि मन हरष कपी

श्रीरामजीका अपरिमित बल देखकर सुग्रीवकी प्रीति बढ़ गयी और
विश्वास हो गया कि ये बालिका वध अवश्य करेंगे। वे बार-बार चरणोंमें सिर
लगे। प्रभुको पहचानकर सुग्रीव मनमें हर्षित हो रहे थे॥ ७॥

उपजा ग्यान बचन तब बोला। नाथ कृपाँ मन भयउ अलोल
सुख संपति परिवार बड़ाई। सब परिहरि करिहउँ सेवका

जब ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब वे ये वचन बोले कि हे नाथ! आपकी कृ
अब मेरा मन स्थिर हो गया। सुख, सम्पत्ति, परिवार और बड़ाई (बड़प
सबको त्यागकर मैं आपकी सेवा ही करूँगा॥ ८॥

ए सब रामभगति के बाधक। कहहिं संत तव पद अवराध
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। माया कृत परमारथ ना

क्योंकि आपके चरणोंकी आराधना करनेवाले संत कहते हैं कि ये सब (
सम्पत्ति आदि) रामभक्तिके विरोधी हैं। जगत्में जितने भी शत्रु-मित्र और सुख
[आदि द्वन्द्व] हैं, सब-के-सब मायारचित हैं, परमार्थतः (वास्तवमें) नहीं हैं॥ ९

बालि परम हित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम्ह समन बिषा
सपनें जेहि सन होइ लराई। जागें समुझत मन सकुचा

हे श्रीरामजी! बालि तो मेरा परम हितकारी है, जिसकी कृपासे शोकका
करनेवाले आप मुझे मिले; और जिसके साथ अब स्वप्नमें भी लड़ाई हो तो जाग
उसे समझकर मनमें संकोच होगा [कि स्वप्नमें भी मैं उससे क्यों लड़ा]॥ १०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती ॥
सुनि बिराग संजुत कपि बानी। बोले बिहँसि रामु धनुपानी ॥

हे प्रभो ! अब तो इस प्रकार कृपा कीजिये कि सब छोड़कर दिन-रात मैं आपका भजन ही करूँ। सुग्रीवकी वैराग्ययुक्त वाणी सुनकर (उसके क्षणिक वैराग्यको देखकर) हाथमें धनुष धारण करनेवाले श्रीरामजी मुसकराकर बोले—॥ ११ ॥

जो कछु कहेहु सत्य सब सोई। सखा बचन मम मृषा न होई ॥
नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत ॥

तुमने जो कुछ कहा है, वह सभी सत्य है; परन्तु हे सखा ! मेरा वचन मिथ्या नहीं होता (अर्थात् बालि मारा जायगा और तुम्हें राज्य मिलेगा)। [काकभुशुण्डिजी कहते हैं कि—] हे पक्षियोंके राजा गरुड़ ! नट (मदारी) के बंदरकी तरह श्रीरामजी सबको नचाते हैं, वेद ऐसा कहते हैं ॥ १२ ॥

लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चाप सायक गहि हाथा ॥
तब रघुपति सुग्रीव पठावा। गर्जेसि जाइ निकट बल पावा ॥

तदनन्तर सुग्रीवको साथ लेकर और हाथोंमें धनुष-बाण धारण करके श्रीरघुनाथजी चले। तब श्रीरघुनाथजीने सुग्रीवको बालिके पास भेजा। वह श्रीरामजीका बल पाकर बालिके निकट जाकर गरजा ॥ १३ ॥

सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहि कर चरन नारि समुझावा ॥
सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा। ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा ॥

बालि सुनते ही क्रोधमें भरकर वेगसे दौड़ा। उसकी स्त्री ताराने चरण पकड़कर उसे समझाया कि हे नाथ ! सुनिये, सुग्रीव जिनसे मिले हैं वे दोनों भाई तेज और बलकी सीमा हैं ॥ १४ ॥

कोसलेस सुत लछिमन रामा। कालहु जीति सकहिं संग्रामा ॥

वे कोसलाधीश दशरथजीके पुत्र राम और लक्ष्मण संग्राममें कालको भी जीत सकते हैं।

दो०—कह बाली सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ ॥ ७ ॥

बालिने कहा—हे भीरु (डरपोक) प्रिये ! सुनो, श्रीरघुनाथजी समदर्शी हैं। जो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कदाचित् वे मुझे मारेंहीगे तो मैं सनाथ हो जाऊँगा (परमपद पा जाऊँगा) ॥ ७ ॥

चौ०—अस कहि चला महा अभिमानी । तृन समान सुग्रीवहि जानी ॥
भिरे उभौ बाली अति तर्जा । मुठिका मारि महाधुनि गर्जा ॥

ऐसा कहकर वह महान् अभिमानी बालि सुग्रीवको तिनकेके समान जानकर चला। दोनों भिड़ गये । बालिने सुग्रीवको बहुत धमकाया और घूँसा मारकर बड़े जोरसे गरजा ॥

तब सुग्रीव बिकल होइ भागा । मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा ॥
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला । बंधु न होइ मोर यह काला ॥

तब सुग्रीव व्याकुल होकर भागा । घूँसेकी चोट उसे वज्रके समान लगी। [सुग्रीवने आकर कहा—] हे कृपालु रघुवीर ! मैंने आपसे पहले ही कहा था, बालि मेरा भाई नहीं है, काल है ॥ २ ॥

एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ । तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ ॥
कर परसा सुग्रीव सरीरा । तनु भा कुलिस गई सब पीरा ॥

[श्रीरामजीने कहा—] तुम दोनों भाइयोंका एक-सा ही रूप है । उसी भ्रमसे मैंने उसको नहीं मारा । फिर श्रीरामजीने सुग्रीवके शरीरको हाथसे स्पर्श किया, जिससे उसका शरीर वज्रके समान हो गया और सारी पीड़ा जाती रही ॥ ३ ॥

मेली कंठ सुमन कै माला । पठवा पुनि बल देइ बिसाला ॥
पुनि नाना बिधि भई लराई । बिटप ओट देखहिं रघुराई ॥

तब श्रीरामजीने सुग्रीवके गलेमें फूलोंकी मालाा डाल दी और फिर उसे बड़ा भारी बल देकर भेजा। दोनोंमें पुनः अनेक प्रकारसे युद्ध हुआ। श्रीरघुनाथजी वृक्षकी आड़से देख रहे थे ॥

दो०—बहु छल बल सुग्रीव कर हियँ हारा भय मानि ।
मारा बालि राम तब हृदय माझ सर तानि ॥ ८ ॥

सुग्रीवने बहुत-से छल-बल किये, किन्तु [अन्तमें] भय मानकर हृदयसे हार गया । तब श्रीरामजीने तानकर बालिके हृदयमें बाण मारा ॥ ८ ॥

चौ०—परा बिकल महि सर के लागें । पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें ॥
स्याम गात सिर जटा बनाएँ । अरुन नयन सर चाप चढ़ाएँ ॥

बाणके लगते ही बालि व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा । किन्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामचन्द्रजीको आगे देखकर वह फिर उठ बैठा। भगवान्‌का श्याम शरीर है, सिरपर जटा बनाये हैं, लाल नेत्र हैं, बाण लिये हैं, और धनुष चढ़ाये हैं॥ १॥

पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा॥
हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा। बोला चितइ राम की ओरा॥

बालिने बार-बार भगवान्‌की ओर देखकर चित्तको उनके चरणोंमें लगा दिया। प्रभुको पहचानकर उसने अपना जन्म सफल माना। उसके हृदयमें प्रीति थी, पर मुखमें कठोर वचन थे। वह श्रीरामजीकी ओर देखकर बोला—॥ २॥

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं॥
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा॥

हे गोसाईं! आपने धर्मकी रक्षाके लिये अवतार लिया है और मुझे व्याधकी तरह (छिपकर) मारा? मैं वैरी और सुग्रीव प्यारा? हे नाथ! किस दोषसे आपने मुझे मारा?॥३॥

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई॥

[श्रीरामजीने कहा—]हे मूर्ख! सुन, छोटे भाईकी स्त्री, बहिन, पुत्रकी स्त्री और कन्या, ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टिसे देखता है, उसे मारनेमें कुछ भी पाप नहीं होता।

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारि सिखावन करसि न काना॥
मम भुज बल आश्रित तेहि जानी। मारा चहसि अधम अभिमानी॥

हे मूढ़! तुझे अत्यन्त अभिमान है। तूने अपनी स्त्रीकी सीखपर भी कान (ध्यान) नहीं दिया। सुग्रीवको मेरी भुजाओंके बलका आश्रित जानकर भी अरे अधम अभिमानी! तूने उसको मारना चाहा!॥ ५॥

दो०—सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि॥ ९॥

[बालिने कहा--]हे श्रीरामजी! सुनिये, स्वामी (आप) से मेरी चतुराई नहीं चल सकती। प्रभो! अन्तकालमें आपकी गति (शरण) पाकर मैं अब भी पापी ही रहा?॥ ९॥

चौ०—सुनत राम अति कोमल बानी। बालि सीस परसेउ निज पानी॥
अचल करौं तनु राखहु प्राना। बालि कहा सुनु कृपानिधाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बालिकी अत्यन्त कोमल वाणी सुनकर श्रीरामजीने उसके सिरको अपने हा
स्पर्श किया [और कहा—] मैं तुम्हारे शरीरको अचल कर दूँ, तुम प्राणोंको रख
बालिने कहा— हे कृपानिधान ! सुनिये—॥ १ ॥

जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अबिनासी

मुनिगण जन्म-जन्ममें (प्रत्येक जन्ममें) [अनेकों प्रकारका] साधन करते रहते
फिर भी अन्तकालमें उन्हें 'राम' नहीं कह आता (उनके मुखसे रामनाम नहीं निकल
जिनके नामके बलसे शंकरजी काशीमें सबको समानरूपसे अविनाशिनी गति (मुक्ति) देता

मम लोचन गोचर सोइ आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनाव

वह श्रीरामजी स्वयं मेरे नेत्रोंके सामने आ गये हैं। हे प्रभो ! ऐसा सं
क्या फिर कभी बन पड़ेगा ?॥ ३ ॥

छं०—सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं॥
मोहि जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बबूरही॥ १

श्रुतियाँ 'नेति-नेति' कहकर निरन्तर जिनका गुणगान करती रहती हैं; तथा
और मनको जीतकर एवं इन्द्रियोंको [विषयोंके रससे सर्वथा] नीरस बनाकर
गण ध्यानमें जिनकी कभी क्वचित् ही झलक पाते हैं, वे ही प्रभु (आप) सा
मेरे सामने प्रकट हैं। आपने मुझे अत्यन्त अभिमानवश जानकर यह कहा कि
शरीर रख लो। परन्तु ऐसा मूर्ख कौन होगा जो हठपूर्वक कल्पवृक्षको काटकर
बबूरके बाड़ लगावेगा (अर्थात् पूर्णकाम बना देनेवाले आपको छोड़कर आपसे
नश्वर शरीरकी रक्षा चाहेगा ?)॥ १ ॥

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागऊँ।
जेहिं जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ॥
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिऐ।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिऐ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे नाथ ! अब मुझपर दयादृष्टि कीजिये और मैं जो वर माँगता हूँ उसे दीजिये । मैं र्मवश जिस योनिमें जन्म लूँ, वहीं श्रीरामजी (आप) के चरणोंमें प्रेम करूँ । हे कल्याणप्रद भो ! यह मेरा पुत्र अंगद विनय और बलमें मेरे ही समान है, इसे स्वीकार कीजिये । र हे देवता और मनुष्योंके नाथ ! बाँह पकड़कर इसे अपना दास बनाइये ॥ २ ॥

दो०—राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग ।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग ॥ १० ॥

श्रीरामजीके चरणोंमें दृढ़ प्रीति करके बालिने शरीरको वैसे ही (आसानीसे) ाग दिया जैसे हाथी अपने गलेसे फूलोंकी मालाका गिरना न जाने ॥ १० ॥

०—राम बालि निज धाम पठावा । नगर लोग सब ब्याकुल धावा ॥
नाना बिधि बिलाप कर तारा । छूटे केस न देह सँभारा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने बालिको अपने परमधाम भेज दिया । नगरके सब लोग ाकुल होकर दौड़े । बालिकी स्त्री तारा अनेकों प्रकारसे विलाप करने लगी । उसके ल बिखरे हुए हैं और देहकी सँभाल नहीं है ॥ १ ॥

तारा बिकल देखि रघुराया । दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया ॥
छिति जल पावक गगन समीरा । पंच रचित अति अधम सरीरा ॥

ताराको व्याकुल देखकर श्रीरघुनाथजीने उसे ज्ञान दिया और उसकी माया अज्ञान) हर ली । [उन्होंने कहा—] पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु—इन च तत्त्वोंसे यह अत्यन्त अधम शरीर रचा गया है ॥ २ ॥

प्रगट सो तनु तव आगें सोवा । जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा ॥
उपजा ग्यान चरन तब लागी । लीन्हेसि परम भगति बर मागी ॥

वह शरीर तो प्रत्यक्ष तुम्हारे सामने सोया हुआ है और जीव नित्य है; फिर न किसके लिये रो रही हो ? जब ज्ञान उत्पन्न हो गया, तब वह भगवान्के रणों लगी और उसने परम भक्तिका वर माँग लिया ॥ ३ ॥

उमा दारु जोषित की नाईं । सबहि नचावत रामु गोसाईं ॥
तब सुग्रीवहि आयसु दीन्हा । मृतक कर्म बिधिवत सब कीन्हा ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! स्वामी श्रीरामजी सबको कठपुतलीकी तरह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नचाते हैं। तदनन्तर श्रीरामजीने सुग्रीवको आज्ञा दी और सुग्रीवने विधिपूर्वक बा
सब मृतक-कर्म किया ॥ ४ ॥

राम कहा अनुजहि समुझाई। राज देहु सुग्रीवहि जा
रघुपति चरन नाइ करि माथा। चले सकल प्रेरित रघुना

तब श्रीरामचन्द्रजीने छोटे भाई लक्ष्मणको समझाकर कहा कि तुम सुग्रीवको राज्य दे दो। श्रीरघुनाथजीकी प्रेरणा (आज्ञा) से सब लोग श्रीरघुना चरणोंमें मस्तक नवाकर चले ॥ ५ ॥

दो०—लछिमन तुरत बोलाए पुरजन बिप्र समाज।
राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अंगद कहँ जुबराज ॥ ११

लक्ष्मणजीने तुरंत ही सब नगरनिवासियोंको और ब्राह्मणोंके समाजको बुला और [उनके सामने] सुग्रीवको राज्य और अंगदको युवराजपद दिया ॥ ११ ॥

चौ०—उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बंधु प्रभु ना
सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्री

हे पार्वती ! जगत्में श्रीरामजीके समान हित करनेवाला गुरु, पिता, बन्धु और स्वामी कोई नहीं है। देवता, मनुष्य और मुनि सबकी यह रीति है स्वार्थके लिये ही सब प्रीति करते हैं ॥ १ ॥

बालि त्रास ब्याकुल दिन राती। तन बहु ब्रन चिंताँ जर छा
सोइ सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ। अति कृपाल रघुबीर सुभा

जो सुग्रीव दिन-रात बालिके भयसे व्याकुल रहता था, जिसके शरीरमें बहु घाव हो गये थे और जिसकी छाती चिन्ताके मारे जला करती थी, उसी सुग्री उन्होंने वानरोंका राजा बना दिया। श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव अत्यन्त ही कृपालु है।

जानतहूँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर पर
पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोलाई। बहु प्रकार नृपनीति सिखा

जो लोग जानते हुए भी ऐसे प्रभुको त्याग देते हैं, वे क्यों न विपत्तिके जालमें फ फिर श्रीरामजीने सुग्रीवको बुला लिया और बहुत प्रकारसे उन्हें राजनीतिकी शिक्षा दी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा। पुर न जाउँ दस चारि बरीसा॥
गत ग्रीषम बरषा रितु आई। रहिहउँ निकट सैल पर छाई॥

फिर प्रभुने कहा—हे वानरपति सुग्रीव! सुनो, मैं चौदह वर्षतक गाँव (बस्ती) में नहीं जाऊँगा। ग्रीष्मऋतु बीतकर वर्षाऋतु आ गयी। अतः मैं यहाँ पास ही पर्वतपर टिक रहूँगा।

अंगद सहित करहु तुम्ह राजू। संतत हृदयँ धरेहु मम काजू॥
जब सुग्रीव भवन फिरि आए। रामु प्रबरषन गिरि पर छाए॥

तुम अंगदसहित राज्य करो। मेरे कामका हृदयमें सदा ध्यान रखना। तदनन्तर जब सुग्रीवजी घर लौट आये, तब श्रीरामजी प्रवर्षण पर्वतपर जा टिके॥ ५॥

दो०—प्रथमहिं देवन्ह गिरि गुहा राखेउ रुचिर बनाइ।
राम कृपानिधि कछु दिन बास करहिंगे आइ॥ १२॥

देवताओंने पहलेसे ही उस पर्वतकी एक गुफाको सुन्दर बना (सजा) रक्खा था। उन्होंने सोच रक्खा था कि कृपाकी खान श्रीरामजी कुछ दिन यहाँ आकर निवास करेंगे॥ १२॥

चौ०—सुंदर बन कुसुमित अति सोभा। गुंजत मधुप निकर मधु लोभा॥
कंद मूल फल पत्र सुहाए। भए बहुत जब ते प्रभु आए॥

सुन्दर वन फूला हुआ अत्यन्त सुशोभित है। मधुके लोभसे भौंरोंके समूह गुंजार कर रहे हैं। जबसे प्रभु आये, तबसे वनमें सुन्दर कन्द, मूल, फल और पत्तोंकी बहुतायत हो गयी।

देखि मनोहर सैल अनूपा। रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा॥
मधुकर खग मृग तनु धरि देवा। करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा॥

मनोहर और अनुपम पर्वतको देखकर देवताओंके सम्राट् श्रीरामजी छोटे भाईसहित वहाँ रह गये। देवता, सिद्ध और मुनि भौंरों, पक्षियों और पशुओंके शरीर धारण करके प्रभुकी सेवा करने लगे॥ २॥

मंगलरूप भयउ बन तब ते। कीन्ह निवास रमापति जब ते॥
फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई। सुख आसीन तहाँ द्वौ भाई॥

जबसे रमापति श्रीरामजीने वहाँ निवास किया, तबसे वन मङ्गलस्वरूप हो गया। सुन्दर स्फटिकमणिकी एक अत्यन्त उज्ज्वल शिला है। उसपर दोनों भाई सुखपूर्वक विराजमान हैं॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहत अनुज सन कथा अनेका। भगति बिरति नृपनीति बिबे
बरषा काल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहा

श्रीरामजी छोटे भाई लक्ष्मणजीसे भक्ति, वैराग्य, राजनीति और ज्ञानकी अ कथाएँ कहते हैं। वर्षाकालमें आकाशमें छाये हुए बादल गरजते हुए बहु सुहावने लगते हैं॥ ४॥

दो०—लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पेखि।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नुभगत कहुँ देखि॥ १३

[श्रीरामजी कहने लगे—] हे लक्ष्मण! देखो, मोरोंके झुंड बादलोंको देखक रहे हैं। जैसे वैराग्यमें अनुरक्त गृहस्थ किसी विष्णुभक्तको देखकर हर्षित होते हैं॥

चौ०—घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मो
दामिनि दमक रह न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर ना

आकाशमें बादल घुमड़-घुमड़कर घोर गर्जना कर रहे हैं। प्रिया (सीत के बिना मेरा मन डर रहा है। बिजलीकी चमक बादलमें ठहरती नहीं, जैसे दु प्रीति स्थिर नहीं रहती॥ १॥

बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पा
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जै

बादल पृथ्वीके समीप आकर (नीचे उतरकर) बरस रहे हैं, जैसे विद्या विद्वान् नम्र हो जाते हैं। बूँदोंकी चोट पर्वत कैसे सहते हैं, जैसे दुष्टोंके वचन संत सहते हैं

छुद्र नदीं भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतरा
भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी

छोटी नदियाँ भरकर [किनारोंको] तुड़ाती हुई चलीं, जैसे थोड़े धनसे भी इतरा जाते हैं (मर्यादाका त्याग कर देते हैं)। पृथ्वीपर पड़ते ही पानी गँदला गया है, जैसे शुद्ध जीवके माया लिपट गयी हो॥ ३॥

समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई

जल एकत्र हो-होकर तालाबोंमें भर रहा है, जैसे सद्गुण [एक-एक कर] सज्ज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चले आते हैं। नदीका जल समुद्रमें जाकर वैसे ही स्थिर हो जाता है, जैसे व श्रीहरिको पाकर अचल (आवागमनसे मुक्त) हो जाता है॥ ४॥

दो०—हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें गुप्त होहिं सदग्रंथ॥ १४॥

पृथ्वी घाससे परिपूर्ण होकर हरी हो गयी है, जिससे रास्ते समझ नहीं पड़ते। से पाखण्ड मतके प्रचारसे सद्ग्रन्थ गुप्त (लुप्त) हो जाते हैं॥ १४॥

ो०—दादुर धुनि चहु दिसा सुहाई। बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई॥
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका॥

चारों दिशाओंमें मेढकोंकी ध्वनि ऐसी सुहावनी लगती है, मानो विद्यार्थियोंके मुदाय वेद पढ़ रहे हों। अनेकों वृक्षोंमें नये पत्ते आ गये हैं, जिससे वे ऐसे हरे-भरे वं सुशोभित हो गये हैं जैसे साधकका मन विवेक (ज्ञान) प्राप्त होनेपर हो जाता है॥ १॥

अर्क जवास पात बिनु भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ॥
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी॥

मदार और जवासा बिना पत्तेके हो गये (उनके पत्ते झड़ गये), जैसे श्रेष्ठ ज्यमें दुष्टोंका उद्यम जाता रहा (उनकी एक भी नहीं चलती)। धूल कहीं खोजने- भी नहीं मिलती, जैसे क्रोध धर्मको दूर कर देता है (अर्थात् क्रोधका आवेश नेपर धर्मका ज्ञान नहीं रह जाता)॥ २॥

ससि संपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी॥
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा॥

अन्नसे युक्त (लहलहाती हुई खेतीसे हरी-भरी) पृथ्वी कैसी शोभित हो रही जैसी उपकारी पुरुषकी सम्पत्ति। रातके घने अन्धकारमें जुगनू शोभा पा रहे हैं, नो दम्भियोंका समाज आ जुटा हो॥ ३॥

महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना॥

भारी वर्षासे खेतोंकी क्यारियाँ फूट चली हैं; जैसे स्वतन्त्र होनेसे स्त्रियाँ बिगड़

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाती हैं। चतुर किसान खेतोंको निरा रहे हैं (उनमेंसे घास आदिको नि फेंक रहे हैं)। जैसे विद्वान् लोग मोह, मद और मानका त्याग कर देते हैं॥

देखिअत चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पर
ऊषर बरषइ तृन नहिं जामा। जिमि हरिजन हियँ उपज न का

चक्रवाक पक्षी दिखायी नहीं दे रहे हैं, जैसे कलियुगको पाकर धर्म जाते हैं। ऊसरमें वर्षा होती है, पर वहाँ घासतक नहीं उगती। जैसे हरि हृदयमें काम नहीं उत्पन्न होता॥ ५॥

बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुरा
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रिय गन उपजें ग्या

पृथ्वी अनेक तरहके जीवोंसे भरी हुई उसी तरह शोभायमान है, जैसे पाकर प्रजाकी वृद्धि होती है। जहाँ-तहाँ अनेक पथिक थककर ठहरे हुए हैं, जैसे उत्पन्न होनेपर इन्द्रियाँ [शिथिल होकर विषयोंकी ओर जाना छोड़ देती हैं]॥ ६॥

दो०—कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं॥ १५

कभी-कभी वायु बड़े जोरसे चलने लगती है, जिससे बादल जहाँ-तहाँ गायब हो हैं। जैसे कुपुत्रके उत्पन्न होनेसे कुलके उत्तम धर्म (श्रेष्ठ आचरण) नष्ट हो जाते हैं॥ १५

कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग॥ १५

कभी [बादलोंके कारण] दिनमें घोर अन्धकार छा जाता है और सूर्य प्रकट हो जाते हैं। जैसे कुसंग पाकर ज्ञान नष्ट हो जाता है और पाकर उत्पन्न हो जाता है॥ १५ (ख)॥

चौ०—बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहा
फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ा

हे लक्ष्मण! देखो, वर्षा बीत गयी और परम सुन्दर शरद्-ऋतु आ ग फूले हुए काससे सारी पृथ्वी छा गयी। मानो वर्षा ऋतुने [कासरूपी सफेद बा रूपमें] अपना बुढ़ापा प्रकट किया है॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहि सोषइ संतोषा॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस गत मद मोहा॥

अगस्त्यके तारेने उदय होकर मार्गके जलको सोख लिया, जैसे सन्तोष लोभको ख लेता है। नदियों और तालाबोंका निर्मल जल ऐसा शोभा पा रहा है जैसे मद र मोहसे रहित संतोंका हृदय!॥ २॥

रस रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी॥
जानि सरद रितु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए॥

नदी और तालाबोंका जल धीरे-धीरे सूख रहा है। जैसे ज्ञानी (विवेकी) पुरुष ताका त्याग करते हैं। शरद्ऋतु जानकर खंजन पक्षी आ गये। जैसे समय कर सुन्दर सुकृत आ जाते हैं (पुण्य प्रकट हो जाते हैं)॥ ३॥

पंक न रेनु सोह असि धरनी। नीति निपुन नृप कै जसि करनी॥
जल संकोच बिकल भइँ मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना॥

न कीचड़ है, न धूल; इससे धरती [निर्मल होकर] ऐसी शोभा दे रही है से नीतिनिपुण राजाकी करनी! जलके कम हो जानेसे मछलियाँ व्याकुल हो रही हैं से मूर्ख (विवेकशून्य) कुटुम्बी (गृहस्थ) धनके बिना व्याकुल होता है॥ ४॥

बिनु घन निर्मल सोह अकासा। हरिजन इव परिहरि सब आसा॥
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी। कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी॥

बिना बादलोंका निर्मल आकाश ऐसा शोभित हो रहा है जैसे भगवद्भक्त सब शाओंको छोड़कर सुशोभित होते हैं। कहीं-कहीं (विरले ही स्थानोंमें) शरद्ऋतुकी ड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही है। जैसे कोई विरले ही मेरी भक्ति पाते हैं॥ ५॥

दो०—चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगति पाइ श्रम तजहिं आश्रमी चारि॥ १६॥

[शरद्ऋतु पाकर] राजा, तपस्वी, व्यापारी और भिखारी [क्रमशः विजय, तप, पार और भिक्षाके लिये] हर्षित होकर नगर छोड़कर चले। जैसे श्रीहरिकी भक्ति र चारों आश्रमवाले [नाना प्रकारके साधनरूपी] श्रमोंको त्याग देते हैं॥ १६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकउ बा
फूलें कमल सोह सर कैसा। निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जै
जो मछलियाँ अथाह जलमें हैं, वे सुखी हैं, जैसे श्रीहरिके शरणमें चले
पर एक भी बाधा नहीं रहती। कमलोंके फूलनेसे तालाब कैसी शोभा दे
जैसे निर्गुण ब्रह्म सगुण होनेपर शोभित होता है॥ १॥

गुंजत मधुकर मुखर अनूपा। सुंदर खग रव नाना रू
चक्रबाक मन दुख निसि पेखी। जिमि दुर्जन पर संपति दे
भौंरे अनुपम शब्द करते हुए गूँज रहे हैं तथा पक्षियोंके नाना प्रकारके
शब्द हो रहे हैं। रात्रि देखकर चकवेके मनमें वैसे ही दुःख हो रहा है, जैसे
सम्पत्ति देखकर दुष्टको होता है॥ २॥

चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहइ न संकरद्रो
सरदातप निसि ससि अपहरई। संत दरस जिमि पातक ट
पपीहा रट लगाये है, उसको बड़ी प्यास है। जैसे श्रीशंकरजीका द्रोही
नहीं पाता (सुखके लिये झीखता रहता है)। शरद्ऋतुके तापको रातके समय च
हर लेता है। जैसे संतोंके दर्शनसे पाप दूर हो जाते हैं॥ ३॥

देखि इंदु चकोर समुदाई। चितवहिं जिमि हरिजन हरि पा
मसक दंस बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल ना
चकोरोंके समुदाय चन्द्रमाको देखकर इस प्रकार टकटकी लगाये हैं जैसे भग
भगवान्‌को पाकर उनके [निर्निमेष नेत्रोंसे] दर्शन करते हैं। मच्छर और डाँस जाड़ेके
इस प्रकार नष्ट हो गये जैसे ब्राह्मणके साथ वैर करनेसे कुलका नाश हो जाता है॥ ४

दो०—भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।
सदगुर मिलें जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ॥ १७॥

[वर्षाऋतुके कारण] पृथ्वीपर जो जीव भर गये थे, वे शरद्ऋतुको पाकर वैसे ही
हो गये जैसे सद्गुरुके मिल जानेपर सन्देह और भ्रमके समूह नष्ट हो जाते हैं॥ १७॥

चौ०—बरषा गत निर्मल रितु आई। सुधि न तात सीता कै पा
एक बार कैसेहुँ सुधि जानौं। कालहु जीति निमिष महुँ आ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वर्षा बीत गयी, निर्मल शरद्ऋतु आ गयी। परन्तु हे तात ! सीताकी कोई खबर मिली ! एक बार कैसे भी पता पाऊँ तो कालको भी जीतकर पलभरमें जानकीको ले आऊँ।

कतहुँ रहउ जौं जीवति होई। तात जतन करि आनउँ सोई॥
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी॥

कहीं भी रहे, यदि जीती होगी तो हे तात! यत्न करके मैं उसे अवश्य लाऊँगा। ..., खजाना, नगर और स्त्री पा गया, इसलिये सुग्रीवने भी मेरी सुधि भुला दी॥ २॥

जेहिं सायक मारा मैं बाली। तेहिं सर हतौं मूढ़ कहँ काली॥
जासु कृपाँ छूटहिं मद मोहा। ता कहुँ उमा कि सपनेहुँ कोहा॥

जिस बाणसे मैंने बालिको मारा था, उसी बाणसे कल उस मूढ़को मारूँ ! [शिवजी ... हैं—] हे उमा ! जिनकी कृपासे मद और मोह छूट जाते हैं उनको कहीं स्वप्नमें क्रोध हो सकता है ? [यह तो लीलामात्र है]॥ ३॥

जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी। जिन्ह रघुबीर चरन रति मानी॥
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना। धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना॥

ज्ञानी मुनि जिन्होंने श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें प्रीति मान ली है (जोड़ ली है), इस चरित्र (लीलारहस्य) को जानते हैं। लक्ष्मणजीने जब प्रभुको क्रोधयुक्त ... तब उन्होंने धनुष चढ़ाकर बाण हाथमें ले लिये॥ ४॥

दो०—तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुना सींव।
भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव॥ १८॥

तब दयाकी सीमा श्रीरघुनाथजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको समझाया कि हे तात ! ...ग्रीवको केवल भय दिखलाकर ले आओ [उसे मारनेकी बात नहीं है]॥ १८॥

इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा। राम काजु सुग्रीवँ बिसारा॥
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा। चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा॥

यहाँ (किष्किन्धानगरीमें) पवनकुमार श्रीहनुमान्‌जीने विचार किया कि सुग्रीवने ...जीके कार्यको भुला दिया। उन्होंने सुग्रीवके पास जाकर चरणोंमें सिर नवाया। [साम, ...दण्ड, भेद] चारों प्रकारकी नीति कहकर उन्हें समझाया॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनि सुग्रीवँ परम भय माना। बिषयँ मोर हरि लीन्हेउ ग्या
अब मारुतसुत दूत समूहा। पठवहु जहँ तहँ बानर जू

हनुमान्‌जीके वचन सुनकर सुग्रीवने बहुत ही भय माना। [और कहा
विषयोंने मेरे ज्ञानको हर लिया। अब हे पवनसुत! जहाँ-तहाँ वानरोंके यूथ र
वहाँ दूतोंके समूहोंको भेजो॥ २॥

कहहु पाख महुँ आव न जोई। मोरें कर ता कर बध
तब हनुमंत बोलाए दूता। सब कर करि सनमान ब

और कहला दो कि एक पखवाड़ेमें (पंद्रह दिनोंमें) जो न आ जायगा,
मेरे हाथों वध होगा। तब हनुमान्‌जीने दूतोंको बुलाया और सबका बहुत सम्मान करके

भय अरु प्रीति नीति देखराई। चले सकल चरनन्हि सिर
एहि अवसर लछिमन पुर आए। क्रोध देखि जहँ तहँ कपि

सबको भय, प्रीति और नीति दिखलायी। सब बंदर चरणोंमें सिर नवाक
इसी समय लक्ष्मणजी नगरमें आये। उनका क्रोध देखकर बंदर जहाँ-तहाँ भा

दो०—धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करउँ पुर छार।
ब्याकुल नगर देखि तब आयउ बालिकुमार॥ १

तदनन्तर लक्ष्मणजीने धनुष चढ़ाकर कहा कि नगरको जलाकर अभी
दूँगा। तब नगरभरको व्याकुल देखकर बालिपुत्र अंगदजी उनके पास आये

चौ०—चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही। लछिमन अभय बाँह तेहि
क्रोधवंत लछिमन सुनि काना। कह कपीस अति भयँ अकु

अंगदने उनके चरणोंमें सिर नवाकर विनती की (क्षमायाचना की
लक्ष्मणजीने उनको अभय बाँह दी (भुजा उठाकर कहा कि डरो मत)। सुग्री
कानोंसे लक्ष्मणजीको क्रोधयुक्त सुनकर भयसे अत्यन्त व्याकुल होकर कहा—

सुनु हनुमंत संग लै तारा। करि बिनती समुझाउ
तारा सहित जाइ हनुमाना। चरन बंदि प्रभु सुजस ब

हे हनुमान! सुनो, तुम ताराको साथ ले जाकर बिनती करके राजकुमारको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समझा-बुझाकर शान्त करो)। हनुमान्‌जीने तारासहित जाकर लक्ष्मणजीके चरणों-
ी वन्दना की और प्रभुके सुन्दर यशका बखान किया ॥ २ ॥

करि बिनती मंदिर लै आए। चरन पखारि पलँग बैठाए ॥
तब कपीस चरनन्हि सिरु नावा। गहि भुज लछिमन कंठ लगावा ॥

वे विनती करके उन्हें महलमें ले आये तथा चरणोंको धोकर उन्हें पलँगपर
ठाया। तब वानरराज सुग्रीवने उनके चरणोंमें सिर नवाया और लक्ष्मणजीने हाथ
कड़कर उनको गलेसे लगा लिया ॥ ३ ॥

नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं ॥
सुनत बिनीत बचन सुख पावा। लछिमन तेहि बहुबिधि समुझावा ॥

[सुग्रीवने कहा—] हे नाथ! विषयके समान और कोई मद नहीं है। यह
नियोंके मनमें भी क्षणमात्रमें मोह उत्पन्न कर देता है [फिर मैं तो विषयी जीव ही
रा]। सुग्रीवके विनययुक्त वचन सुनकर लक्ष्मणजीने सुख पाया और उनको
त प्रकारसे समझाया ॥ ४ ॥

पवन तनय सब कथा सुनाई। जेहि बिधि गए दूत समुदाई ॥

तब पवनसुत हनुमान्‌जीने जिस प्रकार सब दिशाओंमें दूतोंके समूह गये थे वह
हाल सुनाया ॥ ५ ॥

दो०—हरषि चले सुग्रीव तब अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगें करि आए जहँ रघुनाथ ॥ २० ॥

तब अंगद आदि वानरोंको साथ लेकर और श्रीरामजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीको
अगुआ करके (अर्थात् उनके पीछे-पीछे) सुग्रीव हर्षित होकर चले और जहाँ रघुनाथजी
वहाँ आये ॥ २० ॥

—नाइ चरन सिरु कह कर जोरी। नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी ॥
अतिसय प्रबल देव तव माया। छूटइ राम करहु जौं दाया ॥

श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें सिर नवाकर हाथ जोड़कर सुग्रीवने कहा—हे नाथ!
कुछ भी दोष नहीं है। हे देव! आपकी माया अत्यन्त ही प्रबल है। आप जब
करते हैं, हे राम! तभी यह छूटती है ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पावँर पसु कपि अति का[illegible]
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जा[illegible]

हे स्वामी! देवता, मनुष्य और मुनि सभी विषयोंके वशमें हैं। फिर मैं तो पशु और पशुओंमें भी अत्यन्त कामी बंदर हूँ। स्त्रीका नयन-बाण जिसको नहीं [illegible] जो भयङ्कर क्रोधरूपी अँधेरी रातमें भी जागता रहता है (क्रोधान्ध नहीं होता)

लोभ पाँस जेहिं गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुरा[illegible]
यह गुन साधन तें नहिं होई। तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ [illegible]

और लोभकी फाँसीसे जिसने अपना गला नहीं बँधाया, हे रघुनाथजी [illegible] मनुष्य आपहीके समान है। ये गुण साधनसे नहीं प्राप्त होते। आपकी कृपासे ही कोई इन्हें पाते हैं॥ ३॥

तब रघुपति बोले मुसुकाई। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि [illegible]
अब सोइ जतनु करहु मन लाई। जेहि बिधि सीता कै सुधि [illegible]

तब श्रीरघुनाथजी मुसकराकर बोले—हे भाई! तुम मुझे भरतके समा[न] हो। अब मन लगाकर वही उपाय करो जिस उपायसे सीताकी खबर मिले।

दो०—एहि बिधि होत बतकही आए बानर जूथ।
नाना बरन सकल दिसि देखिअ कीस बरूथ॥ २[१]॥

इस प्रकार बातचीत हो रही थी कि वानरोंके यूथ (झुंड) आ गये। [illegible] रंगोंके वानरोंके दल सब दिशाओंमें दिखायी देने लगे॥ २१॥

चौ०—बानर कटक उमा मैं देखा। सो मूरुख जो करन चह [illegible]
आइ राम पद नावहिं माथा। निरखि बदनु सब होहिं [illegible]

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! वानरोंकी वह सेना मैंने देखी थी। [illegible] जो गिनती करना चाहे वह महान् मूर्ख है! सब वानर आ-आकर श्रीरामजीके मस्तक नवाते हैं और [सौन्दर्य-माधुर्यनिधि] श्रीमुखके दर्शन करके कृतार्थ होते [illegible]

अस कपि एक न सेना माहीं। राम कुसल जेहि पूछी [illegible]
यह कछु नहिं प्रभु कइ अधिकाई। बिस्वरूप ब्यापक [illegible]

सेनामें एक भी वानर ऐसा नहीं था जिससे श्रीरामजीने कुशल न पू[छी हो]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है; क्योंकि श्रीरघुनाथजी विश्वरूप तथा सर्वव्यापक हैं (सारे रूपों और सब स्थानोंमें हैं) ॥ २ ॥

ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पाई । कह सुग्रीव सबहि समुझाई ॥
राम काजु अरु मोर निहोरा । बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा ॥

आज्ञा पाकर सब जहाँ-तहाँ खड़े हो गये । तब सुग्रीवने सबको समझाकर कहा कि हे वानरोंके समूहो ! यह श्रीरामचन्द्रजीका कार्य है और मेरा निहोरा (अनुरोध) है; तुम चारों ओर जाओ ॥ ३ ॥

जनकसुता कहुँ खोजहु जाई । मास दिवस महँ आएहु भाई ॥
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाएँ । आवइ बनिहि सो मोहि मराएँ ॥

और जाकर जानकीजीको खोजो । हे भाई ! महीनेभरमें वापस आ जाना । [महीनेभरकी] अवधि बिताकर बिना पता लगाये ही लौट आवेगा उसे मेरेद्वारा मरवाते ही बनेगा (अर्थात् मुझे उसका वध करवाना ही पड़ेगा) ॥ ४ ॥

दो०—बचन सुनत सब बानर जहँ तहँ चले तुरंत ।
तब सुग्रीवँ बोलाए अंगद नल हनुमंत ॥ २२ ॥

सुग्रीवके वचन सुनते ही सब वानर तुरंत जहाँ-तहाँ (भिन्न-भिन्न दिशाओंमें) चल दिये । तब सुग्रीवने अंगद, नल, हनुमान् आदि प्रधान-प्रधान योद्धाओंको बुलाया [और कहा—] ॥ २२ ॥

चौ०—सुनहु नील अंगद हनुमाना । जामवंत मतिधीर सुजाना ॥
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू । सीता सुधि पूँछेहु सब काहू ॥

हे धीरबुद्धि और चतुर नील, अंगद, जाम्बवान् और हनुमान् ! तुम सब श्रेष्ठ योद्धा मिलकर दक्षिण दिशाको जाओ और सब किसीसे सीताजीका पता पूछना ॥ १ ॥

मन क्रम बचन सो जतन बिचारेहु । रामचंद्र कर काजु सँवारेहु ॥
भानु पीठि सेइअ उर आगी । स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी ॥

मन, वचन तथा कर्मसे उसीका (सीताजीका पता लगानेका) उपाय सोचना । श्रीरामचन्द्रजीका कार्य सम्पन्न (सफल) करना । सूर्यको पीठसे और अग्निको हृदयसे (सामनेसे) सेवन करना चाहिये । परन्तु स्वामीकी सेवा तो छल छोड़कर सर्वभावसे (मन, वचन, कर्मसे) करनी चाहिये ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तजि माया सेइअ परलोका। मिटहिं सकल भवसंभव सो
देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बि

माया (विषयोंकी ममता-आसक्ति) को छोड़कर परलोकका सेवन (भग दिव्य धामकी प्राप्तिके लिये भगवत्सेवारूप साधन) करना चाहिये, जिससे (जन्म-मरण) से उत्पन्न सारे शोक मिट जायँ। हे भाई ! देह धारण करने फल है कि सब कामों (कामनाओं)को छोड़कर श्रीरामजीका भजन ही किया जाय

सोइ गुनग्य सोई बड़भागी। जो रघुबीर चरन अनुरा
आयसु मागि चरन सिरु नाई। चले हरषि सुमिरत रघु

सद्गुणोंको पहचाननेवाला (गुणवान्) तथा बड़भागी वही है जो श्रीरघुना चरणोंका प्रेमी है। आज्ञा माँगकर और चरणोंमें सिर नवाकर श्रीरघुनाथजीका करते हुए सब हर्षित होकर चले ॥ ४ ॥

पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोल
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन ज

सबके पीछे पवनसुत श्रीहनुमान्‌जीने सिर नवाया। कार्यका विचार करके उन्हें अपने पास बुलाया। उन्होंने अपने कर-कमलसे उनके सिरका स्पर्श कि अपना सेवक जानकर उन्हें अपने हाथकी अँगूठी उतारकर दी ॥ ५ ॥

बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आ
हनुमत जन्म सुफल करि माना। चलेउ हृदयँ धरि कृपानिधा

[और कहा—] बहुत प्रकारसे सीताको समझाना और मेरा बल तथा (प्रेम) कहकर तुम शीघ्र लौट आना। हनुमान्‌जीने अपना जन्म सफल सम कृपानिधान प्रभुको हृदयमें धारण करके वे चले ॥ ६ ॥

जद्यपि प्रभु जानत सब बाता। राजनीति राखत सुरत्रा

यद्यपि देवताओंकी रक्षा करनेवाले प्रभु सब बात जानते हैं, तो भी वे राज रक्षा कर रहे हैं। (नीतिकी मर्यादा रखनेके लिये सीताजीका पता लगानेको तहाँ वानरोंको भेज रहे हैं)॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह ।
राम काज लयलीन मन बिसरा तन कर छोह ॥ २३ ॥

सब वानर वन, नदी, तालाब, पर्वत और पर्वतोंकी कन्दराओंमें खोजते हुए ले जा रहे हैं । मन श्रीरामजीके कार्यमें लवलीन है । शरीरतकका प्रेम (ममत्व) छूट गया है ॥ २३ ॥

चौ०—कतहुँ होइ निसिचर सैं भेटा । प्रान लेहिं एक एक चपेटा ॥
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं । कोउ मुनि मिलइ ताहि सब घेरहिं ॥

कहीं किसी राक्षससे भेंट हो जाती है, तो एक-एक चपतमें ही उसके प्राण ले हैं । पर्वतों और वनोंको बहुत प्रकारसे खोज रहे हैं । कोई मुनि मिल जाता है पता पूछनेके लिये उसे सब घेर लेते हैं ॥ १ ॥

लागि तृषा अतिसय अकुलाने । मिलइ न जल घन गहन भुलाने ॥
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना । मरन चहत सब बिनु जल पाना ॥

इतनेमें ही सबको अत्यन्त प्यास लगी, जिससे सब अत्यन्त ही व्याकुल हो । किन्तु जल कहीं नहीं मिला । घने जंगलमें सब भुला गये । हनुमान्‌जीने अनुमान किया कि जल पिये बिना सब लोग मरना ही चाहते हैं ॥ २ ॥

चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा । भूमि बिबर एक कौतुक पेखा ॥
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं । बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं ॥

उन्होंने पहाड़की चोटीपर चढ़कर चारों ओर देखा तो पृथ्वीके अंदर एक गुफा- उन्हें एक कौतुक (आश्चर्य) दिखायी दिया । उसके ऊपर चकवे, बगुले और हंस रहे हैं, और बहुत-से पक्षी उसमें प्रवेश कर रहे हैं ॥ ३ ॥

गिरि ते उतरि पवनसुत आवा । सब कहुँ लै सोइ बिबर देखावा ॥
आगें कै हनुमंतहि लीन्हा । पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा ॥

पवनकुमार हनुमान्‌जी पर्वतसे उतर आये और सबको ले जाकर उन्होंने वह गुफा लायी । सबने हनुमान्‌जीको आगे कर लिया और वे गुफामें घुस गये, देर नहीं की ॥ ४ ॥

दो०—दीख जाइ उपबन बर सर बिगसित बहु कंज ।
मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तप पुंज ॥ २४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंदर जाकर उन्होंने एक उत्तम उपवन (बगीचा) और तालाब देखा, जिसमें
कमल खिले हुए हैं। वहीं एक सुन्दर मन्दिर है, जिसमें एक तपोमूर्ति स्त्री बैठी है ॥२

चौ०–दूरि ते ताहि सबन्हि सिरु नावा। पूछें निज बृत्तान्त सुना
तेहिं तब कहा करहु जल पाना। खाहु सुरस सुंदर फल ना

दूरसे ही सबने उसे सिर नवाया और पूछनेपर अपना सब वृत्तान्त कह सु
तब उसने कहा—जलपान करो और भाँति-भाँतिके रसीले सुन्दर फल खाओ ॥१

मज्जनु कीन्ह मधुर फल खाए। तासु निकट पुनि सब चलि आ
तेहिं सब आपनि कथा सुनाई। मैं अब जाब जहाँ रघु

[आज्ञा पाकर] सबने स्नान किया, मीठे फल खाये और फिर सब उस
चले आये। तब उसने अपनी सब कथा कह सुनायी [और कहा—] मैं अ
जाऊँगी जहाँ श्रीरघुनाथजी हैं ॥ २ ॥

मूदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछि
नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें ती

तुमलोग आँखें मूँद लो और गुफाको छोड़कर बाहर जाओ। तुम सी
पा जाओगे, पछताओ नहीं (निराश न होओ)। आँखें मूँदकर फिर जब
खोलीं तो सब वीर क्या देखते हैं कि सब समुद्रके तीरपर खड़े हैं ॥ ३ ॥

सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा। जाइ कमल पद नाएसि मा
नाना भाँति बिनय तेहिं कीन्ही। अनपायनी भगति प्रभु दी

और वह स्वयं वहाँ गयी जहाँ श्रीरघुनाथजी थे। उसने जाकर प्रभुके
कमलोंमें मस्तक नवाया और बहुत प्रकारसे विनती की। प्रभुने उसे अपनी अन
(अचल) भक्ति दी ॥ ४ ॥

दो०–बदरीबन कहुँ सो गई प्रभु अग्या धरि सीस।
उर धरि राम चरन जुग जे बंदत अज ईस ॥ २५

प्रभुकी आज्ञा सिरपर धारणकर और श्रीरामजीके युगल चरणोंको, जिनक
और महेश भी वन्दना करते हैं, हृदयमें धारणकर वह (स्वयंप्रभा) बदरिका
चली गयी ॥ २५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं॥
सब मिलि कहहिं परस्पर बाता। बिनु सुधि लएँ करब का भ्राता॥

यहाँ वानरगण मनमें विचार कर रहे हैं कि अवधि तो बीत गयी, पर काम कुछ न हुआ। सब मिलकर आपसमें बात करने लगे कि हे भाई! अब तो सीताजीकी खबर लिये बिना लौटकर भी क्या करेंगे?॥ १॥

कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी॥
इहाँ न सुधि सीता कै पाई। उहाँ गएँ मारिहि कपिराई॥

अंगदने नेत्रोंमें जल भरकर कहा कि दोनों ही प्रकारसे हमारी मृत्यु हुई। यहाँ तो सीताजीकी सुध नहीं मिली और वहाँ जानेपर वानरराज सुग्रीव मार डालेंगे॥ २॥

पिता बधे पर मारत मोही। राखा राम निहोर न ओही॥
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं। मरन भयउ कछु संसय नाहीं॥

वे तो पिताके वध होनेपर ही मुझे मार डालते। श्रीरामजीने ही मेरी रक्षा की, इसमें सुग्रीवका कोई एहसान नहीं है। अंगद बार-बार सबसे कह रहे हैं कि अब मरण हुआ, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है॥ ३॥

अंगद बचन सुनत कपि बीरा। बोलि न सकहिं नयन बह नीरा॥
छन एक सोच मगन होइ रहे। पुनि अस बचन कहत सब भए॥

वानर वीर अंगदके वचन सुनते हैं, किन्तु कुछ बोल नहीं सकते; उनके नेत्रोंसे जल बह रहा है। एक क्षणके लिये सब सोचमें मग्न हो रहे। फिर सब ऐसा वचन कहने लगे—॥ ४॥

हम सीता कै सुधि लीन्हें बिना। नहिं जैहैं जुबराज प्रबीना॥
अस कहि लवन सिंधु तट जाई। बैठे कपि सब दर्भ डसाई॥

हे सुयोग्य युवराज! हमलोग सीताजीकी खोज लिये बिना नहीं लौटेंगे। ऐसा कहकर लवणसागरके तटपर जाकर सब वानर कुश बिछाकर बैठ गये॥ ५॥

जामवंत अंगद दुख देखी। कहीं कथा उपदेस बिसेषी॥
तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु॥

जाम्बवान्‌ने अंगदका दुःख देखकर विशेष उपदेशकी कथाएँ कहीं। [वे बोले—] हे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तात ! श्रीरामजीको मनुष्य न मानो, उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा समझो।

हम सब सेवक अति बड़भागी। संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥

हम सब सेवक अत्यन्त बड़भागी हैं, जो निरन्तर सगुण ब्रह्म (श्रीराम) में प्रीति रखते हैं॥ ७॥

दो०—निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि॥ २६॥

देवता, पृथ्वी, गौ और ब्राह्मणोंके लिये प्रभु अपनी इच्छासे [किसी कर्मबन्धनसे नहीं] अवतार लेते हैं। वहाँ सगुणोपासक [भक्तगण सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सार्ष्टि और सायुज्य] सब प्रकारके मोक्षोंको त्याग कर उनकी सेवामें साथ रहते हैं॥ २६॥

चौ०—एहि बिधि कथा कहहिं बहु भाँती। गिरि कंदराँ सुनी संपाती॥
बाहेर होइ देखि बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा॥

इस प्रकार जाम्बवान् बहुत प्रकारसे कथाएँ कह रहे हैं। इनकी बातें पर्वतकी कन्दरामें सम्पातीने सुनीं। बाहर निकलकर उसने बहुत-से वानर देखे। [तब वह बोला—] जगदीश्वरने मुझको घर बैठे बहुत-सा आहार भेज दिया ! ॥ १॥

आजु सबहि कहँ भच्छन करऊँ। दिन बहु चले अहार बिनु मरऊँ॥
कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा। आजु दीन्ह बिधि एकहिं बारा॥

आज इन सबको खा जाऊँगा। बहुत दिन बीत गये, भोजनके बिना मर रहा था। पेटभर भोजन कभी नहीं मिलता। आज विधाताने एक ही बारमें बहुत-सा भोजन दे दिया॥ २॥

डरपे गीध बचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना॥
कपि सब उठे गीध कहँ देखी। जामवंत मन सोच बिसेषी॥

गीधके वचन कानोंसे सुनते ही सब डर गये कि अब सचमुच ही मरना हो गया, यह हमने जान लिया। फिर उस गीध (सम्पाती) को देखकर सब वानर उठ खड़े हुए। जाम्बवान्‌के मनमें विशेष सोच हुआ॥ ३॥

कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम कोउ नाहीं॥
राम काज कारन तनु त्यागी। हरि पुर गयउ परम बड़भागी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंगदने मनमें विचारकर कहा—अहा! जटायुके समान धन्य कोई नहीं है। श्रीरामजीके कार्यके लिये शरीर छोड़कर वह परम बड़भागी भगवान्के परमधामको चला गया॥ ४॥

सुनि खग हरष सोक जुत बानी। आवा निकट कपिन्ह भय मानी॥
तिन्हहि अभय करि पूछेसि जाई। कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई॥

हर्ष और शोकसे युक्त वाणी (समाचार) सुनकर वह पक्षी (सम्पाती) वानरोंके पास आया, वानर डर गये। उनको अभय करके (अभय-वचन देकर) उसने पास जाकर जटायुका वृत्तान्त पूछा। तब उन्होंने सारी कथा उसे कह सुनायी॥ ५॥

सुनि संपाति बंधु कै करनी। रघुपति महिमा बहुबिधि बरनी॥

भाई जटायुकी करनी सुनकर सम्पातीने बहुत प्रकारसे श्रीरघुनाथजीकी महिमा वर्णन की॥ ६॥

दो०—मोहि लै जाहु सिंधुतट देउँ तिलांजलि ताहि।
बचन सहाइ करबि मैं पैहहु खोजहु जाहि॥ २७॥

[उसने कहा—] मुझे समुद्रके किनारे ले चलो, मैं जटायुको तिलाञ्जलि दे दूँ। इस सेवाके बदले मैं तुम्हारी वचनसे सहायता करूँगा (अर्थात् सीताजी कहाँ है सो बतला दूँगा)। जिसे तुम खोज रहे हो उसे पा जाओगे॥ २७॥

चौ०—अनुज क्रिया करि सागर तीरा। कहि निज कथा सुनहु कपि बीरा॥
हम द्वौ बंधु प्रथम तरुनाई। गगन गए रबि निकट उड़ाई॥

समुद्रके तीरपर छोटे भाई जटायुकी क्रिया (श्राद्ध आदि) करके सम्पाती अपनी कथा कहने लगा—हे वीर वानरो! सुनो, हम दोनों भाई उठती जवानीमें एक बार आकाशमें उड़कर सूर्यके निकट चले गये॥ १॥

तेज न सहि सक सो फिरि आवा। मैं अभिमानी रबि निअरावा॥
जरे पंख अति तेज अपारा। परेउँ भूमि करि घोर चिकारा॥

वह (जटायु) तेज नहीं सह सका, इससे लौट आया। (किन्तु) मैं अभिमानी था, इसलिये सूर्यके पास चला गया। अत्यन्त अपार तेजसे मेरे पंख जल गये। मैं बड़े जोरसे चीख मारकर जमीनपर गिर पड़ा॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुनि एक नाम चंद्रमा ओही। लागी दया देखि करि मोही॥
बहु प्रकार तेहिं ग्यान सुनावा। देह जनित अभिमान छड़ावा॥

वहाँ चन्द्रमा नामके एक मुनि थे, मुझे देखकर उन्हें बड़ी दया लगी। उन्होंने बहुत प्रकारसे मुझे ज्ञान सुनाया और मेरे देहजनित (देहसम्बन्धी) अभिमानको छुड़ा दिया।

त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिही। तासु नारि निसिचर पति हरिही॥
तासु खोज पठइहि प्रभु दूता। तिन्हहि मिलें तैं होब पुनीता॥

[उन्होंने कहा—] त्रेतायुगमें साक्षात् परब्रह्म मनुष्यशरीर धारण करेंगे। उनकी स्त्रीको राक्षसोंका राजा हर ले जायगा। उसकी खोजमें प्रभु दूत भेजेंगे। उनसे मिलनेपर तू पवित्र हो जायगा, ॥ ४ ॥

जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता। तिन्हहि देखाइ देहेसु तैं सीता॥
मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू। सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू॥

और तेरे पंख उग आयेंगे; चिन्ता न कर। उन्हें तू सीताजीको दिखा देना। मुनिकी वह वाणी आज सत्य हुई। अब मेरे वचन सुनकर तुम प्रभुका कार्य करो॥ ५ ॥

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका। तहँ रह रावन सहज असंका॥
तहँ असोक उपबन जहँ रहई। सीता बैठि सोच रत अहई॥

त्रिकूट पर्वतपर लङ्का बसी हुई है। वहाँ स्वभावहीसे निडर रावण रहता है। वहाँ अशोक नामका उपवन (बगीचा) है, जहाँ सीताजी रहती हैं; [इस समय भी] वे सोचमें मग्न बैठी हैं॥ ६ ॥

दो०—मैं देखउँ तुम्ह नाहीं गीधहि दृष्टि अपार।
बूढ़ भयउँ न त करतेउँ कछुक सहाय तुम्हार॥ २८॥

मैं उन्हें देख रहा हूँ, तुम नहीं देख सकते; क्योंकि गीधकी दृष्टि अपार है (बहुत दूरतक जाती है)। क्या करूँ? मैं बूढ़ा हो गया, नहीं तो तुम्हारी कुछ तो सहायता अवश्य करता॥ २८ ॥

चौ०—जो नाघइ सत जोजन सागर। करइ सो राम काज मति आगर॥
मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा। राम कृपाँ कस भयउ सरीरा॥

जो सौ योजन (चार सौ कोस) समुद्र लाँघ सकेगा और बुद्धिनिधान होगा,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही श्रीरामजीका कार्य कर सकेगा। [निराश होकर घबड़ाओ मत] मुझे देखकर मनमें धीरज धरो। देखो, श्रीरामजीकी कृपासे [देखते-ही-देखते] मेरा शरीर कैसा हो गया (बिना पाँखका बेहाल था, पाँख उगनेसे सुन्दर हो गया)! ॥ १ ॥

पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं ॥
तासु दूत तुम्ह तजि कदराई। राम हृदयँ धरि करहु उपाई ॥

पापी भी जिनका नाम-स्मरण करके अत्यन्त अपार भवसागरसे तर जाते हैं, तुम उनके दूत हो; अतः कायरता छोड़कर श्रीरामजीको हृदयमें धारण करके उपाय करो॥ २॥

अस कहि गरुड़ गीध जब गयऊ। तिन्ह कें मन अति बिसमय भयऊ ॥
निज निज बल सब काहूँ भाषा। पार जाइ कर संसय राखा ॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़जी! इस प्रकार कहकर जब गीध चला गया, तब उन (वानरों) के मनमें अत्यन्त विस्मय हुआ। सब किसीने अपना-अपना बल कहा। पर समुद्रके पार जानेमें सभीने सन्देह प्रकट किया ॥ ३ ॥

जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा। नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा ॥
जबहिं त्रिबिक्रम भए खरारी। तब मैं तरुन रहेउँ बल भारी ॥

ऋक्षराज जाम्बवान् कहने लगे—मैं अब बूढ़ा हो गया। शरीरमें पहलेवाले बलका लेश भी नहीं रहा। जब खरारि (खरके शत्रु श्रीराम) वामन बने थे, तब मैं जवान था और मुझमें बड़ा बल था ॥ ४ ॥

दो०—बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ।
उभय घरी महँ दीन्हीं सात प्रदच्छिन धाइ ॥ २९ ॥

बलिके बाँधते समय प्रभु इतने बढ़े कि उस शरीरका वर्णन नहीं हो सकता। किंतु मैंने दो ही घड़ीमें दौड़कर [उस शरीरकी] सात प्रदक्षिणाएँ कर लीं ॥ २९ ॥

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा ॥
जामवंत कह तुम्ह सब लायक। पठइअ किमि सबही कर नायक ॥

अंगदने कहा—मैं पार तो चला जाऊँगा। परन्तु लौटते समयके लिये हृदयमें कुछ सन्देह है। जाम्बवान्‌ने कहा—तुम सब प्रकारसे योग्य हो। परन्तु तुम सबके नेता हो, तुम्हें कैसे भेजा जाय? ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहेहु बलवान
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधान

ऋक्षराज जाम्बवान्‌ने श्रीहनुमान्‌जीसे कहा—हे हनुमान् ! हे बलवान् !
तुमने यह क्या चुप साध रक्खी है ? तुम पवनके पुत्र हो और बलमें पवनके
हो। तुम बुद्धि, विवेक और विज्ञानकी खान हो ॥ २ ॥

कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पा
राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्बताका

जगत्‌में कौन-सा ऐसा कठिन काम है जो हे तात ! तुमसे न हो
श्रीरामजीके कार्यके लिये ही तो तुम्हारा अवतार हुआ है। यह सुनते ही हनु
पर्वतके आकारके (अत्यन्त विशालकाय) हो गये ॥ ३ ॥

कनक बरन तन तेज बिराजा। मानहुँ अपर गिरिन्ह कर रा
सिंहनाद करि बारहिं बारा। लीलहिं नाघउँ जलनिधि खा

उनका सोनेका-सा रंग है, शरीरपर तेज सुशोभित है, मानो दूसरा
राजा सुमेरु हो। हनुमान्‌जीने बार-बार सिंहनाद करके कहा—मैं इस खारे
खेलमें ही लाँघ सकता हूँ, ॥ ४ ॥

सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उ
जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु

और सहायकोंसहित रावणको मारकर, त्रिकूट पर्वतको उखाड़कर य
सकता हूँ। हे जाम्बवान् ! मैं तुमसे पूछता हूँ, तुम मुझे उचित सीख दे
मुझे क्या करना चाहिये] ॥ ५ ॥

एतना करहु तात तुम्ह जाई। सीतहि देखि कहहु सुधि
तब निज भुज बल राजिवनैना। कौतुक लागि संग कपि

[जाम्बवान्‌ने कहा—] हे तात ! तुम जाकर इतना ही करो कि सी
देखकर लौट आओ और उनकी खबर कह दो। फिर कमलनयन श्रीराम
बाहुबलसे [ही राक्षसोंका संहार कर सीताजीको ले आयेंगे, केवल] खेल
ही वे वानरोंकी सेना साथ लेंगे ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई॥

वानरोंकी सेना साथ लेकर राक्षसोंका संहार करके श्रीरामजी सीताजीको ले आयेंगे। ब देवता और नारदादि मुनि भगवान्‌के तीनों लोकोंको पवित्र करनेवाले सुन्दर यशका खान करेंगे, जिसे सुनने, गाने, कहने और समझनेसे मनुष्य परमपद पाते हैं और से श्रीरघुवीरके चरणकमलका मधुकर (भ्रमर) तुलसीदास गाता है।

दो०—भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥३०(क)॥

श्रीरघुवीरका यश भव (जन्म-मरण) रूपी रोगकी [अचूक] दवा है। जो पुरुष र स्त्री इसे सुनेंगे, त्रिशिराके शत्रु श्रीरामजी उनके सब मनोरथोंको सिद्ध करेंगे। ३०(क)।

सो०—नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक।
सुनिअ तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक॥३०(ख)॥

जिनका नीले कमलके समान श्याम शरीर है, जिनकी शोभा करोड़ों कामदेवोंसे अधिक है और जिनका नाम पापरूपी पक्षियोंके मारनेके लिये बधिक (व्याधा) के ान है, उन श्रीरामके गुणोंके समूह (लीला) को अवश्य सुनना चाहिये॥३०(ख)॥

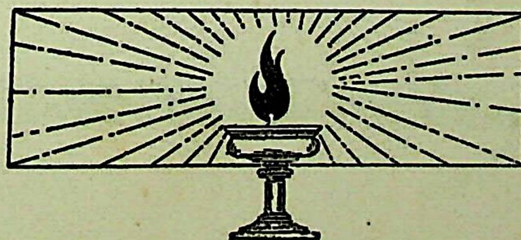
मासपारायण, तेईसवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने चतुर्थः सोपानः समाप्तः।

कलियुगके समस्त पापोंका नाश करनेवाले श्रीरामचरितमानसका

यह चौथा सोपान समाप्त हुआ।

(किष्किन्धाकाण्ड समाप्त)



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लंकादहन

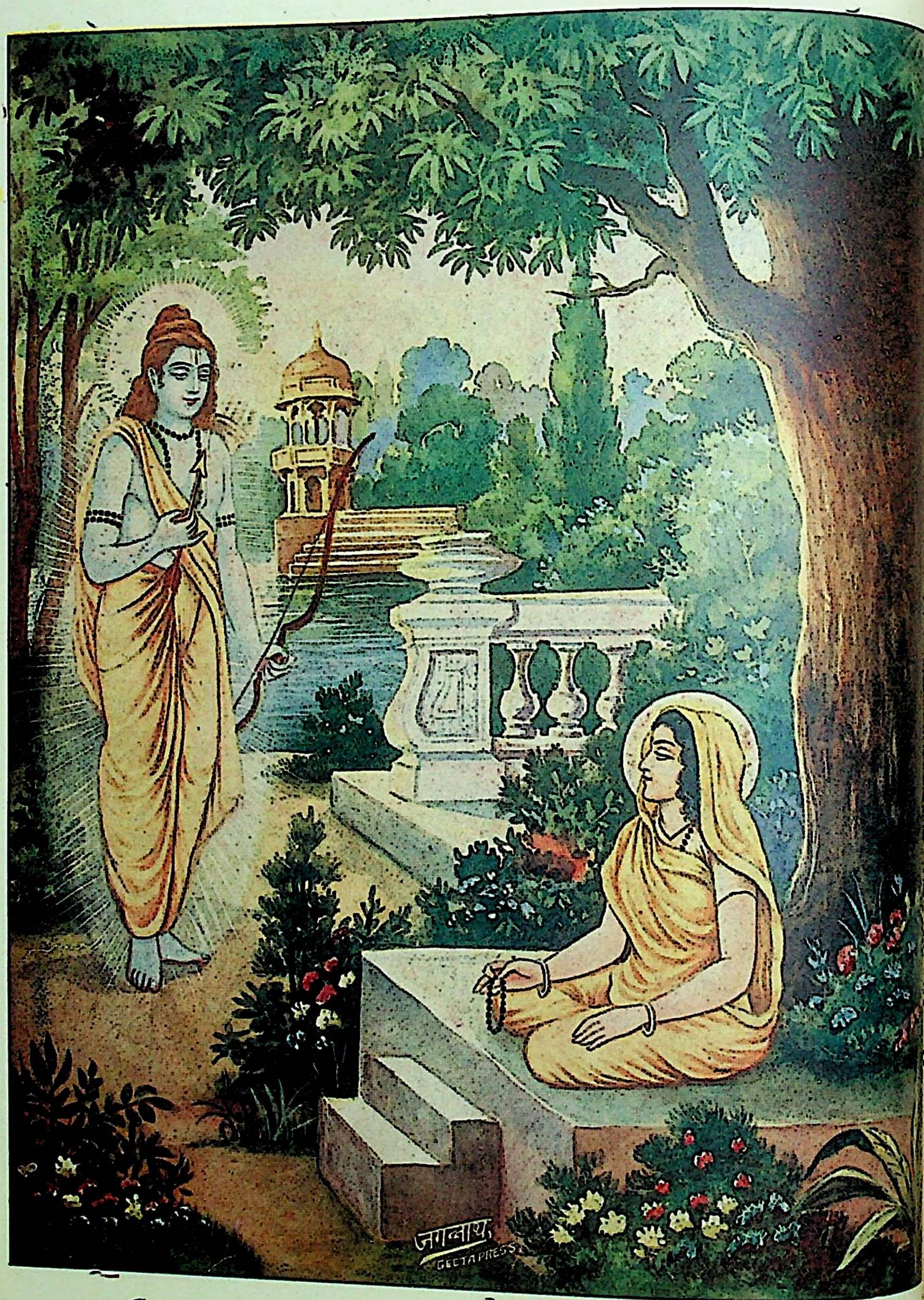


अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ध्यानमग्ना सीता



नाम पाहरू दिवसनिसि ध्यान तुम्हार कपाट ।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

पञ्चम सोपान

सुन्दरकाण्ड

श्लोक

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम् ।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥ १ ॥

शान्त, सनातन, अप्रमेय (प्रमाणोंसे परे), निष्पाप, मोक्षरूप परम शान्ति ..., ब्रह्मा, शम्भु और शेषजीसे निरन्तर सेवित, वेदान्तके द्वारा जाननेयोग्य, ...क, देवताओंमें सबसे बड़े, मायासे मनुष्यरूपमें दीखनेवाले, समस्त पापोंको ...े, करुणाकी खान, रघुकुलमें श्रेष्ठ तथा राजाओंके शिरोमणि, राम कहलाने- ...गदीश्वरकी मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा ।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च ॥ २ ॥

... रघुनाथजी ! मैं सत्य कहता हूँ, और फिर आप सबके अन्तरात्मा ही हैं ...नते ही हैं), कि मेरे हृदयमें दूसरी कोई इच्छा नहीं है । हे रघुकुलश्रेष्ठ ! ...ी निर्भरा (पूर्ण) भक्ति दीजिये और मेरे मनको काम आदि दोषोंसे रहित कीजिये २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि ॥

अतुल बलके धाम, सोनेके पर्वत (सुमेरु) के समान कान्तियुक्त दैत्यरूपी वन [को ध्वंस करने] के लिये अग्निरूप, ज्ञानियोंमें अग्रग गुणोंके निधान, वानरोंके स्वामी, श्रीरघुनाथजीके प्रिय भक्त पवनपुत्र श्री मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ३ ॥

चौ०–जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अ
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फ

जाम्बवान्के सुन्दर वचन सुनकर हनुमान्जीके हृदयको बहुत ही बोले–] हे भाई ! तुमलोग दुःख सहकर,कन्द-मूल-फल खाकर तबतक मेरी

जब लगि आवौं सीतहि देखी। होइहि काजु मोहि हरष
यह कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा। चलेउ हरषि हियँ धरि

जबतक मैं सीताजीको देखकर [लौट] न आऊँ। काम अवश्य हो मुझे बहुत ही हर्ष हो रहा है। यह कहकर और सबको मस्तक नवाकर श्रीरघुनाथजीको धारण करके हनुमान्जी हर्षित होकर चले ॥ २ ॥

सिंधु तीर एक भूधर सुंदर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवन तनय बल

समुद्रके तीरपर एक सुन्दर पर्वत था। हनुमान्जी खेलसे ही (अन कूदकर उसके ऊपर जा चढ़े और बार-बार श्रीरघुवीरका स्मरण करके अत हनुमान्जी उसपरसे बड़े वेगसे उछले ॥ ३ ॥

जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ

जिस पर्वतपर हनुमान्जी पैर रखकर चले (जिसपरसे वे उछले) पातालमें धँस गया। जैसे श्रीरघुनाथजीका अमोघ बाण चलता है,उसी तरह हनु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जलनिधि रघुपति दूत बिचारी । तैं मैनाक होहि श्रमहारी ॥
समुद्रने उन्हें श्रीरघुनाथजीका दूत समझकर मैनाक पर्वतसे कहा कि हे मैनाक ! की थकावट दूर करनेवाला हो (अर्थात् अपने ऊपर इन्हें विश्राम दे) ॥ ५ ॥

दो०—हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम ।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥ १ ॥

हनुमान्‌जीने उसे हाथसे छू दिया, फिर प्रणाम करके कहा—भाई ! श्रीरामचन्द्रजी-
ाम किये बिना मुझे विश्राम कहाँ ? ॥ १ ॥

-जात पवनसुत देवन्ह देखा । जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा ॥
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता । पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता ॥
देवताओंने पवनपुत्र हनुमान्‌जीको जाते हुए देखा । उनकी विशेष बल-बुद्धिको के लिये (परीक्षार्थ) उन्होंने सुरसा नामक सर्पोंकी माताको भेजा, उसने आकर न्‌जीसे यह बात कही—॥ १ ॥

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा । सुनत बचन कह पवनकुमारा ॥
राम काजु करि फिरि मैं आवौं । सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं ॥
आज देवताओंने मुझे भोजन दिया है । यह वचन सुनकर पवनकुमार हनुमान्‌जीने -श्रीरामजीका कार्य करके मैं लौट आऊँ और सीताजीकी खबर प्रभुको सुना दूँ, ॥ २ ॥

तब तव बदन पैठिहउँ आई । सत्य कहउँ मोहि जान दे माई ॥
कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना । ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना ॥
तब मैं आकर तुम्हारे मुँहमें घुस जाऊँगा [तुम मुझे खा लेना] । हे माता ! त्य कहता हूँ, अभी मुझे जाने दे । जब किसी भी उपायसे उसने जाने नहीं तब हनुमान्‌जीने कहा—तो फिर मुझे खा न ले ॥ ३ ॥

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा । कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा ॥
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ । तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ ॥
उसने योजनभर (चार कोसमें) मुँह फैलाया । तब हनुमान्‌जीने अपने शरीरको दूना बढ़ा लिया । उसने सोलह योजनका मुख किया । हनुमान्‌जी तुरंत ही न योजनके हो गये ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप दे
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत

जैसे-जैसे सुरसा मुखका विस्तार बढ़ाती थी, हनुमान्‌जी उसका दिखलाते थे। उसने सौ योजन (चार सौ कोस) का मुख किया। तब ह बहुत ही छोटा रूप धारण कर लिया ॥ ५ ॥

बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरु
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा। बुधि बल मरमु तोर मैं

और वे उसके मुखमें घुसकर [तुरंत] फिर बाहर निकल आये औ नवाकर विदा माँगने लगे। [उसने कहा—] मैंने तुम्हारे बुद्धि-बलका भेद जिसके लिये देवताओंने मुझे भेजा था ॥ ६ ॥

दो०—राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान ॥

तुम श्रीरामचन्द्रजीका सब कार्य करोगे, क्योंकि तुम बल-बुद्धिके भण्
यह आशीर्वाद देकर वह चली गयी, तब हनुमान्‌जी हर्षित होकर चले ॥

चौ०—निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई। करि माया नभु के खग
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं। जल बिलोकि तिन्ह कै परि

समुद्रमें एक राक्षसी रहती थी। वह माया करके आकाशमें उड़ते हुए पकड़ लेती थी। आकाशमें जो जीव-जन्तु उड़ा करते थे, वह जलमें उनकी परछाईं

गहइ छाहँ सक सो न उड़ाई। एहि बिधि सदा गगनचर
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा। तासु कपटु कपि तुरतहिं ची

उस परछाईंको पकड़ लेती थी, जिससे वे उड़ नहीं सकते थे [औ गिर पड़ते थे]। इस प्रकार वह सदा आकाशमें उड़नेवाले जीवोंको खाय थी। उसने वही छल हनुमान्‌जीसे भी किया। हनुमान्‌जीने तुरंत ही उसक पहचान लिया ॥ २ ॥

ताहि मारि मारुतसुत बीरा। बारिधि पार गयउ मति
तहाँ जाइ देखी बन सोभा। गुंजत चंचरीक मधु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पवनपुत्र धीरबुद्धि वीर श्रीहनुमान्‌जी उसको मारकर समुद्रके पार गये। वहाँ जाकर वनकी शोभा देखी। मधु (पुष्परस) के लोभसे भौंरे गुंजार कर रहे थे॥ ३॥

नाना तरु फल फूल सुहाए। खग मृग बृंद देखि मन भाए॥
सैल बिसाल देखि एक आगें। ता पर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें॥

अनेकों प्रकारके वृक्ष फल-फूलसे शोभित हैं। पक्षी और पशुओंके समूहको तो वे मनमें [बहुत ही] प्रसन्न हुए। सामने एक विशाल पर्वत देखकर जी भय त्यागकर उसपर दौड़कर जा चढ़े॥ ४॥

उमा न कछु कपि कै अधिकाई। प्रभु प्रताप जो कालहि खाई॥
गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी। कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! इसमें वानर हनुमान्‌की कुछ बड़ाई नहीं है। भुका प्रताप है, जो कालको भी खा जाता है। पर्वतपर चढ़कर उन्होंने लंका बहुत ही बड़ा किला है, कुछ कहा नहीं जाता॥ ५॥

अति उतंग जलनिधि चहु पासा। कनक कोट कर परम प्रकासा॥

वह अत्यन्त ऊँचा है, उसके चारों ओर समुद्र है। सोनेके परकोटे (चहारदिवारी) म प्रकाश हो रहा है॥ ६॥

छं०—कनक कोट बिचित्र मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।
बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत नहिं बनै॥१॥

विचित्र मणियोंसे जड़ा हुआ सोनेका परकोटा है, उसके अंदर बहुत-से सुन्दर-घर हैं। चौराहे, बाजार, सुन्दर मार्ग और गलियाँ हैं; सुन्दर नगर बहुत सजा हुआ है। हाथी, घोड़े, खच्चरोंके समूह तथा पैदल और रथोंके समूहोंको न सकता है? अनेक रूपोंके राक्षसोंके दल हैं, उनकी अत्यन्त बलवती र्णन करते नहीं बनती॥ १॥

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापीं सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहुबिधि एक एकन्ह तर्जहीं।

वन, बाग, उपवन (बगीचे), फुलवाड़ी, तालाब, कुएँ और बावलियाँ हैं। मनुष्य, नाग, देवताओं और गन्धर्वोंकी कन्याएँ अपने सौन्दर्यसे मुनि मनोंको मोहे लेती हैं। कहीं पर्वतके समान विशाल शरीरवाले बड़े ही बल (पहलवान) गरज रहे हैं। वे अनेकों अखाड़ोंमें बहुत प्रकारसे भिड़ते दूसरेको ललकारते हैं ॥ २ ॥

करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं।
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु एक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही।

भयङ्कर शरीरवाले करोड़ों योद्धा यत्न करके (बड़ी सावधानीसे) नगर दिशाओंमें (सब ओरसे) रखवाली करते हैं। कहीं दुष्ट राक्षस भैंसों, मनुष्यों, गदहों और बकरोंको खा रहे हैं। तुलसीदासने इनकी कथा इसीलिये कुछ कही है कि ये निश्चय ही श्रीरामचन्द्रजीके बाणरूपी तीर्थमें शरीरोंको त्यागकर परमग

दो०—पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार ॥

नगरके बहुसंख्यक रखवालोंको देखकर हनुमान्‌जीने मनमें विचार अत्यन्त छोटा रूप धरूँ और रातके समय नगरमें प्रवेश करूँ ॥ ३ ॥

चौ०—मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि न
नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चलेसि मोहि नि

हनुमान्‌जी मच्छड़के समान (छोटा-सा) रूप धारण कर नररूपसे लील वाले भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके लंकाको चले। [लंकाके लंकिनी नामकी एक राक्षसी रहती थी। वह बोली—मेरा निरादर करके मुझसे पूछे) कहाँ चला जा रहा है ? ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥
मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी॥

रे मूर्ख! तूने मेरा भेद नहीं जाना? जहाँतक (जितने) चोर हैं, वे सब आहार हैं। महाकपि हनुमान्‌जीने उसे एक घूँसा मारा, जिससे वह खूनकी ...ी करती हुई पृथ्वीपर लुढ़क पड़ी॥ २॥

पुनि संभारि उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका॥
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा। चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा॥

वह लंकिनी फिर अपनेको सँभालकर उठी और डरके मारे हाथ जोड़कर ...ी करने लगी। [वह बोली—] रावणको जब ब्रह्माजीने वर दिया था, तब ...े समय उन्होंने मुझे राक्षसोंके विनाशकी यह पहचान बता दी थी कि—॥३॥

बिकल होसि तैं कपि कें मारे। तब जानेसु निसिचर संघारे॥
तात मोर अति पुन्य बहूता। देखेउँ नयन राम कर दूता॥

जब तू बंदरके मारनेसे व्याकुल हो जाय, तब तू राक्षसोंका संहार हुआ जान लेना। ...त! मेरे बड़े पुण्य हैं जो मैं श्रीरामचन्द्रजीके दूत (आप) को नेत्रोंसे देख पायी॥ ४॥

दो०—तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥ ४॥

हे तात! स्वर्ग और मोक्षके सब सुखोंको तराजूके एक पलड़ेमें रक्खा जाय, ...भी वे सब मिलकर [दूसरे पलड़ेपर रक्खे हुए] उस सुखके बराबर नहीं हो ...ता जो लव (क्षण) मात्रके सत्संगसे होता है॥ ४॥

—प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई॥

अयोध्यापुरीके राजा श्रीरघुनाथजीको हृदयमें रक्खे हुए नगरमें प्रवेश करके ...काम कीजिये। उसके लिये विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करने लगते ...समुद्र गायके खुरके बराबर हो जाता है, अग्निमें शीतलता आ जाती है,॥१॥

गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही॥
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और हे गरुड़जी ! सुमेरु पर्वत उसके लिये रजके समान हो जाता
श्रीरामचन्द्रजीने एक बार कृपा करके देख लिया। तब हनुमान्‌जीने बहुत
रूप धारण किया और भगवान्‌का स्मरण करके नगरमें प्रवेश किया ॥ २ ॥

मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा। देखे जहँ तहँ अगनित
गयउ दसानन मंदिर माहीं। अति बिचित्र कहि जात सो

उन्होंने एक-एक (प्रत्येक) महलकी खोज की। जहाँ-तहाँ असंख्
देखे। फिर वे रावणके महलमें गये। वह अत्यन्त विचित्र था, जिसका व
हो सकता ॥ ३ ॥

सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि
भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरि मंदिर तहँ भिन्न ब

हनुमान्‌जीने उस (रावण) को शयन किये देखा। परन्तु महलमें जा
नहीं दिखायी दीं। फिर एक सुन्दर महल दिखायी दिया। वहाँ (उसमें) भ
एक अलग मन्दिर बना हुआ था ॥ ४ ॥

दो०—रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ ॥ ५

वह महल श्रीरामजीके आयुध (धनुष-बाण) के चिह्नोंसे अंकित था,
शोभा वर्णन नहीं की जा सकती। वहाँ नवीन-नवीन तुलसीके वृक्षसमूहोंको
कपिराज श्रीहनुमान्‌जी हर्षित हुए ॥ ५ ॥

चौ०—लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर ब
मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु ज

लंका तो राक्षसोंके समूहका निवासस्थान है। यहाँ सज्जन (साधु पुरुष) का
कहाँ ? हनुमान्‌जी मनमें इस प्रकार तर्क करने लगे। उसी समय विभीषणजी जागे

राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन ची
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हा

उन्होंने (विभीषणने) रामनामका स्मरण (उच्चारण) किया। हनुमान्‌जीं
सज्जन जाना और हृदयमें हर्षित हुए। [हनुमान्‌जीने विचार किया कि] इन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के (अपनी ओरसे ही) परिचय करूँगा, क्योंकि साधुसे कार्यकी हानि नहीं ती [प्रत्युत लाभ ही होता है] ॥ २ ॥

बिप्र रूप धरि बचन सुनाए। सुनत बिभीषन उठि तहँ आए ॥
करि प्रनाम पूँछी कुसलाई। बिप्र कहहु निज कथा बुझाई ॥

ब्राह्मणका रूप धरकर हनुमान्‌जीने उन्हें वचन सुनाये (पुकारा)। सुनते ही ीषणजी उठकर वहाँ आये। प्रणाम करके कुशल पूछी [और कहा कि] हे ह्मणदेव ! अपनी कथा समझाकर कहिये ॥ ३ ॥

की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई। मोरें हृदय प्रीति अति होई ॥
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी। आयहु मोहि करन बड़भागी ॥

क्या आप हरिभक्तोंमेंसे कोई हैं ? क्योंकि आपको देखकर मेरे हृदयमें अत्यन्त म उमड़ रहा है। अथवा क्या आप दीनोंसे प्रेम करनेवाले स्वयं श्रीरामजी ही हैं, मुझे बड़भागी बनाने (घर बैठे दर्शन देकर कृतार्थ करने) आये हैं ? ॥ ४ ॥

दो०—तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम ॥ ६ ॥

तब हनुमान्‌जीने श्रीरामचन्द्रजीकी सारी कथा कहकर अपना नाम बताया। नते ही दोनोंके शरीर पुलकित हो गये और श्रीरामजीके गुणसमूहोंका स्मरण रके दोनोंके मन [प्रेम और आनन्दमें] मग्न हो गये ॥ ६ ॥

ो०—सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी ॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा ॥

[विभीषणजीने कहा—] हे पवनपुत्र ! मेरी रहनी सुनो। मैं यहाँ वैसे ही हता हूँ जैसे दाँतोंके बीचमें बेचारी जीभ। हे तात ! मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुलके ाथ श्रीरामचन्द्रजी क्या कभी मुझपर कृपा करेंगे ? ॥ १ ॥

ामस तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं ॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता ॥

मेरा तामसी (राक्षस) शरीर होनेसे साधन तो कुछ बनता नहीं और न मनमें श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें प्रेम ही है। परन्तु हे हनुमान् ! अब मुझे विश्वास हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गया कि श्रीरामजीकी मुझपर कृपा है, क्योंकि हरिकी कृपाके बिना संत नहीं मिल

जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दी
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती। करहिं सदा सेवक पर प्री

जब श्रीरघुवीरने कृपा की है, तभी तो आपने मुझे हठ करके (अपनी ओर से) दर्शन दिये हैं। [हनुमान्‌जीने कहा–] हे विभीषणजी! सुनिये, प्रभुकी यह रीति है कि वे सेवकपर सदा ही प्रेम किया करते हैं॥ ३॥

कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबहीं बिधि ही
प्रात लेइ जो नाम हमारा। तेहि दिन ताहि न मिलै अहा

भला कहिये, मैं ही कौन बड़ा कुलीन हूँ। [जातिका] चञ्चल वानर हूँ और सब प्रकारसे नीच हूँ। प्रातःकाल जो हमलोगों (बंदरों) का नाम ले ले तो उस दिन उसे भोजन न मिले॥ ४॥

दो०–अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर॥ ७॥

हे सखा! सुनिये, मैं ऐसा अधम हूँ; पर श्रीरामचन्द्रजीने तो मुझपर भी कृपा ही की है। भगवान्‌के गुणोंका स्मरण करके हनुमान्‌जीके दोनों नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया॥ ७॥

चौ०–जानतहूँ अस स्वामि बिसारी। फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी॥
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा। पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा॥

जो जानते हुए भी ऐसे स्वामी (श्रीरघुनाथजी) को भुलाकर [विषयोंके पीछे] भटकते फिरते हैं, वे दुखी क्यों न हों? इस प्रकार श्रीरामजीके गुणसमूहोंको कहते हुए उन्होंने अनिर्वचनीय (परम) शान्ति प्राप्त की॥ १॥

पुनि सब कथा बिभीषन कही। जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही॥
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखी चहउँ जानकी माता॥

फिर विभीषणजीने, श्रीजानकीजी जिस प्रकार वहाँ (लङ्कामें) रहती थीं, वह सब कथा कही। तब हनुमान्‌जीने कहा–हे भाई! सुनो, मैं जानकी माताको देखना चाहता हूँ॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई। चलेउ पवनसुत बिदा कराई ॥
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ। बन असोक सीता रह जहवाँ ॥

विभीषणजीने [माताके दर्शनकी] सब युक्तियाँ (उपाय) कह सुनायीं। तब हनुमान्‌जी विदा लेकर चले। फिर वही (पहलेका मसक-सरीखा) रूप धरकर वहाँ गये, जहाँ अशोक वनमें (वनके जिस भागमें) सीताजी रहती थीं ॥ ३ ॥

देखि मनहि महुँ कीन्ह प्रनामा। बैठेहिं बीति जात निसि जामा ॥
कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदयँ रघुपति गुन श्रेनी ॥

सीताजीको देखकर हनुमान्‌जीने उन्हें मनहीमें प्रणाम किया। उन्हें बैठे-ही-बैठे रात्रिके चारों पहर बीत जाते हैं। शरीर दुबला हो गया है, सिरपर जटाओंकी एक वेणी (लट) है। हृदयमें श्रीरघुनाथजीके गुणसमूहोंका जाप (स्मरण) करती रहती हैं ॥ ४ ॥

दो०—निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन ॥ ८ ॥

श्रीजानकीजी नेत्रोंको अपने चरणोंमें लगाये हुए हैं (नीचेकी ओर देख रही हैं) और मन श्रीरामजीके चरणकमलोंमें लीन है। जानकीजीको दीन (दुखी) देखकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी बहुत ही दुखी हुए ॥ ८ ॥

चौ०—तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई। करइ बिचार करौं का भाई ॥
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा ॥

हनुमान्‌जी वृक्षके पत्तोंमें छिप रहे और विचार करने लगे कि हे भाई! क्या करूँ (इनका दुःख कैसे दूर करूँ)? उसी समय बहुत-सी स्त्रियोंको साथ लिये सज-धजकर रावण वहाँ आया ॥ १ ॥

बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा ॥
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी ॥

उस दुष्टने सीताजीको बहुत प्रकारसे समझाया। साम, दान, भय और भेद दिखलाया। रावणने कहा—हे सुमुखि! हे सयानी! सुनो। मन्दोदरी आदि सब रानियोंको—॥ २ ॥

तव अनुचरीं करउँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा ॥
तृन धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं तुम्हारी दासी बना दूँगा, यह मेरा प्रण है। तुम एक बार मेरी ओर देखो तो सही। अपने परम स्नेही कोसलाधीश श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके जानकीजी तिनकेकी आड़ (परदा) करके कहने लगीं—॥ ३ ॥

सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा॥
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर बान की॥

हे दशमुख! सुन, जुगनूके प्रकाशसे कभी कमलिनी खिल सकती है? जानकीजी फिर कहती हैं—तू [अपने लिये भी] ऐसा ही मनमें समझ ले। रे दुष्ट! तुझे श्रीरघुवीरके बाणकी खबर नहीं है॥ ४ ॥

सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही॥
रे पापी! तू मुझे सूनेमें हर लाया है। रे अधम! निर्लज्ज! तुझे लज्जा नहीं आती?

दो०—आपुहि सुनि खद्योत सम रामहि भानु समान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन॥ ९॥

अपनेको जुगनूके समान और रामचन्द्रजीको सूर्यके समान सुनकर और सीताजीके कठोर वचनोंको सुनकर रावण तलवार निकालकर बड़े गुस्सेमें आकर बोला—॥ ९ ॥

चौ०—सीता तैं मम कृत अपमाना। कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना॥
नाहिं त सपदि मानु मम बानी। सुमुखि होति न त जीवन हानी॥

सीता! तूने मेरा अपमान किया है। मैं तेरा सिर इस कठोर कृपाणसे काट डालूँगा। नहीं तो [अब भी] जल्दी मेरी बात मान ले। हे सुमुखि! नहीं तो जीवनसे हाथ धोना पड़ेगा!॥ १ ॥

स्याम सरोज दाम सम सुंदर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा॥

[सीताजीने कहा—] हे दशग्रीव! प्रभुकी भुजा जो श्याम कमलकी मालाके समान सुन्दर और हाथीकी सूँड़के समान [पुष्ट तथा विशाल] है, या तो वह भुजा ही मेरे कण्ठमें पड़ेगी या तेरी भयानक तलवार ही। रे शठ! सुन, यही मेरा सच्चा प्रण है॥ २ ॥

चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति बिरह अनल संजातं॥
सीतल निसित बहसि बर धारा। कह सीता हरु मम दुख भारा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सीताजी कहती हैं—हे चन्द्रहास (तलवार) ! श्रीरघुनाथजीके विरहकी अग्निसे मेरी बड़ी भारी जलनको तू हर ले। हे तलवार ! तू शीतल, तीव्र और श्रेष्ठ धारा बहाती है (अर्थात् तेरी धार ठंढी और तेज है), तू मेरे दुःखके बोझको हर ले॥३॥

सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझावा॥
कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई। सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई॥

सीताजीके ये वचन सुनते ही वह मारने दौड़ा। तब मय दानवकी पुत्री मन्दोदरीने नीति कहकर उसे समझाया। तब रावणने सब राक्षसियोंको बुलाकर कहा कि जाकर सीताको बहुत प्रकारसे भय दिखलाओ॥४॥

मास दिवस महुँ कहा न माना। तौ मैं मारबि काढ़ि कृपाना॥

यदि महीनेभरमें यह कहा न माने तो मैं इसे तलवार निकालकर मार डालूँगा॥५॥

दो०—भवन गयउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहि त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मंद॥१०॥

[यों कहकर] रावण घर चला गया। यहाँ राक्षसियोंके समूह बहुत-से बुरे रूप धरकर सीताजीको भय दिखलाने लगे॥१०॥

त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम चरन रति निपुन बिबेका॥
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना। सीतहि सेइ करहु हित अपना॥

उनमें एक त्रिजटा नामकी राक्षसी थी। उसकी श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति थी और वह विवेक (ज्ञान) में निपुण थी। उसने सबोंको बुलाकर अपना स्वप्न सुनाया और कहा—सीताजीकी सेवा करके अपना कल्याण कर लो॥१॥

सपनें बानर लंका जारी। जातुधान सेना सब मारी॥
खर आरूढ़ नगन दससीसा। मुंडित सिर खंडित भुज बीसा॥

स्वप्नमें [मैंने देखा कि] एक बंदरने लङ्का जला दी। राक्षसोंकी सारी सेना मार डाली गयी। रावण नंगा है और गदहेपर सवार है। उसके सिर मुँड़े हुए हैं, बीसों भुजाएँ कटी हुई हैं॥२॥

एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई॥
नगर फिरी रघुबीर दोहाई। तब प्रभु सीता बोलि पठाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकारसे वह दक्षिण (यमपुरीकी) दिशाको जा रहा है और
विभीषणने पायी है। नगरमें श्रीरामचन्द्रजीकी दुहाई फिर गयी।
सीताजीको बुला भेजा ॥ ३ ॥

यह सपना मैं कहउँ पुकारी। होइहि सत्य गएँ दि
तासु बचन सुनि ते सब डरीं। जनकसुता के चरनन्हि

मैं पुकारकर (निश्चयके साथ) कहती हूँ कि यह स्वप्न चार (
दिनों बाद सत्य होकर रहेगा। उसके वचन सुनकर वे सब राक्षसियाँ ड
जानकीजीके चरणोंपर गिर पड़ीं ॥ ४ ॥

दो०—जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच ॥

तब (इसके बाद) वे सब जहाँ-तहाँ चली गयीं। सीताजी मनमें
लगीं कि एक महीना बीत जानेपर नीच राक्षस रावण मुझे मारेगा ॥ ११

चौ०—त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं
तजौं देह करु बेगि उपाई। दुसह बिरहु अब नहिं सहि

सीताजी हाथ जोड़कर त्रिजटासे बोलीं— हे माता ! तू मेरी विपत्ति
है। जल्दी कोई ऐसा उपाय कर जिससे मैं शरीर छोड़ सकूँ। विरह अ
चला है, अब यह सहा नहीं जाता ॥ १ ॥

आनि काठ रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देहि
सत्य करहि मम प्रीति सयानी। सुनै को श्रवन सूल सम

काठ लाकर चिता बनाकर सजा दे। हे माता ! फिर उसमें आग लगा
हे सयानी ! तू मेरी प्रीतिको सत्य कर दे। रावणकी शूलके समान दुःख
वाणी कानोंसे कौन सुने ? ॥ २ ॥

सुनत बचन पद गहि समुझाएसि। प्रभु प्रताप बल सुजसु सुना
निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी। अस कहि सो निज भवन सि

सीताजीके वचन सुनकर त्रिजटाने चरण पकड़कर उन्हें समझाया और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बल और सुयश सुनाया। [उसने कहा—] हे सुकुमारी ! सुनो, रात्रिके समय हीं मिलेगी। ऐसा कहकर वह अपने घर चली गयी ॥ ३ ॥

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला ॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा ॥

सीताजी [मन-ही-मन] कहने लगीं—[क्या करूँ] विधाता ही विपरीत हो न आग मिलेगी, न पीड़ा मिटेगी। आकाशमें अंगारे प्रकट दिखायी दे रहे पृथ्वीपर एक भी तारा नहीं आता ॥ ४ ॥

पावकमय ससि स्त्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी ॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका ॥

चन्द्रमा अग्निमय है, किन्तु वह भी मानो मुझे हतभागिनी जानकर आग नहीं बरसाता! कवृक्ष ! मेरी विनती सुन। मेरा शोक हर ले और अपना [अशोक] नाम सत्य कर।

नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना ॥
देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता ॥

तेरे नये-नये कोमल पत्ते अग्निके समान हैं। अग्नि दे, विरह-रोगका अन्त मत अर्थात् विरह-रोगको बढ़ाकर सीमातक न पहुँचा)। सीताजीको विरहसे परम देखकर वह क्षण हनुमान्‌जीको कल्पके समान बीता ॥ ६ ॥

सो०—कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ ॥ १२ ॥

तब हनुमान्‌जीने हृदयमें विचारकर [सीताजीके सामने] अँगूठी डाल दी, अशोकने अंगारा दे दिया। [यह समझकर] सीताजीने हर्षित होकर उठसे हाथमें ले लिया ॥ १२ ॥

तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुंदर ॥
चकित चितव मुदरी पहिचानी। हरष बिषाद हृदयँ अकुलानी ॥

तब उन्होंने रामनामसे अंकित अत्यन्त सुन्दर एवं मनोहर अँगूठी देखी। को पहचानकर सीताजी आश्चर्यचकित होकर उसे देखने लगीं और हर्ष तथा से हृदयमें अकुला उठीं ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीति को सकइ अजय रघुराई। माया तें असि रचि
सीता मन बिचार कर नाना। मधुर बचन बोलेउ

[वे सोचने लगीं—] श्रीरघुनाथजी तो सर्वथा अजेय हैं, उन्हें
सकता है ? और मायासे ऐसी (मायाके उपादानसे सर्वथा रहित दिव्
अँगूठी बनायी नहीं जा सकती। सीताजी मनमें अनेक प्रकारके विच
थीं। इसी समय हनुमान्‌जी मधुर वचन बोले— ॥ २ ॥

रामचंद्र गुन बरनैं लागा। सुनतहिं सीता कर दुख
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई। आदिहु तें सब कथा

वे श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करने लगे [जिनके] सुनते ही
दुःख भाग गया। वे कान और मन लगाकर उन्हें सुनने लगीं। हनुमान्‌
लेकर सारी कथा कह सुनायी॥ ३ ॥

श्रवनामृत जेहिं कथा सुहाई। कही सो प्रगट होति कि
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ। फिरि बैठीं मन बिसमय

[सीताजी बोलीं—] जिसने कानोंके लिये अमृतरूप यह सुन्दर
वह हे भाई ! प्रकट क्यों नहीं होता ? तब हनुमान्‌जी पास चले गये। उ
सीताजी फिरकर (मुख फेरकर) बैठ गयीं; उनके मनमें आश्चर्य हुआ ॥

राम दूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधा
यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ स

[हनुमान्‌जीने कहा—] हे माता जानकी ! मैं श्रीरामजीका
करुणानिधानकी सच्ची शपथ करता हूँ। हे माता ! यह अँगूठी मैं
हूँ। श्रीरामजीने मुझे आपके लिये यह सहिदानी (निशानी या पहिचान) दी

नर बानरहि संग कहु कैसें। कही कथा भइ संगति

[सीताजीने पूछा—] नर और वानरका संग कहो कैसे हुआ ? त
जीने जैसे संग हुआ था, वह सब कथा कही ॥ ६ ॥

दो०—कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हनुमान्‌जीके प्रेमयुक्त वचन सुनकर सीताजीके मनमें विश्वास उत्पन्न हो गया। ...ंने जान लिया कि यह मन, वचन और कर्मसे कृपासागर श्रीरघुनाथजीका दास है॥१३॥

—हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी। सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी॥
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना। भयहु तात मो कहुँ जलजाना॥

भगवान्‌का जन (सेवक) जानकर अत्यन्त गाढ़ी प्रीति हो गयी। नेत्रोंमें ...माश्रुओंका] जल भर आया और शरीर अत्यन्त पुलकित हो गया। [सीताजीने —] हे तात हनुमान्! विरहसागरमें डूबती हुई मुझको तुम जहाज हुए॥१॥

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी। अनुज सहित सुख भवन खरारी॥
कोमलचित कृपाल रघुराई। कपि केहि हेतु धरी निठुराई॥

मैं बलिहारी जाती हूँ, अब छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित खरके शत्रु सुखधाम ...ा कुशल-मंगल कहो। श्रीरघुनाथजी तो कोमलहृदय और कृपालु हैं। फिर हे ...ान्! उन्होंने किस कारण यह निष्ठुरता धारण कर ली है?॥२॥

सहज बानि सेवक सुख दायक। कबहुँक सुरति करत रघुनायक॥
कबहुँ नयन मम सीतल ताता। होइहहिं निरखि स्याम मृदु गाता॥

सेवकको सुख देना उनकी स्वाभाविक बान है। वे श्रीरघुनाथजी क्या कभी मेरी याद करते हैं? हे तात! क्या कभी उनके कोमल साँवले अंगोंको देखकर ...त्र शीतल होंगे॥३॥

बचनु न आव नयन भरे बारी। अहह नाथ हौं निपट बिसारी॥
देखि परम बिरहाकुल सीता। बोला कपि मृदु बचन बिनीता॥

[मुँहसे] वचन नहीं निकलता, नेत्रोंमें [विरहके आँसुओंका] जल भर आया। ... दुःखसे वे बोलीं—] हा नाथ! आपने मुझे बिल्कुल ही भुला दिया! सीताजी-...रहसे परम व्याकुल देखकर हनुमान्‌जी कोमल और विनीत वचन बोले—॥४॥

मातु कुसल प्रभु अनुज समेता। तव दुख दुखी सुकृपा निकेता॥
जनि जननी मानहु जियँ ऊना। तुम्ह ते प्रेमु राम कें दूना॥

हे माता! सुन्दर कृपाके धाम प्रभु भाई लक्ष्मणजीके सहित [शरीरसे] कुशल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं, परन्तु आपके दुःखसे दुखी हैं। हे माता! मनमें ग्लानि न मानिये (
करके दुःख न कीजिये)। श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें आपसे दूना प्रेम है॥ ५॥

दो०—रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर॥ १

हे माता! अब धीरज धरकर श्रीरघुनाथजीका सन्देश सुनिये। ऐसा
हनुमान्‌जी प्रेमसे गद्गद हो गये। उनके नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया॥

चौ०—कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिप
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू। कालनिसा सम निसि ससि

[हनुमान्‌जी बोले—] श्रीरामचन्द्रजीने कहा है कि हे सीते! तुम्हारे
मेरे लिये सभी पदार्थ प्रतिकूल हो गये हैं। वृक्षोंके नये-नये कोमल पत्ते मानो
समान, रात्रि कालरात्रिके समान, चन्द्रमा सूर्यके समान, ॥ १ ॥

कुबलय बिपिन कुंत बन सरिसा। बारिद तपत तेल जनु ब
जे हित रहे करत तेइ पीरा। उरग स्वास सम त्रिबिध स

और कमलोंके वन भालोंके वनके समान हो गये हैं। मेघ मानो खौल
तेल बरसाते हैं। जो हित करनेवाले थे वे ही अब पीड़ा देने लगे हैं। त्रिविध (
मन्द, सुगन्ध) वायु साँपके श्वासके समान (जहरीली और गरम) हो गयी

कहेहू तें कछु दुख घटि होई। काहि कहौं यह जान न
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु

मनका दुःख कह डालनेसे भी कुछ घट जाता है। पर कहूँ किससे
दुःख कोई जानता नहीं। हे प्रिये! मेरे और तेरे प्रेमका तत्त्व (रहस्य) ए
मन ही जानता है, ॥ ३ ॥

सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि
प्रभु संदेसु सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहिं

और वह मन सदा तेरे ही पास रहता है। बस, मेरे प्रेमका सार इ
समझ ले। प्रभुका सन्देश सुनते ही जानकीजी प्रेममें मग्न हो गयीं। उन्हें
सुध न रही॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कह कपि हृदयँ धीर धरु माता। सुमिरु राम सेवक सुखदाता॥
उर आनहु रघुपति प्रभुताई। सुनि मम बचन तजहु कदराई॥

हनुमान्‌जीने कहा—हे माता! हृदयमें धैर्य धारण करो और सेवकोंको सुख देनेवाले श्रीरामजीका स्मरण करो। श्रीरघुनाथजीकी प्रभुताको हृदयमें लाओ और मेरे वचन सुनकर कायरता छोड़ दो॥ ५॥

दो०—निसिचर निकर पतंग सम रघुपति बान कृसानु।
जननी हृदयँ धीर धरु जरे निसाचर जानु॥ १५॥

राक्षसोंके समूह पतंगोंके समान और श्रीरघुनाथजीके बाण अग्निके समान हैं। हे माता! हृदयमें धैर्य धारण करो और राक्षसोंको जला ही समझो॥ १५॥

चौ०—जौं रघुबीर होति सुधि पाई। करते नहिं बिलंबु रघुराई॥
राम बान रबि उएँ जानकी। तम बरूथ कहँ जातुधान की॥

श्रीरामचन्द्रजीने यदि खबर पायी होती तो वे विलम्ब न करते। हे जानकीजी! रामबाणरूपी सूर्यके उदय होनेपर राक्षसोंकी सेनारूपी अन्धकार कहाँ रह सकता है?॥ १॥

अबहिं मातु मैं जाउँ लवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई॥
कछुक दिवस जननी धरु धीरा। कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा॥

हे माता! मैं आपको अभी यहाँसे लिवा जाऊँ। पर श्रीरामचन्द्रजीकी शपथ है, मुझे प्रभु (उन) की आज्ञा नहीं है। [अतः] हे माता! कुछ दिन और धीरज धरो। श्रीरामचन्द्रजी वानरोंसहित यहाँ आवेंगे,॥ २॥

निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं। तिहुँ पुर नारदादि जसु गैहहिं॥
हैं सुत कपि सब तुम्हहि समाना। जातुधान अति भट बलवाना॥

और राक्षसोंको मारकर आपको ले जायँगे। नारद आदि [ऋषि-मुनि] तीनों लोकोंमें उनका यश गावेंगे। [सीताजीने कहा—] हे पुत्र! सब वानर तुम्हारे ही समान (नन्हे-नन्हे-से) होंगे, राक्षस तो बड़े बलवान् योद्धा हैं॥ ३॥

मोरें हृदय परम संदेहा। सुनि कपि प्रगट कीन्हि निज देहा॥
कनक भूधराकार सरीरा। समर भयंकर अतिबल बीरा॥

अतः मेरे हृदयमें बड़ा भारी सन्देह होता है [कि तुम-जैसे बंदर राक्षसोंको कैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीतेंगे]। यह सुनकर हनुमान्‌जीने अपना शरीर प्रकट किया। सोनेके पर्वत के आकारका (अत्यन्त विशाल) शरीर था, जो युद्धमें शत्रुओंके हृदयमें करनेवाला, अत्यन्त बलवान् और वीर था ॥ ४ ॥

सीता मन भरोस तब भयऊ। पुनि लघु रूप पवनसुत

तब (उसे देखकर) सीताजीके मनमें विश्वास हुआ। हनुमान्‌जीने रूप धारण कर लिया ॥ ५ ॥

दो०—सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल ॥

हे माता ! सुनो, वानरोंमें बहुत बल-बुद्धि नहीं होती। परन्तु प्रभुके बहुत छोटा सर्प भी गरुड़को खा सकता है (अत्यन्त निर्बल भी महान् मार सकता है) ॥ १६ ॥

चौ०—मन संतोष सुनत कपि बानी। भगति प्रताप तेज बल
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील

भक्ति, प्रताप, तेज और बलसे सनी हुई हनुमान्‌जीकी वाणी सुनकर मनमें सन्तोष हुआ। उन्होंने श्रीरामजीके प्रिय जानकर हनुमान्‌जीको दिया कि हे तात ! तुम बल और शीलके निधान होओ ॥ १ ॥

अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना। निर्भर प्रेम मगन

हे पुत्र ! तुम अजर (बुढ़ापेसे रहित), अमर और गुणोंके खजाने श्रीरघुनाथजी तुमपर बहुत कृपा करें ! 'प्रभु कृपा करें' ऐसा कानोंसे सुनते ही पूर्ण प्रेममें मग्न हो गये ॥ २ ॥

बार बार नाएसि पद सीसा। बोला बचन जोरि कर
अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ

हनुमान्‌जीने बार-बार सीताजीके चरणोंमें सिर नवाया और फिर हाथ कहा—हे माता ! अब मैं कृतार्थ हो गया। आपका आशीर्वाद अमोघ (यह बात प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा॥
सुनु सुत करहिं बिपिन रखवारी। परम सुभट रजनीचर भारी॥

हे माता! सुनो, सुन्दर फलवाले वृक्षोंको देखकर मुझे बड़ी ही भूख लग
गी है। [सीताजीने कहा—] हे बेटा! सुनो, बड़े भारी योद्धा राक्षस इस वनकी
वाली करते हैं॥ ४॥

तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं। जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं॥

[हनुमान्‌जीने कहा—] हे माता! यदि आप मनमें सुख मानें (प्रसन्न होकर
ज्ञा दें) तो मुझे उनका भय तो बिल्कुल नहीं है॥ ५॥

दो०—देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकीं जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥ १७॥

हनुमान्‌जीको बुद्धि और बलमें निपुण देखकर जानकीजीने कहा— जाओ।
तात! श्रीरघुनाथजीके चरणोंको हृदयमें धारण करके मीठे फल खाओ॥ १७॥

—चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा। फल खाएसि तरु तोरैं लागा॥
रहे तहाँ बहु भट रखवारे। कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे॥

वे सीताजीको सिर नवाकर चले और बागमें घुस गये। फल खाये और वृक्षोंको
ने लगे। वहाँ बहुत-से योद्धा रखवाले थे। उनमेंसे कुछको मार डाला और कुछने
र रावणसे पुकार की—॥ १॥

नाथ एक आवा कपि भारी। तेहिं असोक बाटिका उजारी॥
खाएसि फल अरु बिटप उपारे। रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे॥

[और कहा—] हे नाथ! एक बड़ा भारी बंदर आया है। उसने अशोकवाटिका
ड़ डाली। फल खाये, वृक्षोंको उखाड़ डाला और रखवालोंको मसल-मसलकर
नपर डाल दिया॥ २॥

सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना॥
सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे॥

यह सुनकर रावणने बहुत-से योद्धा भेजे। उन्हें देखकर हनुमान्‌जीने गर्जना
हनुमान्‌जीने सब राक्षसोंको मार डाला, कुछ जो अधमरे थे चिल्लाते हुए गये॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट
आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि

फिर रावणने अक्षयकुमारको भेजा। वह असंख्य श्रेष्ठ योद्धाओंको
चला। उसे आते देखकर हनुमान्‌जीने एक वृक्ष [हाथमें] लेकर
उसे मारकर महाध्वनि (बड़े जोर) से गर्जना की ॥ ४ ॥

दो०—कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलएसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि ॥

उन्होंने सेनामेंसे कुछको मार डाला और कुछको मसल डाला औ
पकड़-पकड़कर धूलमें मिला दिया। कुछने फिर जाकर पुकार की कि हे प्र
बहुत ही बलवान् है ॥ १८ ॥

चौ०—सुनि सुत बध लंकेस रिसाना। पठएसि मेघनाद बल
मारसि जनि सुत बाँधेसु ताही। देखिअ कपिहि कहाँ कर

पुत्रका वध सुनकर रावण क्रोधित हो उठा और उसने [अपने जे
बलवान् मेघनादको भेजा। [उससे कहा कि—] हे पुत्र ! मारना नहीं,
लाना। उस बंदरको देखा जाय कि कहाँका है ॥ १ ॥

चला इंद्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा
कपि देखा दारुन भट आवा। कटकटाइ गर्जा अरु

इन्द्रको जीतनेवाला अतुलनीय योद्धा मेघनाद चला। भाईका मारे
सुन उसे क्रोध हो आया। हनुमान्‌जीने देखा कि अबकी भयानक योद्धा
तब वे कटकटाकर गर्जे और दौड़े ॥ २ ॥

अति बिसाल तरु एक उपारा। बिरथ कीन्ह लंकेस
रहे महाभट ताके संगा। गहि गहि कपि मर्दइ निज

उन्होंने एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़ लिया और [उसके प्रहारसे]
रावणके पुत्र मेघनादको बिना रथका कर दिया (रथको तोड़कर उसे
दिया)। उसके साथ जो बड़े-बड़े योद्धा थे, उनको पकड़-पकड़कर हनुमान्
शरीरसे मसलने लगे ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा। भिरे जुगल मानहुँ गजराजा ॥
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई। ताहि एक छन मुरुछा आई ॥

उन सबको मारकर फिर मेघनादसे लड़ने लगे। [लड़ते हुए वे ऐसे मालूम थे] मानो दो गजराज (श्रेष्ठ हाथी) भिड़ गये हों। हनुमान्‌जी उसे एक घूँसा र वृक्षपर जा चढ़े। उसको क्षणभरके लिये मूर्छा आ गयी ॥ ४ ॥

उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया। जीति न जाइ प्रभंजन जाया ॥

फिर उठकर उसने बहुत माया रची; परन्तु पवनके पुत्र उससे जीते जाते ॥ ५ ॥

दो०—ब्रह्म अस्त्र तेहिं साँधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार ॥ १९ ॥

अन्तमें उसने ब्रह्मास्त्रका सन्धान (प्रयोग) किया। तब हनुमान्‌जीने मनमें किया कि यदि ब्रह्मास्त्रको नहीं मानता हूँ तो उसकी अपार महिमा मिट ॥ १९ ॥

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहिं मारा। परतिहुँ बार कटकु संघारा ॥
तेहिं देखा कपि मुरुछित भयऊ। नागपास बाँधेसि लै गयऊ ॥

उसने हनुमान्‌जीको ब्रह्मबाण मारा, [जिसके लगते ही वे वृक्षसे नीचे ड़े] परन्तु गिरते समय भी उन्होंने बहुत-सी सेना मार डाली। जब उसने के हनुमान्‌जी मूर्छित हो गये हैं, तब वह उनको नागपाशसे बाँधकर ले गया ॥ १ ॥

जासु नाम जपि सुनहु भवानी। भव बंधन काटहिं नर ग्यानी ॥
तासु दूत कि बंध तरु आवा। प्रभु कारज लगि कपिहिं बँधावा ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! सुनो, जिनका नाम जपकर ज्ञानी (विवेकी) संसार (जन्म-मरण) के बन्धनको काट डालते हैं, उनका दूत कहीं बन्धनमें ता है ? किन्तु प्रभुके कार्यके लिये हनुमान्‌जीने स्वयं अपनेको बँधा लिया ॥ २ ॥

कपि बंधन सुनि निसिचर धाए। कौतुक लागि सभाँ सब आए ॥
दसमुख सभा दीखि कपि जाई। कहि न जाइ कछु अति प्रभुताई ॥

दरका बाँधा जाना सुनकर राक्षस दौड़े और कौतुकके लिये (तमाशा देखनेके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिये) सब सभामें आये। हनुमान्‌जीने जाकर रावणकी सभा देखी। उसकी न
प्रभुता (ऐश्वर्य) कुछ कही नहीं जाती ॥ ३ ॥

कर जोरें सुर दिसिप बिनीता। भृकुटि बिलोकत सकल स
देखि प्रताप न कपि मन संका। जिमि अहिगन महुँ गरुड़ अ

देवता और दिक्पाल हाथ जोड़े बड़ी नम्रताके साथ भयभीत हुए सब
भौं ताक रहे हैं (उसका रुख देख रहे हैं)। उसका ऐसा प्रताप दे
हनुमान्‌जीके मनमें जरा भी डर नहीं हुआ। वे ऐसे निःशङ्क खड़े रहे जै
समूहमें गरुड़ निःशङ्क (निर्भय) रहते हैं ॥ ४ ॥

दो०—कपिहि बिलोकि दसानन बिहसा कहि दुर्बाद।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद ॥

हनुमान्‌जीको देखकर रावण दुर्वचन कहता हुआ खूब हँसा। फिर
स्मरण किया तो उसके हृदयमें विषाद उत्पन्न हो गया ॥ २० ॥

चौ०—कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि कें बल घालेहि बन
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही। देखउँ अति असंक सठ

लङ्कापति रावणने कहा—रे वानर! तू कौन है? किसके बलपर तू
उजाड़कर नष्ट कर डाला? क्या तूने कभी मुझे (मेरा नाम और यश
नहीं सुना? रे शठ! मैं तुझे अत्यन्त निःशंक देख रहा हूँ ॥ १ ॥

मारे निसिचर केहिं अपराधा। कहु सठ तोहि न प्रान कइ
सुनु रावन ब्रह्मांड निकाया। पाइ जासु बल बिरचति

तूने किस अपराधसे राक्षसोंको मारा? रे मूर्ख! बता, क्या तुझे प्रा
का भय नहीं है? [हनुमान्‌जीने कहा—] हे रावण! सुन, जिनका बल पा
सम्पूर्ण ब्रह्माण्डोंके समूहोंकी रचना करती है; ॥ २ ॥

जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दस
जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरि

जिनके बलसे हे दशशीश! ब्रह्मा, विष्णु, महेश [क्रमशः] सृष्टि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न और संहार करते हैं; जिनके बलसे सहस्र मुख (फणों) वाले शेषजी पर्वत वनसहित समस्त ब्रह्माण्डको सिरपर धारण करते हैं; ॥ ३ ॥

धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता। तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता॥
हर कोदंड कठिन जेहिं भंजा। तेहि समेत नृप दल मद गंजा॥

जो देवताओंकी रक्षाके लिये नाना प्रकारकी देह धारण करते हैं और जो रे-जैसे मूर्खोंको शिक्षा देनेवाले हैं, जिन्होंने शिवजीके कठोर धनुषको तोड़ डाला उसीके साथ राजाओंके समूहका गर्व चूर्ण कर दिया; ॥ ४ ॥

खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली॥

जिन्होंने खर, दूषण, त्रिशिरा और बालिको मार डाला, जो सब-के-सब नीय बलवान् थे; ॥ ५ ॥

दो०—जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥ २१॥

जिनके लेशमात्र बलसे तुमने समस्त चराचर जगत्को जीत लिया और जिनकी पत्नीको तुम [चोरीसे] हर लाये हो, मैं उन्हींका दूत हूँ ॥ २१ ॥

—जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई। सहसबाहु सन परी लराई॥
समर बालि सन करि जसु पावा। सुनि कपि बचन बिहसि बिहरावा॥

मैं तुम्हारी प्रभुताको खूब जानता हूँ। सहस्रबाहुसे तुम्हारी लड़ाई हुई थी बालिसे युद्ध करके तुमने यश प्राप्त किया था। हनुमान्‌जीके [मार्मिक] वचन र रावणने हँसकर बात टाल दी ॥ १ ॥

खायउँ फल प्रभु लागी भूँखा। कपि सुभाव तें तोरेउँ रूखा॥
सब कें देह परम प्रिय स्वामी। मारहिं मोहि कुमारग गामी॥

हे [राक्षसोंके] स्वामी ! मुझे भूख लगी थी, [इसलिये] मैंने फल खाये वानर-स्वभावके कारण वृक्ष तोड़े। हे [निशाचरोंके] मालिक ! देह सबको परम । कुमार्गपर चलनेवाले (दुष्ट) राक्षस जब मुझे मारने लगे, ॥ २ ॥

जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे। तेहि पर बाँधेउँ तनयँ तुम्हारे॥
मोहि न कछु बाँधे कइ लाजा। कीन्ह चहउँ निज प्रभु कर काजा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब जिन्होंने मुझे मारा, उनको मैंने भी मारा। उसपर तुम्हारे पुत्रने मुझ
लिया। [किन्तु] मुझे अपने बाँधे जानेकी कुछ भी लज्जा नहीं है। मैं तो अप
कार्य किया चाहता हूँ ॥ ३ ॥

बिनती करउँ जोरि कर रावन। सुनहु मान तजि मोर सिख
देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी। भ्रम तजि भजहु भगत भयहर

हे रावण ! मैं हाथ जोड़कर तुमसे विनती करता हूँ, तुम अभिमान
मेरी सीख सुनो। तुम अपने पवित्र कुलका विचार करके देखो और भ्रमको
भक्तभयहारी भगवान्‌को भजो ॥ ४ ॥

जाकें डर अति काल डेराई। जो सुर असुर चराचर
तासों बयरु कबहुँ नहिं कीजै। मोरे कहें जानकी

जो देवता, राक्षस और समस्त चराचरको खा जाता है, वह काल भी जि
अत्यन्त डरता है, उनसे कदापि वैर न करो और मेरे कहनेसे जानकीजीको दे दो ॥

दो०—प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखिहैं तव अपराध बिसारि ॥

खरके शत्रु श्रीरघुनाथजी शरणागतोंके रक्षक और दयाके समुद्र हैं। शर
प्रभु तुम्हारा अपराध भुलाकर तुम्हें अपनी शरणमें रख लेंगे ॥ २२ ॥

चौ०—राम चरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह
रिषि पुलस्ति जसु बिमल मयंका। तेहि ससि महुँ जनि होहु

तुम श्रीरामजीके चरणकमलोंको हृदयमें धारण करो और लङ्काका अचल रा
ऋषि पुलस्त्यजीका यश निर्मल चन्द्रमाके समान है। उस चन्द्रमामें तुम कलंक

राम नाम बिनु गिरा न सोहा। देखु बिचारि त्यागि मद
बसन हीन नहिं सोह सुरारी। सब भूषन भूषित बर

रामनामके बिना वाणी शोभा नहीं पाती, मद-मोहको छोड़, विचारकर
देवताओंके शत्रु ! सब गहनोंसे सजी हुई सुन्दरी स्त्री भी कपड़ोंके बिना
शोभा नहीं पाती ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई॥
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गएँ पुनि तबहिं सुखाहीं॥

रामविमुख पुरुषकी सम्पत्ति और प्रभुता रही हुई भी चली जाती है और उसका न पानेके समान है। जिन नदियोंके मूलमें कोई जलस्रोत नहीं है (अर्थात् जिन्हें ल बरसातका ही आसरा है) वे वर्षा बीत जानेपर फिर तुरंत ही सूख जाती हैं॥ ३॥

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी। बिमुख राम त्राता नहिं कोपी॥
संकर सहस बिष्नु अज तोही। सकहिं न राखि राम कर द्रोही॥

हे रावण! सुनो, मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि रामविमुखकी रक्षा करनेवाला भी नहीं है। हजारों शंकर, विष्णु और ब्रह्मा भी श्रीरामजीके साथ द्रोह वाले तुमको नहीं बचा सकते॥ ४॥

दो०—मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान॥ २३॥

मोह ही जिसका मूल है ऐसे (अज्ञानजनित), बहुत पीड़ा देनेवाले, तमरूप अभिमान- याग कर दो और रघुकुलके स्वामी, कृपाके समुद्र भगवान् श्रीरामचन्द्रजीका भजन करो।

—जदपि कही कपि अति हित बानी। भगति बिबेक बिरति नय सानी॥
बोला बिहसि महा अभिमानी। मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी॥

यद्यपि हनुमान्‌जीने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और नीतिसे सनी हुई बहुत ही ी वाणी कही, तो भी वह महान् अभिमानी रावण बहुत हँसकर (व्यंगसे) कि हमें यह बंदर बड़ा ज्ञानी गुरु मिला!॥ १॥

मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही॥
उलटा होइहि कह हनुमाना। मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना॥

रे दुष्ट! तेरी मृत्यु निकट आ गयी है। अधम! मुझे शिक्षा देने चला है। न्‌जीने कहा—इससे उलटा ही होगा (अर्थात् मृत्यु तेरी निकट आयी है, मेरी)। यह तेरा मतिभ्रम (बुद्धिका फेर) है, मैंने प्रत्यक्ष जान लिया है॥ २॥

सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना। बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना॥
सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हनुमान्‌जीके वचन सुनकर वह बहुत ही कुपित हो गया [और बोला—
इस मूर्खका प्राण शीघ्र ही क्यों नहीं हर लेते। सुनते ही राक्षस उन्हें मार
उसी समय मन्त्रियोंके साथ विभीषणजी वहाँ आ पहुँचे ॥ ३ ॥

नाइ सीस करि बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ
आन दंड कछु करिअ गोसाँई। सबहीं कहा मंत्र भल

उन्होंने सिर नवाकर और बहुत विनय करके रावणसे कहा कि दूत
नहीं चाहिये, यह नीतिके विरुद्ध है। हे गोसाईं ! कोई दूसरा दण्ड दिय
सबने कहा—भाई ! यह सलाह उत्तम है ॥ ४ ॥

सुनत बिहसि बोला दसकंधर। अंग भंग करि पठइअ

यह सुनते ही रावण हँसकर बोला—अच्छा तो, बंदरको अंग-भं
भेज (लौटा) दिया जाय ॥ ५ ॥

दो०—कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ ॥

मैं सबको समझाकर कहता हूँ कि बंदरकी ममता पूँछपर होती है। अ
में कपड़ा डुबोकर उसे इसकी पूँछमें बाँधकर फिर आग लगा दो ॥ २४ ॥

चौ०—पूँछहीन बानर तहँ जाइहि। तब सठ निज नाथहि लइ आ
जिन्ह कै कीन्हिसि बहुत बड़ाई। देखउँ मैं तिन्ह कै प्र

जब बिना पूँछका यह बंदर वहाँ (अपने स्वामीके पास) जायगा, तब
अपने मालिकको साथ ले आयेगा। जिनकी इसने बहुत बड़ाई की है
उनकी प्रभुता (सामर्थ्य) तो देखूँ ! ॥ १ ॥

बचन सुनत कपि मन मुसुकाना। भइ सहाय सारद मैं
जातुधान सुनि रावन बचना। लागे रचैं मूढ़ सोइ

यह वचन सुनते ही हनुमान्‌जी मनमें मुसकराये [और मन-ही-मन बो
मैं जान गया, सरस्वतीजी [इसे ऐसी बुद्धि देनेमें] सहायक हुई हैं। रावणके वच
मूर्ख राक्षस वही (पूँछमें आग लगानेकी) तैयारी करने लगे ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रहा न नगर बसन घृत तेला। बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला॥
कौतुक कहँ आए पुरबासी। मारहिं चरन करहिं बहु हाँसी॥

[पूँछके लपेटनेमें इतना कपड़ा और घी-तेल लगा कि] नगरमें कपड़ा, र तेल नहीं रह गया। हनुमान्‌जीने ऐसा खेल किया कि पूँछ बढ़ गयी हो गयी)। नगरवासीलोग तमाशा देखने आये। वे हनुमान्‌जीको पैरसे मारते हैं और उनकी बहुत हँसी करते हैं॥ ३॥

बाजहिं ढोल देहिं सब तारी। नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी॥
पावक जरत देखि हनुमंता। भयउ परम लघुरूप तुरंता॥

ढोल बजते हैं, सब लोग तालियाँ पीटते हैं। हनुमान्‌जीको नगरमें फिराकर फिर पूँछ- लगा दी। अग्निको जलते हुए देखकर हनुमान्‌जी तुरंत ही बहुत छोटे रूपमें हो गये।

निबुकि चढ़ेउ कपि कनक अटारीं। भईं सभीत निसाचर नारीं॥

बन्धनसे निकलकर वे सोनेकी अटारियोंपर जा चढ़े। उनको देखकर राक्षसों- त्रयाँ भयभीत हो गयीं॥ ५॥

दो०—हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास॥ २५॥

उस समय भगवान्‌की प्रेरणासे उन्चासों पवन चलने लगे। हनुमान्‌जी अट्टहास गर्जे और बढ़कर आकाशसे जा लगे॥ २५॥

देह बिसाल परम हरुआई। मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई॥
जरइ नगर भा लोग बिहाला। झपट लपट बहु कोटि कराला॥

देह बड़ी विशाल, परन्तु बहुत ही हल्की (फुर्तीली) है। वे दौड़कर एक दूसरे महलपर चढ़ जाते हैं। नगर जल रहा है, लोग बेहाल हो गये हैं। करोड़ों भयङ्कर लपटें झपट रही हैं॥ १॥

तात मातु हा सुनिअ पुकारा। एहिं अवसर को हमहि उबारा॥
हम जो कहा यह कपि नहिं होई। बानर रूप धरें सुर कोई॥

हाय बप्पा! हाय मैया! इस अवसरपर हमें कौन बचावेगा? [चारों ओर]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यही पुकार सुनायी पड़ रही है। हमने तो पहले ही कहा था कि यह
है, वानरका रूप धरे कोई देवता है ! ॥ २ ॥

साधु अवग्या कर फलु ऐसा। जरइ नगर अनाथ क
जारा नगरु निमिष एक माहीं। एक बिभीषन कर गृ

साधुके अपमानका यह फल है कि नगर अनाथके नगरकी तरह जल
हनुमान्‌जीने एक ही क्षणमें सारा नगर जला डाला। एक विभीषणका घर नहीं

ता कर दूत अनल जेहिं सिरिजा। जरा न सो तेहि कारन
उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु

[शिवजी कहते हैं—] हे पार्वती ! जिन्होंने अग्निको बनाया,
उन्हींके दूत हैं। इसी कारण वे अग्निसे नहीं जले। हनुमान्‌जीने उ
(एक ओरसे दूसरी ओरतक) सारी लंका जला दी। फिर वे समुद्रमें कूद

दो०—पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघुरूप बहोरि।
जनकसुता कें आगें ठाढ़ भयउ कर जोरि॥

पूँछ बुझाकर, थकावट दूर करके और फिर छोटा-सा रूप धारण कर
श्रीजानकीजीके सामने हाथ जोड़कर जा खड़े हुए ॥ २६ ॥

चौ०—मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसें रघुनायक मोहि
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ। हरष समेत पवनसुत

[हनुमान्‌जीने कहा—] हे माता ! मुझे कोई चिह्न (पहचान) दी
श्रीरघुनाथजीने मुझे दिया था। तब सीताजीने चूड़ामणि उतारकर दी। ह
उसको हर्षपूर्वक ले लिया ॥ १ ॥

कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूर
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट

[जानकीजीने कहा—] हे तात ! मेरा प्रणाम निवेदन करना और
कहना—हे प्रभु ! यद्यपि आप सब प्रकारसे पूर्णकाम हैं (आपको किसी प्रकार
नहीं है), तथापि दीनों (दुखियों) पर दया करना आपका विरद है [औ
हूँ,] अतः उस विरदको याद करके, हे नाथ ! मेरे भारी संकटको दूर कीजि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तात सक्रसुत कथा सुनाएहु । बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु ॥
मास दिवस महुँ नाथु न आवा । तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा ॥

हे तात ! इन्द्रपुत्र जयन्तकी कथा (घटना) सुनाना और प्रभुको उनके बाणका समझाना (स्मरण कराना) । यदि महीनेभरमें नाथ न आये तो फिर जीती न पायेंगे ॥ ३ ॥

कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना । तुम्हहू तात कहत अब जाना ॥
तोहि देखि सीतलि भइ छाती । पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती ॥

हे हनुमान् ! कहो, मैं किस प्रकार प्राण रक्खूँ । हे तात ! तुम भी अब जानेको हो ! तुमको देखकर छाती ठंडी हुई थी । फिर मुझे वही दिन और वही रात , ॥ ४ ॥

दो०—जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह ।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह ॥ २७ ॥

हनुमान्जीने जानकीजीको समझाकर बहुत प्रकारसे धीरज दिया और उनके मलोंमें सिर नवाकर श्रीरामजीके पास गमन किया ॥ २७ ॥

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी । गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर नारी ॥
नाघि सिंधु एहि पारहि आवा । सबद किलिकिला कपिन्ह सुनावा ॥

चलते समय उन्होंने महाध्वनिसे भारी गर्जन किया, जिसे सुनकर राक्षसोंकी गर्भ गिरने लगे । समुद्र लाँघकर वे इस पार आये और उन्होंने वानरोंको ला शब्द (हर्षध्वनि) सुनाया ॥ १ ॥

हरषे सब बिलोकि हनुमाना । नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना ॥
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा । कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा ॥

हनुमान्जीको देखकर सब हर्षित हो गये और तब वानरोंने अपना नया जन्म । हनुमान्जीका मुख प्रसन्न है और शरीरमें तेज विराजमान है, [जिससे समझ लिया कि] ये श्रीरामचन्द्रजीका कार्य कर आये हैं ॥ २ ॥

मिले सकल अति भए सुखारी । तलफत मीन पाव जिमि बारी ॥
चले हरषि रघुनायक पासा । पूँछत कहत नवल इतिहासा ॥

सब हनुमान्जीसे मिले और बहुत ही सुखी हुए । जैसे तड़पती हुई मछलीको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जल मिल गया हो। सब हर्षित होकर नये-नये इतिहास (वृत्तान्त) [कहते]
हुए श्रीरघुनाथजीके पास चले ॥ ३ ॥

तब मधुबन भीतर सब आए। अंगद संमत मधु फल [खाए॥]
रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब [भागे॥]

तब सब लोग मधुवनके भीतर आये और अंगदकी सम्मतिसे सबने
[या मधु और फल] खाये। जब रखवाले बरजने लगे, तब घूँसोंकी मा[र]
सब रखवाले भाग छूटे ॥ ४ ॥

दो०—जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज ॥ [२८॥]

उन सबने जाकर पुकारा कि युवराज अंगद वन उजाड़ रहे हैं। [य]
सुग्रीव हर्षित हुए कि वानर प्रभुका कार्य कर आये हैं ॥ २८ ॥

चौ०—जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि [खाई॥]
एहि बिधि मन बिचार कर राजा। आइ गए कपि सहित [समाजा॥]

यदि सीताजीकी खबर न पायी होती तो क्या वे मधुवनके फल खा [सकते?]
इस प्रकार राजा सुग्रीव मनमें विचार कर ही रहे थे कि समाजसहित वानर आ ग[ये।]

आइ सबन्हि नावा पद सीसा। मिलेउ सबन्हि अति प्रेम [कपीसा॥]
पूँछी कुसल कुसल पद देखी। राम कृपाँ भा काजु [बिसेषी॥]

सबने आकर सुग्रीवके चरणोंमें सिर नवाया। कपिराज सुग्रीव सभीसे [प्रेमके]
साथ मिले। उन्होंने कुशल पूछी, [तब वानरोंने उत्तर दिया—] आपके
दर्शनसे सब कुशल है। श्रीरामजीकी कृपासे विशेष कार्य हुआ (का[र्यमें]
सफलता हुई है) ॥ २ ॥

नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना। राखे सकल कपिन्ह के [प्राना॥]
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ। कपिन्ह सहित रघुपति पहिं [चलेऊ॥]

हे नाथ! हनुमान्‌ने ही सब कार्य किया और सब वानरोंके प्राण बचा[ये।]
सुनकर सुग्रीवजी हनुमान्‌जीसे फिर मिले और सब वानरोंसमेत श्रीरघुनाथजीके [पास चले।]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राम कपिन्ह जब आवत देखा। किएँ काजु मन हरष बिसेषा ॥
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई। परे सकल कपि चरनन्हि जाई ॥

श्रीरामजीने जब वानरोंको कार्य किये हुए आते देखा तब उनके मनमें विशेष हुआ। दोनों भाई स्फटिक शिलापर बैठे थे। सब वानर जाकर उनके चरणोंपर गिर पड़े।

दो०—प्रीति सहित सब भेटे रघुपति करुना पुंज।
पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कंज ॥ २९ ॥

दयाकी राशि श्रीरघुनाथजी सबसे प्रेमसहित गले लगकर मिले और कुशल पूछी। नरोंने कहा—] हे नाथ! आपके चरणकमलोंके दर्शन पानेसे अब कुशल है ॥ २९ ॥

--जामवंत कह सुनु रघुराया। जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया ॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर। सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ॥

जाम्बवान्ने कहा—हे रघुनाथजी! सुनिये। हे नाथ! जिसपर आप दया हैं, उसे सदा कल्याण और निरन्तर कुशल है। देवता, मनुष्य और मुनि सभी र प्रसन्न रहते हैं ॥ १ ॥

सोइ बिजई बिनई गुन सागर। तासु सुजसु त्रैलोक उजागर ॥
प्रभु कीं कृपा भयउ सबु काजू। जन्म हमार सुफल भा आजू ॥

वही विजयी है, वही विनयी है और वही गुणोंका समुद्र बन जाता है। का सुन्दर यश तीनों लोकोंमें प्रकाशित होता है। प्रभुकी कृपासे सब कार्य हुआ। हमारा जन्म सफल हो गया ॥ २ ॥

नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी। सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी ॥
पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए ॥

हे नाथ! पवनपुत्र हनुमान्ने जो करनी की उसका हजार मुखोंसे भी वर्णन नहीं जा सकता। तब जाम्बवान्ने हनुमान्जीके सुन्दर चरित्र (कार्य) श्रीरघुनाथजीको सुनाये

सुनत कृपानिधि मन अति भाए। पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए ॥
कहहु तात केहि भाँति जानकी। रहति करति रच्छा स्वप्रान की ॥

[वे चरित्र] सुननेपर कृपानिधि श्रीरामचन्द्रजीके मनको बहुत ही अच्छे लगे। ने हर्षित होकर हनुमान्जीको फिर हृदयसे लगा लिया और कहा—हे तात!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहो, सीता किस प्रकार रहती और अपने प्राणोंकी रक्षा करती हैं ? ॥ ४

दो०—नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट ॥

[हनुमान्‌जीने कहा—] आपका नाम रात-दिन पहरा देनेवाला है, ध्यान ही किंवाड़ है। नेत्रोंको अपने चरणोंमें लगाये रहती हैं, यही ताला फिर प्राण जायँ तो किस मार्गसे ? ॥ ३० ॥

चौ०—चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही। रघुपति हृदयँ लाइ सोइ
नाथ जुगल लोचन भरि बारी। बचन कहे कछु जनककु

चलते समय उन्होंने मुझे चूड़ामणि [उतारकर] दी। श्रीरघुनाथ लेकर हृदयसे लगा लिया। [हनुमान्‌जीने फिर कहा—] हे नाथ ! दो जल भरकर जानकीजीने मुझसे कुछ वचन कहे—॥ १ ॥

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना। दीन बंधु प्रनतारति
मन क्रम बचन चरन अनुरागी। केहिं अपराध नाथ हौं

छोटे भाईसमेत प्रभुके चरण पकड़ना [और कहना कि] आप दीन शरणागतके दुःखोंको हरनेवाले हैं। और मैं मन, वचन और कर्मसे आपके अनुरागिणी हूँ। फिर स्वामी (आप) ने मुझे किस अपराधसे त्याग दिया ? ॥

अवगुन एक मोर मैं माना। बिछुरत प्रान न कीन्ह
नाथ सो नयनन्हि को अपराधा। निसरत प्रान करहिं हठि

[हाँ] एक दोष मैं अपना [अवश्य] मानती हूँ कि आपका वियोग मेरे प्राण नहीं चले गये। किन्तु हे नाथ ! यह तो नेत्रोंका अपराध है जो निकलनेमें हठपूर्वक बाधा देते हैं ॥ ३ ॥

बिरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरइ छन माहिं
नयन स्रवहिं जलु निज हित लागी। जरैं न पाव देह बिरहा

विरह अग्नि है, शरीर रूई है और श्वास पवन है; इस प्रकार [पवनका संयोग होनेसे] यह शरीर क्षणमात्रमें जल सकता है। परन्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिये (प्रभुका स्वरूप देखकर सुखी होनेके लिये) जल (आँसू) बरसाते
जिससे विरहकी आगसे भी देह जलने नहीं पाती ॥ ४ ॥

सीता कै अति बिपति बिसाला। बिनहिं कहें भलि दीनदयाला ॥

सीताजीकी विपत्ति बहुत बड़ी है। हे दीनदयालु ! वह बिना कही ही अच्छी
कहनेसे आपको बड़ा क्लेश होगा) ॥ ५ ॥

दो०–निमिष निमिष करुनानिधि जाहिं कलप सम बीति।
बेगि चलिअ प्रभु आनिअ भुज बल खल दल जीति ॥ ३१ ॥

हे करुणानिधान ! उनका एक-एक पल कल्पके समान बीतता है। अतः हे प्रभु ! तुरंत
ये और अपनी भुजाओंके बलसे दुष्टोंके दलको जीतकर सीताजीको ले आइये ॥३१॥

–सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना। भरि आए जल राजिव नयना ॥
बचन कायँ मन मम गति जाही। सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही ॥

सीताजीका दुःख सुनकर सुखके धाम प्रभुके कमलनेत्रोंमें जल भर आया [और
ले–] मन, वचन और शरीरसे जिसे मेरी ही गति (मेरा ही आश्रय) है उसे
स्वप्नमें भी विपत्ति हो सकती है ? ॥ १ ॥

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई ॥
केतिक बात प्रभु जातुधान की। रिपुहि जीति आनिबी जानकी ॥

हनुमान्‌जीने कहा–हे प्रभु ! विपत्ति तो वही (तभी) है जब आपका भजन-
न हो। हे प्रभो ! राक्षसोंकी बात ही कितनी है ? आप शत्रुको जीतकर
कीजीको ले आवेंगे ॥ २ ॥

सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥
प्रति उपकार करौं का तोरा। सनमुख होइ न सकत मन मोरा ॥

[भगवान् कहने लगे—] हे हनुमान् ! सुन; तेरे समान मेरा उपकारी देवता,
अथवा मुनि कोई भी शरीरधारी नहीं है। मैं तेरा प्रत्युपकार (बदलेमें उपकार)
या करूँ, मेरा मन भी तेरे सामने नहीं हो सकता ॥ ३ ॥

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं ॥
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता। लोचन नीर पुलक अति गाता ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे पुत्र ! सुन; मैंने मनमें [खूब] विचार करके देख लिया कि उऋण नहीं हो सकता। देवताओंके रक्षक प्रभु बार-बार हनुमान्‌जीको देख नेत्रोंमें प्रेमाश्रुओंका जल भरा है और शरीर अत्यन्त पुलकित है ॥ ४ ॥

दो०—सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत ॥ ३

प्रभुके वचन सुनकर और उनके [प्रसन्न] मुख तथा [पुलकित] देखकर हनुमान्‌जी हर्षित हो गये। और प्रेममें विकल होकर 'हे भगवन्! करो, रक्षा करो' कहते हुए श्रीरामजीके चरणोंमें गिर पड़े ॥ ३२ ॥

चौ०—बार बार प्रभु चहइ उठावा। प्रेम मगन तेहि उठब न
प्रभु कर पंकज कपि कें सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौ

प्रभु उनको बार-बार उठाना चाहते हैं; परन्तु प्रेममें डूबे हुए हनु चरणोंसे उठना सुहाता नहीं। प्रभुका कर-कमल हनुमान्‌जीके सिरपर है स्थितिका स्मरण करके शिवजी प्रेममग्न हो गये ॥ १ ॥

सावधान मन करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा। कर गहि परम निकट बै

फिर मनको सावधान करके शंकरजी अत्यन्त सुन्दर कथा कहने हनुमान्‌जीको उठाकर प्रभुने हृदयसे लगाया और हाथ पकड़कर अत्यन्त निकट बै

कहु कपि रावन पालित लंका। केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना। बोला बचन बिगत अभि

हे हनुमान् ! बताओ तो, रावणके द्वारा सुरक्षित लंका और उसके किलेको तुमने किस तरह जलाया ? हनुमान्‌जीने प्रभुको प्रसन्न जाना अभिमानरहित वचन बोले—॥ ३ ॥

साखामृग कै बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर
नाघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचर गन बधि बिपिन उ

बंदरका बस, यही बड़ा पुरुषार्थ है कि वह एक डालसे दूसरी डाल जाता है। मैंने जो समुद्र लाँघकर सोनेका नगर जलाया और राक्षसगणको अशोकवनको उजाड़ डाला, ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो सब तव प्रताप रघुराई । नाथ न कछू मोरि प्रभुताई ॥
यह सब तो हे श्रीरघुनाथजी ! आपहीका प्रताप है। हे नाथ ! इसमें मेरी प्रभुता ई) कुछ भी नहीं है ॥ ५ ॥

दो०—ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं जा पर तुम्ह अनुकूल ।
तव प्रभावँ बड़वानलहि जारि सकइ खलु तूल ॥ ३३ ॥

हे प्रभु ! जिसपर आप प्रसन्न हों उसके लिये कुछ भी कठिन नहीं है। आपके से रूई [जो स्वयं बहुत जल्दी जल जानेवाली वस्तु है] बड़वानलको निश्चय ला सकती है (अर्थात् असम्भव भी सम्भव हो सकता है) ॥ ३३ ॥

नाथ भगति अति सुखदायनी । देहु कृपा करि अनपायनी ॥
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी । एवमस्तु तब कहेउ भवानी ॥
हे नाथ ! मुझे अत्यन्त सुख देनेवाली अपनी निश्चल भक्ति कृपा करके दीजिये । नजीकी अत्यन्त सरल वाणी सुनकर, हे भवानी ! तब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने स्तु' (ऐसा ही हो) कहा ॥ १ ॥

उमा राम सुभाउ जेहिं जाना । ताहि भजनु तजि भाव न आना ॥
यह संबाद जासु उर आवा । रघुपति चरन भगति सोइ पावा ॥
हे उमा ! जिसने श्रीरामजीका स्वभाव जान लिया, उसे भजन छोड़कर दूसरी ी नहीं सुहाती ! यह स्वामी-सेवकका संवाद जिसके हृदयमें आ गया, वही नाथजीके चरणोंकी भक्ति पा गया ॥ २ ॥

सुनि प्रभु बचन कहहिं कपिबृंदा । जय जय जय कृपाल सुखकंदा ॥
तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा । कहा चलैं कर करहु बनावा ॥
प्रभुके वचन सुनकर वानरगण कहने लगे—कृपालु आनन्दकन्द श्रीरामजीकी , जय हो, जय हो ! तब श्रीरघुनाथजीने कपिराज सुग्रीवको बुलाया और कहा— की तैयारी करो ॥ ३ ॥

अब बिलंबु केहि कारन कीजे । तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे ॥
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी । नभ तें भवन चले सुर हरषी ॥
अब विलम्ब किस कारण किया जाय ? वानरोंको तुरंत आज्ञा दो। [भगवान्की]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह लीला (रावणवधकी तैयारी) देखकर, बहुत-से फूल बरसाकर और हर्षि
देवता आकाशसे अपने-अपने लोकको चले ॥ ४ ॥

दो०—कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।
नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ॥

वानरराज सुग्रीवने शीघ्र ही वानरोंको बुलाया, सेनापतियोंके समूह
वानर-भालुओंके झुंड अनेक रंगोंके हैं और उनमें अतुलनीय बल है ॥ ३४

चौ०--प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा। गर्जहिं भालु महाबल
देखी राम सकल कपि सेना। चितइ कृपा करि राजिव

वे प्रभुके चरणकमलोंमें सिर नवाते हैं। महान् बलवान् रीछ और वा
रहे हैं। श्रीरामजीने वानरोंकी सारी सेना देखी। तब कमलनेत्रोंसे कृपापूर्व
ओर दृष्टि डाली ॥ १ ॥

राम कृपा बल पाइ कपिंदा। भए पच्छजुत मनहुँ
हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भए सुंदर सुभ

रामकृपाका बल पाकर श्रेष्ठ वानर मानो पंखवाले बड़े पर्वत हो ग
श्रीरामजीने हर्षित होकर प्रस्थान (कूच) किया। अनेक सुन्दर और शुभ शकुन

जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह
प्रभु पयान जाना बैदेहीं। फरकि बाम अँग जनु कहि

जिनकी कीर्ति सब मङ्गलोंसे पूर्ण है, उनके प्रस्थानके समय शकुन
नीति है (लीलाकी मर्यादा है)। प्रभुका प्रस्थान जानकीजीने भी जान लिया
बायें अंग फड़क-फड़ककर मानो कहे देते थे [कि श्रीरामजी आ रहे हैं] ॥

जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई। असगुन भयउ रावनहि
चला कटकु को बरनैं पारा। गर्जहिं बानर भालु अ

जानकीजीको जो-जो शकुन होते थे, वही-वही रावणके लिये अपशकु
सेना चली, उसका वर्णन कौन कर सकता है ? असंख्य वानर और भालु
कर रहे हैं ॥ ४ ॥

नख आयुध गिरि पादपधारी। चले गगन महि इच्छा
केहरिनाद भालु कपि करहीं। डगमगाहिं दिग्गज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नख ही जिनके शस्त्र हैं, वे इच्छानुसार (सर्वत्र बेरोक-टोक) चलनेवाले
ानर पर्वतों और वृक्षोंको धारण किये कोई आकाशमार्गसे और कोई पृथ्वीपर चले
हे हैं। वे सिंहके समान गर्जना कर रहे हैं। [उनके चलने और गर्जनेसे] दिशाओं-
थी विचलित होकर चिग्घाड़ रहे हैं ॥ ५ ॥

छं०—चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किंनर दुख टरे॥
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं॥ १॥

दिशाओंके हाथी चिग्घाड़ने लगे, पृथ्वी डोलने लगी, पर्वत चञ्चल हो गये
ने लगे) और समुद्र खलबला उठे। गन्धर्व, देवता, मुनि, नाग, किन्नर, सब-
मनमें हर्षित हुए कि [अब] हमारे दुःख टल गये। अनेकों करोड़ भयानक
योद्धा कटकटा रहे हैं और करोड़ों ही दौड़ रहे हैं। 'प्रबलप्रताप कोसलनाथ
चन्द्रजीकी जय हो' ऐसा पुकारते हुए वे उनके गुणसमूहोंको गा रहे हैं॥ १॥

सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ट कठोर सो किमि सोहई॥
रघुबीर रुचिर प्रयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी॥ २॥

उदार (परम श्रेष्ठ एवं महान्) सर्पराज शेषजी भी सेनाका बोझ नहीं सह सकते,
-बार मोहित हो जाते (घबड़ा जाते) हैं और पुनः-पुनः कच्छपकी कठोर पीठको
पकड़ते हैं। ऐसा करते (अर्थात् बार-बार दाँतोंको गड़ाकर कच्छपकी पीठपर
सी खींचते हुए) वे कैसे शोभा दे रहे हैं मानो श्रीरामचन्द्रजीकी सुन्दर प्रस्थान-
ो परम सुहावनी जानकर उसकी अचल पवित्र कथाको सर्पराज शेषजी कच्छपकी
लिख रहे हों॥ २॥

दो०—एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर।
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर॥ ३५॥

इस प्रकार कृपानिधान श्रीरामजी समुद्रतटपर जा उतरे। अनेकों रीछ-वानर
हाँ-तहाँ फल खाने लगे॥ ३५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०–उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयउ कपि
निज निज गृहँ सब करहिं बिचारा। नहिं निसिचर कुल केर
वहाँ (लंकामें) जबसे हनुमान्‌जी लंकाको जलाकर गये, तबसे राक्षस रहने लगे। अपने-अपने घरोंमें सब विचार करते हैं कि अब राक्षस [का कोई उपाय] नहीं है॥ १॥

जासु दूत बल बरनि न जाई। तेहि आएँ पुर कवन
दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अ
जिसके दूतका बल वर्णन नहीं किया जा सकता, उसके स्वयं नगर कौन भलाई है (हमलोगोंकी बड़ी बुरी दशा होगी)? दूतियोंसे नगरनिवासि सुनकर मंदोदरी बहुत ही व्याकुल हो गयी॥ २॥

रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस
कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हि
वह एकान्तमें हाथ जोड़कर पति (रावण) के चरणों लगी और नीति हुई वाणी बोली—हे प्रियतम! श्रीहरिसे विरोध छोड़ दीजिये। मेरे कहने ही हितकर जानकर हृदयमें धारण कीजिये॥ ३॥

समुझत जासु दूत कइ करनी। स्रवहिं गर्भ रजनीचर
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु
जिनके दूतकी करनीका विचार करते ही (स्मरण आते ही) राक्षस गर्भ गिर जाते हैं, हे प्यारे स्वामी! यदि भला चाहते हैं, तो अपने मन्त्री उसके साथ उनकी स्त्रीको भेज दीजिये॥ ४॥

तव कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज
सीता आपके कुलरूपी कमलोंके वनको दुःख देनेवाली जाड़ेकी रात्रि आयी है। हे नाथ! सुनिये, सीताको दिये (लौटाये) बिना शम्भु और ब्र भी आपका भला नहीं हो सकता॥ ५॥

दो०–राम बान अहि गन सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामजीके बाण सर्पोंके समूहके समान हैं और राक्षसोंके समूह मेढकके समान। वे इन्हें ग्रस नहीं लेते (निगल नहीं जाते) तबतक हठ छोड़कर उपाय जिये ॥ ३६ ॥

श्रवन सुनी सठ ता करि बानी। बिहसा जगत बिदित अभिमानी ॥
सभय सुभाउ नारि कर साचा। मंगल महुँ भय मन अति काचा ॥

मूर्ख और जगत्प्रसिद्ध अभिमानी रावण कानोंसे उसकी वाणी सुनकर खूब हँसा बोला—] स्त्रियोंका स्वभाव सचमुच ही बहुत डरपोक होता है। मङ्गलमें भी रती हो! तुम्हारा मन (हृदय) बहुत ही कच्चा (कमजोर) है ॥ १ ॥

जौं आवइ मर्कट कटकाई। जिअहिं बिचारे निसिचर खाई ॥
कंपहिं लोकप जाकीं त्रासा। तासु नारि सभीत बड़ि हासा ॥

यदि वानरोंकी सेना आवेगी तो बेचारे राक्षस उसे खाकर अपना जीवननिर्वाह लोकपाल भी जिसके डरसे काँपते हैं, उसकी स्त्री डरती हो, यह बड़ी हँसीकी बात है।

अस कहि बिहसि ताहि उर लाई। चलेउ सभाँ ममता अधिकाई ॥
मंदोदरी हृदयँ कर चिंता। भयउ कंत पर बिधि बिपरीता ॥

रावणने ऐसा कहकर हँसकर उसे हृदयसे लगा लिया और ममता बढ़ाकर (अधिक होकर) वह सभामें चला गया। मन्दोदरी हृदयमें चिन्ता करने लगी कि पति-धाता प्रतिकूल हो गये ॥ ३ ॥

बैठेउ सभाँ खबरि असि पाई। सिंधु पार सेना सब आई ॥
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू। ते सब हँसे मष्ट करि रहहू ॥

ज्यों ही वह सभामें जाकर बैठा, उसने ऐसी खबर पायी कि शत्रुकी सारी सेना उस पार आ गयी है। उसने मन्त्रियोंसे पूछा कि उचित सलाह कहिये [अब रना चाहिये]। तब वे सब हँसे और बोले कि चुप किये रहिये (इसमें कौन-सी बात है ?) ॥ ४ ॥

जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं। नर बानर केहि लेखे माहीं ॥

आपने देवताओं और राक्षसोंको जीत लिया, तब तो कुछ श्रम ही नहीं हुआ। मनुष्य और वानर किस गिनतीमें हैं ? ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास॥

मन्त्री, वैद्य और गुरु—ये तीन यदि [अप्रसन्नताके] भय या [आशासे [हितकी बात न कहकर] प्रिय बोलते हैं (ठकुरसुहाती कहने ल [क्रमशः] राज्य, शरीर और धर्म—इन तीनका शीघ्र ही नाश हो जाता है

चौ०—सोइ रावन कहुँ बनी सहाई। अस्तुति करहिं सुनाइ
अवसर जानि बिभीषनु आवा। भ्राता चरन सीसु तेहिं

रावणके लिये भी वही सहायता (संयोग) आ बनी है। मन्त्री सुनाकर (मुँहपर) स्तुति करते हैं। [इसी समय] अवसर जानकर आये। उन्होंने बड़े भाईके चरणोंमें सिर नवाया॥ १॥

पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन। बोला बचन पाइ अनु
जौं कृपाल पूँछिहु मोहि बाता। मति अनुरूप कहउँ हित

फिर वे सिर नवाकर अपने आसनपर बैठ गये और आज्ञा पाक बोले—हे कृपालु! जब आपने मुझसे बात (राय) पूछी ही है, तो अपनी बुद्धिके अनुसार आपके हितकी बात कहता हूँ—॥ २॥

जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि

जो मनुष्य अपना कल्याण, सुन्दर यश, सुबुद्धि, शुभ गति और नाना प्र चाहता हो, वह हे स्वामी! परस्त्रीके ललाटको चौथके चन्द्रमाकी तरह त्याग जैसे लोग चौथके चन्द्रमाको नहीं देखते, उसी प्रकार परस्त्रीका मुख ही न दे

चौदह भुवन एक पति होई। भूतद्रोह तिष्टइ नहिं
गुन सागर नागर नर जोऊ। अलप लोभ भल कहइ न

चौदहों भुवनोंका एक ही स्वामी हो, वह भी जीवोंसे वैर करके ठहर (नष्ट हो जाता है)। जो मनुष्य गुणोंका समुद्र और चतुर हो, उसे चाहे लोभ क्यों न हो, तो भी कोई भला नहीं कहता॥ ४॥

दो०—काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे नाथ ! काम, क्रोध, मद और लोभ—ये सब नरकके रास्ते हैं। इन सबको
र श्रीरामचन्द्रजीको भजिये, जिन्हें संत (सत्पुरुष) भजते हैं ॥ ३८ ॥

—तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला ॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता ॥

हे तात ! राम मनुष्योंके ही राजा नहीं हैं। वे समस्त लोकोंके स्वामी और कालके
ल हैं। वे [सम्पूर्ण ऐश्वर्य, यश, श्री, धर्म, वैराग्य एवं ज्ञानके भण्डार] भगवान् हैं; वे
य (विकाररहित), अजन्मा, व्यापक, अजेय, अनादि और अनन्त ब्रह्म हैं ॥ १ ॥

गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपा सिंधु मानुष तनुधारी ॥
जन रंजन भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता ॥

उन कृपाके समुद्र भगवान्‌ने पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओंका हित करनेके
ही मनुष्यशरीर धारण किया है। हे भाई ! सुनिये, वे सेवकोंको आनन्द देनेवाले,
समूहका नाश करनेवाले और वेद तथा धर्मकी रक्षा करनेवाले हैं ॥ २ ॥

ताहि बयरु तजि नाइअ माथा। प्रनतारति भंजन रघुनाथा ॥
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही। भजहु राम बिनु हेतु सनेही ॥

वैर त्याग कर उन्हें मस्तक नवाइये। वे श्रीरघुनाथजी शरणागतका दुःख नाश
वाले हैं। हे नाथ ! उन प्रभु (सर्वेश्वर) को जानकीजी दे दीजिये और बिना
रण स्नेह करनेवाले श्रीरामजीको भजिये ॥ ३ ॥

सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा ॥
जासु नाम त्रय ताप नसावन। सोइ प्रभु प्रगट समुझु जियँ रावन ॥

जिसे सम्पूर्ण जगत्‌से द्रोह करनेका पाप लगा है, शरण जानेपर प्रभु उसका भी
नहीं करते। जिनका नाम तीनों तापोंका नाश करनेवाला है, वे ही प्रभु (भगवान्)
रूपमें प्रकट हुए हैं। हे रावण ! हृदयमें यह समझ लीजिये ॥ ४ ॥

दो०—बार बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस ॥ ३९ (क)॥

हे दशशीश ! मैं बार-बार आपके चरणों लगता हूँ और विनती करता हूँ कि मान,
और मदको त्याग कर आप कोसलपति श्रीरामजीका भजन कीजिये ॥ ३९ ॥(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुनि पुलस्ति निज सिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात॥

मुनि पुलस्त्यजीने अपने शिष्यके हाथ यह बात कहला भेजी है। हे
अवसर पाकर मैंने तुरंत ही वह बात प्रभु (आप) से कह दी ॥ ३९

चौ०—माल्यवंत अति सचिव सयाना। तासु बचन सुनि अति सु
तात अनुज तव नीति बिभूषन। सो उर धरहु जो कहत बि

माल्यवान् नामका एक बहुत ही बुद्धिमान् मन्त्री था। उसने उन(
वचन सुनकर बहुत सुख माना [और कहा—] हे तात! आपके छोटे भा
विभूषण (नीतिको भूषणरूपमें धारण करनेवाले अर्थात् नीतिमान्) हैं। वि
कुछ कह रहे हैं उसे हृदयमें धारण कर लीजिये ॥ १ ॥

रिपु उतकरष कहत सठ दोऊ। दूरि न करहु इहाँ ह
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी। कहइ बिभीषनु पुनि क

[रावणने कहा—] ये दोनों मूर्ख शत्रुकी महिमा बखान रहे हैं।
है? इन्हें दूर करो न! तब माल्यवान् तो घर लौट गया और विभी
जोड़कर फिर कहने लगे— ॥ २ ॥

सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति

हे नाथ! पुराण और वेद ऐसा कहते हैं कि सुबुद्धि (अच्छी बुद्धि) औ
(खोटी बुद्धि) सबके हृदयमें रहती हैं। जहाँ सुबुद्धि है, वहाँ नाना प्रकारकी
(सुखकी स्थिति) रहती हैं और जहाँ कुबुद्धि है वहाँ परिणाममें विपत्ति (दुःख) र

तव उर कुमति बसी बिपरीता। हित अनहित मानहु रिपु
कालराति निसिचर कुल केरी। तेहि सीता पर प्रीति

आपके हृदयमें उलटी बुद्धि आ बसी है। इसीसे आप हितको अहित
को मित्र मान रहे हैं। जो राक्षसकुलके लिये कालरात्रि [के समान] हैं, उ
आपकी बड़ी प्रीति है ॥ ४ ॥

दो०—तात चरन गहि मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे तात ! मैं चरण पकड़कर आपसे भीख माँगता हूँ (विनती करता हूँ) कि मेरा दुलार रखिये (मुझ बालकके आग्रहको स्नेहपूर्वक स्वीकार कीजिये)। श्रीरामजी- सीताजी दे दीजिये, जिसमें आपका अहित न हो ॥ ४० ॥

बुध पुरान श्रुति संमत बानी । कही बिभीषन नीति बखानी ॥
सुनत दसानन उठा रिसाई । खल तोहि निकट मृत्यु अब आई ॥

विभीषणने पण्डितों, पुराणों और वेदोंद्वारा सम्मत (अनुमोदित) वाणीसे नीति बखानकर कही। पर उसे सुनते ही रावण क्रोधित होकर उठा और बोला कि रे दुष्ट ! अब मृत्यु तेरे निकट आ गयी है ! ॥ १ ॥

जिअसि सदा सठ मोर जिआवा । रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा ॥
कहसि न खल अस को जग माहीं । भुज बल जाहि जिता मैं नाहीं ॥

अरे मूर्ख ! तू जीता तो है सदा मेरा जिलाया हुआ (अर्थात् मेरे ही अन्नसे पल रहा है), पर हे मूढ ! पक्ष तुझे शत्रुका ही अच्छा लगता है । अरे दुष्ट ! बता न, जगत्‌में ऐसा कौन है जिसे मैंने अपनी भुजाओंके बलसे न जीता हो ? ॥ २ ॥

मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती । सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती ॥
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा । अनुज गहे पद बारहिं बारा ॥

मेरे नगरमें रहकर प्रेम करता है तपस्वियोंपर । मूर्ख ! उन्हींसे जा मिल और उन्हींको नीति बता ! ऐसा कहकर रावणने उन्हें लात मारी । परन्तु छोटे भाई विभीषणने [मारनेपर भी] बार-बार उसके चरण ही पकड़े ॥ ३ ॥

उमा संत कइ इहइ बड़ाई । मंद करत जो करइ भलाई ॥
तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा । रामु भजें हित नाथ तुम्हारा ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! संतकी यही बड़ाई (महिमा) है कि वे बुराई करनेपर भी [बुराई करनेवालेकी] भलाई ही करते हैं। [विभीषणजीने कहा—] आप मेरे पिताके समान हैं, मुझे मारा सो तो अच्छा ही किया; परन्तु हे नाथ ! आपका भला श्रीरामजीको भजनेमें ही है ॥ ४ ॥

सचिव संग लै नभ पथ गयऊ । सबहि सुनाइ कहत अस भयऊ ॥

[इतना कहकर] विभीषण अपने मन्त्रियोंको साथ लेकर आकाशमार्गमें गये और सबको सुनाकर वे ऐसा कहने लगे— ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि।
मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि॥

श्रीरामजी सत्यसंकल्प एवं [सर्वसमर्थ] प्रभु हैं और [हे रावण !] तु
कालके वश है। अतः मैं अब श्रीरघुवीरकी शरण जाता हूँ, मुझे दोष न देना।

चौ०—अस कहि चला बिभीषनु जबहीं। आयूहीन भए सब
साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै

ऐसा कहकर विभीषणजी ज्यों ही चले, त्यों ही सब राक्षस आयुही
(उनकी मृत्यु निश्चित हो गयी)। [शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! साधु
तुरंत ही सम्पूर्ण कल्याणकी हानि (नाश) कर देता है॥ १॥

रावन जबहिं बिभीषनु त्यागा। भयउ बिभव बिनु तबहिं
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन

रावणने जिस क्षण विभीषणको त्यागा उसी क्षण वह अभागा वैभव
से हीन हो गया। विभीषणजी हर्षित होकर मनमें अनेकों मनोरथ करते हुए
जीके पास चले॥ २॥

देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सु
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक कानन पाव

[वे सोचते जाते थे—] मैं जाकर भगवान्‌के कोमल और लाल व
चरणकमलोंके दर्शन करूँगा, जो सेवकोंको सुख देनेवाले हैं, जिन चरणोंका
ऋषिपत्नी अहल्या तर गयीं और जो दण्डकवनको पवित्र करनेवाले हैं॥ ३

जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहउँ

जिन चरणोंको जानकीजीने हृदयमें धारण कर रक्खा है, जो कपट
पृथ्वीपर [उसे पकड़नेको] दौड़े थे और जो चरणकमल साक्षात् शिवजीके
सरोवरमें विराजते हैं, मेरा अहोभाग्य है कि उन्हींको आज मैं देखूँगा।॥

दो०—जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिन चरणोंकी पादुकाओंमें भरतजीने अपना मन लगा रक्खा है, अहा ! आज न्हीं चरणोंको अभी जाकर इन नेत्रोंसे देखूँगा ! ॥ ४२ ॥

—एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा। आयउ सपदि सिंधु एहिं पारा ॥
कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा। जाना कोउ रिपु दूत बिसेषा ॥

इस प्रकार प्रेमसहित विचार करते हुए वे शीघ्र ही समुद्रके इस पार (जिधर मचन्द्रजीकी सेना थी) आ गये। वानरोंने विभीषणको आते देखा तो उन्होंने जाना शत्रुका कोई खास दूत है ॥ १ ॥

ताहि राखि कपीस पहिं आए। समाचार सब ताहि सुनाए ॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। आवा मिलन दसानन भाई ॥

उन्हें [पहरेपर] ठहराकर वे सुग्रीवके पास आये और उनको सब समाचार सुनाये। सुग्रीवने [श्रीरामजीके पास जाकर] कहा—हे रघुनाथजी ! सुनिये, का भाई [आपसे] मिलने आया है ॥ २ ॥

कह प्रभु सखा बूझिऐ काहा। कहइ कपीस सुनहु नरनाहा ॥
जानि न जाइ निसाचर माया। कामरूप केहि कारन आया ॥

प्रभु श्रीरामजीने कहा—हे मित्र ! तुम क्या समझते हो (तुम्हारी क्या राय ? वानरराज सुग्रीवने कहा—हे महाराज ! सुनिये, राक्षसोंकी माया जानी नहीं । यह इच्छानुसार रूप बदलनेवाला (छली) न जाने किस कारण आया है ॥ ३ ॥

भेद हमार लेन सठ आवा। राखिअ बाँधि मोहि अस भावा ॥
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी। मम पन सरनागत भयहारी ॥

[जान पड़ता है] यह मूर्ख हमारा भेद लेने आया है। इसलिये मुझे तो यही लगता है कि इसे बाँध रक्खा जाय। [श्रीरामजीने कहा—] हे मित्र ! तुमने नीति च्छी विचारी; परन्तु मेरा प्रण तो है शरणागतके भयको हर लेना ! ॥ ४ ॥

सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत बच्छल भगवाना ॥

प्रभुके वचन सुनकर हनुमान्‌जी हर्षित हुए [और मन-ही-मन कहने लगे कि] न् कैसे शरणागतवत्सल (शरणमें आये हुएपर पिताकी भाँति प्रेम करनेवाले) हैं ॥ ५ ॥

दो०—सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि ॥ ४३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[श्रीरामजी फिर बोले—] जो मनुष्य अपने अहितका अनुमान करके शरणमें आये हुएका त्याग कर देते हैं, वे पामर (क्षुद्र) हैं, पापमय हैं; उन्हें देखनेमें भी हानि है (पाप लगता है) ॥ ४३ ॥

चौ०—कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥

जिसे करोड़ों ब्राह्मणोंकी हत्या लगी हो, शरणमें आनेपर मैं उसे भी नहीं त्यागता। जीव ज्यों ही मेरे सम्मुख होता है, त्यों ही उसके करोड़ों जन्मोंके पाप नष्ट हो जाते हैं॥

पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजन मोर तेहि भाव न काऊ॥
जौं पै दुष्टहृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई॥

पापीका यह सहज स्वभाव होता है कि मेरा भजन उसे कभी नहीं सुहाता। यदि वह (रावणका भाई) निश्चय ही दुष्ट हृदयका होता तो क्या वह मेरे सम्मुख आ सकता?

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥
भेद लेन पठवा दससीसा। तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा॥

जो मनुष्य निर्मल मनका होता है, वही मुझे पाता है। मुझे कपट और छल-छिद्र नहीं सुहाते। यदि उसे रावणने भेद लेनेको भेजा है, तब भी हे सुग्रीव! अपनेको कुछ भी भय या हानि नहीं है॥ ३॥

जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते॥
जौं सभीत आवा सरनाईं। रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं॥

क्योंकि हे सखे! जगत्‌में जितने भी राक्षस हैं, लक्ष्मण क्षणभरमें उन सबको मार सकते हैं। और यदि वह भयभीत होकर मेरी शरण आया है तो मैं उसे प्राणोंकी तरह रखूँगा॥

दो०—उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत॥ ४४॥

कृपाके धाम श्रीरामजीने हँसकर कहा—दोनों ही स्थितियोंमें उसे ले आओ। तब अंगद और हनुमान्‌सहित सुग्रीवजी 'कृपालु श्रीरामकी जय हो' कहते हुए चले॥ ४४॥

चौ०—सादर तेहि आगें करि बानर। चले जहाँ रघुपति करुनाकर॥
दूरिहि ते देखे द्वौ भ्राता। नयनानंद दान के दाता॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभीषणजीको आदरसहित आगे करके वानर फिर वहाँ चले जहाँ करुणाकी न श्रीरघुनाथजी थे। नेत्रोंको आनन्दका दान देनेवाले (अत्यन्त सुखद) दोनों इयोंको विभीषणजीने दूरहीसे देखा ॥ १ ॥

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी। रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी ॥
भुज प्रलंब कंजारुन लोचन। स्यामल गात प्रनत भय मोचन ॥

फिर शोभाके धाम श्रीरामजीको देखकर वे पलक [मारना] रोककर ठिठककर तब्ध होकर) एकटक देखते ही रह गये। भगवान्‌की विशाल भुजाएँ हैं, लाल लके समान नेत्र हैं और शरणागतके भयका नाश करनेवाला साँवला शरीर है ॥२॥

सिंघ कंध आयत उर सोहा। आनन अमित मदन मन मोहा ॥
नयन नीर पुलकित अति गाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता ॥

सिंहके-से कंधे हैं, विशाल वक्षःस्थल (चौड़ी छाती) अत्यन्त शोभा दे रहा असंख्य कामदेवोंके मनको मोहित करनेवाला मुख है। भगवान्‌के स्वरूपको देख- विभीषणजीके नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया और शरीर अत्यन्त पुलकित गया। फिर मनमें धीरज धरकर उन्होंने कोमल वचन कहे—॥ ३ ॥

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता ॥
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहि तम पर नेहा ॥

हे नाथ ! मैं दशमुख रावणका भाई हूँ। हे देवताओंके रक्षक ! मेरा जन्म कुलमें हुआ है। मेरा तामसी शरीर है, स्वभावसे ही मुझे पाप प्रिय हैं, जैसे को अन्धकारपर सहज स्नेह होता है ॥ ४ ॥

दो०—श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर ॥ ४५ ॥

मैं कानोंसे आपका सुयश सुनकर आया हूँ कि प्रभु भव (जन्म-मरण) के नाश करनेवाले हैं। हे दुखियोंके दुःख दूर करनेवाले और शरणागतको सुख ले श्रीरघुवीर ! मेरी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये ॥ ४५ ॥

असं कहि करत दंडवत देखा। तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा ॥
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुने उन्हें ऐसा कहकर दण्डवत् करते देखा तो वे अत्यन्त हर्षित होकर उठे। विभीषणजीके दीन वचन सुननेपर प्रभुके मनको बहुत ही भाये। उन्होंने विशाल भुजाओंसे पकड़कर उनको हृदयसे लगा लिया ॥ १ ॥

अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी। बोले बचन भगत भय...
कहु लंकेस सहित परिवारा। कुसल कुठाहर बास तु...

छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित गले मिलकर उनको अपने पास बैठाकर श्री... भक्तोंके भयको हरनेवाले वचन बोले—हे लंकेश! परिवारसहित अपनी कुशल... तुम्हारा निवास बुरी जगहपर है ॥ २ ॥

खल मंडलीं बसहु दिनु राती। सखा धरम निबहइ केहि...
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती। अति नय निपुन न भाव अ...

दिन-रात दुष्टोंकी मण्डलीमें बसते हो। [ऐसी दशामें] हे सखे! ... धर्म किस प्रकार निभता है? मैं तुम्हारी सब रीति (आचार-व्यवहार) जा... तुम अत्यन्त नीतिनिपुण हो, तुम्हें अनीति नहीं सुहाती ॥ ३ ॥

बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बि...
अब पद देखि कुसल रघुराया। जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन...

हे तात! नरकमें रहना वरं अच्छा है, परन्तु विधाता दुष्टका सङ्ग [... न दे। [विभीषणजीने कहा—] हे रघुनाथजी! अब आपके चरणोंका द... कुशलसे हूँ, जो आपने अपना सेवक जानकर मुझपर दया की है ॥ ४ ॥

दो०—तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम ॥ ...

तबतक जीवकी कुशल नहीं और न स्वप्नमें भी उसके मनको शान्ति है... वह शोकके घर काम (विषय-कामना) को छोड़कर श्रीरामजीको नहीं भजता ॥ ...

चौ०—तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद ...
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि ...

लोभ, मोह, मत्सर (डाह), मद और मान आदि अनेकों दुष्ट...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हृदयमें बसते हैं, जबतक कि धनुष-बाण और कमरमें तरकस धारण किये हुए रघुनाथजी हृदयमें नहीं बसते ॥ १ ॥

ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी ॥
तब लगि बसति जीव मन माहीं। जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं ॥

ममता पूर्ण अँधेरी रात है, जो राग-द्वेषरूपी उल्लुओंको सुख देनेवाली है। (ममतारूपी रात्रि) तभीतक जीवके मनमें बसती है, जबतक प्रभु (आप) का प्रतापरूपी सूर्य उदय नहीं होता ॥ २ ॥

अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला ॥

हे श्रीरामजी ! आपके चरणारविन्दके दर्शन कर अब मैं कुशलसे हूँ; मेरे भारी भय मिट गये। हे कृपालु ! आप जिसपर अनुकूल होते हैं, उसे तीनों प्रकारके भवशूल (आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक ताप) नहीं व्यापते ॥ ३ ॥

मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहिं प्रभु हरषि हृदयँ मोहि लावा ॥

मैं अत्यन्त नीच स्वभावका राक्षस हूँ। मैंने कभी शुभ आचरण नहीं किया। जिनका रूप मुनियोंके भी ध्यानमें नहीं आता, उन प्रभुने स्वयं हर्षित होकर मुझे हृदयसे लगा लिया ४

दो०—अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरंचि सिव सेब्य जुगल पद कंज ॥ ४७ ॥

हे कृपा और सुखके पुञ्ज श्रीरामजी ! मेरा अत्यन्त असीम सौभाग्य है, जो मैंने ब्रह्मा और शिवजीके द्वारा सेवित युगल चरणकमलोंको अपने नेत्रोंसे देखा ॥ ४७ ॥

—सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ। जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ ॥
जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही ॥

[श्रीरामजीने कहा—] हे सखा ! सुनो, मैं तुम्हें अपना स्वभाव कहता हूँ, जिसे काकभुशुण्डि, शिवजी और पार्वतीजी भी जानती हैं। कोई मनुष्य [सम्पूर्ण] जड-चेतन जगत्‌का द्रोही हो, यदि वह भी भयभीत होकर मेरी शरण तककर आ जाय, ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु सम
जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परि

और मद, मोह तथा नाना प्रकारके छल-कपट त्याग दे तो मैं उसे बहु साधुके समान कर देता हूँ। माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, घर, मित्र और

सब कै ममता ताग बटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि
समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन

इन सबके ममत्वरूपी तागोंको बटोरकर और उन सबकी एक डोरी उसके द्वारा जो अपने मनको मेरे चरणोंमें बाँध देता है (सारे सांसारिक स केन्द्र मुझे बना लेता है), जो समदर्शी है, जिसे कुछ इच्छा नहीं है औ मनमें हर्ष, शोक और भय नहीं है, ॥ ३ ॥

अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरें। धरउँ देह नहिं आन नि

ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें कैसे बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बस है। तुम-सरीखे संत ही मुझे प्रिय हैं। मैं और किसीके निहोरेसे (कृतज्ञ देह धारण नहीं करता ॥ ४ ॥

दो०—सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विज पद प्रेम ॥ ४

जो सगुण (साकार) भगवान्‌के उपासक हैं, दूसरेके हितमें लगे नीति और नियमोंमें दृढ़ हैं और जिन्हें ब्राह्मणोंके चरणोंमें प्रेम है, वे म प्राणोंके समान हैं ॥ ४८ ॥

चौ०—सुनु लंकेस सकल गुन तोरें। तातें तुम्ह अतिसय प्रिय
राम बचन सुनि बानर जूथा। सकल कहहिं जय कृपा ब

हे लंकापति! सुनो, तुम्हारे अंदर उपर्युक्त सब गुण हैं। इससे अत्यन्त ही प्रिय हो। श्रीरामजीके वचन सुनकर सब वानरोंके समूह कह कृपाके समूह श्रीरामजीकी जय हो! ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी । नहिं अघात श्रवनामृत जानी ॥
पद अंबुज गहि बारहिं बारा । हृदयँ समात न प्रेमु अपारा ॥

प्रभुकी वाणी सुनते हैं और उसे कानोंके लिये अमृत जानकर विभीषणजी नहीं हैं । वे बार-बार श्रीरामजीके चरणकमलोंको पकड़ते हैं । अपार प्रेम है, में समाता नहीं है ॥ २ ॥

सुनहु देव सचराचर स्वामी । प्रनतपाल उर अंतरजामी ॥
उर कछु प्रथम बासना रही । प्रभु पद प्रीति सरित सो बही ॥

[विभीषणजीने कहा—] हे देव ! हे चराचर जगत्के स्वामी ! हे शरणागतके ! हे सबके हृदयके भीतरकी जाननेवाले ! सुनिये, मेरे हृदयमें पहले कुछ थी । वह प्रभुके चरणोंकी प्रीतिरूपी नदीमें बह गयी ॥ ३ ॥

अब कृपाल निज भगति पावनी । देहु सदा सिव मन भावनी ॥
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा । मागा तुरत सिंधु कर नीरा ॥

अब तो हे कृपालु ! शिवजीके मनको सदैव प्रिय लगनेवाली अपनी पवित्र मुझे दीजिये । 'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) कहकर रणधीर प्रभु श्रीरामजीने ही समुद्रका जल माँगा ॥ ४ ॥

जदपि सखा तव इच्छा नाहीं । मोर दरसु अमोघ जग माहीं ॥
अस कहि राम तिलक तेहि सारा । सुमन बृष्टि नभ भई अपारा ॥

[और कहा—] हे सखा ! यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है, पर जगत्में मेरा अमोघ है (वह निष्फल नहीं जाता) । ऐसा कहकर श्रीरामजीने उनको लक कर दिया । आकाशसे पुष्पोंकी अपार वृष्टि हुई ॥ ५ ॥

दो०—रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड ।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड ॥४९(क)॥

श्रीरामजीने रावणके क्रोधरूपी अग्निमें, जो अपनी (विभीषणकी) श्वास) रूपी पवनसे प्रचण्ड हो रही थी, जलते हुए विभीषणको बचा लिया और खण्ड राज्य दिया ॥ ४९ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥

शिवजीने जो सम्पत्ति रावणको दसों सिरोंकी बलि देनेपर दी थी, श्रीरघुनाथजीने विभीषणको बहुत सकुचते हुए दी॥ ४९ (ख)॥

चौ०—अस प्रभु छाड़ि भजहिं जे आना। ते नर पसु बिनु पूँछ
निज जन जानि ताहि अपनावा। प्रभु सुभाव कपि कुल मन

ऐसे परम कृपालु प्रभुको छोड़कर जो मनुष्य दूसरेको भजते हैं, वे पूँछके पशु हैं। अपना सेवक जानकर विभीषणको श्रीरामजीने अपना लि स्वभाव वानरकुलके मनको [बहुत] भाया॥ १॥

पुनि सर्बग्य सर्ब उर बासी। सर्बरूप सब रहित
बोले बचन नीति प्रतिपालक। कारन मनुज दनुज कुल

फिर सब कुछ जाननेवाले, सबके हृदयमें बसनेवाले, सर्वरूप (सब रू सबसे रहित, उदासीन, कारणसे (भक्तोंपर कृपा करनेके लिये) मनुष्य बने हुए के कुलका नाश करनेवाले श्रीरामजी नीतिकी रक्षा करनेवाले वचन बोले—

सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि
संकुल मकर उरग झष जाती। अति अगाध दुस्तर सब

हे वीर वानरराज सुग्रीव और लंकापति विभीषण! सुनो, इस ग किस प्रकार पार किया जाय ? अनेक जातिके मगर, साँप और मछलियों यह अत्यन्त अथाह समुद्र पार करनेमें सब प्रकारसे कठिन है॥ ३॥

कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर स

विभीषणजीने कहा—हे रघुनाथजी! सुनिये, यद्यपि आपका एक बाण समुद्रोंको सोखनेवाला है (सोख सकता है), तथापि नीति ऐसी कही गयी है होगा) कि [पहले] जाकर समुद्रसे प्रार्थना की जाय॥ ४॥

दो०—प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे प्रभु ! समुद्र आपके कुलमें बड़े (पूर्वज) हैं, वे विचारकर उपाय बतला देंगे ।
छ और वानरोंकी सारी सेना बिना ही परिश्रमके समुद्रके पार उतर जायगी ॥५०॥

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई । करिअ दैव जौं होइ सहाई ॥
मंत्र न यह लछिमन मन भावा । राम बचन सुनि अति दुख पावा ॥

[श्रीरामजीने कहा—] हे सखा ! तुमने अच्छा उपाय बताया । यही किया
यदि दैव सहायक हों । यह सलाह लक्ष्मणजीके मनको अच्छी नहीं लगी ।
जीके वचन सुनकर तो उन्होंने बहुत ही दुःख पाया ॥ १ ॥

नाथ दैव कर कवन भरोसा । सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा ॥
कादर मन कहुँ एक अधारा । दैव दैव आलसी पुकारा ॥

[लक्ष्मणजीने कहा—] हे नाथ ! दैवका कौन भरोसा ! मनमें क्रोध कीजिये
ाइये) और समुद्रको सुखा डालिये । यह दैव तो कायरके मनका एक आधार
ी देनेका उपाय) है । आलसी लोग ही दैव-दैव पुकारा करते हैं ॥ २ ॥

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा । ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा ॥
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई । सिंधु समीप गए रघुराई ॥

यह सुनकर श्रीरघुवीर हँसकर बोले--ऐसे ही करेंगे, मनमें धीरज रक्खो । ऐसा
छोटे भाईको समझाकर प्रभु श्रीरघुनाथजी समुद्रके समीप गये ॥ ३ ॥

प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई । बैठे पुनि तट दर्भ डसाई ॥
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए । पाछें रावन दूत पठाए ॥

उन्होंने पहले सिर नवाकर प्रणाम किया । फिर किनारेपर कुश बिछाकर बैठ गये ।
ों ही विभीषणजी प्रभुके पास आये थे, त्यों ही रावणने उनके पीछे दूत भेजे थे ॥४॥

दो०—सकल चरित तिन्ह देखे धरें कपट कपि देह ।
प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं सरनागत पर नेह ॥ ५१ ॥

कपटसे वानरका शरीर धारण कर उन्होंने सब लीलाएँ देखीं । वे अपने हृदयमें प्रभुके
और शरणागतपर उनके स्नेहकी सराहना करने लगे ॥ ५१ ॥

गट बखानहिं राम सुभाऊ । अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ ॥
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने । सकल बाँधि कपीस पहिं आने ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर वे प्रकटरूपमें भी अत्यन्त प्रेमके साथ श्रीरामजीके स्वभावकी
लगे, उन्हें दुराव (कपटवेष) भूल गया। तब वानरोंने जाना कि ये श
और वे उन सबको बाँधकर सुग्रीवके पास ले आये ॥ १ ॥

कह सुग्रीव सुनहु सब बानर। अंग भंग करि पठवहु
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए। बाँधि कटक चहु पास

सुग्रीवने कहा—सब वानरो! सुनो, राक्षसोंके अंग-भंग करके भेज
वचन सुनकर वानर दौड़े। दूतोंको बाँधकर उन्होंने सेनाके चारों ओर घु

बहु प्रकार मारन कपि लागे। दीन पुकारत तदपि न
जो हमार हर नासा काना। तेहि कोसलाधीस कै

वानर उन्हें बहुत तरहसे मारने लगे। वे दीन होकर पुकारते
वानरोंने उन्हें नहीं छोड़ा। [तब दूतोंने पुकारकर कहा--] जो हमारे नाक
उसे कोशलाधीश श्रीरामजीकी सौगंध है ॥ २ ॥

सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत
रावन कर दीजहु यह पाती। लछिमन बचन बाचु कु

यह सुनकर लक्ष्मणजीने सबको निकट बुलाया। उन्हें बड़ी दया
हँसकर उन्होंने राक्षसोंको तुरंत ही छुड़ा दिया। [और उनसे कहा--] रावणके
चिट्ठी देना [और कहना--] हे कुलघातक! लक्ष्मणके शब्दों (सँदेसे) को

दो०—कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा कालु तुम्हार॥

फिर उस मूर्खसे जबानी यह मेरा उदार (कृपासे भरा हुआ) सन्देश
सीताजीको देकर उनसे (श्रीरामजीसे) मिलो, नहीं तो तुम्हारा काल आ गया

चौ०—तुरत नाइ लछिमन पद माथा। चले दूत बरनत गुन
कहत राम जसु लंकाँ आए। रावन चरन सीस तिन्ह

लक्ष्मणजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर, श्रीरामजीके गुणोंकी कथा
हुए दूत तुरंत ही चल दिये। श्रीरामजीका यश कहते हुए वे लङ्कामें आये
रावणके चरणोंमें सिर नवाये ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिहसि दसानन पूँछी बाता । कहसि न सुक आपनि कुसलाता ॥
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी । जाहि मृत्यु आई अति नेरी ॥

दशमुख रावणने हँसकर बात पूछी—अरे शुक ! अपनी कुशल क्यों नहीं कहता ? उस विभीषणका समाचार सुना, मृत्यु जिसके अत्यन्त निकट आ गयी है ॥ २ ॥

करत राज लंका सठ त्यागी । होइहि जव कर कीट अभागी ॥
पुनि कहु भालु कीस कटकाई । कठिन काल प्रेरित चलि आई ॥

मूर्खने राज्य करते हुए लङ्काको त्याग दिया । अभागा अब जौका कीड़ा (घुन) (जौके साथ जैसे घुन भी पीस जाता है, वैसे ही नर-वानरोंके साथ वह भी जायगा) । फिर भालु और वानरोंकी सेनाका हाल कह, जो कठिन कालकी से यहाँ चली आयी है ॥ ३ ॥

जिन्ह के जीवन कर रखवारा । भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा ॥
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी । जिन्ह के हृदयँ त्रास अति मोरी ॥

और जिनके जीवनका रक्षक कोमल चित्तवाला बेचारा समुद्र बन गया है त् उनके और राक्षसोंके बीचमें यदि समुद्र न होता तो अबतक राक्षस उन्हें मारकर ये होते) । फिर उन तपस्वियोंकी बात बता, जिनके हृदयमें मेरा बड़ा डर है ॥ ४ ॥

दो०—की भइ भेंट कि फिरि गए श्रवन सुजसु सुनि मोर ।
कहसि न रिपु दल तेज बल बहुत चकित चित तोर ॥ ५३ ॥

उनसे तेरी भेंट हुई, या वे कानोंसे मेरा सुयश सुनकर ही लौट गये ? शत्रुसेनाका ौर बल बताता क्यों नहीं ? तेरा चित्त बहुत ही चकित (भौंचक्का-सा) हो रहा है ।

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें । मानहु कहा क्रोध तजि तैसें ॥
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा । जातहिं राम तिलक तेहि सारा ॥

[दूतने कहा--] हे नाथ ! आपने जैसे कृपा करके पूछा है, वैसे ही क्रोध छोड़कर मेरा मानिये (मेरी बातपर विश्वास कीजिये) । जब आपका छोटा भाई श्रीरामजीसे मिला, तब उसके पहुँचते ही श्रीरामजीने उसको राजतिलक कर दिया ॥ १ ॥

रावन दूत हमहि सुनि काना । कपिन्ह बाँधि दीन्हें दुख नाना ॥
श्रवन नासिका काटैं लागे । राम सपथ दीन्हें हम त्यागे ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हम रावणके दूत हैं यह कानोंसे सुनकर वानरोंने हमें बाँधकर बहुत
यहाँतक कि वे हमारे नाक-कान काटने लगे। श्रीरामजीकी शपथ दिलानेपर
हमको छोड़ा ॥ २ ॥

पूँछिहु नाथ राम कटकाई। बदन कोटि सत बरनि
नाना बरन भालु कपि धारी। बिकटानन बिसाल

हे नाथ! आपने श्रीरामजीकी सेना पूछी सो वह तो सौ करोड़ मुखोंसे
नहीं की जा सकती। अनेकों रंगोंके भालु और वानरोंकी सेना है, जो भयङ्कर
विशाल शरीरवाले और भयानक हैं ॥ ३ ॥

जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा। सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु
अमित नाम भट कठिन कराला। अमित नाग बल बिपुल बिसाला

जिसने नगरको जलाया और आपके पुत्र अक्षयकुमारको मारा, उसका
सब वानरोंमें थोड़ा है। असंख्य नामोंवाले बड़े ही कठोर और भयङ्कर
उनमें असंख्य हाथियोंका बल है और वे बड़े ही विशाल हैं ॥ ४ ॥

दो०—द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत बलरासि ॥

द्विविद, मयंद, नील, नल, अंगद, गद, विकटास्य, दधिमुख, केसरी,
शठ और जाम्बवान्—ये सभी बलकी राशि हैं ॥ ५४ ॥

चौ०—ए कपि सब सुग्रीव समाना। इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को
राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हहीं। तृन समान त्रैलोकहि

'ये सब वानर बलमें सुग्रीवके समान हैं और इनके-जैसे [एक-
करोड़ों हैं; उन बहुत-सोंको गिन ही कौन सकता है? श्रीरामजीकी कृपा
अतुलनीय बल है। वे तीनों लोकोंको तृणके समान [तुच्छ] समझते हैं

अस मैं सुना श्रवन दसकंधर। पदुम अठारह जूथप
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहि जीतै रन

हे दशग्रीव! मैंने कानोंसे ऐसा सुना है कि अठारह पद्म तो अकेले वानरों
हैं। हे नाथ! उस सेनामें ऐसा कोई वानर नहीं है जो आपको रणमें न जीत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परम क्रोध मीजहिं सब हाथा। आयसु पै न देहिं रघुनाथा॥
सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला। पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला॥

सब-के-सब अत्यन्त क्रोधसे हाथ मीजते हैं। पर श्रीरघुनाथजी उन्हें आज्ञा देते। हम मछलियों और साँपोंसहित समुद्रको सोख लेंगे। नहीं तो, बड़े-पर्वतोंसे उसे भरकर पूर (पाट) देंगे॥ ३॥

मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा। ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा॥
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका। मानहुँ ग्रसन चहत हहिं लंका॥

और रावणको मसलकर धूलमें मिला देंगे। सब वानर ऐसे ही वचन कह। सब सहज ही निडर हैं; इस प्रकार गरजते और डपटते हैं मानो लंका-निगल ही जाना चाहते हैं॥ ४॥

दो०—सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहिं संग्राम॥ ५५॥

सब वानर-भालू सहज ही शूरवीर हैं, फिर उनके सिरपर प्रभु (सर्वेश्वर) श्रीराम-। हे रावण! वे संग्राममें करोड़ों कालोंको जीत सकते हैं॥ ५५॥

राम तेज बल बुधि बिपुलाई। सेष सहस सत सकहिं न गाई॥
सक सर एक सोषि सत सागर। तव भ्रातहि पूँछेउ नय नागर॥

श्रीरामचन्द्रजीके तेज (सामर्थ्य), बल और बुद्धिकी अधिकताको लाखों शेष भी गा सकते। वे एक ही बाणसे सैकड़ों समुद्रोंको सोख सकते हैं, परन्तु नीति-श्रीरामजीने [नीतिकी रक्षाके लिये] आपके भाईसे उपाय पूछा॥ १॥

तासु बचन सुनि सागर पाहीं। मागत पंथ कृपा मन माहीं॥
सुनत बचन बिहसा दससीसा। जौं असि मति सहाय कृत कीसा॥

उनके (आपके भाईके) वचन सुनकर वे (श्रीरामजी) समुद्रसे राह माँग रहे हैं, मनमें कृपा भरी है [इसलिये वे उसे सोखते नहीं]। दूतके ये वचन सुनते ही रावण सा [और बोला—] जब ऐसी बुद्धि है, तभी तो वानरोंको सहायक बनाया है!॥ २॥

सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई। सागर सन ठानी मचलाई॥
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई। रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वाभाविक ही डरपोक विभीषणके वचनको प्रमाण करके उन्होंने
मचलना (बालहठ) ठाना है। अरे मूर्ख ! झूठी बड़ाई क्या करता है!
शत्रु (राम) के बल और बुद्धिकी थाह पा ली ॥ ३ ॥

सचिव सभीत बिभीषन जाकें। बिजय बिभूति कहाँ जग
सुनि खल बचन दूत रिस बाढ़ी। समय बिचारि पत्रिका

जिसके विभीषण-जैसा डरपोक मन्त्री हो, उसे जगत्‌में विजय और विभूति (ऐश्वर्य) कहाँ। दुष्ट रावणके वचन सुनकर दूतको क्रोध बढ़ आया। उसने समझकर पत्रिका निकाली ॥ ४ ॥

रामानुज दीन्ही यह पाती। नाथ बचाइ जुड़ावहु
बिहसि बाम कर लीन्ही रावन। सचिव बोलि सठ लाग

[और कहा—] श्रीरामजीके छोटे भाई लक्ष्मणने यह पत्रिका दी है। नाथ ! इसे बँचवाकर छाती ठंडी कीजिये। रावणने हँसकर उसे बायें हाथसे लिया और मन्त्रीको बुलवाकर वह मूर्ख उसे बँचाने लगा ॥ ५ ॥

दो०—बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्नु अज ईस ॥५

[पत्रिकामें लिखा था—] अरे मूर्ख ! केवल बातोंसे ही मनको रिझाकर कुलको नष्ट-भ्रष्ट न कर। श्रीरामजीसे विरोध करके तू विष्णु, ब्रह्मा और शरण जानेपर भी नहीं बचेगा ॥ ५६ (क)॥

की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृंग।
होहि कि राम सरानल खल कुल सहित पतंग ॥५

या तो अभिमान छोड़कर अपने छोटे भाई विभीषणकी भाँति प्रभुके चरण भ्रमर बन जा। अथवा, रे दुष्ट ! श्रीरामजीके बाणरूपी अग्निमें परिवारसहित हो जा (दोनोंमेंसे जो अच्छा लगे सो कर) ॥ ५६ (ख) ॥

चौ०—सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहि
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग

पत्रिका सुनते ही रावण मनमें भयभीत हो गया, परन्तु मुखसे (

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राता हुआ वह सबको सुनाकर कहने लगा—जैसे कोई पृथ्वीपर पड़ा हुआ आकाशको पकड़नेकी चेष्टा करता हो, वैसे ही यह छोटा तपस्वी (लक्ष्मण) ास करता है (डींग हाँकता है) ॥ १ ॥

कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा॥

शुक (दूत) ने कहा—हे नाथ ! अभिमानी स्वभावको छोड़कर [इस पत्र-खी] सब बातोंको सत्य समझिये। क्रोध छोड़कर मेरा वचन सुनिये। हे ! श्रीरामजीसे वैर त्याग दीजिये ॥ २ ॥

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही॥

यद्यपि श्रीरघुवीर समस्त लोकोंके स्वामी हैं, पर उनका स्वभाव अत्यन्त ही कोमल है। ही प्रभु आपपर कृपा करेंगे और आपका एक भी अपराध वे हृदयमें नहीं रक्खेंगे ॥ ३ ॥

जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे॥
जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही॥

जानकीजी श्रीरघुनाथजीको दे दीजिये। हे प्रभु ! इतना कहना मेरा कीजिये। जब ूत) ने जानकीजीको देनेके लिये कहा, तब दुष्ट रावणने उसको लात मारी ॥ ४ ॥

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ॥
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई॥

वह भी [विभीषणकी भाँति] चरणोंमें सिर नवाकर वहीं चला, जहाँ कृपासागर ाथजी थे। प्रणाम करके उसने अपनी कथा सुनायी और श्रीरामजीकी कृपासे गति (मुनिका स्वरूप) पायी ॥ ५ ॥

रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी॥
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा॥

[शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! वह ज्ञानी मुनि था, अगस्त्य ऋषिके राक्षस हो गया था। बार-बार श्रीरामजीके चरणोंकी वन्दना करके वह मुनि आश्रमको चला गया ॥ ६ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥

इधर तीन दिन बीत गये, किन्तु जड समुद्र विनय नहीं मानता। तब
जी क्रोधसहित बोले—बिना भयके प्रीति नहीं होती! ॥ ५७ ॥

चौ०—लछिमन बान सरासन आनू। सोषौं बारिधि बिसिख
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर

हे लक्ष्मण! धनुष-बाण लाओ, मैं अग्निबाणसे समुद्रको सोख डालूँ। मूर्ख
कुटिलके साथ प्रीति, स्वाभाविक ही कंजूससे सुन्दर नीति (उदारताका उपदेश

ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति
क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा। ऊसर बीज बएँ फल

ममतामें फँसे हुए मनुष्यसे ज्ञानकी कथा, अत्यन्त लोभीसे वैराग्य
क्रोधीसे शम (शान्ति) की बात और कामीसे भगवान्‌की कथा, इनका
फल होता है जैसा ऊसरमें बीज बोनेसे होता है (अर्थात् ऊसरमें बीज
भाँति यह सब व्यर्थ जाता है) ॥ २ ॥

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर

ऐसा कहकर श्रीरघुनाथजीने धनुष चढ़ाया। यह मत लक्ष्मणजी
बहुत अच्छा लगा। प्रभुने भयानक [अग्नि] बाण सन्धान किया, जिससे
हृदयके अंदर अग्निकी ज्वाला उठी ॥ ३ ॥

मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब
कनक थार भरि मनि गन नाना। बिप्र रूप आयउ तजि

मगर, साँप तथा मछलियोंके समूह व्याकुल हो गये। जब समुद्र
जलते जाना, तब सोनेके थालमें अनेक मणियों (रत्नों) को भरकर अभि
कर वह ब्राह्मणके रूपमें आया ॥ ४ ॥

दो०—काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़जी ! सुनिये, चाहे कोई करोड़ों उपाय सींचे, पर केला तो काटनेपर ही फलता है। नीच विनयसे नहीं मानता, वह र ही झुकता है (रास्तेपर आता है)॥ ५८ ॥

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे॥
गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी॥

समुद्रने भयभीत होकर प्रभुके चरण पकड़कर कहा—हे नाथ ! मेरे सब (दोष) क्षमा कीजिये। हे नाथ ! आकाश, वायु, अग्नि, जल और —इन सबकी करनी स्वभावसे ही जड है॥ १ ॥

तव प्रेरित मायाँ उपजाए। सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए॥
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई। सो तेहि भाँति रहें सुख लहई॥

आपकी प्रेरणासे मायाने इन्हें सृष्टिके लिये उत्पन्न किया है, सब ग्रन्थोंने यही गाया सके लिये स्वामीकी जैसी आज्ञा है, वह उसी प्रकारसे रहनेमें सुख पाता है॥ २ ॥

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही॥
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥

प्रभुने अच्छा किया जो मुझे शिक्षा (दण्ड) दी। किन्तु मर्यादा (जीवोंका स्वभाव) भी ही बनायी हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री—ये सब दण्डके अधिकारी हैं।३।

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई। उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई॥
प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई। करौं सो बेगि जो तुम्हहि सोहाई॥

प्रभुके प्रतापसे मैं सूख जाऊँगा और सेना पार उतर जायगी, इसमें मेरी बड़ाई (मेरी मर्यादा नहीं रहेगी)। तथापि प्रभुकी आज्ञा अपेल है (अर्थात आज्ञाका उल्लंघन नहीं हो सकता) ऐसा वेद गाते हैं। अब आपको जो लगे, मैं तुरंत वही करूँ॥ ४ ॥

दो०—सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ॥ ५९ ॥

समुद्रके अत्यन्त विनीत वचन सुनकर कृपालु श्रीरामजीने मुसकराकर कहा—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे तात! जिस प्रकार वानरोंकी सेना पार उतर जाय, वह उपाय बताओ।

चौ०-नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसि
तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप

[समुद्रने कहा—] हे नाथ! नील और नल दो वानर भाई
लड़कपनमें ऋषिसे आशीर्वाद पाया था। उनके स्पर्श कर लेनेसे ही
पहाड़ भी आपके प्रतापसे समुद्रपर तैर जायँगे ॥ १ ॥

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई। करिहउँ बल अनुमान
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ। जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ

मैं भी प्रभुकी प्रभुताको हृदयमें धारण कर अपने बलके अनुसार
मुझसे बन पड़ेगा) सहायता करूँगा। हे नाथ! इस प्रकार समुद्रको
जिससे तीनों लोकोंमें आपका सुन्दर यश गाया जाय ॥ २ ॥

एहिं सर मम उत्तर तट बासी। हतहु नाथ खल नर अ
सुनि कृपाल सागर मन पीरा। तुरतहिं हरी राम

इस बाणसे मेरे उत्तर तटपर रहनेवाले पापके राशि दुष्ट मनुष्योंका व
कृपालु और रणधीर श्रीरामजीने समुद्रके मनकी पीड़ा सुनकर उसे तुरंत ही
(अर्थात् बाणसे उन दुष्टोंका वध कर दिया) ॥ ३ ॥

देखि राम बल पौरुष भारी। हरषि पयोनिधि भयउ
सकल चरित कहि प्रभुहि सुनावा। चरन बंदि पाथोधि

श्रीरामजीका भारी बल और पौरुष देखकर समुद्र हर्षित होकर सुखी हो ग
उन दुष्टोंका सारा चरित्र प्रभुको कह सुनाया। फिर चरणोंकी वन्दना करके समुद्र

छं०-निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
यह चरित कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ॥
सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना॥

समुद्र अपने घर चला गया, श्रीरघुनाथजीको यह मत (उसकी सलाह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection, Digitized by eGangotri

। यह चरित्र कलियुगके पापोंको हरनेवाला है, इसे तुलसीदासने अपनी बुद्धिके
ार गाया है । श्रीरघुनाथजीके गुणसमूह सुखके धाम, सन्देहका नाश करनेवाले
विषादका दमन करनेवाले हैं । अरे मूर्ख मन ! तू संसारका सब आशा-भरोसा
कर निरन्तर इन्हें गा और सुन ।

दो०—सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान ।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान ॥ ६० ॥

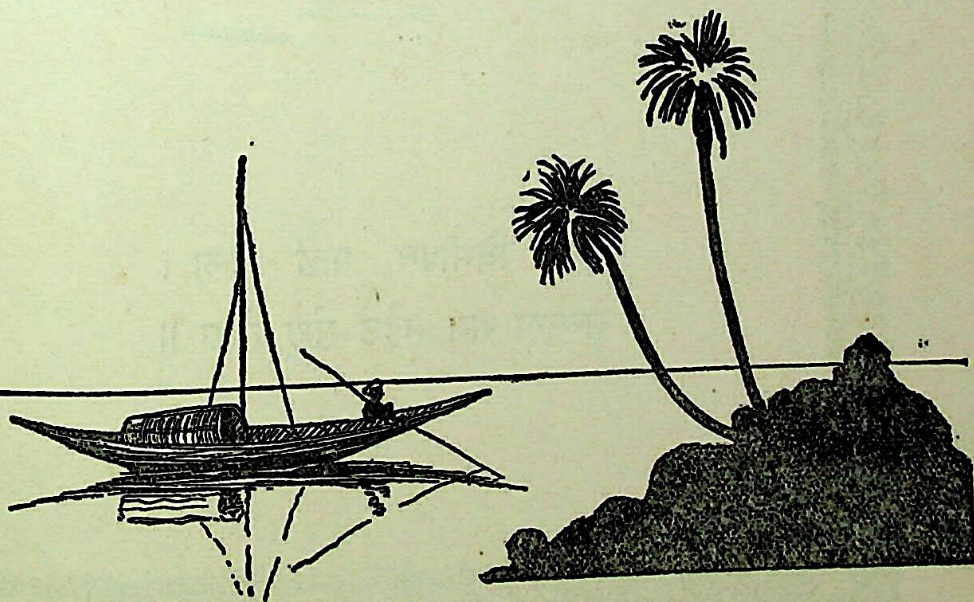
श्रीरघुनाथजीका गुणगान सम्पूर्ण सुन्दर मङ्गलोंका देनेवाला है । जो इसे आदर-
त सुनेंगे, वे बिना किसी जहाज (अन्यसाधन) के ही भवसागरको तर जायँगे ॥ ६० ॥

मासपारायण, चौबीसवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने पञ्चमः सोपानः समाप्तः ।

कलियुगके समस्त पापोंका नाश करनेवाले श्रीरामचरितमानसका
यह पाँचवाँ सोपान समाप्त हुआ ।

(सुन्दरकाण्ड समाप्त)



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरणागतवत्सलता



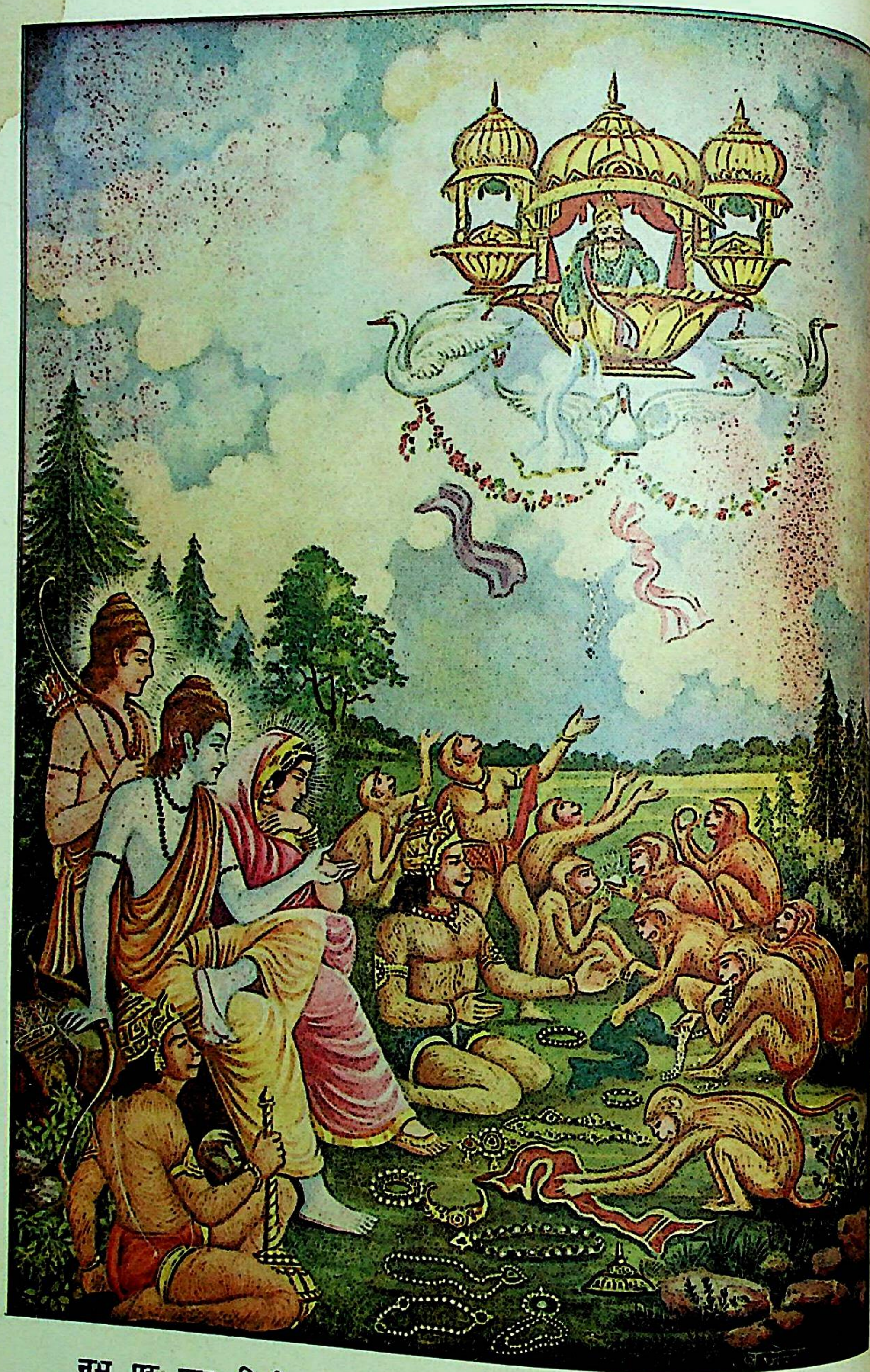
तुरत बिभीषन पाछें मेला ।
सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभीषणद्वारा वस्त्राभूषणोंकी वर्षा



नभ पर जाइ बिभीषन तबही। बरषि दिए मनि अंबर सबही॥
जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं। मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

षष्ठ सोपान

लंकाकाण्ड

श्लोक

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रं ज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम् ।
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं
वन्दे कन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम् ॥ १ ॥

कामदेवके शत्रु शिवजीके सेव्य, भव (जन्म-मृत्यु) के भयको हरनेवाले, ‍रूपी मतवाले हाथीके लिये सिंहके समान, योगियोंके स्वामी (योगीश्वर), ज्ञानके ‍ जानने योग्य, गुणोंकी निधि, अजेय, निर्गुण, निर्विकार, मायासे परे, देवताओंके ‍मी, दुष्टोंके वधमें तत्पर, ब्राह्मणवृन्दके एकमात्र देवता (रक्षक), जलवाले मेघके ‍न सुन्दर श्याम, कमलके-से नेत्रवाले, पृथ्वीपति (राजा) के रूपमें परमदेव ‍ामजीकी मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

शङ्खेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम् ।
काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम् ॥ २ ॥

शङ्ख और चन्द्रमाकी-सी कान्तिके अत्यन्त सुन्दर शरीरवाले, व्याघ्रचर्मके वस्त्रवाले, ‍लके समान [अथवा काले रंगके] भयानक सर्पोंका भूषण धारण करनेवाले, गङ्गा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और चन्द्रमाके प्रेमी, काशीपति, कलियुगके पाप-समूहका नाश करनेवाले, कल्पवृक्ष, गुणोंके निधान और कामदेवको भस्म करनेवाले पार्वतीपति श्रीशङ्करजीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम् ।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शङ्करः शं तनोतु मे ॥ ३ ॥

जो सत्पुरुषोंको अत्यन्त दुर्लभ कैवल्यमुक्तितक दे डालते हैं और जो दुष्टोंको दण्ड देनेवाले हैं, वे कल्याणकारी श्रीशम्भु मेरे कल्याणका विस्तार करें ॥ ३ ॥

दो०—लव निमेष परमानु जुग बरष कलप सर चंड।
भजसि न मन तेहि राम को कालु जासु कोदंड ॥

लव, निमेष, परमाणु, वर्ष, युग और कल्प जिनके प्रचण्ड बाण हैं और काल जिनका धनुष है, हे मन ! तू उन श्रीरामजीको क्यों नहीं भजता ?

सो०—सिंधु बचन सुनि राम सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ।
अब बिलंबु केहि काम करहु सेतु उतरै कटकु ॥

समुद्रके वचन सुनकर प्रभु श्रीरामजीने मन्त्रियोंको बुलाकर ऐसा कहा—अब विलम्ब किसलिये हो रहा है ? सेतु (पुल) तैयार करो, जिसमें सेना उतरे।

सुनहु भानुकुल केतु जामवंत कर जोरि कह।
नाथ नाम तव सेतु नर चढ़ि भव सागर तरहिं ॥

जाम्बवान्‌ने हाथ जोड़कर कहा—हे सूर्यकुलके ध्वजा-स्वरूप (कीर्तिको बढ़ानेवाले) श्रीरामजी ! सुनिये । हे नाथ ! [सबसे बड़ा] सेतु तो आपका नाम ही है, जिसपर चढ़कर (जिसका आश्रय लेकर) मनुष्य संसाररूपी समुद्रसे पार हो जाते हैं।

चौ०—यह लघु जलधि तरत कति बारा । अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा ॥
प्रभु प्रताप बड़वानल भारी । सोषेउ प्रथम पयोनिधि बारी ॥

फिर यह छोटा-सा समुद्र पार करनेमें कितनी देर लगेगी ? ऐसा सुनकर फिर पवनकुमार श्रीहनुमान्‌जीने कहा—प्रभुका प्रताप भारी बड़वानल (समुद्रकी आग) के समान है । इसने पहले समुद्रके जलको सोख लिया था ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब रिपु नारि रुदन जल धारा। भरेउ बहोरि भयउ तेहिं खारा॥
सुनि अति उकुति पवनसुत केरी। हरषे कपि रघुपति तन हेरी॥

परन्तु आपके शत्रुओंकी स्त्रियोंके आँसुओंकी धारासे यह फिर भर गया और खारा भी हो गया। हनुमान्‌जीकी यह अत्युक्ति (अलङ्कारपूर्ण युक्ति) वानर श्रीरघुनाथजीकी ओर देखकर हर्षित हो गये॥ २॥

जामवंत बोले दोउ भाई। नल नीलहि सब कथा सुनाई॥
राम प्रताप सुमिरि मन माहीं। करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं॥

जाम्बवान्‌ने नल-नील दोनों भाइयोंको बुलाकर उन्हें सारी कथा कह सुनायी कहा—] मनमें श्रीरामजीके प्रतापको स्मरण करके सेतु तैयार करो, [रामप्रतापसे] भी परिश्रम नहीं होगा॥ ३॥

बोलि लिए कपि निकर बहोरी। सकल सुनहु बिनती कछु मोरी॥
राम चरन पंकज उर धरहू। कौतुक एक भालु कपि करहू॥

फिर वानरोंके समूहको बुला लिया [और कहा—] आप सब लोग मेरी विनती सुनिये। अपने हृदयमें श्रीरामजीके चरणकमलोंको धारण कर लीजिये सब भालू और वानर एक खेल कीजिये॥ ४॥

धावहु मर्कट बिकट बरूथा। आनहु बिटप गिरिन्ह के जूथा॥
सुनि कपि भालु चले करि हूहा। जय रघुबीर प्रताप समूहा॥

विकट वानरोंके समूह (आप) दौड़ जाइये और वृक्षों तथा पर्वतोंके समूहोंको ड़ लाइये। यह सुनकर वानर और भालू हूह (हुंकार) करके और श्रीरघुनाथ- प्रतापसमूहकी [अथवा प्रतापके पुंज श्रीरामजीकी] जय पुकारते हुए चले॥ ५॥

दो०—अति उतंग गिरि पादप लीलहिं लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ॥ १॥

बहुत ऊँचे-ऊँचे पर्वतों और वृक्षोंको खेलकी तरह ही [उखाड़कर] उठा लेते और ला-लाकर नल-नीलको देते हैं। वे अच्छी तरह गढ़कर [सुन्दर] सेतु बनाते हैं।

—सैल बिसाल आनि कपि देहीं। कंदुक इव नल नील ते लेहीं॥
देखि सेतु अति सुंदर रचना। बिहसि कृपानिधि बोले बचना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वानर बड़े-बड़े पहाड़ ला-लाकर देते हैं और नल-नील उन्हें गेंद
लेते हैं। सेतुकी अत्यन्त सुन्दर रचना देखकर कृपासिन्धु श्रीरामजी हँसकर व

परम रम्य उत्तम यह धरनी। महिमा अमित जाइ नहिं
करिहउँ इहाँ संभु थापना। मोरे हृदयँ परम

यह (यहाँकी) भूमि परम रमणीय और उत्तम है। इसकी असीम महिमा
की जा सकती। मैं यहाँ शिवजीकी स्थापना करूँगा। मेरे हृदयमें यह महान् सं

सुनि कपीस बहु दूत पठाए। मुनिबर सकल बोलि ले
लिंग थापि बिधिवत करि पूजा। सिव समान प्रिय मोहि न

श्रीरामजीके वचन सुनकर वानरराज सुग्रीवने बहुत-से दूत भेजे,
मुनियोंको बुलाकर ले आये। शिवलिङ्गकी स्थापना करके विधिपूर्वक
किया। [फिर भगवान् बोले—] शिवजीके समान मुझको दूसरा कोई प्रिय

सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहि न
संकर बिमुख भगति चह मोरी। सो नारकी मूढ़ मति

जो शिवसे द्रोह रखता है और मेरा भक्त कहलाता है, वह मनु
भी मुझे नहीं पाता। शङ्करजीसे विमुख होकर (विरोध करके) जो मेरी भ
है, वह नरकगामी, मूर्ख और अल्पबुद्धि है॥ ४॥

दो०—संकरप्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुँ बास॥

जिनको शङ्करजी प्रिय हैं, परन्तु जो मेरे द्रोही हैं; एवं जो शिवजीके द्रो
मेरे दास [बनना चाहते] हैं, वे मनुष्य कल्पभर घोर नरकमें निवास करते

चौ०—जे रामेस्वर दरसनु करिहहिं। ते तनु तजि मम लोक सिध
जो गंगाजलु आनि चढ़ाइहि। सो साजुज्य मुक्ति नर

जो मनुष्य [मेरे स्थापित किये हुए इन] रामेश्वरजीका दर्शन करेंगे,
छोड़कर मेरे लोकको जायँगे। और जो गङ्गाजल लाकर इनपर चढ़ावेगा,
सायुज्य मुक्ति पावेगा (अर्थात् मेरे साथ एक हो जायगा)॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होइ अकाम जो छल तजि सेइहि। भगति मोरि तेहि संकर देइहि॥
मम कृत सेतु जो दरसनु करिही। सो बिनु श्रम भवसागर तरिही॥

जो छल छोड़कर और निष्काम होकर श्रीरामेश्वरजीकी सेवा करेंगे, उन्हें शङ्करजी भक्ति देंगे। और जो मेरे बनाये सेतुका दर्शन करेगा, वह बिना ही परिश्रम रूपी समुद्रसे तर जायगा॥ २॥

राम बचन सब के जिय भाए। मुनिबर निज निज आश्रम आए॥
गिरिजा रघुपति कै यह रीती। संतत करहिं प्रनत पर प्रीती॥

श्रीरामजीके वचन सबके मनको अच्छे लगे। तदनन्तर वे श्रेष्ठ मुनि अपने-आश्रमोंको लौट आये। [शिवजी कहते हैं—] हे पार्वती! श्रीरघुनाथजीकी रीति है कि वे शरणागतपर सदा प्रीति करते हैं॥ ३॥

बाँधा सेतु नील नल नागर। राम कृपाँ जसु भयउ उजागर॥
बूड़हिं आनहि बोरहिं जेई। भए उपल बोहित सम तेई॥

चतुर नल और नीलने सेतु बाँधा। श्रीरामजीकी कृपासे उनका यह [उज्ज्वल] सर्वत्र फैल गया। जो पत्थर आप डूबते हैं और दूसरोंको डुबा देते हैं, वे ही के समान [स्वयं तैरनेवाले और दूसरोंको पार ले जानेवाले] हो गये॥४॥

महिमा यह न जलधि कइ बरनी। पाहन गुन न कपिन्ह कइ करनी॥

यह न तो समुद्रकी महिमा वर्णन की गयी है, न पत्थरोंका गुण है और न ोंकी ही कोई करामात है॥ ५॥

दो०—श्री रघुबीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन॥ ३॥

श्रीरघुवीरके प्रतापसे पत्थर भी समुद्रपर तैर गये। ऐसे श्रीरामजीको छोड़कर किसी दूसरे स्वामीको जाकर भजते हैं वे [निश्चय ही] मन्दबुद्धि हैं॥ ३॥

—बाँधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा। देखि कृपानिधि के मन भावा॥
चली सेन कछु बरनि न जाई। गर्जहिं मर्कट भट समुदाई॥

नल-नीलने सेतु बाँधकर उसे बहुत मज़बूत बनाया। देखनेपर वह कृपानिधान

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामजीके मनको [बहुत ही] अच्छा लगा। सेना चली, जिसका कु
हो सकता। योद्धा वानरोंके समुदाय गरज रहे हैं ॥ १ ॥

सेतुबंध ढिग चढ़ि रघुराई। चितव कृपाल सिंधु
देखन कहुँ प्रभु करुना कंदा। प्रगट भए सब जलच

कृपालु श्रीरघुनाथजी सेतुबन्धके तटपर चढ़कर समुद्रका विस्तार दे
करुणाकन्द (करुणाके मूल) प्रभुके दर्शनके लिये सब जलचरोंके
हो गये (जलके ऊपर निकल आये) ॥ २ ॥

मकर नक्र नाना झष ब्याला। सत जोजन तन परम
अइसेउ एक तिन्हहि जे खाहीं। एकन्ह कें डर तेपि

बहुत तरहके मगर, नाक (घड़ियाल), मच्छ और सर्प थे, जि
योजनके बहुत बड़े विशाल शरीर थे। कुछ ऐसे भी जन्तु थे जो उन
जायँ। किसी-किसीके डरसे तो वे भी डर रहे थे ॥ ३ ॥

प्रभुहि बिलोकहिं टरहिं न टारे। मन हरषित सब भए
तिन्ह कीं ओट न देखिअ बारी। मगन भए हरि रूप

वे सब [वैर-विरोध भूलकर] प्रभुके दर्शन कर रहे हैं, हटानेसे भी
सबके मन हर्षित हैं; सब सुखी हो गये। उनकी आड़के कारण जल न
पड़ता। वे सब भगवान्‌का रूप देखकर [आनन्द और प्रेममें] मग्न हो

चला कटकु प्रभु आयसु पाई। को कहि सक कपि दल

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर सेना चली। वानर-सेना
(अत्यधिक संख्या) को कौन कह सकता है ? ॥ ५ ॥

दो०—सेतुबंध भइ भीर अति कपि नभ पंथ उड़ाहिं।
अपर जलचरन्हि ऊपर चढ़ि चढ़ि पारहि जाहिं ॥

सेतुबन्धपर बड़ी भीड़ हो गयी, इससे कुछ वानर आकाशमार्गसे उड़ते
दूसरे [कितने ही] जलचर जीवोंपर चढ़-चढ़कर पार जा रहे हैं ॥ ४ ॥

चौ०—अस कौतुक बिलोकि द्वौ भाई। बिहँसि चले कृपाल
सेन सहित उतरे रघुबीरा। कहि न जाइ कपि जूथ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृपालु रघुनाथजी [तथा लक्ष्मणजी] दोनों भाई ऐसा कौतुक देखकर हँसते
ले । श्रीरघुवीर सेनासहित समुद्रके पार हो गये । वानरों और उनके
नेयोंकी भीड़ कही नहीं जा सकती ॥ १ ॥

सिंधु पार प्रभु डेरा कीन्हा । सकल कपिन्ह कहुँ आयसु दीन्हा ॥
खाहु जाइ फल मूल सुहाए । सुनत भालु कपि जहँ तहँ धाए ॥

प्रभुने समुद्रके पार डेरा डाला और सब वानरोंको आज्ञा दी कि तुम जाकर सुन्दर
ल खाओ । यह सुनते ही रीछ-वानर जहाँ-तहाँ दौड़ पड़े ॥ २ ॥

सब तरु फरे राम हित लागी । रितु अरु कुरितु काल गति त्यागी ॥
खाहिं मधुर फल बिटप हलावहिं । लंका सन्मुख सिखर चलावहिं ॥

श्रीरामजीके हित (सेवा) के लिये सब वृक्ष ऋतु-कुऋतु—समयकी गतिको
र फल उठे । वानर-भालू मीठे-मीठे फल खा रहे हैं, वृक्षोंको हिला रहे हैं
र्वतोंके शिखरोंको लङ्काकी ओर फेंक रहे हैं ॥ ३ ॥

जहँ कहुँ फिरत निसाचर पावहिं । घेरि सकल बहु नाच नचावहिं ॥
दसनन्हि काटि नासिका काना । कहि प्रभु सुजसु देहिं तब जाना ॥

घूमते-फिरते जहाँ-कहीं किसी राक्षसको पा जाते हैं तो सब उसे घेरकर खूब नाच
हैं और दाँतोंसे उसके नाक-कान काटकर, प्रभुका सुयश कहकर [अथवा
कर] तब उसे जाने देते हैं ॥ ४ ॥

जिन्ह कर नासा कान निपाता । तिन्ह रावनहि कही सब बाता ॥
सुनत श्रवन बारिधि बंधाना । दस मुख बोलि उठा अकुलाना ॥

जिन राक्षसोंके नाक और कान काट डाले गये, उन्होंने रावणसे सब समाचार कहा ।
[पर सेतु] का बाँधा जाना कानोंसे सुनते ही रावण घबड़ाकर दसों मुखोंसे बोल उठा--

दो०—बाँध्यो बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस ।
सत्य तोयनिधि कंपति उदधि पयोधि नदीस ॥ ५ ॥

वननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिंधु, वारीश, तोयनिधि, कंपति, उदधि, पयोधि,
को क्या सचमुच ही बाँध लिया ? ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०-निज बिकलता बिचारि बहोरी। बिहँसि गयउ गृह करि
मंदोदरीं सुन्यो प्रभु आयो। कौतुकहीं पाथोधि

फिर अपनी व्याकुलताको समझकर [ऊपरसे] हँसता हुआ, भय
रावण महलको गया। [जब] मन्दोदरीने सुना कि प्रभु श्रीरामजी आ
उन्होंने खेलमें ही समुद्रको बँधवा लिया है, ॥ १ ॥

कर गहि पतिहि भवन निज आनी। बोली परम मनोहर
चरन नाइ सिरु अंचलु रोपा। सुनहु बचन पिय परिहरि

[तब] वह हाथ पकड़कर, पतिको अपने महलमें लाकर परम म
बोली। चरणोंमें सिर नवाकर उसने अपना आँचल पसारा और कहा—
क्रोध त्यागकर मेरा वचन सुनिये ॥ २ ॥

नाथ बयरु कीजे ताही सों। बुधि बल सकिअ जीति जा
तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा। खलु खद्योत दिनकरहि

हे नाथ! वैर उसीके साथ करना चाहिये जिससे बुद्धि और बलके द्वारा
आपमें और श्रीरघुनाथजीमें निश्चय ही कैसा अन्तर है, जैसा जुगनू और सू

अतिबल मधु कैटभ जेहिं मारे। महाबीर दितिसुत
जेहिं बलि बाँधि सहसभुज मारा। सोइ अवतरेउ हरन महि

जिन्होंने [विष्णुरूपसे] अत्यन्त बलवान् मधु और कैटभ [
और [वाराह और नृसिंहरूपसे] महान् शूरवीर दितिके पुत्रों (हि
हिरण्यकशिपु) का संहार किया; जिन्होंने [वामनरूपसे] बलिको बाँधा और [
रूपसे] सहस्रबाहुको मारा, वे ही [भगवान्] पृथ्वीका भार हरण क
[रामरूपमें] अवतीर्ण (प्रकट) हुए हैं! ॥ ४ ॥

तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जाकें

हे नाथ! उनका विरोध न कीजिये, जिनके हाथमें काल, कर्म और जीव स

दो०-रामहि सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राज समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ॥

[श्रीरामजीके] चरणकमलोमें सिर नवाकर (उनकी शरणमें जाकर) उनको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ीजिये और आप पुत्रको राज्य देकर वनमें जाकर श्रीरघुनाथजीका भजन कीजिये।

-नाथ दीनदयाल रघुराई। बाघउ सनमुख गएँ न खाई॥
चाहिअ करन सो सब करि बीते। तुम्ह सुर असुर चराचर जीते॥

हे नाथ! श्रीरघुनाथजी तो दीनोंपर दया करनेवाले हैं। सम्मुख (शरण) जानेपर घ भी नहीं खाता। आपको जो कुछ करना चाहिये था, वह सब आप कर चुके। देवता, राक्षस तथा चर-अचर सभीको जीत लिया॥ १॥

संत कहहिं असि नीति दसानन। चौथेंपन जाइहि नृप कानन॥
तासु भजनु कीजिअ तहँ भर्ता। जो कर्ता पालक संहर्ता॥

हे दशमुख! संतजन ऐसी नीति कहते हैं कि चौथेपन (बुढ़ापे) में राजाको चला जाना चाहिये। हे स्वामी! वहाँ (वनमें) आप उनका भजन कीजिये ृष्टिके रचनेवाले, पालनेवाले और संहार करनेवाले हैं॥ २॥

सोइ रघुबीर प्रनत अनुरागी। भजहु नाथ ममता सब त्यागी॥
मुनिबर जतनु करहिं जेहि लागी। भूप राजु तजि होहिं बिरागी॥

हे नाथ! आप विषयोंकी सारी ममता छोड़कर उन्हीं शरणागतपर प्रेम करने-भगवान्‌का भजन कीजिये। जिनके लिये श्रेष्ठ मुनि साधन करते हैं और राजा छोड़कर वैरागी हो जाते हैं—॥ ३॥

सोइ कोसलाधीस रघुराया। आयउ करन तोहि पर दाया॥
जौं पिय मानहु मोर सिखावन। सुजसु होइ तिहुँ पुर अति पावन॥

वही कोसलाधीश श्रीरघुनाथजी आपपर दया करने आये हैं। हे प्रियतम! यदि आप सीख मान लेंगे, तो आपका अत्यन्त पवित्र और सुन्दर यश तीनों लोकोंमें फैल जायगा।

दो०—अस कहि नयन नीर भरि गहि पद कंपित गात।
नाथ भजहु रघुनाथहि अचल होइ अहिवात॥ ७॥

ऐसा कहकर, नेत्रोंमें [करुणाका] जल भरकर और पतिके चरण पकड़कर, ते हुए शरीरसे मन्दोदरीने कहा—हे नाथ! श्रीरघुनाथजीका भजन कीजिये, ससे मेरा सुहाग अचल हो जाय॥ ७॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०–तब रावन मयसुता उठाई। कहै लाग खल निज
सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना। जग जोधा को मोहि

तब रावणने मन्दोदरीको उठाया और वह दुष्ट उससे अपनी प्रभुता कह
हे प्रिये! सुन, तूने व्यर्थ ही भय मान रक्खा है। बता तो जगत्में मेरे समान यो

बरुन कुबेर पवन जम काला। भुज बल जितेउँ सकल
देव दनुज नर सब बस मोरें। कवन हेतु उपजा भ

वरुण, कुबेर, पवन, यमराज आदि सभी दिक्पालोंको तथा कालको
अपनी भुजाओंके बलसे जीत रक्खा है। देवता, दानव और मनुष्य सभी
हैं। फिर तुझको यह भय किस कारण उत्पन्न हो गया?॥ २॥

नाना बिधि तेहि कहेसि बुझाई। सभाँ बहोरि बैठ सो
मंदोदरीं हृदयँ अस जाना। काल बस्य उपजा अ

मन्दोदरीने उसे बहुत तरहसे समझाकर कहा [किन्तु रावणने उस
बात न सुनी] और वह फिर सभामें जाकर बैठ गया। मन्दोदरीने हृदयमें
लिया कि कालके वश होनेसे पतिको अभिमान हो गया है॥ ३॥

सभाँ आइ मंत्रिन्ह तेहिं बूझा। करब कवन बिधि रिपु
कहहिं सचिव सुनु निसिचर नाहा। बार बार प्रभु पूछहु

सभामें आकर उसने मन्त्रियोंसे पूछा कि शत्रुके साथ किस प्रकारसे युद्ध क
मन्त्री कहने लगे—हे राक्षसोंके नाथ! हे प्रभु! सुनिये, आप बार-बार क्या पू

कहहु कवन भय करिअ बिचारा। नर कपि भालु अहार

कहिये तो [ऐसा] कौन-सा बड़ा भय है, जिसका विचार किया जाय
बात ही क्या है?) मनुष्य और वानर-भालू तो हमारे भोजन [की सामग्री

दो०–सब के बचन श्रवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि।
नीति बिरोध न करिअ प्रभु मंत्रिन्ह मति अति थोरि॥

कानोंसे सबके वचन सुनकर [रावणका पुत्र] प्रहस्त हाथ जोड़कर कहने
हे प्रभु! नीतिके विरुद्ध कुछ भी नहीं करना चाहिये, मन्त्रियोंमें बहुत ही थोड़ी बु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहहिं सचिव सठ ठकुरसोहाती । नाथ न पूर आव एहि भाँती ॥
बारिधि नाघि एक कपि आवा । तासु चरित मन महुँ सबु गावा ॥

ये सभी मूर्ख (खुशामदी) मन्त्री ठकुरसुहाती (मुँहदेखी) कह रहे हैं । हे इस प्रकारकी बातोंसे पूरा नहीं पड़ेगा । एक ही बंदर समुद्र लाँघकर आया उसका चरित्र सब लोग अब भी मन-ही-मन गाया करते हैं (स्मरण किया हैं) ! ॥ १ ॥

छुधा न रही तुम्हहि तब काहू । जारत नगरु कस न धरि खाहू ॥
सुनत नीक आगें दुख पावा । सचिवन अस मत प्रभुहि सुनावा ॥

उस समय तुमलोगोंमेंसे किसीको भूख न थी ? [बंदर तो तुम्हारा भोजन ही फिर] नगर जलाते समय उसे पकड़कर क्यों नहीं खा लिया ? इन मन्त्रियोंने (आप) को ऐसी सम्मति सुनायी है जो सुननेमें अच्छी है पर जिससे आगे कर दुःख पाना होगा ॥ २ ॥

जेहिं बारीस बँधायउ हेला । उतरेउ सेन समेत सुबेला ॥
सो भनु मनुज खाब हम भाई । बचन कहहिं सब गाल फुलाई ॥

जिसने खेल-ही-खेलमें समुद्र बँधा लिया और जो सेनासहित सुबेल पर्वतपर उतरा । हे भाई ! कहो वह मनुष्य है, जिसे कहते हो कि हम खा लेंगे ? सब फुला-फुलाकर (पागलोंकी तरह) वचन कह रहे हैं ! ॥ ३ ॥

तात बचन मम सुनु अति आदर । जनि मन गुनहु मोहि करि कादर ॥
प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं । ऐसे नर निकाय जग अहहीं ॥

हे तात ! मेरे वचनोंको बहुत आदरसे (बड़े गौरसे) सुनिये । मुझे मनमें र न समझ लीजियेगा । जगत्‌में ऐसे मनुष्य झुंड-के-झुंड (बहुत अधिक) हैं, प्यारी (मुँहपर मीठी लगनेवाली) बात ही सुनते और कहते हैं ॥ ४ ॥

बचन परम हित सुनत कठोरे । सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे ॥
प्रथम बसीठ पठउ सुनु नीती । सीता देइ करहु पुनि प्रीती ॥

हे प्रभो ! सुननेमें कठोर परन्तु [परिणाममें] परम हितकारी वचन जो सुनते और कहते हैं, वे मनुष्य बहुत ही थोड़े हैं । नीति सुनिये, [उसके अनुसार] पहले

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दूत भेजिये, और [फिर] सीताको देकर श्रीरामजीसे प्रीति (मेल) कर

दो०—नारि पाइ फिरि जाहिं जौं तौ न बढ़ाइअ रारि।
नाहिं त सन्मुख समर महि तात करिअ हठि मारि ॥

यदि वे स्त्री पाकर लौट जायँ, तब तो [व्यर्थ] झगड़ा न बढ़ाइ (यदि न फिरें तो) हे तात ! सम्मुख युद्धभूमिमें उनसे हठपूर्वक (काट कीजिये ॥ ९ ॥

चौ०—यह मत जौं मानहु प्रभु मोरा । उभय प्रकार सुजसु ज
सुत सन कह दसकंठ रिसाई । असि मति सठ केहिं तोहि

हे प्रभो ! यदि आप मेरी यह सम्मति मानेंगे, तो जगत्‌में दोनों ही प्र सुयश होगा । रावणने गुस्सेमें भरकर पुत्रसे कहा—अरे मूर्ख ! तुझे ऐसी सिखायी ? ॥ १ ॥

अबहीं ते उर संसय होई । बेनुमूल सुत भयहु
सुनि पितु गिरा परुष अति घोरा । चला भवन कहि बचन

अभीसे हृदयमें सन्देह (भय) हो रहा है ? हे पुत्र ! तू तो बाँ घमोई हुआ (तू मेरे वंशके अनुकूल या अनुरूप नहीं हुआ) । पिता घोर और कठोर वाणी सुनकर प्रहस्त ये कड़े वचन कहता हुआ घरको चला

हित मत तोहि न लागत कैसें । काल बिबस कहुँ भेषज
संध्या समय जानि दससीसा । भवन चलेउ निरखत भुज

हितकी सलाह आपको कैसे नहीं लगती (आपपर कैसे असर नहीं जैसे मृत्युके वश हुए [रोगी] को दवा नहीं लगती । सन्ध्याका समय रावण अपनी बीसों भुजाओंको देखता हुआ महलको चला ॥ ३ ॥

लंका सिखर उपर आगारा । अति बिचित्र तहँ होइ अ
बैठ जाइ तेहिं मंदिर रावन । लागे किंनर गुन गन

लंकाकी चोटीपर एक अत्यन्त विचित्र महल था । वहाँ नाच-गानका जमता था । रावण उस महलमें जाकर बैठ गया । किन्नर उसके गु गाने लगे ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाजहिं ताल पखाउज बीना। नृत्य करहिं अपछरा प्रबीना॥

ताल (करताल), पखावज (मृदंग) और वीणा बज रहे हैं। नृत्यमें प्रवीण अप्सराएँ नाच रही हैं॥ ५॥

दो०—सुनासीर सत सरिस सो संतत करइ बिलास।
परम प्रबल रिपु सीस पर तद्यपि सोच न त्रास॥ १०॥

वह निरन्तर सैकड़ों इन्द्रोंके समान भोग-विलास करता रहता है। यद्यपि [श्रीरामजी-सरीखा] अत्यन्त प्रबल शत्रु सिरपर है, फिर भी उसको न तो चिन्ता है और न डर ही है॥ १०॥

इहाँ सुबेल सैल रघुबीरा। उतरे सेन सहित अति भीरा॥
सिखर एक उतंग अति देखी। परम रम्य सम सुभ्र बिसेषी॥

यहाँ श्रीरघुवीर सुबेल पर्वतपर सेनाकी बड़ी भीड़ (बड़े समूह) के साथ उतरे। पर्वतका एक बहुत ऊँचा, परम रमणीय, समतल और विशेषरूपसे उज्ज्वल शिखर देखकर—॥ १॥

तहँ तरु किसलय सुमन सुहाए। लछिमन रचि निज हाथ डसाए॥
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला। तेहिं आसन आसीन कृपाला॥

वहाँ लक्ष्मणजीने वृक्षोंके कोमल पत्ते और सुन्दर फूल अपने हाथोंसे सजाकर बिछा दिये। उसपर सुन्दर और कोमल मृगछाला बिछा दी। उसी आसनपर कृपालु श्रीरामजी विराजमान थे॥ २॥

प्रभु कृत सीस कपीस उछंगा। बाम दहिन दिसि चाप निषंगा॥
दुहुँ कर कमल सुधारत बाना। कह लंकेस मंत्र लगि काना॥

प्रभु श्रीरामजी वानरराज सुग्रीवकी गोदमें अपना सिर रक्खे हैं। उनके बायीं ओर धनुष तथा दाहिनी ओर तरकस [रक्खा] है। वे अपने दोनों कर-कमलोंसे बाण सुधार रहे हैं। विभीषणजी कानोंसे लगकर सलाह कर रहे हैं॥ ३॥

बड़भागी अंगद हनुमाना। चरन कमल चापत बिधि नाना॥
प्रभु पाछें लछिमन बीरासन। कटि निषंग कर बान सरासन॥

परम भाग्यशाली अंगद और हनुमान् अनेकों प्रकारसे प्रभुके चरणकमलोंको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दबा रहे हैं। लक्ष्मणजी कमरमें तरकस कसे और हाथोंमें धनुष-बाण लि[…]
प्रभुके पीछे सुशोभित हैं ॥ ४ ॥

दो०—एहि बिधि कृपा रूप गुन धाम रामु आसीन।
धन्य ते नर एहिं ध्यान जे रहत सदा लयलीन ॥[…]

इस प्रकार कृपा, रूप (सौन्दर्य) और गुणोंके धाम श्रीरामजी विरा[…] वे मनुष्य धन्य हैं जो सदा इस ध्यानमें लौ लगाये रहते हैं ॥ ११ ([क]) ॥

पूरब दिसा बिलोकि प्रभु देखा उदित मयंक।
कहत सबहि देखहु ससिहि मृगपति सरिस असंक ॥[…]

पूर्व दिशाकी ओर देखकर प्रभु श्रीरामजीने चन्द्रमाको उदय हुआ [देखा।] तब वे सबसे कहने लगे—चन्द्रमाको तो देखो। कैसा सिंह[के समान] निडर है ! ॥ ११ (ख) ॥

चौ०—पूरब दिसि गिरिगुहा निवासी। परम प्रताप तेज बल [राशी ॥]
मत्त नाग तम कुंभ बिदारी। ससि केसरी गगन बन[चारी ॥]

पूर्व दिशारूपी पर्वतकी गुफामें रहनेवाला, अत्यन्त प्रताप, तेज औ[र बलकी] राशि यह चन्द्रमारूपी सिंह अन्धकाररूपी मतवाले हाथीके मस्तकको वि[दीर्ण करके] आकाशरूपी वनमें निर्भय विचर रहा है ! ॥ १ ॥

बिथुरे नभ मुकुताहल तारा। निसि सुंदरी केर [सिंगारा ॥]
कह प्रभु ससि महुँ मेचकताई। कहहु काह निज निज मति [भाई ॥]

आकाशमें बिखरे हुए तारे मोतियोंके समान हैं, जो रात्रिरूपी सुन्द[री के] श्रृङ्गार हैं। प्रभुने कहा—भाइयो ! चन्द्रमामें जो कालापन है वह क्या है? अपनी बुद्धिके अनुसार कहो ॥ २ ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। ससि महुँ प्रगट भूमि कै [झाँई ॥]
मारेउ राहु ससिहि कह कोई। उर महँ परी स्यामता [सोई ॥]

सुग्रीवने कहा—हे रघुनाथजी ! सुनिये। चन्द्रमामें पृथ्वीकी छाया दि[ख] रही है। किसीने कहा—चन्द्रमाको राहुने मारा था। वही [चोटका] का[ला दाग] हृदयपर पड़ा हुआ है ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोउ कह जब बिधि रति मुख कीन्हा । सार भाग ससि कर हरि लीन्हा ॥
छिद्र सो प्रगट इंदु उर माहीं । तेहि मग देखिअ नभ परिछाहीं ॥

कोई कहता है—जब ब्रह्माने [कामदेवकी स्त्री] रतिका मुख बनाया, तब चन्द्रमाका सार भाग निकाल लिया [जिससे रतिका मुख तो परम सुन्दर बन परन्तु चन्द्रमाके हृदयमें छेद हो गया] वही छेद चन्द्रमाके हृदयमें वर्तमान जिसकी राहसे आकाशकी काली छाया उसमें दिखायी पड़ती है ॥ ४ ॥

प्रभु कह गरल बंधु ससि केरा । अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा ॥
बिष संजुत कर निकर पसारी । जारत बिरहवंत नर नारी ॥

प्रभु श्रीरामजीने कहा—विष चन्द्रमाका बहुत प्यारा भाई है । इसीसे उसने अपने हृदयमें स्थान दे रक्खा है । विषयुक्त अपने किरणसमूहको फैलाकर वियोगी नर-नारियोंको जलाता रहता है ॥ ५ ॥

दो०—कह हनुमंत सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय दास ।
तव मूरति बिधु उर बसति सोइ स्यामता अभास ॥ १२ (क) ॥

हनुमान्‌जीने कहा—हे प्रभो ! सुनिये, चन्द्रमा आपका प्रिय दास है । आपकी श्याम मूर्ति चन्द्रमाके हृदयमें बसती है, वही श्यामताकी झलक मामें है ॥ १२ (क) ॥

नवाह्नपारायण, सातवाँ विश्राम

पवन तनय के बचन सुनि बिहँसे रामु सुजान ।
दच्छिन दिसि अवलोकि प्रभु बोले कृपा निधान ॥ १२(ख) ॥

पवनपुत्र हनुमान्‌जीके वचन सुनकर सुजान श्रीरामजी हँसे । फिर दक्षिणकी देखकर कृपानिधान प्रभु बोले—॥ १२ (ख) ॥

देखु बिभीषन दच्छिन आसा । घन घमंड दामिनी बिलासा ॥
मधुर मधुर गरजइ घन घोरा । होइ बृष्टि जनि उपल कठोरा ॥

हे विभीषण ! दक्षिण दिशाकी ओर देखो, बादल कैसा घुमड़ रहा है और चमक रही है । भयानक बादल मीठे-मीठे (हल्के-हल्के) स्वरसे गरज रहा कहीं कठोर ओलोंकी वर्षा न हो ! ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहत बिभीषन सुनहु कृपाला। होइ न तड़ित न बारिद
लंका सिखर उपर आगारा। तहँ दसकंधर देख

विभीषण बोले—हे कृपालु ! सुनिये। यह न तो बिजली है, न
घटा। लंकाकी चोटीपर एक महल है। दशग्रीव रावण वहाँ [नाच
अखाड़ा देख रहा है ॥ २ ॥

छत्र मेघडंबर सिर धारी। सोइ जनु जलद घटा अति
मंदोदरी श्रवन ताटंका। सोइ प्रभु जनु दामिनी

रावणने सिरपर मेघडंबर (बादलोंके डंबर-जैसा विशाल और का
धारण कर रक्खा है। वही मानो बादलोंकी अत्यन्त काली घटा है।
कानोंमें जो कर्णफूल हिल रहे हैं, हे प्रभो ! वही मानो बिजली चमक रही

बाजहिं ताल मृदंग अनूपा। सोइ रव मधुर सुनहु सु
प्रभु मुसुकान समुझि अभिमाना। चाप चढ़ाइ बान

हे देवताओंके सम्राट् ! सुनिये, अनुपम ताल और मृदंग बज रहे
मधुर [गर्जन] ध्वनि है। रावणका अभिमान समझकर प्रभु मुसकराये
धनुष चढ़ाकर उसपर बाणका सन्धान किया ॥ ४ ॥

दो०—छत्र मुकुट ताटंक तब हते एकहीं बान।
सब कें देखत महि परे मरमु न कोऊ जान ॥ १

और एक ही बाणसे [रावणके] छत्र-मुकुट और [मन्दोदरीके
काट गिराये। सबके देखते-देखते वे जमीनपर आ पड़े, पर इसका भेद
किसीने नहीं जाना ॥ १३ (क) ॥

अस कौतुक करि राम सर प्रबिसेउ आइ निषंग।
रावन सभा ससंक सब देखि महा रसभंग ॥ १

ऐसा चमत्कार करके श्रीरामजीका बाण [वापस] आकर (फिर
जा घुसा। यह महान् रस-भंग (रंगमें भंग) देखकर रावणकी सारी स
हो गयी ॥ १३ (ख) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

—कंप न भूमि न मरुत बिसेषा । अस्त्र सस्त्र कछु नयन न देखा ॥
सोचहिं सब निज हृदय मझारी । असगुन भयउ भयंकर भारी ॥

न भूकम्प हुआ, न बहुत जोरकी हवा (आँधी) चली । न कोई अस्त्र-शस्त्र नेत्रोंसे देखे । [फिर ये छत्र, मुकुट और कर्णफूल कैसे कटकर गिर पड़े ?] अपने-अपने हृदयमें सोच रहे हैं कि यह बड़ा भयङ्कर अपशकुन हुआ ! ॥ १ ॥

दसमुख देखि सभा भय पाई । बिहसि बचन कह जुगुति बनाई ॥
सिरउ गिरे संतत सुभ जाही । मुकुट परे कस असगुन ताही ॥

सभाको भयभीत देखकर रावणने हँसकर युक्ति रचकर ये वचन कहे—सिरोंका ना भी जिसके लिये निरन्तर शुभ होता रहा है, उसके लिये मुकुटका गिरना शकुन कैसा ? ॥ २ ॥

सयन करहु निज निज गृह जाई । गवने भवन सकल सिर नाई ॥
मंदोदरी सोच उर बसेऊ । जब ते श्रवनपूर महि खसेऊ ॥

अपने-अपने घर जाकर सो रहो [डरनेकी कोई बात नहीं है] । तब सब लोग सिर कर घर गये । जबसे कर्णफूल पृथ्वीपर गिरा, तबसे मन्दोदरीके हृदयमें सोच बस गया ।

सजल नयन कह जुग कर जोरी । सुनहु प्रानपति बिनती मोरी ॥
कंत राम बिरोध परिहरहू । जानि मनुज जनि हठ मन धरहू ॥

नेत्रोंमें जल भरकर, दोनों हाथ जोड़कर वह [रावणसे] कहने लगी—हे नाथ ! मेरी विनती सुनिये । हे प्रियतम ! श्रीरामसे विरोध छोड़ दीजिये । उन्हें य जानकर मनमें हठ न पकड़े रहिये ॥ ४ ॥

दो०—बिस्वरूप रघुबंस मनि करहु बचन बिस्वासु ।
लोक कल्पना बेद कर अंग अंग प्रति जासु ॥ १४ ॥

मेरे इन वचनोंपर विश्वास कीजिये कि वे रघुकुलके शिरोमणि श्रीरामचन्द्रजी रूप हैं—(यह सारा विश्व उन्हींका रूप है) वेद जिनके अङ्ग-अङ्गमें लोकोंकी ना करते हैं ॥ १४ ॥

—पद पाताल सीस अज धामा । अपर लोक अँग अँग बिश्रामा ॥
भृकुटि बिलास भयंकर काला । नयन दिवाकर कच घन माला ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पाताल [जिन विश्वरूप भगवान्‌का] चरण है, ब्रह्मलोक सिर है, अ
सब) लोकोंका विश्राम (स्थिति) जिनके अन्य भिन्न-भिन्न अङ्गोंपर है । भ
जिनका भृकुटिसंचालन (भौंहोंका चलना) है । सूर्य नेत्र है, बादलोंका समूह बा

जासु घ्रान अस्विनीकुमारा । निसि अरु दिवस निमेष
श्रवन दिसा दस बेद बखानी । मारुत स्वास निगम निज

अश्विनीकुमार जिनकी नासिका हैं, रात और दिन जिनके अपार नि
मारना और खोलना) हैं । दसों दिशाएँ कान हैं, वेद ऐसा कहते हैं ।
है और वेद जिनकी अपनी वाणी है ॥ २ ॥

अधर लोभ जम दसन कराला । माया हास बाहु दि
आनन अनल अंबुपति जीहा । उतपति पालन प्रलय

लोभ जिनका अधर (होठ) है, यमराज भयानक दाँत है । माया
दिक्पाल भुजाएँ हैं । अग्नि मुख है, वरुण जीभ है । उत्पत्ति, पालन
जिनकी चेष्टा (क्रिया) है ॥ ३ ॥

रोम राजि अष्टादस भारा । अस्थि सैल सरिता नस
उदर उदधि अधगो जातना । जगमय प्रभु का बहु क

अठारह प्रकारकी असंख्य वनस्पतियाँ जिनकी रोमावली हैं, पर्वत अ
नदियाँ नसोंका जाल हैं । समुद्र पेट है और नरक जिनकी नीचेकी इन्द्रि
प्रकार प्रभु विश्वमय हैं, अधिक कल्पना (ऊहापोह) क्या की जाय ? ॥

दो०—अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान ।
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान ॥

शिव जिनका अहङ्कार हैं, ब्रह्मा बुद्धि हैं, चन्द्रमा मन हैं और महान् (वि
हैं । उन्हीं चराचररूप भगवान् श्रीरामजीने मनुष्यरूपमें निवास किया है ॥ १५

अस बिचारि सुनु प्रानपति प्रभु सन बयरु बिहाइ ।
प्रीति करहु रघुबीर पद मम अहिवात न जाइ ॥

हे प्राणपति ! सुनिये, ऐसा विचारकर प्रभुसे वैर छोड़कर श्रीरघुवीरके
प्रेम कीजिये, जिससे मेरा सुहाग न जाय ॥ १५ (ख) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिहँसा नारि बचन सुनि काना। अहो मोह महिमा बलवाना॥
नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं॥

पत्नीके वचन कानोंसे सुनकर रावण खूब हँसा [और बोला—] अहो! मोह (अज्ञान) की महिमा बड़ी बलवान् है। स्त्रीका स्वभाव सब सत्य ही कहते हैं कि उसके हृदयमें आठ अवगुण सदा रहते हैं—॥ १॥

साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया॥
रिपु कर रूप सकल तैं गावा। अति बिसाल भय मोहि सुनावा॥

साहस, झूठ, चञ्चलता, माया (छल), भय (डरपोकपन), अविवेक (मूर्खता), अपवित्रता और निर्दयता। तूने शत्रुका समग्र (विराट्) रूप गाया और मुझे उसका बड़ा भारी भय सुनाया॥ २॥

सो सब प्रिया सहज बस मोरें। समुझि परा प्रसाद अब तोरें॥
जानिउँ प्रिया तोरि चतुराई। एहि बिधि कहहु मोरि प्रभुताई॥

हे प्रिये! वह सब (यह चराचर विश्व तो) स्वभावसे ही मेरे वशमें है। तेरी कृपासे मुझे यह अब समझ पड़ा। हे प्रिये! तेरी चतुराई मैं जान गया। तू इस प्रकार (इसी बहाने) मेरी प्रभुताका बखान कर रही है॥ ३॥

तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि। समुझत सुखद सुनत भय मोचनि॥
मंदोदरि मन महुँ अस ठयऊ। पियहि काल बस मतिभ्रम भयऊ॥

हे मृगनयनी! तेरी बातें बड़ी गूढ़ (रहस्यभरी) हैं, समझनेपर सुख देनेवाली और सुननेसे भय छुड़ानेवाली हैं। मन्दोदरीने मनमें ऐसा निश्चय कर लिया कि पतिको कालवश मतिभ्रम हो गया है॥ ४॥

दो०—एहि बिधि करत बिनोद बहु प्रात प्रगट दसकंध।
सहज असंक लंकपति सभाँ गयउ मद अंध॥ १६(क)॥

इस प्रकार [अज्ञानवश] बहुत-से विनोद करते हुए रावणको सबेरा हो गया। तब स्वभावसे ही निडर और घमंडमें अंधा लंकापति सभामें गया॥ १६ (क)॥

सो०—फूलइ फरइ न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुख हृदयँ न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम॥ १६(ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यद्यपि बादल अमृत-सा जल बरसाते हैं, तो भी बेत फूलता-फलता
प्रकार चाहे ब्रह्माके समान भी ज्ञानी गुरु मिलें, तो भी मूर्खके हृदयमें
नहीं होता ॥ १६ (ख) ॥

चौ०–इहाँ प्रात जागे रघुराई। पूछा मत सब सचिव
कहहु बेगि का करिअ उपाई। जामवंत कह पद सि

यहाँ (सुबेल पर्वतपर) प्रातःकाल श्रीरघुनाथजी जागे और उन्होंने
को बुलाकर सलाह पूछी कि शीघ्र बताइये, अब क्या उपाय का
जाम्बवान्‌ने श्रीरामजीके चरणोंमें सिर नवाकर कहा—॥ १ ॥

सुनु सर्बग्य सकल उर बासी। बुधि बल तेज धर्म गु
मंत्र कहउँ निज मति अनुसारा। दूत पठाइअ बा

हे सर्वज्ञ (सब कुछ जाननेवाले) ! हे सबके हृदयमें बसनेवाले (
हे बुद्धि, बल, तेज, धर्म और गुणोंकी राशि ! सुनिये। मैं अपनी बु
सलाह देता हूँ कि बालिकुमार अंगदको दूत बनाकर भेजा जाय ! ॥ २

नीक मंत्र सब के मन माना। अंगद सन कह कृ
बालितनय बुधि बल गुन धामा। लंका जाहु तात मे

यह अच्छी सलाह सबके मनमें जँच गयी। कृपाके निधान
अंगदसे कहा—हे बल, बुद्धि और गुणोंके धाम बालिपुत्र ! हे ता
कामके लिये लंका जाओ ॥ ३ ॥

बहुत बुझाइ तुम्हहि का कहऊँ। परम चतुर मैं जानत
काजु हमार तासु हित होई। रिपु सन करेहु बतक

तुमको बहुत समझाकर क्या कहूँ ? मैं जानता हूँ, तुम परम चतु
वही बातचीत करना जिससे हमारा काम हो और उसका कल्याण हो ॥

सो०–प्रभु अग्या धरि सीस चरन बंदि अंगद उठेउ।
सोइ गुन सागर ईस राम कृपा जा पर करहु।

प्रभुकी आज्ञा सिर चढ़ाकर और उनके चरणोंकी वन्दना करके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बोले—] हे भगवान् श्रीरामजी ! आप जिसपर कृपा करें, वही गुणोंका
ही जाता है ॥ १७ (क) ॥

स्वयंसिद्ध सब काज नाथ मोहि आदरु दियउ ।
अस बिचारि जुबराज तन पुलकित हरषित हियउ ॥ १७(ख) ॥

स्वामीके सब कार्य अपने-आप सिद्ध हैं; यह तो प्रभुने मुझको आदर दिया है
मुझे अपने कार्यपर भेज रहे हैं] । ऐसा विचारकर युवराज अंगदका हृदय
और शरीर पुलकित हो गया ॥ १७ (ख) ॥

बंदि चरन उर धरि प्रभुताई । अंगद चलेउ सबहि सिरु नाई ॥
प्रभु प्रताप उर सहज असंका । रन बाँकुरा बालिसुत बंका ॥

चरणोंकी वन्दना करके और भगवान्‌की प्रभुता हृदयमें धरकर अंगद सबको
नाकर चले । प्रभुके प्रतापको हृदयमें धारण किये हुए रणबाँकुरे वीर बालिपुत्र
क ही निर्भय हैं ॥ १ ॥

पुर पैठत रावन कर बेटा । खेलत रहा सो होइ गै भेटा ॥
बातहिं बात करष बढ़ि आई । जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई ॥

लंकामें प्रवेश करते ही रावणके पुत्रसे भेंट हो गयी, जो वहाँ खेल रहा था ।
-बातोंमें दोनोंमें झगड़ा बढ़ गया । [क्योंकि] दोनों ही अतुलनीय
थे और फिर दोनोंकी युवावस्था थी ॥ २ ॥

तेहिं अंगद कहुँ लात उठाई । गहि पद पटकेउ भूमि भवाँई ॥
निसिचर निकर देखि भट भारी । जहँ तहँ चले न सकहिं पुकारी ॥

उसने अंगदपर लात उठायी । अंगदने [वही] पैर पकड़कर उसे घुमाकर
र दे पटका (मार गिराया) । राक्षसके समूह भारी योद्धा देखकर जहाँ-तहाँ
] चले, वे डरके मारे पुकार भी न मचा सके ॥ ३ ॥

एक एक सन मरमु न कहहीं । समुझि तासु बध चुप करि रहहीं ॥
भयउ कोलाहल नगर मझारी । आवा कपि लंका जेहिं जारी ॥

एक दूसरेको मर्म (असली बात) नहीं बतलाते, उस (रावणके पुत्र) का
मझकर सब चुप मारकर रह जाते हैं । [रावण-पुत्रकी मृत्यु जानकर और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राक्षसोंको भयके मारे भागते देखकर] नगरभरमें कोलाहल मच गया
लंका जलायी थी, वही वानर फिर आ गया है ॥ ४ ॥

अब धौं कहा करिहि करतारा । अति सभीत सब करहिं
बिनु पूछें मगु देहिं दिखाई । जेहि बिलोक सोइ जाइ

सब अत्यन्त भयभीत होकर विचार करने लगे कि विधाता अब न
करेगा । वे बिना पूछे ही अंगदको [रावणके दरबारकी] राह बता दे
ही वे देखते हैं वही डरके मारे सूख जाता है ॥ ५ ॥

दो०–गयउ सभा दरबार तब सुमिरि राम पद कंज।
सिंह ठवनि इत उत चितव धीर बीर बल पुंज॥

श्रीरामजीके चरणकमलोंका स्मरण करके अंगद रावणकी सभाके द्वार
वे धीर, वीर और बलकी राशि अंगद सिंहकी-सी ऐंड़ (शान) से इधर-उधर देख

चौ०–तुरत निसाचर एक पठावा । समाचार रावनहि
सुनत बिहँसि बोला दससीसा । आनहु बोलि कहाँ का

तुरंत ही उन्होंने एक राक्षसको भेजा और रावणको अपने आनेका सम
किया । सुनते ही रावण हँसकर बोला—बुला लाओ, [देखें] कहाँका बं

आयसु पाइ दूत बहु धाए । कपिकुंजरहि बोलि लै
अंगद दीख दसानन बैसें । सहित प्रान कज्जलगिरि

आज्ञा पाकर बहुत-से दूत दौड़े और वानरोंमें हाथीके समान अं
लाये । अंगदने रावणको ऐसे बैठे हुए देखा जैसे कोई प्राणयुक्त (सजीव
पहाड़ हो ! ॥ २ ॥

भुजा बिटप सिर सृंग समाना । रोमावली लता जनु
मुख नासिका नयन अरु काना । गिरि कंदरा खोह अ

भुजाएँ वृक्षोंके और सिर पर्वतोंके शिखरोंके समान हैं । रोमावली मा
लताएँ हैं । मुँह, नाक, नेत्र और कान पर्वतकी कन्दराओं और खोहोंके बराब

गयउ सभाँ मन नेकु न मुरा । बालितनय अतिबल
उठे सभासद कपि कहुँ देखी । रावन उर भा क्रोध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्यन्त बलवान् बाँके वीर बालिपुत्र अंगद सभामें गये, वे मनमें जरा भी नहीं के। अंगदको देखते ही सब सभासद् उठ खड़े हुए। यह देखकर रावणके हृदयमें क्रोध हुआ ॥ ४ ॥

दो०—जथा मत्त गज जूथ महुँ पंचानन चलि जाइ ।
राम प्रताप सुमिरि मन बैठ सभाँ सिरु नाइ ॥ १९ ॥

जैसे मतवाले हाथियोंके झुंडमें सिंह [निःशंक होकर] चला जाता है, वैसे ही मजीके प्रतापका हृदयमें स्मरण करके वे [निर्भय] सभामें सिर नवाकर बैठ गये ॥ १९॥

—कह दसकंठ कवन तैं बंदर। मैं रघुबीर दूत दसकंधर ॥
मम जनकहि तोहि रही मिताई। तव हित कारन आयउँ भाई ॥

रावणने कहा—अरे बंदर ! तू कौन है ? [अंगदने कहा—] हे दशग्रीव ! मैं घुवीरका दूत हूँ। मेरे पितासे और तुमसे मित्रता थी। इसलिये हे भाई ! मैं री भलाईके लिये ही आया हूँ ॥ १ ॥

उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती। सिव बिरंचि पूजेहु बहु भाँती ॥
बर पायहु कीन्हेहु सब काजा। जीतेहु लोकपाल सब राजा ॥

तुम्हारा उत्तम कुल है, पुलस्त्य ऋषिके तुम पौत्र हो। शिवजीकी और ब्रह्मा- जी तुमने बहुत प्रकारसे पूजा की है। उनसे वर पाये हैं और सब काम सिद्ध हैं। लोकपालों और सब राजाओंको तुमने जीत लिया है ॥ २ ॥

नृप अभिमान मोह बस किंबा। हरि आनिहु सीता जगदंबा ॥
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा ॥

राजमदसे या मोहवश तुम जगज्जननी सीताजीको हर लाये हो। अब तुम शुभ वचन (मेरी हितभरी सलाह) सुनो ! [उसके अनुसार चलनेसे] प्रभु रामजी तुम्हारे सब अपराध क्षमा कर देंगे ॥ ३ ॥

दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजन सहित संग निज नारी ॥
सादर जनकसुता करि आगें। एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागें ॥

दाँतोंमें तिनका दबाओ, गलेमें कुल्हाड़ी डालो और कुटुम्बियोंसहित अपनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्त्रियोंको साथ लेकर, आदरपूर्वक जानकीजीको आगे करके, इस प्रकार छोड़कर चलो—॥ ४ ॥

दो०—प्रनतपाल रघुबंसमनि त्राहि त्राहि अब मोहि।
आरत गिरा सुनत प्रभु अभय करैगो तोहि ॥ २०॥

और 'हे शरणागतके पालन करनेवाले रघुवंशशिरोमणि श्रीरामजी! कीजिये, रक्षा कीजिये।' [इस प्रकार आर्त प्रार्थना करो।] आर्त पुकार प्रभु तुमको निर्भय कर देंगे ॥ २० ॥

चौ०—रे कपिपोत बोलु संभारी। मूढ़ न जानेहि मोहि
कहु निज नाम जनक कर भाई। केहि नातें मानिए

[रावणने कहा—] अरे बंदरके बच्चे! सँभालकर बोल। मूर्ख! मुझ शत्रुको तूने जाना नहीं? अरे भाई! अपना और अपने बापका नाम किस नातेसे मित्रता मानता है?॥ १ ॥

अंगद नाम बालि कर बेटा। तासों कबहुँ भई ही
अंगद बचन सुनत सकुचाना। रहा बालि बानर मैं

[अंगदने कहा—] मेरा नाम अंगद है, मैं बालिका पुत्र हूँ। उ तुम्हारी भेंट हुई थी? अंगदका वचन सुनते ही रावण कुछ सकुचा गया बोला—] हाँ, मैं जान गया (मुझे याद आ गया), बालि नामका एक बंदर

अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंस अनल कुल
गर्भ न गयहु ब्यर्थ तुम्ह जायहु। निज मुख तापस दूत

अरे अंगद! तू ही बालिका लड़का है? अरे कुलनाशक! तू तो अपने बाँसके लिये अग्निरूप ही पैदा हुआ! गर्भमें ही क्यों न नष्ट हो गया? तू पैदा हुआ जो अपने ही मुँहसे तपस्वियोंका दूत कहलाया!॥ ३ ॥

अब कहु कुसल बालि कहँ अहई। बिहँसि बचन तब अंगद
दिन दस गएँ बालि पहिं जाई। बूझेहु कुसल सखा उर

अब बालिकी कुशल तो बता, वह [आजकल] कहाँ है? तब अंगदने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

—दस (कुछ) दिन बीतनेपर [स्वयं ही] बालिके पास जाकर, अपने मित्रको से लगाकर उसीसे कुशल पूछ लेना ॥ ४ ॥

राम बिरोध कुसल जसि होई। सो सब तोहि सुनाइहि सोई॥
सुनु सठ भेद होइ मन ताकें। श्रीरघुबीर हृदय नहिं जाकें॥

श्रीरामजीसे विरोध करनेपर जैसी कुशल होती है, वह सब तुमको वे सुनावेंगे। र्ख ! सुन, भेद उसीके मनमें पड़ सकता है, (भेदनीति उसीपर अपना प्रभाव सकती है) जिसके हृदयमें श्रीरघुवीर न हों ॥ ५ ॥

दो०—हम कुल घालक सत्य तुम्ह कुल पालक दससीस ।
अंधउ बधिर न अस कहहिं नयन कान तव बीस ॥ २१ ॥

सच है, मैं तो कुलका नाश करनेवाला हूँ और हे रावण! तुम कुलके रक्षक हो। अंधे-भी ऐसी बात नहीं कहते, तुम्हारे तो बीस नेत्र और बीस कान हैं ! ॥ २१ ॥

—सिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई। चाहत जासु चरन सेवकाई॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा। अइसिहुँ मति उर बिहर न तोरा॥

शिव, ब्रह्मा [आदि] देवता और मुनियोंके समुदाय जिनके चरणोंकी सेवा ना] चाहते हैं, उनका दूत होकर मैंने कुलको डुबा दिया ? अरे, ऐसी बुद्धि र भी तुम्हारा हृदय फट नहीं जाता ? ॥ १ ॥

सुनि कठोर बानी कपि केरी। कहत दसानन नयन तरेरी॥
खल तव कठिन बचन सब सहऊँ। नीति धर्म मैं जानत अहऊँ॥

वानर (अंगद) की कठोर वाणी सुनकर रावण आँखें तरेरकर (तिरछी करके) —अरे दुष्ट ! मैं तेरे सब कठोर वचन इसीलिये सह रहा हूँ कि मैं नीति और जानता हूँ (उन्हींकी रक्षा कर रहा हूँ) ॥ २ ॥

कह कपि धर्मसीलता तोरी। हमहुँ सुनी कृत पर त्रिय चोरी॥
देखी नयन दूत रखवारी। बूड़ि न मरहु धर्म ब्रतधारी॥

अंगदने कहा—तुम्हारी धर्मशीलता मैंने भी सुनी है। [वह यह कि] तुमने स्त्रीकी चोरी की है। और दूतकी रक्षाकी बात तो अपनी आँखोंसे देख ली। र्मके व्रतको धारण (पालन) करनेवाले तुम डूबकर मर नहीं जाते ! ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कान नाक बिनु भगिनि निहारी। छमा कीन्हि तुम धर्म
धर्मसीलता तव जग जागी। पावा दरसु हमहुँ

नाक-कानसे रहित बहिनको देखकर तुमने धर्म विचारकर ही तो क्षमा कर
तुम्हारी धर्मशीलता जग-जाहिर है! मैं भी बड़ा भाग्यवान् हूँ, जो मैंने तुम्हारा दर्शन

दो०—जनि जल्पसि जड़ जंतु कपि सठ बिलोकु मम बाहु।
लोकपाल बल बिपुल ससि ग्रसन हेतु सब राहु॥

[रावणने कहा—] अरे जड जन्तु वानर ! व्यर्थ बक-बक न
मूर्ख ! मेरी भुजाएँ तो देख। ये सब लोकपालोंके विशाल बलरूपी चन्द्रमाको
लिये राहु हैं॥ २२ (क)॥

पुनि नभ सर मम कर निकर कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयउ मराल इव संभु सहित कैलास॥

फिर [तूने सुना ही होगा कि] आकाशरूपी तालाबमें मेरी भुजाओंरूपी
बसकर शिवजीसहित कैलास हंसके समान शोभाको प्राप्त हुआ था!॥

चौ०—तुम्हरे कटक माझ सुनु अंगद। मो सन भिरिहि कवन जो
तव प्रभु नारि बिरहँ बलहीना। अनुज तासु दुख दुखी

अरे अंगद ! सुन; तेरी सेनामें बता, ऐसा कौन योद्धा है जो मुझसे भिड़
तेरा मालिक तो स्त्रीके वियोगमें बलहीन हो रहा है। और उसका छोटा
दुःखसे दुखी और उदास है॥ १॥

तुम्ह सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ। अनुज हमार भीरु अति
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा। सो कि होइ अब स

तुम और सुग्रीव, दोनों [नदी] तटके वृक्ष हो। [रहा] मेरा
विभीषण, [सो] वह भी बड़ा डरपोक है। मन्त्री जाम्बवान् बहुत बूढ़ा है
लड़ाईमें क्या चढ़ (उद्यत हो) सकता है ?॥ २॥

सिलिप कर्म जानहिं नल नीला। है कपि एक महा ब
आवा प्रथम नगरु जेहिं जारा। सुनत बचन कह बालि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नल-नील तो शिल्प-कर्म जानते हैं (वे लड़ना क्या जानें ?)। हाँ, एक वानर महान् बलवान् है, जो पहले आया था, और जिसने लंका जलायी थी। वचन सुनते ही बालिपुत्र अंगदने कहा—॥ ३ ॥

सत्य बचन कहु निसिचर नाहा। साँचेहुँ कीस कीन्ह पुर दाहा॥
रावन नगर अल्प कपि दहई। सुनि अस बचन सत्य को कहई॥

हे राक्षसराज ! सच्ची बात कहो ? क्या उस वानरने सचमुच तुम्हारा नगर दिया ? रावण [जैसे जगद्विजयी योद्धा] का नगर एक छोटे-से वानरने जला । ऐसे वचन सुनकर उन्हें सत्य कौन कहेगा ? ॥ ४ ॥

जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीव केर लघु धावन॥
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

हे रावण ! जिसको तुमने बहुत बड़ा योद्धा कहकर सराहा है, वह तो सुग्रीवका छोटा-सा दौड़कर चलनेवाला हरकारा है । वह बहुत चलता है, वीर नहीं है । उसे तो हमने [केवल] खबर लेनेके लिये भेजा था ॥ ५ ॥

दो०—सत्य नगरु कपि जारेउ बिनु प्रभु आयसु पाइ ।
फिरि न गयउ सुग्रीव पहिं तेहिं भय रहा लुकाइ ॥२३ (क)॥

क्या सचमुच ही उस वानरने प्रभुकी आज्ञा पाये बिना ही तुम्हारा नगर जला ? मालूम होता है, इसी डरसे वह लौटकर सुग्रीवके पास नहीं गया और कहीं रहा ! ॥ २३ (क) ॥

सत्य कहहि दसकंठ सब मोहि न सुनि कछु कोह ।
कोउ न हमारें कटक अस तो सन लरत जो सोह ॥२३ (ख)॥

हे रावण ! तुम सब सत्य ही कहते हो, मुझे सुनकर कुछ भी क्रोध नहीं है। सचमुच सेनामें कोई भी ऐसा नहीं है जो तुमसे लड़नेमें शोभा पाये ॥ २३ (ख) ॥

प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति असि आहि ।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहइ कोउ ताहि ॥२३ (ग)॥

प्रीति और वैर बराबरीवालेसे ही करना चाहिये, नीति ऐसी ही है । सिंह मेढकोंको मारे, तो क्या उसे कोई भला कहेगा ? ॥ २३ (ग) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जद्यपि लघुता राम कहुँ तोहि बधें बड़ दोष ।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु छत्र जाति कर रोष ॥

यद्यपि तुम्हें मारनेमें श्रीरामजीकी लघुता है और बड़ा दोष भी है, रावण ! सुनो, क्षत्रिय जातिका क्रोध बड़ा कठिन होता है ॥ २३ (घ)॥

बक्र उक्ति धनु बचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस ।
प्रतिउत्तर सड़सिन्ह मनहु काढ़त भट दससीस ॥

वक्रोक्तिरूपी धनुषसे वचनरूपी बाण मारकर अंगदने शत्रुका हृदय वीर रावण उन बाणोंको मानो प्रत्युत्तररूपी सँड़सियोंसे निकाल रहा है ॥

हँसि बोलेउ दसमौलि तब कपि कर बड़ गुन एक ।
जो प्रतिपालइ तासु हित करइ उपाय अनेक ॥

तब रावण हँसकर बोला—बंदरमें यह एक बड़ा गुण है कि जो है, उसका वह अनेकों उपायोंसे भला करनेकी चेष्टा करता है ॥ २३ (च)॥

चौ०—धन्य कीस जो निज प्रभु काजा । जहँ तहँ नाचइ परिहरि
नाचि कूदि करि लोग रिझाई । पति हित करइ धर्म

बंदरको धन्य है, जो अपने मालिकके लिये लाज छोड़कर जहाँ है । नाच-कूदकर, लोगोंको रिझाकर, मालिकका हित करता है । यह निपुणता है ॥ १ ॥

अंगद स्वामिभक्त तव जाती । प्रभु गुन कस न कहसि एहि
मैं गुन गाहक परम सुजाना । तव कटु रटनि करउँ नहिं

हे अंगद ! तेरी जाति स्वामिभक्त है । [फिर भला] तू अपने मालिकके प्रकार कैसे न बखानेगा ? मैं गुणग्राहक (गुणोंका आदर करनेवाला) और (समझदार) हूँ, इसीसे तेरी जली-कटी बक-बकपर कान (ध्यान) नहीं देता

कह कपि तव गुन गाहकताई । सत्य पवनसुत मोहि
बन बिधंसि सुत बधि पुर जारा । तदपि न तेहिं कछु कृत

अंगदने कहा—तुम्हारी सच्ची गुणग्राहकता तो मुझे हनुमान्ने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोकवनको विध्वंस (तहस-नहस) करके, तुम्हारे पुत्रको मारकर नगरको दिया था। तो भी [तुमने अपनी गुणग्राहकताके कारण यही समझा कि] उसने कुछ भी अपकार नहीं किया ॥ ३ ॥

सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई। दसकंधर मैं कीन्हि ढिठाई॥
देखेउँ आइ जो कछु कपि भाषा। तुम्हरें लाज न रोष न माखा॥

तुम्हारा वही सुन्दर स्वभाव विचारकर, हे दशग्रीव! मैंने कुछ धृष्टता की है। तूने जो कुछ कहा था, उसे आकर मैंने प्रत्यक्ष देख लिया कि तुम्हें न लज्जा क्रोध है और न चिढ़ है॥ ४ ॥

जौं असि मति पितु खाए कीसा। कहि अस बचन हँसा दससीसा॥
पितहि खाइ खातेउँ पुनि तोही। अबहीं समुझि परा कछु मोही॥

[रावण बोला—] अरे वानर! जब तेरी ऐसी बुद्धि है तभी तो तू बापको खा ऐसा वचन कहकर रावण हँसा। अंगदने कहा—पिताको खाकर फिर तुमको भी लता। परन्तु अभी तुरंत कुछ और ही बात मेरी समझमें आ गयी!॥ ५ ॥

बालि बिमल जस भाजन जानी। हतउँ न तोहि अधम अभिमानी॥
कहु रावन रावन जग केते। मैं निज श्रवन सुने सुनु जेते॥

अरे नीच अभिमानी! बालिके निर्मल यशका पात्र (कारण) जानकर तुम्हें मैं मारता। रावण! यह तो बता कि जगत्में कितने रावण हैं? मैंने जितने रावण कानोंसे सुन रक्खे हैं, उन्हें सुन—॥ ६ ॥

बलिहि जितन एक गयउ पताला। राखेउ बाँधि सिसुन्ह हयसाला॥
खेलहिं बालक मारहिं जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई॥

एक रावण तो बलिको जीतने पातालमें गया था तब बच्चोंने उसे घुड़सालमें रक्खा। बालक खेलते थे और जा-जाकर उसे मारते थे। बलिको दया लगी, होंने उसे छुड़ा दिया॥ ७ ॥

एक बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जंतु बिसेषा॥
कौतुक लागि भवन लै आवा। सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा॥

फिर एक रावणको सहस्रबाहुने देखा, और उसने दौड़कर उसको एक विशेष

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारके (विचित्र) जन्तुकी तरह [समझकर] पकड़ लिया। तमाशेके लिये घर ले आया। तब पुलस्त्य मुनिने जाकर उसे छुड़ाया ॥ ८ ॥

दो०—एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि कीं काँख।
इन्ह महुँ रावन तैं कवन सत्य बदहि तजि माख॥

एक रावणकी बात कहनेमें तो मुझे बड़ा संकोच हो रहा है—वह [बहुत दिनोंतक] बालिकी काँखमें रहा था। इनमेंसे तुम कौनसे रावण हो ? खीझना छोड़कर सच बताओ ॥ २४ ॥

चौ०—सुनु सठ सोइ रावन बलसीला। हर गिरि जान जासु भुज लीला॥
जान उमापति जासु सुराई। पूजेउँ जेहि सिर सुमन चढ़ाई॥

[रावणने कहा—] अरे मूर्ख ! सुन, मैं वही बलवान् रावण हूँ जिसकी भुजाओंकी लीला (करामात) कैलास पर्वत जानता है। जिसकी शूरता उमापति महादेवजी जानते हैं, ज़िन्हें अपने सिररूपी पुष्प चढ़ा-चढ़ाकर मैंने पूजा था ॥ १ ॥

सिर सरोज निज करन्हि उतारी। पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी॥
भुज बिक्रम जानहिं दिगपाला। सठ अजहूँ जिन्ह कें उर साला॥

सिररूपी कमलोंको अपने हाथोंसे उतार-उतारकर मैंने अगणित बार त्रिपुरारि शिवजीकी पूजा की है। अरे मूर्ख ! मेरी भुजाओंका पराक्रम दिक्पाल जानते हैं, जिनके हृदयमें वह आज भी चुभ रहा है ॥ २ ॥

जानहिं दिग्गज उर कठिनाई। जब जब भिरउँ जाइ बरिआई॥
जिन्ह के दसन कराल न फूटे। उर लागत मूलक इव टूटे॥

दिग्गज (दिशाओंके हाथी) मेरी छातीकी कठोरताको जानते हैं। जिनके भयानक दाँत, जब-जब जाकर मैं उनसे जबरदस्ती भिड़ा, मेरी छातीमें कभी नहीं फूटे (अपना चिह्न भी नहीं बना सके), बल्कि मेरी छातीसे लगते ही वे मूलीकी तरह टूट गये ॥ ३ ॥

जासु चलत डोलति इमि धरनी। चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी॥
सोइ रावन जग बिदित प्रतापी। सुनेहि न श्रवन अलीक प्रलापी॥

जिसके चलते समय पृथ्वी इस प्रकार हिलती है जैसे मतवाले हाथीके

नाव ! मैं वही जगत्प्रसिद्ध प्रतापी रावण हूँ। अरे झूठी बकवाद करनेवाले ! क्या झको कानोंसे कभी नहीं सुना ? ॥ ४ ॥

दो०—तेहि रावन कहँ लघु कहसि नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्ब खल अब जाना तव ग्यान ॥ २५ ॥

उस (महान् प्रतापी और जगत्प्रसिद्ध) रावणको (मुझे) तू छोटा कहता है और की बड़ाई करता है ? अरे दुष्ट,असभ्य,तुच्छ बंदर ! अब मैंने तेरा ज्ञान जान लिया।

-सुनि अंगद सकोप कह बानी। बोलु सँभारि अधम अभिमानी ॥
सहसबाहु भुज गहन अपारा। दहन अनल सम जासु कुठारा ॥

रावणके ये वचन सुनकर अंगद क्रोधसहित वचन बोले—अरे नीच अभिमानी ! कर (सोच-समझकर) बोल। जिनका फरसा सहस्रबाहुकी भुजाओंरूपी अपार जलानेके लिये अग्निके समान था, ॥ १ ॥

जासु परसु सागर खर धारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा ॥
तासु गर्ब जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दससीस अभागा ॥

जिनके फरसारूपी समुद्रकी तीव्र धारामें अनगिनत राजा अनेकों बार डूब गये, रशुरामजीका गर्व जिन्हें देखते ही भाग गया; अरे अभागे दशशीश ! वे मनुष्य र हैं ? ॥ २ ॥

राम मनुज कस रे सठ बंगा। धन्वी कामु नदी पुनि गंगा ॥
पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा। अन्न दान अरु रस पीयूषा ॥

क्यों रे मूर्ख उद्दण्ड ! श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य हैं ? कामदेव भी क्या धनुर्धारी है ? गङ्गाजी क्या नदी हैं ? कामधेनु क्या पशु है ? और कल्पवृक्ष क्या पेड़ है ? अन्न या दान है ? और अमृत क्या रस है ? ॥ ३ ॥

बैनतेय खग अहि सहसानन। चिंतामनि पुनि उपल दसानन ॥
सुनु मतिमंद लोक बैकुंठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुंठा ॥

गरुड़जी क्या पक्षी हैं ? शेषजी क्या सर्प हैं ? अरे रावण ! चिन्तामणि भी क्या पत्थर रे ओ मूर्ख ! सुन, वैकुण्ठ भी क्या लोक है ? और श्रीरघुनाथजीकी अखण्ड भक्ति [और लाभों-जैसा ही] लाभ है ? ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—सेन सहित तव मान मथि बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि गयउ जो तव सुत मारि॥

सेनासमेत तेरा मान मथकर, अशोकवनको उजाड़कर, नगरको जलाकर और तेरे पुत्रको मारकर जो लौट गये [तू उनका कुछ भी न बिगाड़ सका], क्यों रे शठ! वे हनुमान्‌जी क्या वानर हैं? ॥ २६ ॥

चौ०—सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिंधु रघुराई॥
जौं खल भएसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही॥

अरे रावण! चतुराई (कपट) छोड़कर सुन। कृपाके समुद्र श्रीरघुनाथजीका तू भजन क्यों नहीं करता? अरे दुष्ट! यदि तू श्रीरामजीका बैरी हुआ तो तुझे ब्रह्मा और रुद्र भी नहीं बचा सकेंगे ॥ १ ॥

मूढ़ बृथा जनि मारसि गाला। राम बयर अस होइहि हाला॥
तव सिर निकर कपिन्ह के आगें। परिहहिं धरनि राम सर लागें॥

हे मूढ़! व्यर्थ गाल न मार (डींग न हाँक)। श्रीरामजीसे वैर करनेपर तेरा ऐसा हाल होगा कि तेरे सिर-समूह श्रीरामजीके बाण लगते ही वानरोंके आगे पृथ्वीपर पड़ेंगे, ॥ २ ॥

ते तव सिर कंदुक सम नाना। खेलिहहिं भालु कीस चौगाना॥
जबहिं समर कोपिहि रघुनायक। छुटिहहिं अति कराल बहु सायक॥

और रीछ-वानर तेरे उन गेंदके समान अनेकों सिरोंसे चौगान खेलेंगे। जब श्रीरघुनाथजी युद्धमें कोप करेंगे और उनके अत्यन्त तीक्ष्ण बहुत-से बाण छूटेंगे, ॥ ३ ॥

तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा। अस बिचारि भजु राम उदारा॥
सुनत बचन रावन परजरा। जरत महानल जनु घृत परा॥

तब क्या तेरा ऐसा गाल चलेगा? ऐसा विचारकर उदार (कृपालु) श्रीरामजीको भज। अंगदके ये वचन सुनकर रावण बहुत अधिक जल उठा। मानो जलती हुई प्रचण्ड अग्निमें घी पड़ गया हो ॥ ४ ॥

दो०—कुंभकरन अस बंधु मम सुत प्रसिद्ध सक्रारि।
मोर पराक्रम नहिं सुनेहि जितेउँ चराचर झारि॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[वह बोला—अरे मूर्ख !] कुम्भकर्ण-ऐसा मेरा भाई है, इन्द्रका शत्रु सुप्रसिद्ध मेरा पुत्र है ! और मेरा पराक्रम तो तूने सुना ही नहीं कि मैंने सम्पूर्ण जड़-जगत्‌को जीत लिया है ! ॥ २७ ॥

सठ साखामृग जोरि सहाई । बाँधा सिंधु इहइ प्रभुताई ॥
नाघहिं खग अनेक बारीसा । सूर न होहिं ते सुनु सब कीसा ॥

रे दुष्ट ! वानरोंकी सहायता जोड़कर रामने समुद्र बाँध लिया; बस, यही उसकी है ! समुद्रको तो अनेकों पक्षी भी लाँघ जाते हैं । पर इसीसे वे सभी शूरवीर हो जाते । अरे मूर्ख बंदर ! सुन—॥ १ ॥

मम भुज सागर बल जल पूरा । जहँ बूड़े बहु सुर नर सूरा ॥
बीस पयोधि अगाध अपारा । को अस बीर जो पाइहि पारा ॥

मेरी एक-एक भुजारूपी समुद्र बलरूपी जलसे पूर्ण है, जिसमें बहुत-से शूरवीर और मनुष्य डूब चुके हैं । [बता,] कौन ऐसा शूरवीर है जो मेरे इन अथाह अपार बीस समुद्रोंका पार पा जायगा ? ॥ २ ॥

दिगपालन्ह मैं नीर भरावा । भूप सुजस खल मोहि सुनावा ॥
जौं पै समर सुभट तव नाथा । पुनि पुनि कहसि जासु गुन गाथा ॥

अरे दुष्ट ! मैंने दिक्पालोंतकसे जल भरवाया और तू एक राजाका मुझे सुयश ा है । यदि तेरा मालिक, जिसकी गुणगाथा तू बार-बार कह रहा है, संग्राममें वाला योद्धा है—॥ ३ ॥

तौ बसीठ पठवत केहि काजा । रिपु सन प्रीति करत नहिं लाजा ॥
हरगिरि मथन निरखु मम बाहू । पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू ॥

तो [फिर] वह दूत किसलिये भेजता है ? शत्रुसे प्रीति (सन्धि) करते उसे लाज आती ? [पहले] कैलासका मथन करनेवाली मेरी भुजाओंको देख । फिर अरे मूर्ख ! अपने मालिककी सराहना करना ॥ ४ ॥

दो०—सूर कवन रावन सरिस स्वकर काटि जेहिं सीस ।
हुने अनल अति हरष बहु बार साखि गौरीस ॥ २८ ॥

रावणके समान शूरवीर कौन है ? जिसने अपने ही हाथोंसे सिर काट-काटकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्यन्त हर्षके साथ बहुत बार उन्हें अग्निमें होम दिया। स्वयं गौरी
इस बातके साक्षी हैं॥ २८॥

चौ०-जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला। बिधि के लिखे अंक नि
नर कें कर आपन बध बाँची। हसेउँ जानि बिधि गिरा

मस्तकोंके जलते समय जब मैंने अपने ललाटोंपर लिखे हुए विधाता
तब मनुष्यके हाथसे अपनी मृत्यु होना बाँचकर, विधाताकी वाणी (लेख
जानकर मैं हँसा॥ १॥

सोउ मन समुझि त्रास नहिं मोरें। लिखा बिरंचि जरठ म
आन बीर बल सठ मम आगें। पुनि पुनि कहसि लाज प

उस बातको समझकर (स्मरण करके) भी मेरे मनमें डर नहीं है
मैं समझता हूँ कि] बूढ़े ब्रह्माने बुद्धिभ्रमसे ऐसा लिख दिया है। अरे मूर्ख
और मर्यादा छोड़कर मेरे आगे बार-बार दूसरे वीरका बल कहता है!

कह अंगद सलज्ज जग माहीं। रावन तोहि समान को
लाजवंत तव सहज सुभाऊ। निज मुख निज गुन कहसि

अंगदने कहा—अरे रावण! तेरे समान लज्जावान् जगत्‌में कोई नहीं
शीलता तो तेरा सहज स्वभाव ही है। तू अपने मुँहसे अपने गुण कभी नहीं

सिर अरु सैल कथा चित रही। ताते बार बीस तै
सो भुजबल राखेहु उर घाली। जीतेहु सहसबाहु बलि

सिर काटने और कैलास उठानेकी कथा चित्तमें चढ़ी हुई थी, इस
बीसों बार कहा। भुजाओंके उस बलको तो तूने हृदयमें ही टाल (छिपा
जिससे तूने सहस्रबाहु, बलि और बालिको जीता था॥ ४॥

सुनु मतिमंद देहि अब पूरा। काटें सीस कि होइअ
इंद्रजालि कहुँ कहिअ न बीरा। काटइ निज कर सकल

अरे मन्दबुद्धि! सुन, अब बस कर। सिर काटनेसे भी क्या कोई
जाता है? इन्द्रजाल रचनेवालेको वीर नहीं कहा जाता, यद्यपि वह अप
अपना सारा शरीर काट डालता है!॥ ५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—जरहिं पतंग मोह बस भार बहहिं खर बृंद।
ते नहिं सूर कहावहिं समुझि देखु मतिमंद ॥ २९ ॥

अरे मन्दबुद्धि ! समझकर देख। पतंगे मोहवश आगमें जल मरते हैं, गदहोंके ोझ लादकर चलते हैं; पर इस कारण वे शूरवीर नहीं कहलाते ॥ २९ ॥

अब जनि बतबढ़ाव खल करही। सुनु मम बचन मान परिहरही ॥
दसमुख मैं न बसीठीं आयउँ। अस बिचारि रघुबीर पठायउँ ॥

अरे दुष्ट ! अब बतबढ़ाव मत कर; मेरा वचन सुन और अभिमान त्याग दे। मुख ! मैं दूतकी तरह [सन्धि करने] नहीं आया हूँ। श्रीरघुवीरने ऐसा कर मुझे भेजा है—॥ १ ॥

बार बार अस कहइ कृपाला। नहिं गजारि जसु बधें सृकाला ॥
मन महुँ समुझि बचन प्रभु केरे। सहेउँ कठोर बचन सठ तेरे ॥

कृपालु श्रीरामजी बार-बार ऐसा कहते हैं कि स्यारके मारनेसे सिंहको यश नहीं । अरे मूर्ख ! प्रभुके [उन] वचनोंको मनमें समझकर (याद करके) ही रे कठोर वचन सहे हैं ॥ २ ॥

नाहिं त करि मुख भंजन तोरा। लै जातेउँ सीतहि बरजोरा ॥
जानेउँ तव बल अधम सुरारी। सूनें हरि आनिहि परनारी ॥

नहीं तो तेरे मुँह तोड़कर मैं सीताजीको जबरदस्ती ले जाता। अरे अधम ! ोंके शत्रु ! तेरा बल तो मैंने तभी जान लिया जब तू सूनेमें परायी स्त्रीको चुरा) लाया ॥ ३ ॥

तैं निसिचर पति गर्ब बहूता। मैं रघुपति सेवक कर दूता ॥
जौं न राम अपमानहि डरऊँ। तोहि देखत अस कौतुक करऊँ ॥

तू राक्षसोंका राजा और बड़ा अभिमानी है। परन्तु मैं तो श्रीरघुनाथजीके (सुग्रीव) का दूत (सेवकका भी सेवक) हूँ। यदि मैं श्रीरामजीके अपमानसे ूँ तो तेरे देखते-देखते ऐसा तमाशा करूँ कि—॥ ४ ॥

दो०—तोहि पटकि महि सेन हति चौपट करि तव गाउँ।
तव जुबतिन्ह समेत सठ जनकसुतहि लै जाउँ ॥ ३० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुझे जमीनपर पटककर, तेरी सेनाका संहार कर और तेरे गाँ
(नष्ट-भ्रष्ट) करके, अरे मूर्ख ! तेरी युवती स्त्रियोंसहित जानकीजीको ले जा

चौ०-जौं अस करौं तदपि न बड़ाई। मुएहि बधें नहिं कछु म
कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति

यदि ऐसा करूँ, तो भी इसमें कोई बड़ाई नहीं है। मरे हुएको म
भी पुरुषत्व (बहादुरी) नहीं है। वाममार्गी, कामी, कंजूस, अत्यन्त मूढ़, अ
बदनाम, बहुत बूढ़ा ॥ १ ॥

सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सव सम चौदह

नित्यका रोगी, निरन्तर क्रोधयुक्त रहनेवाला, भगवान् विष्णुसे वि
और संतोंका विरोधी, अपना ही शरीर पोषण करनेवाला, परायी निन्दा क
और पापकी खान (महान् पापी) ये चौदह प्राणी जीते ही मुरदेके समान

अस बिचारि खल बधउँ न तोही। अब जनि रिस उपजावसि
सुनि सकोप कह निसिचर नाथा। अधर दसन दसि मीजत

अरे दुष्ट ! ऐसा विचारकर मैं तुझे नहीं मारता। अब तू मुझमें क्रो
कर (मुझे गुस्सा न दिला)। अंगदके वचन सुनकर राक्षसराज रावण दाँ
काटकर, क्रोधित होकर हाथ मलता हुआ बोला—॥ ३ ॥

रे कपि अधम मरन अब चहसी। छोटे बदन बात बड़ि
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाकें। बल प्रताप बुधि तेज न

अरे नीच बंदर ! अब तू मरना ही चाहता है। इसीसे छोटे मुँह
कहता है। अरे मूर्ख बंदर ! तू जिसके बलपर कड़ुए वचन बक रहा
बल, प्रताप, बुद्धि अथवा तेज कुछ भी नहीं है ॥ ४ ॥

दो०-अगुन अमान जानि तेहि दीन्ह पिता बनबास।
सो दुख अरु जुबती बिरह पुनि निसि दिन मम त्रास॥ ३

उसे गुणहीन और मानहीन समझकर ही तो पिताने वनवास दे दि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह (उसका) दुःख, उसपर युवती स्त्रीका विरह और फिर रात-दिन मेरा ...ता रहता है ॥ ३१ (क) ॥

जिन्ह के बल कर गर्ब तोहि अइसे मनुज अनेक ।
खाहिं निसाचर दिवस निसि मूढ़ समुझु तजि टेक ॥ ३१ (ख) ॥

जिनके बलका तुझे गर्व है, ऐसे अनेकों मनुष्योंको तो राक्षस रात-दिन खाया ... । अरे मूढ़ ! जिद्द छोड़कर समझ (विचार कर) ॥ ३१ (ख) ॥

जब तेहिं कीन्हि राम कै निंदा । क्रोधवंत अति भयउ कपिंदा ॥
हरि हर निंदा सुनइ जो काना । होइ पाप गोघात समाना ॥

जब उसने श्रीरामजीकी निन्दा की, तब तो कपिश्रेष्ठ अंगद अत्यन्त क्रोधित हुए । [शास्त्र ऐसा कहते हैं कि] जो अपने कानोंसे भगवान् विष्णु और शिवकी ... सुनता है, उसे गोवधके समान पाप होता है ॥ १ ॥

कटकटान कपिकुंजर भारी । दुहु भुजदंड तमकि महि मारी ॥
डोलत धरनि सभासद खसे । चले भाजि भय मारुत ग्रसे ॥

वानरश्रेष्ठ अंगद बहुत जोरसे कटकटाये (शब्द किया) और उन्होंने तमककर ...) अपने दोनों भुजदण्डोंको पृथ्वीपर दे मारा । पृथ्वी हिलने लगी, [जिससे ...] सभासद् गिर पड़े और भयरूपी पवन (भूत) से ग्रस्त होकर भाग चले ॥ २ ॥

गिरत सँभारि उठा दसकंधर । भूतल परे मुकुट अति सुंदर ॥
कछु तेहिं लै निज सिरन्हि सँवारे । कछु अंगद प्रभु पास पबारे ॥

रावण गिरते-गिरते सँभलकर उठा । उसके अत्यन्त सुन्दर मुकुट पृथ्वीपर गिर ... कुछ तो उसने उठाकर अपने सिरोंपर सुधारकर रख लिया और कुछ अंगदने ... प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास फेंक दिये ॥ ३ ॥

आवत मुकुट देखि कपि भागे । दिनहीं लूक परन बिधि लागे ॥
की रावन करि कोप चलाए । कुलिस चारि आवत अति धाए ॥

मुकुटोंको आते देखकर वानर भागे । [सोचने लगे] विधाता ! क्या दिनमें ही ...त होने लगा (तारे टूटकर गिरने लगे) ? अथवा क्या रावणने क्रोध करके चार ...लाये हैं, जो बड़े धायेके साथ (वेगसे) आ रहे हैं ? ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कह प्रभु हँसि जनि हृदयँ डेराहू। लूक न असनि केतु
ए किरीट दसकंधर केरे। आवत बालि तनय

प्रभुने [उनसे] हँसकर कहा—मनमें डरो नहीं। ये न उल्का हैं और न केतु या राहु ही हैं। अरे भाई ! ये तो रावणके मुकुट हैं, अंगदके फेंके हुए आ रहे हैं॥ ५॥

दो०–तरकि पवनसुत कर गहे आनि धरे प्रभु पास।
कौतुक देखहिं भालु कपि दिनकर सरिस प्रकास॥

पवनपुत्र श्रीहनुमान्‌जीने उछलकर उनको हाथसे पकड़ लिया प्रभुके पास रख दिया। रीछ और वानर तमाशा देखने लगे। उनका प्र समान था॥ ३२ (क)॥

उहाँ सकोपि दसानन सब सन कहत रिसाइ।
धरहु कपिहि धरि मारहु सुनि अंगद मुसुकाइ॥

वहाँ (सभामें) क्रोधयुक्त रावण सबसे क्रोधित होकर कहने लगा कि पकड़ लो और पकड़कर मार डालो। अंगद यह सुनकर मुसकराने लगे॥

चौ०–एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु। खाहु भालु कपि जहँ जहँ
मर्कटहीन करहु महि जाई। जिअत धरहु तापस द्वौ

[रावण फिर बोला–] इसे मारकर सब योद्धा तुरंत दौड़ो और रीछ-वानरोंको पाओ, वहीं खा डालो। पृथ्वीको बंदरोंसे रहित कर दो दोनों तपस्वी भाइयों (राम-लक्ष्मण) को जीते-जी पकड़ लो॥ १॥

पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा। गाल बजावत तोहि न
मरु गर काटि निलज कुल घाती। बल बिलोकि बिहरति नहिं

[रावणके ये कोपभरे वचन सुनकर] तब युवराज अंगद क्रोधित होकर तुझे गाल बजाते लाज नहीं आती ? अरे निर्लज्ज ! अरे कुलनाशक ! गला (आत्महत्या करके) मर जा ! मेरा बल देखकर भी क्या तेरी छाती नहीं फट

रे त्रिय चोर कुमारग गामी। खल मल रासि मंदमति
सन्यपात जल्पसि दुर्बादा। भएसि कालबस खल मनु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरे स्त्रीके चोर ! अरे कुमार्गपर चलनेवाले ! अरे दुष्ट, पापकी राशि, मन्दबुद्धि कामी ! तू सन्निपातमें क्या दुर्वचन बक रहा है ? अरे दुष्ट राक्षस ! तू कालके [व]श हो गया है ! ॥ ३ ॥

याको फलु पावहिगो आगें । बानर भालु चपेटन्हि लागें ॥
राम मनुज बोलत असि बानी । गिरहिं न तव रसना अभिमानी ॥

इसका फल तू आगे बानर और भालुओंके चपेटे लगनेपर पावेगा। राम मनुष्य [है, ऐ]सा वचन बोलते ही, अरे अभिमानी ! तेरी जीभें नहीं गिर पड़तीं ? ॥ ४ ॥

गिरिहहिं रसना संसय नाहीं । सिरन्हि समेत समर महि माहीं ॥

इसमें सन्देह नहीं है कि तेरी जीभें [अकेले नहीं वरं] सिरोंके साथ [रणभू]मिमें गिरेंगी ॥ ५ ॥

सो०—सो नर क्यों दसकंध बालि बध्यो जेहिं एक सर ।
बीसहुँ लोचन अंध धिग तव जन्म कुजाति जड़ ॥ ३३ (क)॥

[अ]रे दशकन्ध ! जिसने एक ही बाणसे बालिको मार डाला वह मनुष्य कैसे है ? अरे [कुजा]ति, अरे जड ! बीस आँखें होनेपर भी तू अंधा है। तेरे जन्मको धिक्कार है॥ ३३(क)॥

तव सोनित कीं प्यास तृषित राम सायक निकर ।
तजउँ तोहि तेहि त्रास कटु जल्पक निसिचर अधम ॥ ३३ (ख)॥

श्रीरामचन्द्रजीके बाणसमूह तेरे रक्तकी प्याससे प्यासे हैं। [वे प्यासे ही रह जायँगे] [इस] डरसे, अरे कड़वी बकवाद करनेवाले नीच राक्षस ! मैं तुझे छोड़ता हूँ ॥ ३३ (ख)॥

[चौ०]—मैं तव दसन तोरिबे लायक । आयसु मोहि न दीन्ह रघुनायक ॥
असि रिस होति दसउ मुख तोरौं । लंका गहि समुद्र महँ बोरौं ॥

मैं तेरे दाँत तोड़नेमें समर्थ हूँ । पर क्या करूँ ? श्रीरघुनाथजीने मुझे आज्ञा [नहीं] दी । ऐसा क्रोध आता है कि तेरे दसों मुँह तोड़ डालूँ और [तेरी] लङ्काको [पक]ड़कर समुद्रमें डुबा दूँ ॥ १ ॥

गूलरि फल समान तव लंका । बसहु मध्य तुम्ह जंतु असंका ॥
मैं बानर फल खात न बारा । आयसु दीन्ह न राम उदारा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेरी लङ्का गूलरके फलके समान है। तुम सब कीड़े उसके भीतर [निडर होकर बस रहे हो। मैं बंदर हूँ, मुझे इस फलको खाते क्या [उदार (कृपालु) श्रीरामचन्द्रजीने वैसी आज्ञा नहीं दी ॥ २ ॥

जुगुति सुनत रावन मुसुकाई। मूढ़ सिखिहि कहँ बहुत
बालि न कबहुँ गाल अस मारा। मिलि तपसिन्ह तैं भएसि

अंगदकी युक्ति सुनकर रावण मुसकराया [और बोला—] अरे झूठ बोलना तूने कहाँ सीखा ? बालिने तो कभी ऐसा गाल नहीं मारा। है तू तपस्वियोंसे मिलकर लबार हो गया है ॥ ३ ॥

साँचेहुँ मैं लबार भुज बीहा। जौं न उपारिउँ तव दस
समुझि राम प्रताप कपि कोपा। सभा माझ पन करि पद

[अंगदने कहा—] अरे बीस भुजावाले ! यदि तेरी दसों जीभें उखाड़ लीं तो सचमुच मैं लबार ही हूँ। श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापको समझकर (याद करके) अंगद क्रोधित हो उठे और उन्होंने रावणकी सभामें प्रण करके [दृढ़ताके साथ) पैर रोप दिया ॥ ४ ॥

जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं रामु सीता मैं
सुनहु सुभट सब कह दससीसा। पद गहि धरनि पछारहु

[और कहा—] अरे मूर्ख ! यदि तू मेरा चरण हटा सके तो श्रीराम जायँगे, मैं सीताजीको हार गया। रावणने कहा—हे सब वीरो ! सुनो, पैर बंदरको पृथ्वीपर पछाड़ दो ॥ ५ ॥

इंद्रजीत आदिक बलवाना। हरषि उठे जहँ तहँ भट
झपटहिं करि बल बिपुल उपाई। पद न टरइ बैठहिं सिरु

इन्द्रजीत (मेघनाद) आदि अनेकों बलवान् योद्धा जहाँ-तहाँसे हर्षित होकर उठे। और पूरे बलसे बहुत-से उपाय करके झपटते हैं। पर पैर टलता नहीं, नीचा करके फिर अपने-अपने स्थानपर जा बैठ जाते हैं ॥ ६ ॥

पुनि उठि झपटहिं सुर आराती। टरइ न कीस चरन एहि
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी। मोह बिटप नहिं सकहिं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] वे देवताओंके शत्रु (राक्षस) फिर उठकर झपटते न्तु हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी ! अंगदका चरण उनसे वैसे ही नहीं टलता जैसे (विषयी) पुरुष मोहरूपी वृक्षको नहीं उखाड़ सकते ॥ ७ ॥

दो०—कोटिन्ह मेघनाद सम सुभट उठे हरषाइ।
झपटहिं टरै न कपि चरन पुनि बैठहिं सिर नाइ ॥ ३४(क)॥

करोड़ों वीर योद्धा जो बलमें मेघनादके समान थे, हर्षित होकर उठे। वे बार-पटते हैं, पर वानरका चरण नहीं उठता। तब लज्जाके मारे सिर नवाकर बैठ हैं॥ ३४ (क) ॥

भूमि न छाँड़त कपि चरन देखत रिपु मद भाग।
कोटि बिघ्न ते संत कर मन जिमि नीति न त्याग ॥ ३४(ख)॥

जैसे करोड़ों विघ्न आनेपर भी संतका मन नीतिको नहीं छोड़ता, वैसे ही वानर द) का चरण पृथ्वीको नहीं छोड़ता। यह देखकर शत्रु (रावण) का मद दूर या ! ॥ ३४ (ख) ॥

—कपि बल देखि सकल हियँ हारे। उठा आपु कपि कें परचारे ॥
गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहें न तोर उबारा ॥

अंगदका बल देखकर सब हृदयमें हार गये। तब अंगदके ललकारनेपर रावण उठा। जब वह अंगदका चरण पकड़ने लगा तब बालिकुमार अंगदने कहा—चरण पकड़नेसे तेरा बचाव नहीं होगा ! ॥ १ ॥

गहसि न राम चरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई ॥
भयउ तेजहत श्री सब गई। मध्य दिवस जिमि ससि सोहई ॥

अरे मूर्ख ! तू जाकर श्रीरामजीके चरण क्यों नहीं पकड़ता ? यह सुनकर वह बहुत ही सकुचाकर लौट गया। इसकी सारी श्री जाती रही। वह ऐसा तेजहीन गया जैसे मध्याह्नमें चन्द्रमा दिखायी देता है ॥ २ ॥

सिंघासन बैठेउ सिर नाई। मानहुँ संपति सकल गँवाई ॥
जगदातमा प्रानपति रामा। तासु बिमुख किमि लह बिश्रामा ॥

वह सिर नीचा करके सिंहासनपर जा बैठा। मानो सारी सम्पत्ति गँवाकर बैठा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो। श्रीरामचन्द्रजी जगत्‌भरके आत्मा और प्राणोंके स्वामी हैं। ...
रहनेवाला शान्ति कैसे पा सकता है ? ॥ ३ ॥

उमा राम की भृकुटि बिलासा। होइ बिस्व पुनि पावइ ...
तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई। तासु दूत पन कहु कि...

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! जिन श्रीरामचन्द्रजीके भ्रूविलास (... इशारे) से विश्व उत्पन्न होता है और फिर नाशको प्राप्त होता है; जो ... और वज्रको तृण बना देते हैं (अत्यन्त निर्बलको महान् प्रबल और महा... अत्यन्त निर्बल कर देते हैं), उनके दूतका प्रण, कहो, कैसे टल सकता है ...

पुनि कपि कही नीति बिधि नाना। मान न ताहि कालु नि...
रिपु मद मथि प्रभु सुजसु सुनायो। यह कहि चल्यो बालि नृप ...

फिर अंगदने अनेकों प्रकारसे नीति कही। पर रावणने नहीं माना; क्यों... काल निकट आ गया था। शत्रुके गर्वको चूर करके अंगदने उसको प्रभु श्री... जीका सुयश सुनाया और फिर वह राजा बालिका पुत्र यह कहकर चल दिया ...

हतौं न खेत खेलाइ खेलाई। तोहि अबहिं का करौं ...
प्रथमहिं तासु तनय कपि मारा। सो सुनि रावन भयउ दु...

रणभूमिमें तुझे खेला-खेलाकर न मारूँ तबतक अभी [पहलेसे] क्या करूँ। अंगदने पहले ही (सभामें आनेसे पूर्व ही) उसके पुत्रको मार डा... वह संवाद सुनकर रावण दुखी हो गया ॥ ६ ॥

जातुधान अंगद पन देखी। भय ब्याकुल सब भए ...

अंगदका प्रण [सफल] देखकर सब राक्षस भयसे अत्यन्त ही व्याकुल हो...

दो०—रिपु बल धरषि हरषि कपि बालितनय बल पुंज।
पुलक सरीर नयन जल गहे राम पद कंज ॥ ३...

शत्रुके बलका मर्दन कर, बलकी राशि बालिपुत्र अंगदजीने हर्षित होकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल पकड़ लिये। उनका शरीर पुलकित है और [आनन्दाश्रुओंका] जल भरा है ॥ ३५ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साँझ जानि दसकंधर भवन गयउ बिलखाइ।
मंदोदरीं रावनहि बहुरि कहा समुझाइ॥ ३५(ख)॥

सन्ध्या हो गयी जानकर दशग्रीव बिलखता हुआ (उदास होकर) महलमें गया। …रीने रावणको समझाकर फिर कहा—॥ ३५ (ख)॥

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही। सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही॥
रामानुज लघु रेख खचाई। सोउ नहिं नाघेहु असि मनुसाई॥

हे कान्त! मनमें समझकर (विचारकर) कुबुद्धिको छोड़ दो। आपसे और …नाथजीसे युद्ध शोभा नहीं देता। उनके छोटे भाईने एक ज़रा-सी रेखा खींच …, उसे भी आप नहीं लाँघ सके, ऐसा तो आपका पुरुषत्व है॥ १॥

पिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा। जाके दूत केर यह कामा॥
कौतुक सिंधु नाघि तव लंका। आयउ कपि केहरी असंका॥

हे प्रियतम! आप उन्हें संग्राममें जीत पायेंगे, जिनके दूतका ऐसा काम है? …ही समुद्र लाँघकर वह वानरोंमें सिंह (हनुमान्) आपकी लंकामें निर्भय चला आया!

रखवारे हति बिपिन उजारा। देखत तोहि अच्छ तेहिं मारा॥
जारि सकल पुर कीन्हेसि छारा। कहाँ रहा बल गर्ब तुम्हारा॥

रखवालोंको मारकर उसने अशोकवन उजाड़ डाला? आपके देखते-देखते उसने …कुमारको मार डाला और सम्पूर्ण नगरको जलाकर राख कर दिया। उस समय …बलका गर्व कहाँ चला गया॥ ३॥

अब पति मृषा गाल जनि मारहु। मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु॥
पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु। अग जग नाथ अतुलबल जानहु॥

अब हे स्वामी! झूठ (व्यर्थ) गाल न मारिये (डींग न हाँकिये)। मेरे कहने- …हृदयमें कुछ विचार कीजिये। हे पति! आप श्रीरघुपतिको [निरा] राजा मत …ये, बल्कि अग-जगनाथ (चराचरके स्वामी) और अतुलनीय बलवान् जानिये।

…बान प्रताप जान मारीचा। तासु कहा नहिं मानेहि नीचा॥
जनक सभाँ अगनित भूपाला। रहे तुम्हउ बल अतुल बिसाला॥

श्रीरामजीके बाणका प्रताप तो नीच मारीच भी जानता था। परन्तु आपने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसका कहना भी नहीं माना। जनककी सभामें अगणित राजागण थे। क
और अतुलनीय बलवाले आप भी थे ॥ ५ ॥

भंजि धनुष जानकी बिआही। तब संग्राम जितेहु कि
सुरपति सुत जानइ बल थोरा। राखा जिअत आँखि गहि

वहाँ शिवजीका धनुष तोड़कर श्रीरामजीने जानकीको ब्याहा, तब आ
संग्राममें क्यों नहीं जीता ? इन्द्रपुत्र जयन्त उनके बलको कुछ-कुछ ज
श्रीरामजीने पकड़कर, केवल उसकी एक आँख ही फोड़ दी और उसे जीवित ही छो

सूपनखा कै गति तुम्ह देखी। तदपि हृदयँ नहिं लाज

शूर्पणखाकी दशा तो आपने देख ही ली। तो भी आपके हृदयमें
लड़नेकी बात सोचते] विशेष (कुछ भी) लज्जा नहीं आती ! ॥ ७ ॥

दो०—बधि बिराध खर दूषनहि लीलाँ हत्यो कबंध।
बालि एक सर मार्‌यो तेहि जानहु दसकंध ॥ ३

जिन्होंने विराध और खर-दूषणको मारकर लीलासे ही कबन्धको
डाला; और जिन्होंने बालिको एक ही बाणसे मार दिया। हे दशकन्ध !
(उनके महत्त्वको) समझिये ! ॥ ३६ ॥

चौ०—जेहिं जलनाथ बँधायउ हेला। उतरे प्रभु दल सहित
कारुनीक दिनकर कुल केतू। दूत पठायउ तव हित

जिन्होंने खेलसे ही समुद्रको बँधा लिया और जो प्रभु सेनासहित
पर्वतपर उतर पड़े, उन सूर्यकुलके ध्वजास्वरूप (कीर्तिको बढ़ानेवाले)
भगवान्‌ने आपहीके हितके लिये दूत भेजा ॥ १ ॥

सभा माझ जेहिं तव बल मथा। करि बरूथ महुँ मृगपति
अंगद हनुमत अनुचर जाके। रन बाँकुरे बीर अति

जिसने बीच सभामें आकर आपके बलको उसी प्रकार मथ डाला जैसे
झुंडमें आकर सिंह [उसे छिन्न-भिन्न कर डालता है]। रणमें बाँके अत्यन्त
वीर अंगद और हनुमान् जिनके सेवक हैं, ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेहि कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू। मुधा मान ममता मद बहहू॥
अहह कंत कृत राम बिरोधा। काल बिबस मन उपज न बोधा॥

हे पति! उन्हें आप बार-बार मनुष्य कहते हैं। आप व्यर्थ ही मान, और मदका बोझा ढो रहे हैं। हा प्रियतम! आपने श्रीरामजीसे विरोध कर लिया! कालके विशेष वश होनेसे आपके मनमें अब भी ज्ञान नहीं उत्पन्न होता॥ ३॥

काल दंड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा॥
निकट काल जेहि आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं॥

काल दण्ड (लाठी) लेकर किसीको नहीं मारता। वह धर्म, बल, बुद्धि और को हर लेता है। हे स्वामी! जिसका काल (मरण-समय) निकट आ जाता से आपहीकी तरह भ्रम हो जाता है॥ ४॥

दो०—दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु।
कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु॥ ३७॥

आपके दो पुत्र मारे गये और नगर जल गया। [जो हुआ सो हुआ] हे म! अब भी [इस भूलकी] पूर्ति (समाप्ति) कर दीजिये (श्रीरामजीसे वैर त्याग ये); और हे नाथ! कृपाके समुद्र श्रीरघुनाथजीको भजकर निर्मल यश ये॥ ३७॥

—नारि बचन सुनि बिसिख समाना। सभाँ गयउ उठि होत बिहाना॥
बैठ जाइ सिंघासन फूली। अति अभिमान त्रास सब भूली॥

स्त्रीके बाणके समान वचन सुनकर वह सबेरा होते ही उठकर सभामें चला गया सारा भय भुलाकर अत्यन्त अभिमानमें फूलकर सिंहासनपर जा बैठा॥ १॥

इहाँ राम अंगदहि बोलावा। आइ चरन पंकज सिरु नावा॥
अति आदर समीप बैठारी। बोले बिहँसि कृपाल खरारी॥

यहाँ (सुबेल पर्वतपर) श्रीरामजीने अंगदको बुलाया। उन्होंने आकर चरण-लोंमें सिर नवाया। बड़े आदरसे उन्हें पास बैठाकर खरके शत्रु कृपालु श्रीरामजी कर बोले॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बालितनय कौतुक अति मोही। तात सत्य कहु पूछउँ ...
रावनु जातुधान कुल टीका। भुज बल अतुल जासु ज...

हे बालिके पुत्र ! मुझे बड़ा कौतूहल है। हे तात ! इसीसे मैं ... हूँ, सत्य कहना। जो रावण राक्षसोंके कुलका तिलक है और जिसके बाहुबलकी जगत्‌भरमें धाक है, ॥ ३ ॥

तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाए। कहहु तात कवनी बिधि ...
सुनु सर्बग्य प्रनत सुखकारी। मुकुट न होहिं भूप गुन ...

उसके चार मुकुट तुमने फेंके। हे तात! बताओ, तुमने उनको कि... पाया ? [अंगदने कहा—] हे सर्वज्ञ ! हे शरणागतको सुख देनेवाले ! ... मुकुट नहीं हैं, वे तो राजाके चार गुण हैं ॥ ४ ॥

साम दान अरु दंड बिभेदा। नृप उर बसहिं नाथ क...
नीति धर्म के चरन सुहाए। अस जियँ जानि नाथ पहिं ...

हे नाथ ! वेद कहते हैं कि साम, दान, दण्ड और भेद—ये चारों राज... बसते हैं। ये नीति-धर्मके चार सुन्दर चरण हैं। [किन्तु रावणमें धर्मका अ... ऐसा जीमें जानकर ये नाथके पास आ गये हैं ॥ ५ ॥

दो०—धर्महीन प्रभु पद बिमुख काल बिबस दससीस।
तेहि परिहरि गुन आए सुनहु कोसलाधीस ॥ ३...

दशशीश रावण धर्महीन, प्रभुके पदसे विमुख और कालके वशमें है... हे कोसलराज ! सुनिये; वे गुण रावणको छोड़कर आपके पास आ गये हैं॥ ...

परम चतुरता श्रवन सुनि बिहँसे रामु उदार।
समाचार पुनि सब कहे गढ़ के बालिकुमार ॥ ३...

अंगदकी परम चतुरता [पूर्ण उक्ति] कानोंसे सुनकर उदार श्रीरामच... लगे। फिर बालिपुत्रने किलेके (लङ्काके) सब समाचार कहे ॥ ३८ (ख) ...

चौ०—रिपु के समाचार जब पाए। राम सचिव सब निकट ...
लंका बाँके चारि दुआरा। केहि बिधि लागिअ करहु ...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब शत्रुके समाचार प्राप्त हो गये, तब श्रीरामचन्द्रजीने सब मन्त्रियोंको पास
या [और कहा—] लंकाके चार बड़े विकट दरवाजे हैं। उनपर किस तरह
मण किया जाय, इसपर विचार करो ॥ १ ॥

तब कपीस रिच्छेस बिभीषन। सुमिरि हृदयँ दिनकर कुल भूषन ॥
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा। चारि अनी कपि कटकु बनावा ॥

तब वानरराज सुग्रीव, ऋक्षपति जाम्बवान् और विभीषणने हृदयमें सूर्यकुलके
श्रीरघुनाथजीका स्मरण किया और विचार करके उन्होंने कर्तव्य निश्चित किया।
ोंकी सेनाके चार दल बनाये ॥ २ ॥

जथाजोग सेनापति कीन्हे। जूथप सकल बोलि तब लीन्हे ॥
प्रभु प्रताप कहि सब समुझाए। सुनि कपि सिंघनाद करि धाए ॥

और उनके लिये यथायोग्य (जैसे चाहिये वैसे) सेनापति नियुक्त किये। फिर
यूथपतियोंको बुला लिया और प्रभुका प्रताप कहकर सबको समझाया, जिसे
र वानर सिंहके समान गर्जना करके दौड़े ॥ ३ ॥

हरषित राम चरन सिर नावहिं। गहि गिरि सिखर बीर सब धावहिं ॥
गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा। जय रघुबीर कोसलाधीसा ॥

वे हर्षित होकर श्रीरामजीके चरणोंमें सिर नवाते हैं और पर्वतोंके शिखर ले-लेकर
वीर दौड़ते हैं। 'कोसलराज श्रीरघुवीरजीकी जय हो' पुकारते हुए भालू और
गरजते और ललकारते हैं ॥ ४ ॥

जानत परम दुर्ग अति लंका। प्रभु प्रताप कपि चले असंका ॥
घटाटोप करि चहुँ दिसि घेरी। मुखहिं निसान बजावहिं भेरी ॥

लंकाको अत्यन्त श्रेष्ठ (अजेय) किला जानते हुए भी वानर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके
पसे निडर होकर चले। चारों ओरसे घिरी हुई बादलोंकी घटाकी तरह लंकाको चारों
ओंसे घेरकर वे मुँहसे ही डंके और भेरी बजाने लगे ॥ ५ ॥

दो०—जयति राम जय लछिमन जय कपीस सुग्रीव।
गर्जहिं सिंघनाद कपि भालु महा बल सींव ॥ ३९ ॥

महान् बलकी सीमा वे वानर-भालू सिंहके समान ऊँचे स्वरसे 'श्रीरामजीकी जय',

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'लक्ष्मणजीकी जय', 'वानरराज सुग्रीवकी जय' ऐसी गर्जना करने लगे।

चौ०—लंकाँ भयउ कोलाहल भारी। सुना दसानन अति अहँ
देखहु बनरन्ह केरि ढिठाई। बिहँसि निसाचर सेन बो

लंकामें बड़ा भारी कोलाहल (कोहराम) मच गया। अत्यन्त अहङ्कारी उसे सुनकर कहा—वानरोंकी ढिठाई तो देखो! यह कहते हुए हँसकर उसने सेना बुलायी॥ १॥

आए कीस काल के प्रेरे। छुधावंत सब निसिचर
अस कहि अट्टहास सठ कीन्हा। गृह बैठें अहार बिधि दी

बंदर कालकी प्रेरणासे चले आये हैं। मेरे राक्षस सभी भूखे हैं। विधाता घर बैठे भोजन भेज दिया। ऐसा कहकर उस मूर्खने अट्टहास किया (वह बड़े ठहाका मारकर हँसा)॥ २॥

सुभट सकल चारिहुँ दिसि जाहू। धरि धरि भालु कीस सब
उमा रावनहि अस अभिमाना। जिमि टिट्टिभ खग सूत उ

[और बोला—] हे वीरो! सब लोग चारों दिशाओंमें जाओ और री सबको पकड़-पकड़कर खाओ। [शिवजी कहते हैं—] हे उमा! रावणको अभिमान था जैसे टिटिहिरी पक्षी पैर ऊपरकी ओर करके सोता है [मानो आ थाम लेगा]॥ ३॥

चले निसाचर आयसु मागी। गहि कर भिंडिपाल बर
तोमर मुद्गर परसु प्रचंडा। सूल कृपान परिघ गिरि

आज्ञा माँगकर और हाथोंमें उत्तम भिंदिपाल, साँगी (बरछी), तोमर, मुद्गर, फरसे, शूल, दुधारी तलवार, परिघ और पहाड़ोंके टुकड़े लेकर राक्षस चले॥ ४॥

जिमि अरुनोपल निकर निहारी। धावहिं सठ खग मांस अ
चोंच भंग दुख तिन्हहि न सूझा। तिमि धाए मनुजाद अ

जैसे मूर्ख मांसाहारी पक्षी लाल पत्थरोंका समूह देखकर उसपर टूट पड़ते हैं, [लगनेसे] चोंच टूटनेका दुःख उन्हें नहीं सूझता, वैसे ही ये बेसमझ राक्षस दौड़े॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—नानायुध सर चाप धर जातुधान बल बीर।
कोट कँगूरन्हि चढ़ि गए कोटि कोटि रनधीर ॥ ४० ॥

अनेकों प्रकारके अस्त्र-शस्त्र और धनुष-बाण धारण किये करोड़ों बलवान् और रणधीर राक्षस वीर परकोटेके कँगूरोंपर चढ़ गये ॥ ४० ॥

चौ०—कोट कँगूरन्हि सोहहिं कैसे। मेरु के सृंगनि जनु घन बैसे ॥
बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ। सुनि धुनि होइ भटन्हि मन चाऊ ॥

वे परकोटेके कँगूरोंपर कैसे शोभित हो रहे हैं, मानो सुमेरुके शिखरोंपर बादल बैठे हों। जुझाऊ ढोल और डंके आदि बज रहे हैं, [जिनकी] ध्वनि सुनकर योद्धाओंके मनमें [लड़नेका] चाव होता है ॥ १ ॥

बाजहिं भेरि नफीरि अपारा। सुनि कादर उर जाहिं दरारा ॥
देखिन्ह जाइ कपिन्ह के ठट्टा। अति बिसाल तनु भालु सुभट्टा ॥

अगणित नफीरी और भेरी बज रही हैं, [जिन्हें] सुनकर कायरोंके हृदयमें दरारें पड़ जाती हैं। उन्होंने जाकर अत्यन्त विशाल शरीरवाले महान् योद्धा वानर और भालुओंके ठट्ट (समूह) देखे ॥ २ ॥

धावहिं गनहिं न अवघट घाटा। पर्बत फोरि करहिं गहि बाटा ॥
कटकटाहिं कोटिन्ह भट गर्जहिं। दसन ओठ काटहिं अति तर्जहिं ॥

[देखा कि] वे रीछ-वानर दौड़ते हैं; औघट (ऊँची-नीची, विकट) घाटियोंको कुछ नहीं गिनते। पकड़कर पहाड़ोंको फोड़कर रास्ता बना लेते हैं। करोड़ों योद्धा कटकटाते और गर्जते हैं। दाँतोंसे ओंठ काटते और खूब डपटते हैं ॥ ३ ॥

उत रावन इत राम दोहाई। जयति जयति जय परी लराई ॥
निसिचर सिखर समूह ढहावहिं। कूदि धरहिं कपि फेरि चलावहिं ॥

उधर रावणकी और इधर श्रीरामजीकी दोहाई बोली जा रही है। 'जय' 'जय' 'जय' की ध्वनि होते ही लड़ाई छिड़ गयी। राक्षस पहाड़ोंके ढेर-के-ढेर शिखरोंको गिराते हैं। वानर कूदकर उन्हें पकड़ लेते हैं और वापस उन्हींकी ओर चलाते हैं ॥ ४ ॥

छं०—धरि कुधर खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़ पर डारहीं।
झपटहिं चरन गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि पचारहीं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अति तरल तरुन प्रताप तरपहिं तमकि गढ़ चढ़ि चढ़ि गए।
कपि भालु चढ़ि मंदिरन्ह जहँ तहँ राम जसु गावत भए॥

प्रचण्ड वानर और भालू पर्वतोंके टुकड़े ले-लेकर किलेपर डालते हैं। वे और राक्षसोंके पैर पकड़कर उन्हें पृथ्वीपर पटककर भाग चलते हैं और फि हैं। बहुत ही चञ्चल और बड़े तेजस्वी वानर-भालू बड़ी फुर्तीसे उछलकर कि चढ़कर गये और जहाँ-तहाँ महलोंमें घुसकर श्रीरामजीका यश गाने लगे।

दो०—एकु एकु निसिचर गहि पुनि कपि चले पराइ।
ऊपर आपु हेठ भट गिरहिं धरनि पर आइ॥

फिर एक-एक राक्षसको पकड़कर वे वानर भाग चले। ऊपर आप और नी योद्धा—इस प्रकार वे [किलेपरसे] धरतीपर आ गिरते हैं॥ ४१॥

चौ०—राम प्रताप प्रबल कपिजूथा। मर्दहिं निसिचर सुभट
चढ़े दुर्ग पुनि जहँ तहँ बानर। जय रघुबीर प्रताप

श्रीरामजीके प्रतापसे प्रबल वानरोंके झुंड राक्षस योद्धाओंके समूह योद्धाओंको मसल रहे हैं। वानर फिर जहाँ-तहाँ किलेपर चढ़ गये और प्रत समान श्रीरघुवीरकी जय बोलने लगे॥ १॥

चले निसाचर निकर पराई। प्रबल पवन जिमि घन
हाहाकार भयउ पुर भारी। रोवहिं बालक आतुर

राक्षसोंके झुंड वैसे ही भाग चले जैसे जोरकी हवा चलनेपर बादल तितर-बितर हो जाते हैं। लंका नगरीमें बड़ा भारी हाहाकार मच गया। बाल और रोगी [असमर्थताके कारण] रोने लगे॥ २॥

सब मिलि देहिं रावनहि गारी। राज करत एहिं मृत्यु
निज दल बिचल सुनी तेहिं काना। फेरि सुभट लंकेस

सब मिलकर रावणको गालियाँ देने लगे कि राज्य करते हुए इसने मृत्यु लिया। रावणने जब अपनी सेनाका विचलित होना कानोंसे सुना, तब [योद्धाओंको लौटाकर वह क्रोधित होकर बोला—॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो रन बिमुख सुना मैं काना। सो मैं हतब कराल कृपाना॥
सर्बसु खाइ भोग करि नाना। समर भूमि भए बल्लभ प्राना॥

मैं जिसे रणसे पीठ देकर भागा हुआ अपने कानों सुनूँगा, उसे स्वयं भयानक तलवारसे मारूँगा। मेरा सब कुछ खाया, भाँति-भाँतिके भोग किये और अब मिमें प्राण प्यारे हो गये?॥ ४॥

उग्र बचन सुनि सकल डेराने। चले क्रोध करि सुभट लजाने॥
सन्मुख मरन बीर कै सोभा। तब तिन्ह तजा प्रान कर लोभा॥

रावणके उग्र (कठोर) वचन सुनकर सब वीर डर गये और लज्जित होकर करके युद्धके लिये लौट चले। रणमें [शत्रुके] सम्मुख (युद्ध करते हुए) मरनेमें ही शोभा है। [यह सोचकर] तब उन्होंने प्राणोंका लोभ छोड़ दिया॥ ५॥

दो०—बहु आयुध धर सुभट सब भिरहिं पचारि पचारि।
ब्याकुल किए भालु कपि परिघ त्रिसूलन्हि मारि॥ ४२॥

बहुत-से अस्त्र-शस्त्र धारण किये सब वीर ललकार-ललकारकर भिड़ने लगे। उन्होंने ...ओं और त्रिशूलोंसे मार-मारकर सब रीछ-वानरोंको व्याकुल कर दिया॥ ४२॥

...भय आतुर कपि भागन लागे। जद्यपि उमा जीतिहहिं आगे॥
कोउ कह कहँ अंगद हनुमंता। कहँ नल नील दुबिद बलवंता॥

[शिवजी कहते हैं—] वानर भयातुर होकर (डरके मारे घबड़ाकर) भागने यद्यपि हे उमा! आगे चलकर [वे ही] जीतेंगे। कोई कहता है—अंगद-हनुमान् हैं? बलवान् नल, नील और द्विविद कहाँ हैं?॥ १॥

निज दल बिकल सुना हनुमाना। पच्छिम द्वार रहा बलवाना॥
मेघनाद तहँ करइ लराई। टूट न द्वार परम कठिनाई॥

हनुमान्जीने जब अपने दलको विकल (भयभीत) हुआ सुना, उस समय वे ...वान् पश्चिम द्वारपर थे। वहाँ उनसे मेघनाद युद्ध कर रहा था। वह द्वार टूटता न बड़ी भारी कठिनाई हो रही थी॥ २॥

पवनतनय मन भा अति क्रोधा। गर्जेउ प्रबल काल सम जोधा॥
कूदि लंक गढ़ ऊपर आवा। गहि गिरि मेघनाद कहुँ धावा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब पवनपुत्र हनुमान्‌जीके मनमें बड़ा भारी क्रोध हुआ। वे कालके समान
जोरसे गरजे और कूदकर लंकाके किलेपर आ गये और पहाड़ लेकर मेघनादकी

भंजेउ रथ सारथी निपाता। ताहि हृदय महुँ मारेसि
दुसरें सूत बिकल तेहि जाना। स्यंदन घालि तुरत गृह

रथ तोड़ डाला, सारथिको मार गिराया और मेघनादकी छातीमें लात मा
सारथि मेघनादको व्याकुल जानकर, उसे रथमें डालकर, तुरंत घर ले आ

दो०—अंगद सुना पवनसुत गढ़ पर गयउ अकेल।
रन बाँकुरा बालिसुत तरकि चढ़ेउ कपि खेल॥

इधर अंगदने सुना कि पवनपुत्र हनुमान् किलेपर अकेले ही गये है
बाँके बालिपुत्र वानरके खेलकी तरह उछलकर किलेपर चढ़ गये॥ ४३

चौ०—जुद्ध बिरुद्ध क्रुद्ध द्वौ बंदर। राम प्रताप सुमिरि उर
रावन भवन चढ़े द्वौ धाई। करहिं कोसलाधीस

युद्धमें शत्रुओंके विरुद्ध दोनों वानर क्रुद्ध हो गये। हृदयमें श्रीरामजीके
स्मरण करके दोनों दौड़कर रावणके महलपर जा चढ़े और कोसलराज श्री
दुहाई बोलने लगे॥ १॥

कलस सहित गहि भवनु ढहावा। देखि निसाचरपति भय
नारि बृंद कर पीटहिं छाती। अब दुइ कपि आए उत

उन्होंने कलशसहित महलको पकड़कर ढहा दिया। यह देखकर
रावण डर गया। सब स्त्रियाँ हाथोंसे छाती पीटने लगीं [और कहने लगीं—
बार दो उत्पाती वानर [एक साथ] आ गये॥ २॥

कपिलीला करि तिन्हहि डेरावहिं। रामचंद्र कर सुजसु सुना
पुनि कर गहि कंचन के खंभा। कहेन्हि करिअ उतपात आ

वानरलीला करके (घुड़की देकर) दोनों उनको डराते हैं और श्रीरामच
सुन्दर यश सुनाते हैं। फिर सोनेके खंभोंको हाथोंसे पकड़कर उन्होंने [परस्पर
कि अब उत्पात आरम्भ किया जाय॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गर्जि परे रिपु कटक मझारी। लागे मर्दैं भुज बल भारी॥
काहुहि लात चपेटन्हि केहू। भजहु न रामहि सो फल लेहू॥

वे गर्जकर शत्रुकी सेनाके बीचमें कूद पड़े और अपने भारी भुजबलसे उसका [मर्दन क]रने लगे। किसीकी लातसे और किसीकी थप्पड़से खबर लेते हैं [और कहते हैं कि] तुम श्रीरामजीको नहीं भजते, उसका यह फल लो॥ ४॥

दो०—एक एक सों मर्दहिं तोरि चलावहिं मुंड।
रावन आगें परहिं ते जनु फूटहिं दधि कुंड॥ ४४॥

एकको दूसरेसे [रगड़कर] मसल डालते हैं और सिरोंको तोड़कर फेंकते हैं। जाकर रावणके सामने गिरते हैं और ऐसे फूटते हैं मानो दहीके कूँड़े फूट रहे हों।

महा महा मुखिआ जे पावहिं। ते पद गहि प्रभु पास चलावहिं॥
कहइ बिभीषनु तिन्ह के नामा। देहिं राम तिन्हहू निज धामा॥

जिन बड़े-बड़े मुखियों (प्रधान सेनापतियों) को पकड़ पाते हैं उनके पैर पकड़-[कर उन्]हें प्रभुके पास फेंक देते हैं। विभीषणजी उनके नाम बतलाते हैं और श्रीरामजी [उन्हें] भी अपना धाम (परम पद) दे देते हैं॥ १॥

खल मनुजाद द्विजामिष भोगी। पावहिं गति जो जाचत जोगी॥
उमा राम मृदुचित करुनाकर। बयर भाव सुमिरत मोहि निसिचर॥

[मनुष्योंको खानेवाले और] ब्राह्मणोंका मांस खानेवाले वे नरभोजी दुष्ट राक्षस भी वह परम गति पाते हैं [जिसकी] योगी भी याचना किया करते हैं [परन्तु सहजमें नहीं पाते]। [शिवजी कहते हैं—] हे उमा! श्रीरामजी बड़े ही कोमलहृदय और करुणाकी खान हैं। [वे सोचते हैं कि] राक्षस मुझे वैरभावसे ही सही, स्मरण तो करते ही हैं॥ २॥

देहिं परम गति सो जियँ जानी। अस कृपाल को कहहु भवानी॥
अस प्रभु सुनि न भजहिं भ्रम त्यागी। नर मतिमंद ते परम अभागी॥

ऐसा हृदयमें जानकर वे उन्हें परमगति (मोक्ष) देते हैं। हे भवानी! कहो तो [ऐसे कृ]पालु [और] कौन हैं? प्रभुका ऐसा स्वभाव सुनकर भी जो मनुष्य भ्रम त्याग-[कर उ]नका भजन नहीं करते, वे अत्यन्त मन्दबुद्धि और परम भाग्यहीन हैं॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अंगद अरु हनुमंत प्रबेसा। कीन्ह दुर्ग अस कह
लंकाँ द्वौ कपि सोहहिं कैसें। मथहिं सिंधु दुइ मंद

श्रीरामजीने कहा कि अंगद और हनुमान् किलेमें घुस गये हैं। दोनों
[विध्वंस करते] कैसे शोभा देते हैं, जैसे दो मन्दराचल समुद्रको मथ रहे

दो०—भुज बल रिपु दल दलमलि देखि दिवस कर अंत।
कूदे जुगल बिगत श्रम आए जहँ भगवंत ॥

भुजाओंके बलसे शत्रुकी सेनाको कुचलकर और मसलकर, फिर दि
होता देखकर हनुमान् और अंगद दोनों कूद पड़े और श्रम (थकावट)
वहाँ आ गये जहाँ भगवान् श्रीरामजी थे ॥ ४५ ॥

चौ०—प्रभु पद कमल सीस तिन्ह नाए। देखि सुभट रघुपति मन
राम कृपा करि जुगल निहारे। भए बिगतश्रम परम

उन्होंने प्रभुके चरणकमलोंमें सिर नवाये। उत्तम योद्धाओंको देखकर
जी मनमें बहुत प्रसन्न हुए। श्रीरामजीने कृपा करके दोनोंको देखा, जिस
रहित और परम सुखी हो गये ॥ १ ॥

गए जानि अंगद हनुमाना। फिरे भालु मर्कट भट
जातुधान प्रदोष बल पाई। धाए करि दससीस

अंगद और हनुमान्‌को गये जानकर सभी भालू और वानर वीर
राक्षसोंने प्रदोष(सायं) कालका बल पाकर रावण की दुहाई देते हुए वानरोंपर

निसिचर अनी देखि कपि फिरे। जहँ तहँ कटकटाइ भट
द्वौ दल प्रबल पचारि पचारी। लरत सुभट नहिं मानहिं

राक्षसोंकी सेना आती देखकर वानर लौट पड़े और वे योद्धा जहाँ-तहाँ
कर भिड़ गये। दोनों ही दल बड़े बलवान् हैं। योद्धा ललकार-ललकारकर
कोई हार नहीं मानते ॥ ३ ॥

महाबीर निसिचर सब कारे। नाना बरन बलीमुख
सबल जुगल दल समबल जोधा। कौतुक करत लरत करि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सभी राक्षस महान् वीर और अत्यन्त काले हैं और वानर विशालकाय तथा रंगोंके हैं। दोनों ही दल बलवान् हैं और समान बलवाले योद्धा हैं। वे क्रोध लड़ते हैं और खेल करते (वीरता दिखलाते) हैं ॥ ४ ॥

प्राबिट सरद पयोद घनेरे। लरत मनहुँ मारुत के प्रेरे॥
अनिप अकंपन अरु अतिकाया। बिचलत सेन कीन्हि इन्ह माया॥

[राक्षस और वानर युद्ध करते हुए ऐसे जान पड़ते हैं] मानो क्रमशः वर्षा और ऋतुके बहुत-से बादल पवनसे प्रेरित होकर लड़ रहे हों। अकंपन और अतिकाय नापतियोंने अपनी सेनाको विचलित होते देखकर माया की ॥ ५ ॥

भयउ निमिष महँ अति अँधिआरा। बृष्टि होइ रुधिरोपल छारा॥

पलभरमें अत्यन्त अन्धकार हो गया। खून, पत्थर और राखकी वर्षा होने लगी।६।

दो०—देखि निबिड़ तम दसहुँ दिसि कपिदल भयउ खभार।
एकहि एक न देखई जहँ तहँ करहिं पुकार॥ ४६॥

दसों दिशाओंमें अत्यन्त घना अन्धकार देखकर वानरोंकी सेनामें खलबली पड़ एकको एक (दूसरा) नहीं देख सकता और सब जहाँ-तहाँ पुकार कर रहे हैं।

सकल मरमु रघुनायक जाना। लिए बोलि अंगद हनुमाना॥
समाचार सब कहि समुझाए। सुनत कोपि कपिकुंजर धाए॥

श्रीरघुनाथजी सब रहस्य जान गये। उन्होंने अंगद और हनुमान्‌को बुला लिया ब समाचार कहकर समझाया। सुनते ही वे दोनों कपिश्रेष्ठ क्रोध करके दौड़े।

पुनि कृपाल हँसि चाप चढ़ावा। पावक सायक सपदि चलावा॥
भयउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं। ग्यान उदयँ जिमि संसय जाहीं॥

फिर कृपालु श्रीरामजीने हँसकर धनुष चढ़ाया और तुरंत ही अग्निबाण चलाया, प्रकाश हो गया, कहीं अँधेरा नहीं रह गया। जैसे ज्ञानके उदय होनेपर प्रकारके] सन्देह दूर हो जाते हैं॥ २॥

भालु बलीमुख पाइ प्रकासा। धाए हरष बिगत श्रम त्रासा॥
हनूमान अंगद रन गाजे। हाँक सुनत रजनीचर भाजे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भालू और वानर प्रकाश पाकर श्रम और भयसे रहित तथा प्रसन्न हैं। हनुमान् और अंगद रणमें गरज उठे। उनकी हाँक सुनते ही राक्षस भाग...

भागत भट पटकहिं धरि धरनी। करहिं भालु कपि अद्भुत...
गहि पद डारहिं सागर माहीं। मकर उरग झष धरि धरि...

भागते हुए राक्षस योद्धाओंको वानर और भालू पकड़कर पृथ्वीपर ... और अद्भुत (आश्चर्यजनक) करनी करते हैं (युद्धकौशल दिखलाते हैं)। ... उन्हें समुद्रमें डाल देते हैं। वहाँ मगर, साँप और मच्छ उन्हें पकड़-पकड़कर खा...

दो०—कछु मारे कछु घायल कछु गढ़ चढ़े पराइ।
गर्जहिं भालु बलीमुख रिपु दल बल बिचलाइ॥ ४७॥

कुछ मारे गये, कुछ घायल हुए, कुछ भागकर गढ़पर चढ़ गये। ... शत्रुदलको विचलित करके रीछ और वानर [वीर] गरज रहे हैं॥ ४७॥

चौ०—निसा जानि कपि चारिउ अनी। आए जहाँ कोसला ...
राम कृपा करि चितवा सबही। भए बिगतश्रम बानर ...

रात हुई जानकर वानरोंकी चारों सेनाएँ (टुकड़ियाँ) वहाँ आयीं जहाँ ... श्रीरामजी थे। श्रीरामजीने ज्यों ही सबको कृपा करके देखा त्यों ही ये ... रहित हो गये॥ १॥

उहाँ दसानन सचिव हँकारे। सब सन कहेसि सुभट ...
आधा कटकु कपिन्ह संघारा। कहहु बेगि का करिअ ...

वहाँ [लंकामें] रावणने मन्त्रियोंको बुलाया और जो योद्धा मारे गये थे ... सबसे बताया। [उसने कहा—] वानरोंने आधी सेनाका संहार कर ... शीघ्र बताओ, क्या विचार (उपाय) करना चाहिये?॥ २॥

माल्यवंत अति जरठ निसाचर। रावन मातु पिता मंत्री ...
बोला बचन नीति अति पावन। सुनहु तात कछु मोर सिख...

माल्यवंत [नामका एक] अत्यन्त बूढ़ा राक्षस था। वह रावणकी मा... (अर्थात् उसका नाना) और श्रेष्ठ मन्त्री था। वह अत्यन्त पवित्र नी... बोला—हे तात! कुछ मेरी सीख भी सुनो—॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब ते तुम्ह सीता हरि आनी। असगुन होहिं न जाहिं बखानी॥
बेद पुरान जासु जसु गायो। राम बिमुख काहुँ न सुख पायो॥

जबसे तुम सीताको हर लाये हो, तबसे इतने अपशकुन हो रहे हैं कि जो नहीं किये जा सकते। वेद-पुराणोंने जिनका यश गाया है, उन श्रीरामसे होकर किसीने सुख नहीं पाया॥ ४॥

दो०—हिरन्याच्छ भ्राता सहित मधु कैटभ बलवान।
जेहिं मारे सोइ अवतरेउ कृपासिंधु भगवान॥ ४८(क)॥

भाई हिरण्यकशिपुसहित हिरण्याक्षको और बलवान् मधु-कैटभको जिन्होंने मारा ही कृपाके समुद्र भगवान् [रामरूपसे] अवतरित हुए हैं॥ ४८ (क)॥

मासपारायण, पचीसवाँ विश्राम

कालरूप खल बन दहन गुनागार घनबोध।
सिव बिरंचि जेहि सेवहिं तासों कवन बिरोध॥ ४८(ख)॥

जो कालस्वरूप हैं, दुष्टोंके समूहरूपी वनके भस्म करनेवाले [अग्नि] हैं, गुणोंके और ज्ञानघन हैं एवं शिवजी और ब्रह्माजी भी जिनकी सेवा करते हैं, उनसे वैर ?॥ ४८ (ख)॥

—परिहरि बयरु देहु बैदेही। भजहु कृपानिधि परम सनेही॥
ताके बचन बान सम लागे। करिआ मुह करि जाहि अभागे॥

[अतः] वैर छोड़कर उन्हें जानकीजीको दे दो और कृपानिधान परम स्नेही मजीका भजन करो। रावणको उसके वचन बाणके समान लगे। [वह बोला—] अभागे! मुँह काला करके [यहाँसे] निकल जा॥ १॥

बूढ़ भएसि न त मरतेउँ तोही। अब जनि नयन देखावसि मोही॥
तेहिं अपने मन अस अनुमाना। बध्यो चहत एहि कृपानिधाना॥

तू बूढ़ा हो गया, नहीं तो तुझे मार ही डालता! अब मेरी आँखोंको अपना मुँह दिखला। रावणके ये वचन सुनकर उसने (माल्यवान्ने) अपने मनमें ऐसा अनुमान या कि इसे कृपानिधान श्रीरामजी अब मारना ही चाहते हैं॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो उठि गयउ कहत दुर्बादा। तब सकोप बोलेउ
कौतुक प्रात देखिअहु मोरा। करिहउँ बहुत कहौं

वह रावणको दुर्वचन कहता हुआ उठकर चला गया। तब मेघनाद बोला—सबेरे मेरी करामात देखना। मैं बहुत कुछ करूँगा; थोड़ा क्या कुछ वर्णन करूँगा थोड़ा ही होगा)॥ ३॥

सुनि सुत बचन भरोसा आवा। प्रीति समेत अंक
करत बिचार भयउ भिनुसारा। लागे कपि पुनि चहूँ

पुत्रके वचन सुनकर रावणको भरोसा आ गया। उसने प्रेमके साथ उसे लिया। विचार करते-करते ही सबेरा हो गया। वानर फिर चारों दरवाजोंपर जा

कोपि कपिन्ह दुर्घट गढ़ु घेरा। नगर कोलाहलु भयउ
बिबिधायुध धर निसिचर धाए। गढ़ ते पर्बत सिखर

वानरोंने क्रोध करके दुर्गम किलेको घेर लिया। नगरमें बहुत ही (शोर) मच गया। राक्षस बहुत तरहके अस्त्र-शस्त्र धारण करके दौड़े और किलेपरसे पहाड़ोंके शिखर ढहाये॥ ५॥

छं०—ढाहे महीधर सिखर कोटिन्ह बिबिध बिधि गोला चले।
घहरात जिमि पबिपात गर्जत जनु प्रलय के बादले।
मर्कट बिकट भट जुटत कटत न लटत तन जर्जर भए।
गहि सैल तेहि गढ़ पर चलावहिं जहँ सो तहँ निसिचर हए॥

उन्होंने पर्वतोंके करोड़ों शिखर ढहाये, अनेक प्रकारसे गोले चलने लगे। गोले ऐसा घहराते हैं जैसे वज्रपात हुआ हो (बिजली गिरी हो) और गरजते हैं मानो प्रलयकालके बादल हों। विकट वानर योद्धा भिड़ते हैं, कट जाते हैं (घायल हो जाते हैं), उनके शरीर जर्जर (चलनी) हो जाते हैं, तब भी वे लटते नहीं (हिम्मत नहीं हारते)। वे पहाड़ उठाकर उसे किलेपर फेंकते हैं। राक्षस जहाँ-के-तहाँ (जो जहाँ होते हैं वहीं) मारे जाते हैं।

दो०—मेघनाद सुनि श्रवन अस गढ़ु पुनि छेंका आइ।
उतर्यो बीर दुर्ग तें सन्मुख चल्यो बजाइ॥ ४

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेघनादने कानोंसे ऐसा सुना कि वानरोंने आकर फिर किलेको घेर लिया है। वह वीर किलेसे उतरा और डंका बजाकर उनके सामने चला ॥ ४९ ॥

—कहँ कोसलाधीस द्वौ भ्राता। धन्वी सकल लोक बिख्याता॥
कहँ नल नील दुबिद सुग्रीवा। अंगद हनूमंत बल सींवा॥

[मेघनादने पुकारकर कहा—] समस्त लोकोंमें प्रसिद्ध धनुर्धर कोसलाधीश भाई कहाँ हैं ? नल, नील, द्विविद, सुग्रीव और बलकी सीमा अंगद और न् कहाँ हैं ? ॥ १ ॥

कहाँ बिभीषनु भ्राताद्रोही। आजु सबहि हठि मारउँ ओही॥
अस कहि कठिन बान संधाने। अतिसय क्रोध श्रवन लगि ताने॥

भाईसे द्रोह करनेवाला विभीषण कहाँ है ? आज मैं सबको और उस दुष्टको ठपूर्वक (अवश्य ही) मारूँगा। ऐसा कहकर उसने धनुषपर कठिन बाणोंका न किया और अत्यन्त क्रोध करके उसे कानतक खींचा ॥ २ ॥

सर समूह सो छाड़ै लागा। जनु सपच्छ धावहिं बहु नागा॥
जहँ तहँ परत देखिअहिं बानर। सन्मुख होइ न सके तेहि अवसर॥

वह बाणोंके समूह छोड़ने लगा। मानो बहुत-से पंखवाले साँप दौड़े जा हों। जहाँ-तहाँ वानर गिरते दिखायी पड़ने लगे। उस समय कोई भी उसके सामने सके ॥ ३ ॥

जहँ तहँ भागि चले कपि रीछा। बिसरी सबहि जुद्ध कै ईछा॥
सो कपि भालु न रन महँ देखा। कीन्हेसि जेहि न प्रान अवसेषा॥

रीछ-वानर जहाँ-तहाँ भाग चले। सबको युद्धकी इच्छा भूल गयी। रणभूमिमें एक भी वानर या भालू नहीं दिखायी पड़ा जिसको उसने प्राणमात्र अवशेष न दिया हो (अर्थात् जिसके केवल प्राणमात्र ही न बचे हों; बल, पुरुषार्थ सारा न रहा हो) ॥ ४ ॥

दो०—दस दस सर सब मारेसि परे भूमि कपि बीर।
सिंहनाद करि गर्जा मेघनाद बल धीर ॥ ५० ॥

फिर उसने सबको दस-दस बाण मारे, वानर वीर पृथ्वीपर गिर पड़े।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बलवान् और धीर मेघनाद सिंहके समान नाद करके गरजने लगा ॥ ५० ॥

चौ०—देखि पवनसुत कटक बिहाला। क्रोधवंत जनु धायउ का
महासैल एक तुरत उपारा। अति रिस मेघनाद पर डा

सारी सेनाको बेहाल (व्याकुल) देखकर पवनपुत्र हनुमान् क्रोध करके
दौड़े मानो स्वयं काल दौड़ा आता हो। उन्होंने तुरंत एक बड़ा भारी पहाड़
लिया और बड़े ही क्रोधके साथ उसे मेघनादपर छोड़ा ॥ १ ॥

आवत देखि गयउ नभ सोई। रथ सारथी तुरग सब
बार बार पचार हनुमाना। निकट न आव मरमु सो जा

पहाड़को आते देखकर वह आकाशमें उड़ गया। [उसके] रथ,
और घोड़े सब नष्ट हो गये (चूर-चूर हो गये)। हनुमान्‌जी उसे बार-बार ल
हैं। पर वह निकट नहीं आता, क्योंकि वह उनके बलका मर्म जानता था ॥

रघुपति निकट गयउ घननादा। नाना भाँति करेसि दुर्बा
अस्त्र सस्त्र आयुध सब डारे। कौतुकहीं प्रभु काटि निवा

[तब] मेघनाद श्रीरघुनाथजीके पास गया और उसने [उनके प्रति]
प्रकारके दुर्वचनोंका प्रयोग किया। [फिर] उसने उनपर अस्त्र-शस्त्र तथा और
हथियार चलाये। प्रभुने खेलमें ही सबको काटकर अलग कर दिया ॥ ३ ॥

देखि प्रताप मूढ़ खिसिआना। करै लाग माया बिधि ना
जिमि कोउ करै गरुड़ सैं खेला। डरपावै गहि स्वल्प सपे

श्रीरामजीका प्रताप (सामर्थ्य) देखकर वह मूर्ख लज्जित हो गया और
प्रकारकी माया करने लगा। जैसे कोई व्यक्ति छोटा-सा साँपका बच्चा हाथमें
गरुड़को डरावे और उससे खेल करे ॥ ४ ॥

दो०—जासु प्रबल माया बस सिव बिरंचि बड़ छोट।
ताहि दिखावइ निसिचर निज माया मति खोट ॥ ५१ ॥

शिवजी और ब्रह्माजीतक बड़े-छोटे [सभी] जिनकी अत्यन्त बलवान्
वशमें हैं, नीचबुद्धि निशाचर उनको अपनी माया दिखलाता है ॥ ५१ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०-नभ चढ़ि बरष बिपुल अंगारा। महि ते प्रगट होहिं जलधारा॥
नाना भाँति पिसाच पिसाची। मारु काटु धुनि बोलहिं नाची॥

आकाशमें [ऊँचे] चढ़कर वह बहुत-से अंगारे बरसाने लगा। पृथ्वीसे जलकी धाराएँ प्रकट होने लगीं। अनेक प्रकारके पिशाच तथा पिशाचिनियाँ नाच-नाचकर 'मारो, काटो' की आवाज करने लगीं॥ १॥

बिष्टा पूय रुधिर कच हाड़ा। बरषइ कबहुँ उपल बहु छाड़ा॥
बरषि धूरि कीन्हेसि अँधिआरा। सूझ न आपन हाथ पसारा॥

वह कभी तो विष्ठा, पीब, खून, बाल और हड्डियाँ बरसाता था और कभी बहुत-से पत्थर फेंक देता था। फिर उसने धूल बरसाकर ऐसा अँधेरा कर दिया कि अपना ही पसारा हुआ हाथ नहीं सूझता था॥ २॥

कपि अकुलाने माया देखें। सब कर मरन बना एहि लेखें॥
कौतुक देखि राम मुसुकाने। भए सभीत सकल कपि जाने॥

माया देखकर वानर अकुला उठे। वे सोचने लगे कि इस हिसाबसे (इसी तरह रहा) तो सबका मरण आ बना। यह कौतुक देखकर श्रीरामजी मुसकराये। उन्होंने जान लिया कि सब वानर भयभीत हो गये हैं॥ ३॥

एक बान काटी सब माया। जिमि दिनकर हर तिमिर निकाया॥
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके। भए प्रबल रन रहहिं न रोके॥

तब श्रीरामजीने एक ही बाणसे सारी माया काट डाली, जैसे सूर्य अन्धकारके समूहको हर लेता है। तदनन्तर उन्होंने कृपाभरी दृष्टिसे वानर-भालुओंकी ओर देखा, [जिससे] वे ऐसे प्रबल हो गये कि रणमें रोकनेपर भी नहीं रुकते थे॥ ४॥

दो०-आयसु मागि राम पहिं अंगदादि कपि साथ।
लछिमन चले क्रुद्ध होइ बान सरासन हाथ॥ ५२॥

श्रीरामजीसे आज्ञा माँगकर अंगद आदि वानरोंके साथ हाथोंमें धनुष-बाण लिये हुए श्रीलक्ष्मणजी क्रुद्ध होकर चले॥ ५२॥

चौ०-छतज नयन उर बाहु बिसाला। हिमगिरि निभ तनु कछु एक लाला॥
इहाँ दसानन सुभट पठाए। नाना अस्त्र सस्त्र गहि धाए॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उनके लाल नेत्र हैं, चौड़ी छाती और विशाल भुजाएँ हैं। हिमाचल के समान उज्ज्वल (गौर वर्ण) शरीर कुछ ललाई लिये हुए है। इधर रावणने भी बड़े योद्धा भेजे, जो अनेकों अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़े ॥ १ ॥

भूधर नख बिटपायुध धारी। धाए कपि जय राम पुकारी॥
भिरे सकल जोरिहि सन जोरी। इत उत जय इच्छा नहिं थोरी॥

पर्वत, नख और वृक्षरूपी हथियार धारण किये हुए वानर 'श्रीरामचन्द्रजीकी जय' पुकारकर दौड़े। वानर और राक्षस सब जोड़ीसे जोड़ी भिड़ गये। इधर और उधर दोनों ओर जयकी इच्छा कम न थी (अर्थात् प्रबल थी) ॥ २ ॥

मुठिकन्ह लातन्ह दातन्ह काटहिं। कपि जयसील मारि पुनि डाटहिं॥
मारु मारु धरु धरु धरु मारू। सीस तोरि गहि भुजा उपारू॥

वानर उनको घूँसों और लातोंसे मारते हैं, दाँतोंसे काटते हैं। विजयशील वानर उन्हें मारकर फिर डाँटते भी हैं। 'मारो, मारो, पकड़ो, पकड़ो, पकड़कर मार दो, सिर तोड़ दो और भुजाएँ पकड़कर उखाड़ लो' ॥ ३ ॥

असि रव पूरि रही नव खंडा। धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा॥
देखहिं कौतुक नभ सुर बृंदा। कबहुँक बिसमय कबहुँ अनंदा॥

नवों खंडोंमें ऐसी आवाज भर रही है। प्रचण्ड रुण्ड (धड़) जहाँ-तहाँ दौड़ रहे हैं। आकाशमें देवतागण यह कौतुक देख रहे हैं। उन्हें कभी खेद होता है और कभी आनन्द ॥ ४ ॥

दो०—रुधिर गाड़ भरि भरि जम्यो ऊपर धूरि उड़ाइ।
जनु अँगार रासिन्ह पर मृतक धूम रह्यो छाइ ॥ ५२ ॥

खून गड्ढोंमें भर-भरकर जम गया है और उसपर धूल उड़कर पड़ रही है [वह दृश्य ऐसा है] मानो अंगारोंके ढेरोंपर राख छा रही हो ॥ ५२ ॥

चौ०—घायल बीर बिराजहिं कैसे। कुसुमित किंसुक के तरु जैसे॥
लछिमन मेघनाद द्वौ जोधा। भिरहिं परसपर करि अति क्रोधा॥

घायल वीर कैसे शोभित हैं, जैसे फूले हुए पलासके पेड़। लक्ष्मण और मेघनाद दोनों योद्धा अत्यन्त क्रोध करके एक दूसरेसे भिड़ते हैं ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एकहि एक सकइ नहिं जीती। निसिचर छल बल करइ अनीती ॥
क्रोधवंत तब भयउ अनंता। भंजेउ रथ सारथी तुरंता ॥

एक दूसरेको (कोई किसीको) जीत नहीं सकता। राक्षस छल-बल (माया) अनीति (अधर्म) करता है। तब भगवान् अनन्तजी (लक्ष्मणजी) क्रोधित और उन्होंने तुरंत उसके रथको तोड़ डाला और सारथिको टुकड़े-टुकड़े दिये ॥ २ ॥

नाना बिधि प्रहार कर सेषा। राच्छस भयउ प्रान अवसेषा ॥
रावन सुत निज मन अनुमाना। संकठ भयउ हरिहि मम प्राना ॥

शेषजी (लक्ष्मणजी) उसपर अनेक प्रकारसे प्रहार करने लगे। राक्षसके मात्र शेष रह गये। रावणपुत्र मेघनादने मनमें अनुमान किया कि अब तो प्राण-ट आ बना, ये मेरे प्राण हर लेंगे ॥ ३ ॥

बीरघातिनी छाड़िसि साँगी। तेज पुंज लछिमन उर लागी ॥
मुरुछा भई सक्ति के लागें। तब चलि गयउ निकट भय त्यागें ॥

तब उसने वीरघातिनी शक्ति चलायी। वह तेजपूर्ण शक्ति लक्ष्मणजीकी छातीमें गी। शक्तिके लगनेसे उन्हें मूर्छा आ गयी। तब मेघनाद भय छोड़कर उनके चला गया ॥ ४ ॥

दो०—मेघनाद सम कोटि सत जोधा रहे उठाइ।
जगदाधार सेष किमि उठै चले खिसिआइ ॥ ५४ ॥

मेघनादके समान सौ करोड़ (अगणित) योद्धा उन्हें उठा रहे हैं। परन्तु गतके आधार श्रीशेषजी (लक्ष्मणजी) उनसे कैसे उठते? तब वे लजाकर ले गये ॥ ५४ ॥

चौ०—सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारइ भुवन चारिदस आसू ॥
सक संग्राम जीति को ताही। सेवहिं सुर नर अग जग जाही ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे गिरिजे! सुनो, [प्रलयकालमें] जिन (शेषनाग) क्रोधकी अग्नि चौदहों भुवनोंको तुरंत ही जला डालती है और देवता, मनुष्य तथा समस्त चराचर [जीव] जिनकी सेवा करते हैं, उनको संग्राममें कौन जीत सकता है? ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह कौतूहल जानइ सोई। जापर कृपा राम कै
संध्या भइ फिरि द्वौ बाहनी। लगे सँभारन निज निज

इस लीलाको वही जान सकता है जिसपर श्रीरामजीकी कृपा हो। सन्ध्या
दोनों ओरकी सेनाएँ लौट पड़ीं; सेनापति अपनी-अपनी सेनाएँ सँभालने लगे

ब्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर। लछिमन कहाँ बूझ करुना
तब लगि लै आयउ हनुमाना। अनुज देखि प्रभु अति दुख मा

व्यापक, ब्रह्म, अजेय, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके ईश्वर और करुणाकी
श्रीरामचन्द्रजीने पूछा—लक्ष्मण कहाँ हैं? तबतक हनुमान् उन्हें ले आये। छोटे
[इस दशामें] देखकर प्रभुने बहुत ही दुःख माना ॥ ३ ॥

जामवंत कह बैद सुषेना। लंकाँ रहइ को पठई ले
धरि लघु रूप गयउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरं

जाम्बवान्‌ने कहा—लंकामें सुषेण वैद्य रहता है, उसे ले आनेके लिये कि
भेजा जाय? हनुमान्‌जी छोटा रूप धरकर गये और सुषेणको उसके घर
तुरंत ही उठा लाये ॥ ४ ॥

दो०—राम पदारबिंद सिर नायउ आइ सुषेन।
कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन ॥ ५५ ॥

सुषेणने आकर श्रीरामजीके चरणारविन्दोंमें सिर नवाया। उसने पर्वत और औष
नाम बताया, [और कहा कि] हे पवनपुत्र! ओषधि लेने जाओ ॥ ५५ ॥

चौ०—राम चरन सरसिज उर राखी। चला प्रभंजनसुत बल भा
उहाँ दूत एक मरमु जनावा। रावनु कालनेमि गृह आ

श्रीरामजीके चरणकमलोंको हृदयमें रखकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी अपना
बखानकर (अर्थात् मैं अभी लिये आता हूँ, ऐसा कहकर) चले। उधर एक गुप्त
रावणको इस रहस्यकी खबर दी। तब रावण कालनेमिके घर आया ॥ १ ॥

दसमुख कहा मरमु तेहिं सुना। पुनि पुनि कालनेमि सिरु धुना
देखत तुम्हहि नगरु जेहिं जारा। तासु पंथ को रोकन पारा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रावणने उसको सारा मर्म (हाल) बतलाया। कालनेमिने सुना और बार-बार पीटा (खेद प्रकट किया)। [उसने कहा—] तुम्हारे देखते-देखते जिसने नगर डाला, उसका मार्ग कौन रोक सकता है ?॥ २॥

भजि रघुपति करु हित आपना। छाँड़हु नाथ मृषा जल्पना॥
नील कंज तनु सुंदर स्यामा। हृदयँ राखु लोचनाभिरामा॥

श्रीरघुनाथजीका भजन करके तुम अपना कल्याण करो। हे नाथ! झूठी वाद छोड़ दो। नेत्रोंको आनन्द देनेवाले नीलकमलके समान सुन्दर श्याम शरीरको ने हृदयमें रक्खो॥ ३॥

मैं तैं मोर मूढ़ता त्यागू। महा मोह निसि सूतत जागू॥
काल ब्याल कर भच्छक जोई। सपनेहुँ समर कि जीतिअ सोई॥

मैं-तू (भेद-भाव) और ममतारूपी मूढ़ताको त्याग दो। महामोह (अज्ञान) पी रात्रिमें सो रहे हो, सो जाग उठो। जो कालरूपी सर्पका भी भक्षक है, कहीं पनमें भी वह रणमें जीता जा सकता है ?॥ ४॥

दो०—सुनि दसकंठ रिसान अति तेहिं मन कीन्ह बिचार।
राम दूत कर मरौं बरु यह खल रत मल भार॥ ५६॥

उसकी ये बातें सुनकर रावण बहुत ही क्रोधित हुआ। तब कालनेमिने मनमें चार किया कि [इसके हाथसे मरनेकी अपेक्षा] श्रीरामजीके दूतके हाथसे ही मरूँ अच्छा है। यह दुष्ट तो पापसमूहमें रत है॥ ५६॥

चौ०—अस कहि चला रचिसि मग माया। सर मंदिर बर बाग बनाया॥
मारुतसुत देखा सुभ आश्रम। मुनिहि बूझि जल पियौं जाइ श्रम॥

वह मन-ही-मन ऐसा कहकर चला और उसने मार्गमें माया रची। तालाब, मन्दिर और सुन्दर बाग बनाया। हनुमान्‌जीने सुन्दर आश्रम देखकर सोचा कि मुनिसे पूछकर जल पी लूँ, जिससे थकावट दूर हो जाय॥ १॥

राच्छस कपट बेष तहँ सोहा। मायापति दूतहि चह मोहा॥
जाइ पवनसुत नायउ माथा। लाग सो कहै राम गुन गाथा॥

राक्षस वहाँ कपट [से मुनि] का वेष बनाये विराजमान था। वह मूर्ख अपनी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मायासे मायापतिके दूतको मोहित करना चाहता था। मारुतिने उसके पास
मस्तक नवाया। वह श्रीरामजीके गुणोंकी कथा कहने लगा॥ २॥

होत महा रन रावन रामहिं। जितिहहिं राम न संसय या
इहाँ भएँ मैं देखउँ भाई। ग्यानदृष्टि बल मोहि अधि

[वह बोला—] रावण और राममें महान् युद्ध हो रहा है। रामजी
इसमें सन्देह नहीं है। हे भाई! मैं यहाँ रहता हुआ ही सब देख रहा हूँ।
ज्ञानदृष्टिका बहुत बड़ा बल है॥ ३॥

मागा जल तेहिं दीन्ह कमंडल। कह कपि नहिं अघाउँ थोरें ज
सर मज्जन करि आतुर आवहु। दिच्छा देउँ ग्यान जेहिं पाव

हनुमान्‌जीने उससे जल माँगा, तो उसने कमण्डलु दे दिया। हनुमा
कहा—थोड़े जलसे मैं तृप्त नहीं होनेका। तब वह बोला—तालाबमें स्नान करके
लौट आओ तो मैं तुम्हें दीक्षा दूँ, जिससे तुम ज्ञान प्राप्त करो॥ ४॥

दो०—सर पैठत कपि पद गहा मकरीं तब अकुलान।
मारी सो धरि दिब्य तनु चली गगन चढ़ि जान॥ ५७॥

तालाबमें प्रवेश करते ही एक मगरीने अकुलाकर उसी समय हनुमान्‌जीका
पकड़ लिया। हनुमान्‌जीने उसे मार डाला। तब वह दिव्य देह धारण करके विमा
चढ़कर आकाशको चली॥ ५७॥

चौ०—कपि तव दरस भइउँ निष्पापा। मिटा तात मुनिबर कर सापा
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा। मानहु सत्य बचन कपि मोरा

[उसने कहा—]हे वानर! मैं तुम्हारे दर्शनसे पापरहित हो गयी। हे तात! श्रेष्ठ मुनि
का शाप मिट गया। हे कपि! यह मुनि नहीं है, घोर निशाचर है। मेरा वचन सत्य मानो॥ १

अस कहि गई अपछरा जबहीं। निसिचर निकट गयउ कपि तबहीं
कह कपि मुनि गुरदछिना लेहू। पाछें हमहि मंत्र तुम्ह देहू

ऐसा कहकर ज्यों ही वह अप्सरा गयी, त्यों ही हनुमान्‌जी निशाचरके पास गये।
हनुमान्‌जीने कहा—हे मुनि! पहले गुरुदक्षिणा ले लीजिये। पीछे आप मु
मन्त्र दीजियेगा॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिर लंगूर लपेटि पछारा। निज तनु प्रगटेसि मरती बारा॥
राम राम कहि छाड़ेसि प्राना। सुनि मन हरषि चलेउ हनुमाना॥

हनुमान्‌जीने उसके सिरको पूँछमें लपेटकर उसे पछाड़ दिया। मरते समय उसने (राक्षसी) शरीर प्रकट किया। उसने राम-राम कहकर प्राण छोड़े। यह (उसके मुँहसे राम-नामका उच्चारण) सुनकर हनुमान्‌जी मनमें हर्षित होकर चले॥ ३॥

देखा सैल न औषध चीन्हा। सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा॥
गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ। अवधपुरी ऊपर कपि गयऊ॥

उन्होंने पर्वतको देखा और औषध न पहचान सके। तब हनुमान्‌जीने एकदमसे (पर्वत)को ही उखाड़ लिया। पर्वत लेकर हनुमान्‌जी रातहीमें आकाशमार्गसे दौड़ चले (और) अयोध्यापुरीके ऊपर पहुँच गये॥ ४॥

दो०—देखा भरत बिसाल अति निसिचर मन अनुमानि।
बिनु फर सायक मारेउ चाप श्रवन लगि तानि॥ ५८॥

भरतजीने आकाशमें अत्यन्त विशाल स्वरूप देखा, तब मनमें अनुमान किया (कि) यह कोई राक्षस है। उन्होंने कानतक धनुषको खींचकर बिना फलका एक बाण मारा।

(चौ०)—परेउ मुरुछि महि लागत सायक। सुमिरत राम राम रघुनायक॥
सुनि प्रिय बचन भरत तब धाए। कपि समीप अति आतुर आए॥

बाण लगते ही हनुमान्‌जी 'राम, राम, रघुपति' का उच्चारण करते हुए मूर्च्छित (होकर) पृथ्वीपर गिर पड़े। प्रिय वचन (रामनाम) सुनकर भरतजी उठकर दौड़े और (बड़ी) उतावलीसे हनुमान्‌जीके पास आये॥ १॥

बिकल बिलोकि कीस उर लावा। जागत नहिं बहु भाँति जगावा॥
मुख मलीन मन भए दुखारी। कहत बचन भरि लोचन बारी॥

हनुमान्‌जीको व्याकुल देखकर उन्होंने हृदयसे लगा लिया। बहुत तरहसे (ज)गाया, पर वे जागते न थे। तब भरतजीका मुख उदास हो गया। वे मनमें बड़े (दु)खी हुए और नेत्रोंमें [विषादके आँसुओंका] जल भरकर ये वचन बोले—॥ २॥

जेहिं बिधि राम बिमुख मोहि कीन्हा। तेहिं पुनि यह दारुन दुख दीन्हा॥
जौं मोरें मन बच अरु काया। प्रीति राम पद कमल अमाया॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिस विधाताने मुझे श्रीरामसे विमुख किया, उसीने फिर यह भयानक दुःख भी
यदि मन, वचन और शरीरसे श्रीरामजीके चरणकमलोंमें मेरा निष्कपट प्रेम हो,

तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला। जौं मो पर रघुपति अनु
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा। कहि जय जयति कोसलाधी

और यदि श्रीरघुनाथजी मुझपर प्रसन्न हों तो यह वानर थकावट और
रहित हो जाय! यह वचन सुनते ही कपिराज हनुमान्‌जी 'कोसलपति श्रीरामचन्द्र
जय हो, जय हो' कहते हुए उठ बैठे ॥ ४ ॥

सो०—लीन्ह कपिहि उर लाइ पुलकित तनु लोचन सजल।
प्रीति न हृदयँ समाइ सुमिरि राम रघुकुल तिलक ॥ ५९

भरतजीने वानर (हनुमान्‌जी) को हृदयसे लगा लिया, उनका शरीर पु
हो गया और नेत्रोंमें [आनन्द तथा प्रेमके आँसुओंका] जल भर आया। रघु
तिलक श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके भरतजीके हृदयमें प्रीति समाती न थी॥

चौ०—तात कुसल कहु सुखनिधान की। सहित अनुज अरु मातु जान
कपि सब चरित समास बखाने। भए दुखी मन महुँ पछिता

[भरतजी बोले—] हे तात! छोटे भाई लक्ष्मण तथा माता जानकी
सुखनिधान श्रीरामजीकी कुशल कहो। वानर (हनुमान्‌जी) ने संक्षेपमें सब
कही। सुनकर भरतजी दुखी हुए और मनमें पछताने लगे ॥ १ ॥

अहह दैव मैं कत जग जायउँ। प्रभु के एकहु काज न आय
जानि कुअवसरु मन धरि धीरा। पुनि कपि सन बोले बलबीर

हा दैव! मैं जगत्‌में क्यों जन्मा? प्रभुके एक भी काम न आया। फिर कुअ
(विपरीत समय) जानकर मनमें धीरज धरकर बलवीर भरतजी हनुमान्‌जीसे बोले—॥

तात गहरु होइहि तोहि जाता। काजु नसाइहि होत प्रभाता
चढ़ु मम सायक सैल समेता। पठवौं तोहि जहँ कृपानिके

हे तात! तुमको जानेमें देर होगी और सबेरा होते ही काम बिगड़ जाय
[अतः] तुम पर्वतसहित मेरे बाणपर चढ़ जाओ, मैं तुमको वहाँ भेज दूँ
कृपाके धाम श्रीरामजी हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनि कपि मन उपजा अभिमाना । मोरें भार चलिहि किमि बाना ॥
राम प्रभाव बिचारि बहोरी । बंदि चरन कह कपि कर जोरी ॥

भरतजीकी यह बात सुनकर [एक बार तो] हनुमान्‌जीके मनमें अभिमान हुआ कि मेरे बोझसे बाण कैसे चलेगा ? [किन्तु] फिर श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावका विचार करके वे भरतजीके चरणोंकी वन्दना करके हाथ जोड़कर बोले—॥ ४॥

दो०—तव प्रताप उर राखि प्रभु जैहउँ नाथ तुरंत ।
अस कहि आयसु पाइ पद बंदि चलेउ हनुमंत ॥६०(क)॥

हे नाथ ! हे प्रभो ! मैं आपका प्रताप हृदयमें रखकर तुरंत चला जाऊँगा। ऐसा कहकर आज्ञा पाकर और भरतजीके चरणोंकी वन्दना करके हनुमान्‌जी चले ॥ ६० (क)॥

भरत बाहु बल सील गुन प्रभु पद प्रीति अपार ।
मन महुँ जात सराहत पुनि पुनि पवनकुमार ॥६०(ख)॥

भरतजीके बाहुबल, शील (सुन्दर स्वभाव), गुण और प्रभुके चरणोंमें अपार प्रेमकी मन-ही-मन बारंबार सराहना करते हुए मारुति श्रीहनुमान्‌जी चले जा रहे हैं॥ ६० (ख)॥

चौ०—उहाँ राम लछिमनहि निहारी । बोले बचन मनुज अनुसारी ॥
अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ । राम उठाइ अनुज उर लायउ ॥

वहाँ लक्ष्मणजीको देखकर श्रीरामजी साधारण मनुष्योंके अनुसार (समान) वचन बोले—आधी रात बीत चुकी, हनुमान् नहीं आये । यह कहकर श्रीरामजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको उठाकर हृदयसे लगा लिया॥ १ ॥

सकहु न दुखित देखि मोहि काऊ । बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ ॥
मम हित लागि तजेहु पितु माता । सहेहु बिपिन हिम आतप बाता ॥

[और बोले—] हे भाई ! तुम मुझे कभी दुखी नहीं देख सकते थे । तुम्हारा स्वभाव सदासे ही कोमल था । मेरे हितके लिये तुमने माता-पिताको भी छोड़ दिया और वनमें जाड़ा, गरमी और हवा सब सहन किया॥ २ ॥

सो अनुराग कहाँ अब भाई । उठहु न सुनि मम बच बिकलाई ॥
जौं जनतेउँ बन बंधु बिछोहू । पिता बचन मनतेउँ नहिं ओहू ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे भाई ! वह प्रेम अब कहाँ है ? मेरे व्याकुलतापूर्ण वचन सुनकर
नहीं ? यदि मैं जानता कि वनमें भाईका विछोह होगा तो मैं पिताका वचन [
मानना मेरे लिये परम कर्तव्य था] उसे भी न मानता ॥ ३ ॥

सुत बित नारि भवन परिवारा । होहिं जाहिं जग बारहिं
अस बिचारि जियँ जागहु ताता । मिलइ न जगत सहोदर

पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार—ये जगत्‌में बार-बार होते और जाते हैं
जगत्‌में सहोदर भाई बार-बार नहीं मिलता । हृदयमें ऐसा विचारकर हे तात ! जा

जथा पंख बिनु खग अति दीना । मनि बिनु फनि करिबर कर
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही । जौं जड़ दैव जिआवै

जैसे पंख बिना पक्षी, मणि बिना सर्प और सूँड़ बिना श्रेष्ठ हाथी अत्यन्त
जाते हैं, हे भाई ! यदि कहीं जड़ दैव मुझे जीवित रक्खे तो तुम्हारे बिना मेरा
भी ऐसा ही होगा ॥ ५ ॥

जैहउँ अवध कौन मुहु लाई । नारि हेतु प्रिय भाइ गँवा
बरु अपजस सहतेउँ जग माहीं । नारि हानि बिसेष छति ना

स्त्रीके लिये प्यारे भाईको खोकर, मैं कौन-सा मुँह लेकर अवध जाऊँगा
जगत्‌में बदनामी भले ही सह लेता (कि राममें कुछ भी वीरता नहीं है जो स्त्रीको
बैठे) । स्त्रीकी हानिसे [इस हानिको देखते] कोई विशेष क्षति नहीं थी ॥ ६ ॥

अब अपलोकु सोकु सुत तोरा । सहिहि निठुर कठोर उर मो
निज जननी के एक कुमारा । तात तासु तुम्ह प्रान अधा

अब तो हे पुत्र ! मेरा निठुर और कठोर हृदय यह अपयश और तुम्हारा शोक
ही सहन करेगा । हे तात ! तुम अपनी माताके एक ही पुत्र और उसके प्राणाधार हो ॥

सौंपेसि मोहि तुम्हहि गहि पानी । सब बिधि सुखद परम हित जानी
उतरु काह दैहउँ तेहि जाई । उठि किन मोहि सिखावहु भाई

सब प्रकारसे सुख देनेवाला और परम हितकारी जानकर उन्होंने तुम्हें
पकड़कर मुझे सौंपा था । मैं अब जाकर उन्हें क्या उत्तर दूँगा ? हे भाई !
उठकर मुझे सिखाते (समझाते) क्यों नहीं ? ॥ ८ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहु बिधि सोचत सोच बिमोचन। स्रवत सलिल राजिव दल लोचन॥
उमा एक अखंड रघुराई। नर गति भगत कृपाल देखाई॥

सोचसे छुड़ानेवाले श्रीरामजी बहुत प्रकारसे सोच कर रहे हैं। उनके कमलकी [पंखु]ड़ीके समान नेत्रोंसे [विषादके आँसुओंका] जल बह रहा है [शिवजी कहते हैं—] [उ]मा ! श्रीरघुनाथजी एक (अद्वितीय) और अखण्ड (वियोगरहित) हैं। भक्तोंपर [कृपा] करनेवाले भगवान्‌ने [लीला करके] मनुष्यकी दशा दिखलायी है॥ ९॥

सो०—प्रभु प्रलाप सुनि कान बिकल भए बानर निकर।
आइ गयउ हनुमान जिमि करुना महँ बीर रस॥ ६१॥

प्रभुके [लीलाके लिये किये गये] प्रलापको कानोंसे सुनकर वानरोंके समूह [व्याक]ुल हो गये। [इतनेमें ही] हनुमान्‌जी आ गये, जैसे करुणरस [के प्रसंग] [में वी]ररस [का प्रसंग] आ गया हो॥ ६१॥

[चौ०]—हरषि राम भेटेउ हनुमाना। अति कृतग्य प्रभु परम सुजाना॥
तुरत बैद तब कीन्हि उपाई। उठि बैठे लछिमन हरषाई॥

श्रीरामजी हर्षित होकर हनुमान्‌जीसे गले लगकर मिले। प्रभु परम सुजान [(च]तुर) और अत्यन्त ही कृतज्ञ हैं। तब वैद्य (सुषेण) ने तुरंत उपाय किया, [जिससे] लक्ष्मणजी हर्षित होकर उठ बैठे॥ १॥

हृदयँ लाइ प्रभु भेंटेउ भ्राता। हरषे सकल भालु कपि ब्राता॥
कपि पुनि बैद तहाँ पहुँचावा। जेहि बिधि तबहिं ताहि लइ आवा॥

प्रभु भाईको हृदयसे लगाकर मिले। भालू और वानरोंके समूह सब हर्षित हो [गये]। फिर हनुमान्‌जीने वैद्यको उसी प्रकार वहाँ पहुँचा दिया जिस प्रकार वे उस बार [(प]हले) उसे ले आये थे॥ २॥

यह बृत्तांत दसानन सुनेऊ। अति बिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ॥
ब्याकुल कुंभकरन पहिं आवा। बिबिध जतन करि ताहि जगावा॥

यह समाचार जब रावणने सुना, तब उसने अत्यन्त विषादसे बार-बार सिर [पीटा]। वह व्याकुल होकर कुम्भकर्णके पास गया और बहुत-से उपाय करके उसने [उ]सको जगाया॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जागा निसिचर देखिअ कैसा। मानहुँ कालु देह धरि
कुंभकरन बूझा कहु भाई। काहे तव मुख रहे सु

कुम्भकर्ण जगा (उठ बैठा)। वह कैसा दिखायी देता है मानो स्वयं काल ही धारण करके बैठा हो। कुम्भकर्णने पूछा—हे भाई ! कहो तो, तुम्हारे मुख सूख क्यों

कथा कही सब तेहिं अभिमानी। जेहि प्रकार सीता हरि आ
तात कपिन्ह सब निसिचर मारे। महा महा जोधा सं

उस अभिमानी (रावण) ने उससे जिस प्रकारसे वह सीताको हर ला [तबसे अबतककी] सारी कथा कही। [फिर कहा—] हे तात ! वानरों राक्षस मार डाले। बड़े-बड़े योद्धाओंका भी संहार कर डाला॥ ५॥

दुर्मुख सुररिपु मनुज अहारी। भट अतिकाय अकंपन भा
अपर महोदर आदिक बीरा। परे समर महि सब रनधी

दुर्मुख, देवशत्रु (देवान्तक), मनुष्यभक्षक (नरान्तक), भारी योद्धा अति और अकम्पन तथा महोदर आदि दूसरे सभी रणधीर वीर रणभूमिमें मारे गये॥

दो०—सुनि दसकंधर बचन तब कुंभकरन बिलखान।
जगदंबा हरि आनि अब सठ चाहत कल्यान॥ ६२॥

तब रावणके वचन सुनकर कुम्भकर्ण बिलखकर (दुखी होकर) बोला— मूर्ख ! जगज्जननी जानकीको हर लाकर अब तू कल्याण चाहता है ?॥ ६२॥

चौ०—भल न कीन्ह तैं निसिचर नाहा। अब मोहि आइ जगाएहि काहे
अजहूँ तात त्यागि अभिमाना। भजहु राम होइहि कल्यान

हे राक्षसराज ! तूने अच्छा नहीं किया। अब आकर मुझे क्या जगाया? हे त अब भी अभिमान छोड़कर श्रीरामजीको भजो तो कल्याण होगा॥ १॥

हैं दससीस मनुज रघुनायक। जाके हनूमान से पायक
अहह बंधु तैं कीन्हि खोटाई। प्रथमहिं मोहि न सुनाएहि आ

हे रावण ! जिनके हनुमान्-सरीखे सेवक हैं, वे श्रीरघुनाथजी क्या मनुष्य हैं ? भाई ! तूने बुरा किया, जो पहले ही आकर मुझे यह हाल नहीं सुनाया॥ २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कीन्हेहु प्रभु बिरोध तेहि देवक। सिव बिरंचि सुर जाके सेवक॥
नारद मुनि मोहि ग्यान जो कहा। कहतेउँ तोहि समय निरबहा॥

हे स्वामी! तुमने उस परम देवताका विरोध किया, जिसके शिव, ब्रह्मा आदि सेवक हैं। नारद मुनिने मुझे जो ज्ञान कहा था, वह मैं तुझसे कहता; पर तो समय जाता रहा॥ ३॥

अब भरि अंक भेंटु मोहि भाई। लोचन सुफल करौं मैं जाई॥
स्याम गात सरसीरुह लोचन। देखौं जाइ ताप त्रय मोचन॥

हे भाई! अब तो [अन्तिम बार] अँकवार भरकर मुझसे मिल ले। मैं जाकर नेत्र सफल करूँ। तीनों तापोंको छुड़ानेवाले श्यामशरीर, कमलनेत्र श्रीरामजीके दर्शन करूँ॥ ४॥

दो०—राम रूप गुन सुमिरत मगन भयउ छन एक।
रावन मागेउ कोटि घट मद अरु महिष अनेक॥ ६३॥

श्रीरामचन्द्रजीके रूप और गुणोंको स्मरण करके वह एक क्षणके लिये प्रेममें हो गया। फिर रावणसे करोड़ों घड़े मदिरा और अनेकों भैंसे मँगवाये॥ ६३॥

—महिष खाइ करि मदिरा पाना। गर्जा बज्राघात समाना॥
कुंभकरन दुर्मद रन रंगा। चला दुर्ग तजि सेन न संगा॥

भैंसे खाकर और मदिरा पीकर वह वज्रघात (बिजली गिरने) के समान गरजा। चूर रणके उत्साहसे पूर्ण कुम्भकर्ण किला छोड़कर चला। सेना भी साथ नहीं ली॥ १॥

देखि बिभीषनु आगें आयउ। परेउ चरन निज नाम सुनायउ॥
अनुज उठाइ हृदयँ तेहि लायो। रघुपति भक्त जानि मन भायो॥

उसे देखकर विभीषण आगे आये और उसके चरणोंपर गिरकर अपना नाम सुनाया। छोटे भाईको उठाकर उसने हृदयसे लगा लिया। और श्रीरघुनाथजीका भक्त जानकर वे उसके मनको प्रिय लगे॥ २॥

तात लात रावन मोहि मारा। कहत परम हित मंत्र बिचारा॥
तेहिं गलानि रघुपति पहिं आयउँ। देखि दीन प्रभु के मन भायउँ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[विभीषणने कहा—] हे तात ! परम हितकर सलाह एवं विचार
रावणने मुझे लात मारी। उसी ग्लानिके मारे मैं श्रीरघुनाथजीके पास चला
दीन देखकर प्रभुके मनको मैं [बहुत] प्रिय लगा ॥ ३ ॥

सुनु सुत भयउ काल बस रावन। सो कि मान अब परम सिखा
धन्य धन्य तैं धन्य बिभीषन। भयहु तात निसिचर कुल भू

[कुम्भकर्णने कहा—] हे पुत्र ! सुन, रावण तो कालके वश हो ग
(उसके सिरपर मृत्यु नाच रही है)। वह क्या अब उत्तम शिक्षा मान सक
हे विभीषण ! तू धन्य है, धन्य है, धन्य है। हे तात ! तू राक्षसकुलका भूषण हो गय

बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर। भजेहु राम सोभा सुख सा

हे भाई ! तूने अपने कुलको देदीप्यमान कर दिया, जो शोभा और
समुद्र श्रीरामजीको भजा ॥ ५ ॥

दो०—बचन कर्म मन कपट तजि भजेहु राम रनधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि भयउँ कालबस बीर ॥ ६४

मन वचन और कर्मसे कपट छोड़कर रणधीर श्रीरामजीका भजन करना
भाई ! मैं काल (मृत्यु) के वश हो गया हूँ, मुझे अपना-पराया नहीं
इसलिये अब तुम जाओ ॥ ६४ ॥

चौ०—बंधु बचन सुनि चला बिभीषन। आयउ जहँ त्रैलोक बिभू
नाथ भूधराकार सरीरा। कुंभकरन आवत रनधी

भाईके वचन सुनकर विभीषण लौट गये और वहाँ आये जहाँ त्रिलोकीके
श्रीरामजी थे। [विभीषणने कहा—] हे नाथ ! पर्वतके समान [विशाल] देह
रणधीर कुम्भकर्ण आ रहा है ॥ १ ॥

एतना कपिन्ह सुना जब काना। किलकिलाइ धाए बलवा
लिए उठाइ बिटप अरु भूधर। कटकटाइ डारहिं ता ऊप

वानरोंने जब कानोंसे इतना सुना, तब वे बलवान् किलकिलाकर (ह
करके) दौड़े। वृक्ष और पर्वत [उखाड़कर] उठा लिये और [क्रोधसे
कटकटाकर उन्हें उसके ऊपर डालने लगे ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोटि कोटि गिरि सिखर प्रहारा। करहिं भालु कपि एक एक बारा ॥
मुरयो न मनु तनु टरयो न टारयो। जिमि गज अर्क फलनि को मारयो ॥

रीछ-वानर एक-एक बारमें ही करोड़ों पहाड़ोंके शिखरोंसे उसपर प्रहार करते हैं। इससे न तो उसका मन ही मुड़ा (विचलित हुआ) और न शरीर ही टाले टला, मदारके फलोंकी मारसे हाथीपर कुछ भी असर नहीं होता ! ॥ ३ ॥

तब मारुतसुत मुठिका हन्यो। परयो धरनि ब्याकुल सिर धुन्यो ॥
पुनि उठि तेहिं मारेउ हनुमंता। घुर्मित भूतल परेउ तुरंता ॥

तब हनुमान्‌जीने उसे एक घूँसा मारा, जिससे वह व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर और सिर पीटने लगा। फिर उसने उठकर हनुमान्‌जीको मारा। वे चक्कर तुरंत ही पृथ्वीपर गिर पड़े ॥ ४ ॥

पुनि नल नीलहि अवनि पछारेसि। जहँ तहँ पटकि पटकि भट डारेसि ॥
चली बलीमुख सेन पराई। अति भय त्रसित न कोउ समुहाई ॥

फिर उसने नल-नीलको पृथ्वीपर पछाड़ दिया और दूसरे योद्धाओंको भी जहाँ-हाँ पटक-पटककर डाल दिया। वानरसेना भाग चली। सब अत्यन्त भयभीत हो , कोई सामने नहीं आता ॥ ५ ॥

दो०—अंगदादि कपि मुरुछित करि समेत सुग्रीव।
काँख दाबि कपिराज कहुँ चला अमित बल सींव ॥ ६५ ॥

सुग्रीवसमेत अंगदादि वानरोंको मूर्च्छित करके फिर वह अपरिमित बलकी सीमा कुम्भकर्ण वानरराज सुग्रीवको काँखमें दबाकर चला ॥ ६५ ॥

चौ०—उमा करत रघुपति नरलीला। खेलत गरुड़ जिमि अहिगन मीला ॥
भृकुटि भंग जो कालहि खाई। ताहि कि सोहइ ऐसि लराई ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! श्रीरघुनाथजी वैसे ही नरलीला कर रहे हैं जैसे गरुड़ सर्पोंके समूहमें मिलकर खेलता हो। जो भौंहके इशारेमात्रसे (बिना परिश्रमके) कालको भी खा जाता है, उसे कहीं ऐसी लड़ाई शोभा देती है ? ॥ १ ॥

जग पावनि कीरति बिस्तरिहहिं। गाइ गाइ भवनिधि नर तरिहहिं ॥
मुरुछा गइ मारुतसुत जागा। सुग्रीवहि तब खोजन लागा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् [इसके द्वारा] जगत्‌को पवित्र करनेवाली वह कीर्ति फैलाये
गा-गाकर मनुष्य भवसागरसे तर जायँगे। मूर्च्छा जाती रही, तब मारुति ह
जागे और फिर वे सुग्रीवको खोजने लगे ॥ २ ॥

सुग्रीवहु कै मुरुछा बीती। निबुकि गयउ तेहि मृतक प्र
काटेसि दसन नासिका काना। गरजि अकास चलेउ तेहिं ज

सुग्रीवकी भी मूर्च्छा दूर हुई, तब वे [मुर्दे-से होकर] खिसक गये (
नीचे गिर पड़े)। कुम्भकर्णने उनको मृतक जाना। उन्होंने कुम्भकर्णके नाक-कान
से काट लिये और फिर गरजकर आकाशकी ओर चले, तब कुम्भकर्णने जाना॥

गहेउ चरन गहि भूमि पछारा। अति लाघवँ उठि पुनि तेहि मा
पुनि आयउ प्रभु पहिं बलवाना। जयति जयति जय कृपानिधा

उसने सुग्रीवका पैर पकड़कर उनको पृथ्वीपर पछाड़ दिया। फिर सुग्रीवने
फुर्तीसे उठकर उसको मारा। और तब बलवान् सुग्रीव प्रभुके पास आये और
कृपानिधान प्रभुकी जय हो, जय हो, जय हो ॥ ४ ॥

नाक कान काटे जियँ जानी। फिरा क्रोध करि भइ मन ग्ला
सहज भीम पुनि बिनु श्रुति नासा। देखत कपि दल उपजी त्रा

नाक-कान काटे गये, ऐसा मनमें जानकर बड़ी ग्लानि हुई; और वह क्रोध
लौटा। एक तो वह स्वभाव (आकृति) से ही भयङ्कर था और फिर बिना नाक-का
होनेसे और भी भयानक हो गया। उसे देखते ही वानरोंकी सेनामें भय उत्पन्न हो गया॥

दो०—जय जय जय रघुबंस मनि धाए कपि दै हूह।
एकहि बार तासु पर छाड़ेन्हि गिरि तरु जूह ॥ ६६ ॥

'रघुवंशमणिकी जय हो, जय हो, जय हो' ऐसा पुकारकर वानर हूह करके
और सबने एक ही साथ उसपर पहाड़ और वृक्षोंके समूह छोड़े ॥ ६६ ॥

चौ०—कुंभकरन रन रंग बिरुद्धा। सन्मुख चला काल जनु क्रुद्धा
कोटि कोटि कपि धरि धरि खाई। जनु टीड़ी गिरि गुहाँ समाई

रणके उत्साहमें कुम्भकर्ण विरुद्ध होकर [उनके] सामने ऐसा चला मानो क्रोधि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

र काल ही आ रहा हो। वह करोड़-करोड़ वानरोंको एक साथ पकड़-पकड़कर लगा। [वे उसके मुँहमें इस तरह घुसने लगे] मानो पर्वतकी गुफामें टिड्डियाँ रही हों ॥ १ ॥

कोटिन्ह गहि सरीर सन मर्दा। कोटिन्ह मीजि मिलव महि गर्दा ॥
मुख नासा श्रवनन्हि कीं बाटा। निसरि पराहिं भालु कपि ठाटा ॥

करोड़ों (वानरों) को पकड़कर उसने शरीरसे मसल डाला। करोड़ोंको हाथोंसे कर पृथ्वीकी धूलमें मिला दिया। [पेटमें गये हुए] भालू और वानरोंके ठट्ट-के-ठट्ट मुख, नाक और कानोंकी राहसे निकल-निकलकर भाग रहे हैं ॥ २ ॥

रन मद मत्त निसाचर दर्पा। बिस्व ग्रसिहि जनु एहि बिधि अर्पा ॥
मुरे सुभट सब फिरहिं न फेरे। सूझ न नयन सुनहिं नहिं टेरे ॥

रणके मदमें मत्त राक्षस कुम्भकर्ण इस प्रकार गर्वित हुआ, मानो विधाताने उसको विश्व अर्पण कर दिया हो, और उसे वह ग्रास कर जायगा। सब योद्धा भाग हुए, वे लौटाये भी नहीं लौटते। आँखोंसे उन्हें सूझ नहीं पड़ता और पुकारनेसे ते नहीं ! ॥ ३ ॥

कुंभकरन कपि फौज बिडारी। सुनि धाई रजनीचर धारी ॥
देखी राम बिकल कटकाई। रिपु अनीक नाना बिधि आई ॥

कुम्भकर्णने वानर-सेनाको तितर-बितर कर दिया। यह सुनकर राक्षस-सेना भी दौड़ी। रामचन्द्रजीने देखा कि अपनी सेना व्याकुल है और शत्रुकी नाना प्रकारकी सेना गयी है ॥ ४ ॥

दो०—सुनु सुग्रीव बिभीषन अनुज सँभारेहु सैन।
मैं देखउँ खल बल दलहि बोले राजिवनैन ॥ ६७ ॥

तब कमलनयन श्रीरामजी बोले—हे सुग्रीव ! हे विभीषण ! और हे लक्ष्मण ! सुनो, सेनाको सँभालना। मैं इस दुष्टके बल और सेनाको देखता हूँ ॥ ६७ ॥

चौ०—कर सारंग साजि कटि भाथा। अरि दल दलन चले रघुनाथा ॥
प्रथम कीन्हि प्रभु धनुष टँकोरा। रिपु दल बधिर भयउ सुनि सोरा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हाथमें शार्ङ्गधनुष और कमरमें तरकस सजकर श्रीरघुनाथजी शत्रुसेनाको [मर्दन] करने चले। प्रभुने पहले तो धनुषका टंकार किया जिसकी भयानक आवाज[से सुनते] ही शत्रुदल बहरा हो गया॥ १॥

सत्यसंध छाँड़े सर लच्छा। कालसर्प जनु चले सप[च्छा]॥
जहँ तहँ चले बिपुल नाराचा। लगे कटन भट बिकट पिसा[चा]॥

फिर सत्यप्रतिज्ञ श्रीरामजीने एक लाख बाण छोड़े। वे ऐसे चले मानो पं[खवाले] काल-सर्प चले हों। जहाँ-तहाँ बहुत-से बाण चले, जिनसे भयंकर राक्षस योद्धा कटने [लगे॥ २॥]

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा। बहुतक बीर होहिं सत खं[डा]॥
घुर्मि घुर्मि घायल महि परहीं। उठि संभारि सुभट पुनि ल[रहीं]॥

उनके चरण, छाती, सिर और भुजदण्ड कट रहे हैं। बहुत-से वीरोंके [सौ-सौ] टुकड़े हो जाते हैं। घायल चक्कर खा-खाकर पृथ्वीपर पड़ रहे हैं। उत्तम योद्धा सँभलकर उठते और लड़ते हैं॥ ३॥

लागत बान जलद जिमि गाजहिं। बहुतक देखि कठिन सर भाज[हिं]॥
रुंड प्रचंड मुंड बिनु धावहिं। धरु धरु मारु मारु धुनि गावहिं॥

बाण लगते ही वे मेघकी तरह गरजते हैं। बहुत-से तो कठिन बाणको दे[खकर] ही भाग जाते हैं। बिना मुण्ड (सिर) के प्रचण्ड रुण्ड (धड़) दौड़ रहे हैं [और] 'पकड़ो, पकड़ो, मारो, मारो' का शब्द करते हुए गा (चिल्ला) रहे हैं॥ ४॥

दो०—छन महुँ प्रभु के सायकन्हि काटे बिकट पिसाच।
पुनि रघुबीर निषंग महुँ प्रबिसे सब नाराच॥ ६८॥

प्रभुके बाणोंने क्षणमात्रमें भयानक राक्षसोंको काटकर रख दिया। फिर [वे] बाण लौटकर श्रीरघुनाथजीके तरकसमें घुस गये॥ ६८॥

चौ०—कुंभकरन मन दीख बिचारी। हति छन माझ निसाचर धा[री]॥
भा अति क्रुद्ध महाबल बीरा। कियो मृगनायक नाद गँभीरा॥

कुम्भकर्णने मनमें विचारकर देखा कि श्रीरामजीने क्षणमात्रमें राक्षसी सेना[का] संहार कर डाला। तब वह महाबली वीर अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसने ग[म्भीर] सिंहनाद किया॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोपि महीधर लेइ उपारी। डारइ जहँ मर्कट भट भारी॥
आवत देखि सैल प्रभु भारे। सरन्हि काटि रज सम करि डारे॥

वह क्रोध करके पर्वत उखाड़ लेता है और जहाँ भारी-भारी वानर-योद्धा होते हैं, डाल देता है। बड़े-बड़े पर्वतोंको आते देखकर प्रभुने उनको बाणोंसे काटकर [धूल]के समान (चूर-चूर) कर डाला॥ २॥

पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक। छाँड़े अति कराल बहु सायक॥
तनु महुँ प्रबिसि निसरि सर जाहीं। जिमि दामिनि घन माझ समाहीं॥

फिर श्रीरघुनाथजीने क्रोध करके धनुषको तानकर बहुत-से अत्यन्त भयानक [बाण] छोड़े। वे बाण कुम्भकर्णके शरीरमें घुसकर [पीछेसे इस प्रकार] निकल जाते हैं [कि] उनका पता नहीं चलता], जैसे बिजलियाँ बादलमें समा जाती हैं॥ ३॥

सोनित स्रवत सोह तन कारे। जनु कज्जल गिरि गेरु पनारे॥
बिकल बिलोकि भालु कपि धाए। बिहँसा जबहिं निकट कपि आए॥

उसके काले शरीरसे रुधिर बहता हुआ ऐसी शोभा देता है, मानो काजलके [पर्वत]से गेरूके पनाले बह रहे हों। उसे व्याकुल देखकर रीछ-वानर दौड़े। वे ज्यों ही [निक]ट आये, त्यों ही वह हँसा,॥ ४॥

दो०—महानाद करि गर्जा कोटि कोटि गहि कीस।
महि पटकइ गजराज इव सपथ करइ दससीस॥ ६९॥

और बड़ा घोर शब्द करके गरजा। तथा करोड़-करोड़ वानरोंको पकड़कर वह [गज]राजकी तरह उन्हें पृथ्वीपर पटकने लगा और रावणकी दुहाई देने लगा॥ ६९॥

[चौ]०—भागे भालु बलीमुख जूथा। बृकु बिलोकि जिमि मेष बरूथा॥
चले भागि कपि भालु भवानी। बिकल पुकारत आरत बानी॥

यह देखकर रीछ-वानरोंके झुंड ऐसे भागे जैसे भेड़ियेको देखकर भेड़ोंके झुंड। [शिवजी कहते हैं—] हे भवानी! वानर-भालू व्याकुल होकर आर्तवाणीसे पुकारते हुए [भाग] चले॥ १॥

यह निसिचर दुकाल सम अहई। कपिकुल देस परन अब चहई॥
कृपा बारिधर राम खरारी। पाहि पाहि प्रनतारति हारी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[वे कहने लगे—] यह राक्षस दुर्भिक्षके समान है, जो अब वानरकुलरूपी ... पड़ना चाहता है। हे कृपारूपी जलके धारण करनेवाले मेघरूप श्रीराम! हे खरके ... शरणागतके दुःख हरनेवाले! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये!॥ २॥

सकरुन बचन सुनत भगवाना। चले सुधारि सरासन बा...
राम सेन निज पाछें घाली। चले सकोप महा बलसा...

करुणाभरे वचन सुनते ही भगवान् धनुष-बाण सुधारकर चले। महाब... श्रीरामजीने सेनाको अपने पीछे कर लिया और वे [अकेले] क्रोधपूर्वक चले (आगे ...

खैंचि धनुष सर सत संधाने। छूटे तीर सरीर समा...
लगत सर धावा रिस भरा। कुधर डगमगत डोलति ध...

उन्होंने धनुषको खींचकर सौ बाण सन्धान किये। बाण छूटे और ... शरीरमें समा गये। बाणोंके लगते ही वह क्रोधमें भरकर दौड़ा। उसके दौ... पर्वत डगमगाने लगे और पृथ्वी हिलने लगी॥ ४॥

लीन्ह एक तेहिं सैल उपाटी। रघुकुलतिलक भुजा सोइ का...
धावा बाम बाहु गिरि धारी। प्रभु सोउ भुजा काटि महि पा...

उसने एक पर्वत उखाड़ लिया। रघुकुलतिलक श्रीरामजीने उसकी वह ... ही काट दी। तब वह बायें हाथमें पर्वतको लेकर दौड़ा। प्रभुने उसकी वह ... भी काटकर पृथ्वीपर गिरा दी॥ ५॥

काटें भुजा सोह खल कैसा। पच्छहीन मंदर गिरि जै...
उग्र बिलोकनि प्रभुहि बिलोका। ग्रसन चहत मानहुँ त्रैलो...

भुजाओंके कट जानेपर वह दुष्ट कैसी शोभा पाने लगा, जैसे बिना ... मन्दराचल पहाड़ हो! उसने उग्र दृष्टिसे प्रभुको देखा। मानो तीनों लोकोंको नि... जाना चाहता हो॥ ६॥

दो०—करि चिक्कार घोर अति धावा बदनु पसारि।
गगन सिद्ध सुर त्रासित हा हा हेति पुकारि॥ ७०॥

वह बड़े जोरसे चिग्घाड़ करके मुँह फैलाकर दौड़ा। आकाशमें सिद्ध ... देवता डरकर हा! हा! हा! इस प्रकार पुकारने लगे॥ ७०॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

—सभय देव करुनानिधि जान्यो । श्रवन प्रजंत सरासनु तान्यो ॥
बिसिख निकर निसिचर मुख भरेऊ । तदपि महाबल भूमि न परेऊ ॥

करुणानिधान भगवान्‌ने देवताओंको भयभीत जाना । तब उन्होंने धनुषको कानतक तानकर राक्षसके मुखको बाणोंके समूहसे भर दिया । तो भी वह महाबली पृथ्वीपर न गिरा ! ॥ १ ॥

सरन्हि भरा मुख सन्मुख धावा । काल त्रोन सजीव जनु आवा ॥
तब प्रभु कोपि तीब्र सर लीन्हा । धर ते भिन्न तासु सिर कीन्हा ॥

मुखमें बाण भरे हुए वह [प्रभुके] सामने दौड़ा । मानो कालरूपी सजीव तरकस ही आ रहा हो । तब प्रभुने क्रोध करके तीक्ष्ण बाण लिया और उसके सिरको धड़से अलग कर दिया ॥ २ ॥

सो सिर परेउ दसानन आगें । बिकल भयउ जिमि फनि मनि त्यागें ॥
धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा । तब प्रभु काटि कीन्ह दुइ खंडा ॥

वह सिर रावणके आगे जा गिरा । उसे देखकर रावण ऐसा व्याकुल हुआ जैसे मणिके छूट जानेपर सर्प । कुम्भकर्णका प्रचण्ड धड़ दौड़ा, जिससे पृथ्वी धँसी जाती थी । तब प्रभुने काटकर उसके दो टुकड़े कर दिये ॥ ३ ॥

परे भूमि जिमि नभ तें भूधर । हेठ दाबि कपि भालु निसाचर ॥
तासु तेज प्रभु बदन समाना । सुर मुनि सबहिं अचंभव माना ॥

वानर-भालू और निशाचरोंको अपने नीचे दबाते हुए वे दोनों टुकड़े पृथ्वीपर ऐसे पड़े जैसे आकाशसे दो पहाड़ गिरे हों । उसका तेज प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके मुखमें समा गया । [यह देखकर] देवता और मुनि सभीने आश्चर्य माना ॥ ४ ॥

सुर दुंदुभीं बजावहिं हरषहिं । अस्तुति करहिं सुमन बहु बरषहिं ॥
करि बिनती सुर सकल सिधाए । तेही समय देवरिषि आए ॥

देवता नगाड़े बजाते, हर्षित होते और स्तुति करते हुए बहुत-से फूल बरसा रहे हैं । विनती करके सब देवता चले गये । उसी समय देवर्षि नारद आये ॥ ५ ॥

गगनोपरि हरि गुन गन गाए । रुचिर बीररस प्रभु मन भाए ॥
बेगि हतहु खल कहि मुनि गए । राम समर महि सोभत भए ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आकाशके ऊपरसे उन्होंने श्रीहरिके सुन्दर वीररसयुक्त गुणसमूहका गान ... जो प्रभुके मनको बहुत ही भाया। मुनि यह कहकर चले गये कि अब दुष्ट ... शीघ्र मारिये। [उस समय] श्रीरामचन्द्रजी रणभूमिमें आकर [अत्यन्त] सुशोभि...

छं०—संग्राम भूमि बिराज रघुपति अतुल बल कोसल धनी।
श्रम बिंदु मुख राजीव लोचन अरुन तन सोनित कनी॥
भुज जुगल फेरत सर सरासन भालु कपि चहु दिसि बने।
कह दास तुलसी कहि न सक छबि सेष जेहि आनन घने॥

अतुलनीय बलवाले कोसलपति श्रीरघुनाथजी रणभूमिमें सुशोभित हैं। मु... पसीनेकी बूँदें हैं, कमलके समान नेत्र कुछ लाल हो रहे हैं। शरीरपर रक्तके क... दोनों हाथोंसे धनुष-बाण फिरा रहे हैं। चारों ओर रीछ-वानर सुशोभित हैं। तु... दासजी कहते हैं कि प्रभुकी इस छबिका वर्णन शेषजी भी नहीं कर सकते जि... बहुत-से (हजार) मुख हैं।

दो०—निसिचर अधम मलाकर ताहि दीन्ह निज धाम।
गिरिजा ते नर मंदमति जे न भजहिं श्रीराम॥ ७१॥

[शिवजी कहते हैं—] हे गिरिजे! कुम्भकर्ण जो नीच राक्षस और पापकी... था, उसे भी श्रीरामजीने अपना परमधाम दे दिया। अतः वे मनुष्य [निश्चय ही] मन्दबुद्धि हैं जो उन श्रीरामजीको नहीं भजते॥ ७१॥

चौ०—दिन कें अंत फिरीं द्वौ अनी। समर भई सुभटन्ह श्रम घनी॥
राम कृपाँ कपि दल बल बाढ़ा। जिमि तृन पाइ लाग अति डाढ़ा॥

दिनका अन्त होनेपर दोनों सेनाएँ लौट पड़ीं। [आजके युद्धमें] योद्धाओं... बड़ी थकावट हुई। परन्तु श्रीरामजीकी कृपासे वानरसेनाका बल उसी प्रकार ... गया जैसे घास पाकर अग्नि बहुत बढ़ जाती है॥ १॥

छीजहिं निसिचर दिनु अरु राती। निज मुख कहें सुकृत जेहि भाँति...
बहु बिलाप दसकंधर करई। बंधु सीस पुनि पुनि उर धरई...

उधर राक्षस दिन-रात इस प्रकार घटते जा रहे हैं जिस प्रकार अपने ही मुखसे कहे...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

घट जाते हैं। रावण बहुत विलाप कर रहा है। बार-बार भाई (कुम्भकर्ण) सिर कलेजेसे लगाता है ॥ २ ॥

रोवहिं नारि हृदय हति पानी। तासु तेज बल बिपुल बखानी॥
मेघनाद तेहि अवसर आयउ। कहि बहु कथा पिता समुझायउ॥

स्त्रियाँ उसके बड़े भारी तेज और बलको बखान करके हाथोंसे छाती पीट-पीटकर रही हैं। उसी समय मेघनाद आया और उसने बहुत-सी कथाएँ कहकर पिताको झाया ॥ ३ ॥

देखेहु कालि मोरि मनुसाई। अबहिं बहुत का करौं बड़ाई॥
इष्टदेव सैं बल रथ पायउँ। सो बल तात न तोहि देखायउँ॥

[और कहा—] कल मेरा पुरुषार्थ देखियेगा। अभी बहुत बड़ाई क्या करूँ? तात! मैंने अपने इष्टदेवसे जो बल और रथ पाया था वह बल [और रथ] तक आपको नहीं दिखलाया था ॥ ४ ॥

एहि बिधि जल्पत भयउ बिहाना। चहुँ दुआर लागे कपि नाना॥
इत कपि भालु काल सम बीरा। उत रजनीचर अति रनधीरा॥

इस प्रकार डींग मारते हुए सबेरा हो गया। लंकाके चारों दरवाजोंपर बहुत-वानर आ डटे। इधर कालके समान वीर वानर-भालू हैं और उधर अत्यन्त रण-राक्षस ॥ ५ ॥

लरहिं सुभट निज निज जय हेतू। बरनि न जाइ समर खगकेतू॥

दोनों ओरके योद्धा अपनी-अपनी जयके लिये लड़ रहे हैं। हे गरुड़! उनके का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ ६ ॥

दो०—मेघनाद मायामय रथ चढ़ि गयउ अकास।
गर्जेउ अट्टहास करि भइ कपि कटकहि त्रास॥ ७२॥

मेघनाद उसी (पूर्वोक्त) मायामय रथपर चढ़कर आकाशमें चला गया और हास करके गरजा, जिससे वानरोंकी सेनामें भय छा गया ॥ ७२ ॥

—सक्ति सूल तरवारि कृपाना। अस्त्र सस्त्र कुलिसायुध नाना॥
डारइ परसु परिघ पाषाना। लागेउ बृष्टि करै बहु बाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह शक्ति, शूल, तलवार, कृपाण आदि अस्त्र, शस्त्र एवं वज्र आदि
आयुध चलाने तथा फरसे, परिघ, पत्थर आदि डालने और बहुत-से बाणों
करने लगा ॥ १ ॥

दस दिसि रहे बान नभ छाई । मानहुँ मघा मेघ झरि
धरु धरु मारु सुनिअ धुनि काना । जो मारइ तेहि कोउ न

आकाशमें दसों दिशाओंमें बाण छा गये, मानो मघा नक्षत्रके बादलों
लगा दी हो । 'पकड़ो, पकड़ो, मारो' ये शब्द कानोंसे सुनायी पड़ते हैं।
मार रहा है उसे कोई नहीं जान पाता ॥ २ ॥

गहि गिरि तरु अकास कपि धावहिं । देखहिं तेहि न दुखित फिरि आ
अवघट घाट बाट गिरि कंदर । माया बल कीन्हेसि सर पं

पर्वत और वृक्षोंको लेकर वानर आकाशमें दौड़कर जाते हैं । पर उसे दे
पाते, इससे दुखी होकर लौट आते हैं—मेघनादने मायाके बलसे अटपटी घा
रास्तों और पर्वतकन्दराओंको बाणोंके पिंजरे बना दिये (बाणोंसे छा दिया) ॥

जाहिं कहाँ ब्याकुल भए बंदर । सुरपति बंदि परे जनु
मारुतसुत अंगद नल नीला । कीन्हेसि बिकल सकल बलसी

अब कहाँ जायँ, यह सोचकर (रास्ता न पाकर) वानर व्याकुल हो गये
पर्वत इन्द्रकी कैदमें पड़े हों । मेघनादने मारुति हनुमान्, अंगद, नल और
आदि सभी बलवानोंको व्याकुल कर दिया ॥ ४ ॥

पुनि लछिमन सुग्रीव बिभीषन । सरन्हि मारि कीन्हेसि जर्जर
पुनि रघुपति सैं जूझै लागा । सर छाँड़इ होइ लागहिं ना

फिर उसने लक्ष्मणजी, सुग्रीव और विभीषणको बाणोंसे मारकर उनके श
चलनी कर दिया । फिर वह श्रीरघुनाथजीसे लड़ने लगा । वह जो बाण छो
वे साँप होकर लगते हैं ॥ ५ ॥

ब्याल पास बस भए खरारी । स्वबस अनंत एक अबिक
नट इव कपट चरित कर नाना । सदा स्वतंत्र एक भगव

जो स्वतन्त्र, अनन्त, एक (अखण्ड) और निर्विकार हैं, वे खरके शत्रु श्री

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लीलासे] नागपाशके वशमें हो गये (उससे बँध गये)। श्रीरामचन्द्रजी सदा स्वतन्त्र, (अद्वितीय) भगवान् हैं। वे नटकी तरह अनेकों प्रकारके दिखावटी चरित्र करते हैं॥ ६॥

रन सोभा लगि प्रभुहिं बँधायो। नागपास देवन्ह भय पायो॥

रणकी शोभाके लिये प्रभुने अपनेको नागपाशमें बँधा लिया। किन्तु उससे देवताओंको बड़ा भय हुआ॥ ७॥

दो०—गिरिजा जासु नाम जपि मुनि काटहिं भव पास।
सो कि बंध तर आवइ ब्यापक बिस्व निवास॥ ७३॥

[शिवजी कहते हैं—] हे गिरिजे! जिनका नाम जपकर मुनि भव (जन्म-मृत्यु) की फाँसीको काट डालते हैं, वे सर्वव्यापक और विश्वनिवास (विश्वके आधार) कहीं बन्धनमें आ सकते हैं?॥ ७३॥

चौ०—चरित राम के सगुन भवानी। तर्कि न जाहिं बुद्धि बल बानी॥
अस बिचारि जे तग्य बिरागी। रामहि भजहिं तर्क सब त्यागी॥

हे भवानी! श्रीरामजीकी इन सगुण लीलाओंके विषयमें बुद्धि और वाणीके बलसे तर्क (निर्णय) नहीं किया जा सकता। ऐसा विचारकर जो तत्त्वज्ञानी और विरक्त पुरुष हैं वे सब तर्क (शंका) छोड़कर श्रीरामजीका भजन ही करते हैं॥ १॥

ब्याकुल कटकु कीन्ह घननादा। पुनि भा प्रगट कहइ दुर्बादा॥
जामवंत कह खल रहु ठाढ़ा। सुनि करि ताहि क्रोध अति बाढ़ा॥

मेघनादने सेनाको व्याकुल कर दिया। फिर वह प्रकट हो गया और दुर्वचन कहने लगा। इसपर जाम्बवान्ने कहा—अरे दुष्ट! खड़ा रह। यह सुनकर उसे अत्यन्त क्रोध बढ़ा॥ २॥

बूढ़ जानि सठ छाँड़ेउँ तोही। लागेसि अधम पचारै मोही॥
अस कहि तरल त्रिसूल चलायो। जामवंत कर गहि सोइ धायो॥

अरे मूर्ख! मैंने बूढ़ा जानकर तुझको छोड़ दिया था। अरे अधम! अब तू मुझीको ललकारने लगा है? ऐसा कहकर उसने चमकता हुआ त्रिशूल चलाया। जाम्बवान् उसी त्रिशूलको हाथसे पकड़कर दौड़े,॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मारिसि मेघनाद कै छाती। परा भूमि घुर्मित सुर...
पुनि रिसान गहि चरन फिरायो। महि पछारि निज बल देखरा...

और उसे मेघनादकी छातीपर दे मारा। वह देवताओंका शत्रु चक्कर खाकर पर गिर पड़ा। जाम्बवान्‌ने फिर क्रोधमें भरकर पैर पकड़कर उसको घुमाया और ... पटककर उसे अपना बल दिखलाया॥ ४॥

बर प्रसाद सो मरइ न मारा। तब गहि पद लंका पर ...
इहाँ देवरिषि गरुड़ पठायो। राम समीप सपदि सो आ...

[किन्तु] वरदानके प्रतापसे वह मारे नहीं मरता। तब जाम्बवान्‌ने ... पकड़कर उसे लंकापर फेंक दिया। इधर देवर्षि नारदजीने गरुड़को भेजा। वे तु... श्रीरामजीके पास आ पहुँचे॥ ५॥

दो०—खगपति सब धरि खाए माया नाग बरूथ।
माया बिगत भए सब हरषे बानर जूथ॥ ७...

पक्षिराज गरुड़जी सब माया-सर्पोंके समूहोंको पकड़कर खा गये। त... वानरोंके झुंड मायासे रहित होकर हर्षित हुए॥ ७४ (क)॥

गहि गिरि पादप उपल नख धाए कीस रिसाइ।
चले तमीचर बिकलतर गढ़ पर चढ़े पराइ॥ ७...

पर्वत, वृक्ष, पत्थर और नख धारण किये वानर क्रोधित होकर दौड़े। ... विशेष व्याकुल होकर भाग चले और भागकर किलेपर चढ़ गये॥ ७४ (...

चौ०—मेघनाद कै मुरछा जागी। पितहि बिलोकि लाज अति ...
तुरत गयउ गिरिबर कंदरा। करौं अजय मख अस मन ...

मेघनादकी मूर्च्छा टूटी, [तब] पिताको देखकर उसे बड़ी शर्म लगी। ... (अजेय होनेको) यज्ञ करूँ, ऐसा मनमें निश्चय करके वह तुरंत श्रेष्ठ पर्वतकी ... चला गया॥ १॥

इहाँ बिभीषन मंत्र बिचारा। सुनहु नाथ बल अतुल उदा...
मेघनाद मख करइ अपावन। खल मायावी देव सता...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यहाँ विभीषणने यह सलाह विचारी [और श्रीरामचन्द्रजीसे कहा—] हे अतु-
य बलवान् उदार प्रभो ! देवताओंको सतानेवाला दुष्ट, मायावी मेघनाद अपवित्र यज्ञ
रहा है ॥ २ ॥

जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि । नाथ बेगि पुनि जीति न जाइहि ॥
सुनि रघुपति अतिसय सुख माना । बोले अंगदादि कपि नाना ॥

हे प्रभो ! यदि वह यज्ञ सिद्ध हो पायेगा, तो हे नाथ ! फिर मेघनाद जल्दी न जा सकेगा । यह सुनकर श्रीरघुनाथजीने बहुत सुख माना और अंगदादि से वानरोंको बुलाया [और कहा—] ॥ ३ ॥

लछिमन संग जाहु सब भाई । करहु बिधंस जग्य कर जाई ॥
तुम्ह लछिमन मारेहु रन ओही । देखि सभय सुर दुख अति मोही ॥

हे भाइयो ! सब लोग लक्ष्मणके साथ जाओ और जाकर यज्ञको विध्वंस करो । क्ष्मण ! संग्राममें तुम उसे मारना । देवताओंको भयभीत देखकर मुझे बड़ा दुःख है ।

मारेहु तेहि बल बुद्धि उपाई । जेहिं छीजै निसिचर सुनु भाई ॥
जामवंत सुग्रीव बिभीषन । सेन समेत रहेहु तीनिउ जन ॥

हे भाई ! सुनो, उसको ऐसे बल और बुद्धिके उपायसे मारना, जिससे निशाचर-नाश हो । हे जाम्बवान्, सुग्रीव और विभीषण ! तुम तीनों जने सेनासमेत नके] साथ रहना ॥ ५ ॥

जब रघुबीर दीन्हि अनुसासन । कटि निषंग कसि साजि सरासन ॥
प्रभु प्रताप उर धरि रनधीरा । बोले घन इव गिरा गँभीरा ॥

[इस प्रकार] जब श्रीरघुवीरने आज्ञा दी, तब कमरमें तरकस कसकर और धनुष कर (चढ़ाकर) रणधीर श्रीलक्ष्मणजी प्रभुके प्रतापको हृदयमें धारण करके के समान गम्भीर वाणी बोले—॥ ६ ॥

जौं तेहि आजु बधें बिनु आवौं । तौ रघुपति सेवक न कहावौं ॥
जौं सत संकर करहिं सहाई । तदपि हतउँ रघुबीर दोहाई ॥

यदि मैं आज उसे बिना मारे आऊँ, तो श्रीरघुनाथजीका सेवक न कहलाऊँ । यदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सैकड़ों शंकर भी उसकी सहायता करें तो भी श्रीरघुवीरकी दुहाई है, उसे मार ही डालूँगा ॥ ७ ॥

दो०—रघुपति चरन नाइ सिरु चलेउ तुरंत अनंत।
अंगद नील मयंद नल संग सुभट हनुमंत ॥ ७५ ॥

श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें सिर नवाकर शेषावतार श्रीलक्ष्मणजी तुरंत चले। साथ अंगद, नील, मयंद, नल और हनुमान् आदि उत्तम योद्धा थे ॥ ७५ ॥

चौ०—जाइ कपिन्ह सो देखा बैसा। आहुति देत रुधिर अरु भैंसा॥
कीन्ह कपिन्ह सब जग्य बिधंसा। जब न उठइ तब करहिं प्रसंसा॥

वानरोंने जाकर देखा कि वह बैठा हुआ खून और भैंसेकी आहुति दे रहा है। वानरोंने सब यज्ञ विध्वंस कर दिया। फिर भी जब वह नहीं उठा, तब वे उसकी प्रशंसा करने लगे ॥ १ ॥

तदपि न उठइ धरेन्हि कच जाई। लातन्हि हति हति चले पराई॥
लै त्रिसूल धावा कपि भागे। आए जहँ रामानुज आगे॥

इतनेपर भी वह न उठा, [तब] उन्होंने जाकर उसके बाल पकड़ लिये और लातोंसे मार-मारकर वे भाग चले। वह त्रिशूल लेकर दौड़ा, तब वानर भागे और वहाँ आ गये जहाँ आगे लक्ष्मणजी खड़े थे ॥ २ ॥

आवा परम क्रोध कर मारा। गर्ज घोर रव बारहिं बारा॥
कोपि मरुतसुत अंगद धाए। हति त्रिसूल उर धरनि गिराए॥

वह अत्यन्त क्रोधका मारा हुआ आया और बार-बार भयङ्कर शब्द करके गरजने लगा। मारुति (हनुमान्) और अंगद क्रोध करके दौड़े। उसने छातीमें त्रिशूल मारकर दोनोंको धरतीपर गिरा दिया ॥ ३ ॥

प्रभु कहँ छाँड़ेसि सूल प्रचंडा। सर हति कृत अनंत जुग खंडा॥
उठि बहोरि मारुति जुबराजा। हतहिं कोपि तेहि घाउ न बाजा॥

फिर उसने प्रभु श्रीलक्ष्मणजीपर प्रचण्ड त्रिशूल छोड़ा। अनन्त (श्रीलक्ष्मणजी)ने बाण मारकर उसके दो टुकड़े कर दिये। हनुमान्‌जी और युवराज अंगद फिर उठकर क्रोध करके उसे मारने लगे, पर उसे चोट न लगी ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिरे बीर रिपु मरइ न मारा। तब धावा करि घोर चिकारा॥
आवत देखि क्रुद्ध जनु काला। लछिमन छाड़े बिसिख कराला॥

शत्रु (मेघनाद) मारे नहीं मरता, यह देखकर जब वीर लौटे, तब वह घोर चिग्घाड़ दौड़ा। उसे क्रुद्ध कालकी तरह आता देखकर लक्ष्मणजीने भयानक बाण छोड़े॥५॥

देखेसि आवत पबि सम बाना। तुरत भयउ खल अंतरधाना॥
बिबिध बेष धरि करइ लराई। कबहुँक प्रगट कबहुँ दुरि जाई॥

वज्रके समान बाणोंको आते देखकर वह दुष्ट तुरंत अन्तर्धान हो गया और भाँति-भाँतिके रूप धारण करके युद्ध करने लगा। वह कभी प्रकट होता था कभी छिप जाता था॥ ६॥

देखि अजय रिपु डरपे कीसा। परम क्रुद्ध तब भयउ अहीसा॥
लछिमन मन अस मंत्र दृढ़ावा। एहि पापिहि मैं बहुत खेलावा॥

शत्रुको पराजित न होता देखकर वानर डरे। तब सर्पराज शेषजी (लक्ष्मणजी) ही क्रोधित हुए। लक्ष्मणजीने मनमें यह विचार दृढ़ किया कि इस पापीको मैं खेला चुका [अब और अधिक खेलाना अच्छा नहीं, अब तो इसे समाप्त कर देना चाहिये।] ॥ ७॥

सुमिरि कोसलाधीस प्रतापा। सर संधान कीन्ह करि दापा॥
छाड़ा बान माझ उर लागा। मरती बार कपटु सब त्यागा॥

कोसलपति श्रीरामजीके प्रतापका स्मरण करके लक्ष्मणजीने वीरोचित दर्प करके बाण-सन्धान किया। बाण छोड़ते ही उसकी छातीके बीचमें लगा। मरते समय ने सब कपट त्याग दिया॥ ८॥

दो०—रामानुज कहँ रामु कहँ अस कहि छाड़ेसि प्रान।
धन्य धन्य तव जननी कह अंगद हनुमान॥ ७६॥

रामके छोटे भाई लक्ष्मण कहाँ हैं? राम कहाँ हैं? ऐसा कहकर उसने प्राण छोड़ दिये। अंगद और हनुमान् कहने लगे—तेरी माता धन्य है, धन्य है [जो तू लक्ष्मणजीके हाथों मरा और मरते समय श्रीराम-लक्ष्मणको स्मरण करके तूने उनके नामोंका उच्चारण किया] ॥ ७६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०-बिनु प्रयास हनुमान उठायो। लंका द्वार राखि पुनि
तासु मरन सुनि सुर गंधर्बा। चढ़ि बिमान आए नभ

हनुमान्‌जीने उसको बिना ही परिश्रमके उठा लिया और लंकाके
रखकर वे लौट आये। उसका मरना सुनकर देवता और गन्धर्व आदि सब
चढ़कर आकाशमें आये ॥ १ ॥

बरषि सुमन दुंदुभीं बजावहिं। श्रीरघुनाथ बिमल जसु
जय अनंत जय जगदाधारा। तुम्ह प्रभु सब देवन्हि निस्तारा

वे फूल बरसाकर नगाड़े बजाते हैं और श्रीरघुनाथजीका निर्मल यश
हैं। हे अनन्त! आपकी जय हो, हे जगदाधार! आपकी जय हो। हे
आपने सब देवताओंका [महान् विपत्तिसे] उद्धार किया ॥ २ ॥

अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए। लछिमन कृपासिंधु पहिं
सुत बध सुना दसानन जबहीं। मुरुछित भयउ परेउ महि

देवता और सिद्ध स्तुति करके चले गये, तब लक्ष्मणजी कृपाके समुद्र
जीके पास आये। रावणने ज्यों ही पुत्रवधका समाचार सुना, त्यों ही वह
होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥ ३ ॥

मंदोदरी रुदन कर भारी। उर ताड़न बहु भाँति पुकारी
नगर लोग सब ब्याकुल सोचा। सकल कहहिं दसकंधर

मन्दोदरी छाती पीट-पीटकर और बहुत प्रकारसे पुकार-पुकारकर बड़ा भारी
करने लगी। नगरके सब लोग शोकसे व्याकुल हो गये। सभी रावणको नीच कहने लगे

दो०-तब दसकंठ बिबिधि बिधि समुझाईं सब नारि।
नस्वर रूप जगत सब देखहु हृदयँ बिचारि ॥ ७७

तब रावणने सब स्त्रियोंको अनेकों प्रकारसे समझाया कि समस्त जगत्‌का
(दृश्य) रूप नाशवान् है, हृदयमें विचारकर देखो ॥ ७७ ॥

चौ०-तिन्हहि ग्यान उपदेसा रावन। आपुन मंद कथा सुभ पावन
पर उपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रावणने उनको ज्ञानका उपदेश किया। वह स्वयं तो नीच है, पर उसकी कथा (बातें) शुभ और पवित्र है। दूसरोंको उपदेश देनेमें तो बहुत लोग निपुण होते हैं। पर ऐसे लोग अधिक नहीं हैं जो उपदेशके अनुसार आचरण भी करते हैं॥ १॥

निसा सिरानि भयउ भिनुसारा। लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा॥
सुभट बोलाइ दसानन बोला। रन सन्मुख जा कर मन डोला॥

रात बीत गयी, सबेरा हुआ। रीछ-वानर [फिर] चारों दरवाजोंपर जा डटे। योद्धाओंको बुलाकर दशमुख रावणने कहा—लड़ाईमें शत्रुके सम्मुख जिसका मन डावाँडोल हो,।२।

सो अबहीं बरु जाउ पराई। संजुग बिमुख भएँ न भलाई॥
निज भुज बल मैं बयरु बढ़ावा। देहउँ उतरु जो रिपु चढ़ि आवा॥

अच्छा है वह अभी भाग जाय। युद्धमें जाकर विमुख होने (भागने) में भलाई नहीं है। मैंने अपनी भुजाओंके बलपर वैर बढ़ाया है। जो शत्रु चढ़ आया है, उसको मैं [अपने ही] उत्तर दे लूँगा॥ ३॥

अस कहि मरुत बेग रथ साजा। बाजे सकल जुझाऊ बाजा॥
चले बीर सब अतुलित बली। जनु कज्जल कै आँधी चली॥

ऐसा कहकर उसने पवनके समान तेज चलनेवाला रथ सजाया। सारे जुझाऊ (लड़ाई-के) बाजे बजने लगे। सब अतुलनीय बलवान् वीर ऐसे चले मानो काजलकी आँधी चली हो।

असगुन अमित होहिं तेहि काला। गनइ न भुज बल गर्ब बिसाला॥

उस समय असंख्य अशकुन होने लगे। पर अपनी भुजाओंके बलका बड़ा गर्व होनेसे रावण उन्हें गिनता नहीं है॥ ५॥

छं०—अति गर्ब गनइ न सगुन असगुन स्त्रवहिं आयुध हाथ ते।
भट गिरत रथ ते बाजि गज चिक्करत भाजहिं साथ ते॥
गोमाय गीध कराल खर रव स्वान बोलहिं अति घने।
जनु कालदूत उलूक बोलहिं बचन परम भयावने॥

अत्यन्त गर्वके कारण वह शकुन-अशकुनका विचार नहीं करता। हथियार हाथोंसे गिर रहे हैं। योद्धा रथसे गिर पड़ते हैं। घोड़े, हाथी साथ छोड़कर चिग्घाड़ते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हुए भाग जाते हैं। स्यार, गीध, कौए और गदहे शब्द कर रहे हैं। बहुत अ
कुत्ते बोल रहे हैं। उल्लू ऐसे अत्यन्त भयानक शब्द कर रहे हैं मानो क
दूत हों (मृत्युका सँदेसा सुना रहे हों)।

दो०—ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुँ मन बिश्राम।
भूत द्रोह रत मोहबस राम बिमुख रति काम॥ ७

जो जीवोंके द्रोहमें रत है, मोहके वश हो रहा है, रामविमुख है और काम
है, उसको क्या कभी स्वप्नमें भी सम्पत्ति, शुभ शकुन और चित्तकी शान्ति हो सकती है

चौ०—चलेउ निसाचर कटकु अपारा। चतुरंगिनी अनी बहु धार
बिबिधि भाँति बाहन रथ जाना। बिपुल बरन पताक ध्वज नाना

राक्षसोंकी अपार सेना चली। चतुरंगिणी सेनाकी बहुत-सी टुकड़ियाँ हैं। अ
प्रकारके वाहन, रथ और सवारियाँ हैं तथा बहुत-से रंगोंकी अनेकों पताकाएँ और ध्वजा

चले मत्त गज जूथ घनेरे। प्राबिट जलद मरुत जनु प्रे
बरन बरन बिरदैत निकाया। समर सूर जानहिं बहु माया

मतवाले हाथियोंके बहुत-से झुंड चले। मानो पवनसे प्रेरित हुए वर्षाऋतुके
हों। रंग-बिरंगे बाना धारण करनेवाले वीरोंके समूह हैं, जो युद्धमें बड़े शूरवीर हैं
बहुत प्रकारकी माया जानते हैं॥ २॥

अति बिचित्र बाहिनी बिराजी। बीर बसंत सेन जनु सा
चलत कटक दिगसिंधुर डगहीं। छुभित पयोधि कुधर डगमगहीं

अत्यन्त विचित्र फौज शोभित है। मानो वीर वसन्तने सेना सजायी हो।
चलनेसे दिशाओंके हाथी डिगने लगे, समुद्र क्षुभित हो गये और पर्वत डगमगाने लगे

उठी रेनु रबि गयउ छपाई। मरुत थकित बसुधा अकुला
पनव निसान घोर रव बाजहिं। प्रलय समय के घन जनु गाज

इतनी धूल उड़ी कि सूर्य छिप गये। [फिर सहसा] पवन रुक गया और
अकुला उठी। ढोल और नगाड़े भीषण ध्वनिसे बज रहे हैं; जैसे प्रलयकालके
गरज रहे हों॥ ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भेरि नफीरि बाज सहनाई। मारू राग सुभट सुखदाई॥
केहरि नाद बीर सब करहीं। निज निज बल पौरुष उच्चरहीं॥

भेरी, नफीरी (तुरही) और शहनाईमें योद्धाओंको सुख देनेवाला मारू राग बज रहा है। सब वीर सिंहनाद करते हैं और अपने-अपने बल-पौरुषका बखान कर रहे हैं॥५॥

कहइ दसानन सुनहु सुभट्टा। मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा॥
हौं मारिहउँ भूप द्वौ भाई। अस कहि सन्मुख फौज रेंगाई॥

रावणने कहा—हे उत्तम योद्धाओ! सुनो। तुम रीछ-वानरोंके ठट्टको मसल डालो और मैं दोनों राजकुमार भाइयोंको मारूँगा। ऐसा कहकर उसने अपनी सेना सामने चलायी।

यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई। धाए करि रघुबीर दोहाई॥

जब सब वानरोंने यह खबर पायी, तब वे श्रीरघुवीरकी दुहाई देते हुए दौड़े॥७॥

छं॰—धाए बिसाल कराल मर्कट भालु काल समान ते।
मानहुँ सपच्छ उड़ाहिं भूधर बृंद नाना बान ते॥
नख दसन सैल महाद्रुमायुध सबल संक न मानहीं।
जय राम रावन मत्त गज मृगराज सुजसु बखानहीं॥

वे विशाल और कालके समान कराल वानर-भालू दौड़े। मानो पंखवाले पर्वतोंके समूह उड़ रहे हों। वे अनेक वर्णोंके हैं। नख, दाँत, पर्वत और बड़े-बड़े वृक्ष ही उनके हथियार हैं। वे बड़े बलवान् हैं और किसीका भी डर नहीं मानते। रावणरूपी मतवाले हाथीके लिये सिंहरूप श्रीरामजीका जय-जयकार करके वे उनके सुन्दर सुयशका बखान करते हैं।

दो॰—दुहु दिसि जय जयकार करि निज निज जोरी जानि।
भिरे बीर इत रामहि उत रावनहि बखानि॥७९॥

दोनों ओरके योद्धा जय-जयकार करके अपनी-अपनी जोड़ी जान (चुन) कर इधर श्रीरघुनाथजीका और उधर रावणका बखान करके परस्पर भिड़ गये॥७९॥

चौ॰—रावनु रथी बिरथ रघुबीरा। देखि बिभीषन भयउ अधीरा॥
अधिक प्रीति मन भा संदेहा। बंदि चरन कह सहित सनेहा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रावणको रथपर और श्रीरघुवीरको बिना रथके देखकर विभीषण अधीर हो गये। प्रेम अधिक होनेसे उनके मनमें सन्देह हो गया [कि वे बिना रथके रावणको कैसे जीत सकेंगे]। श्रीरामजीके चरणोंकी वन्दना करके वे स्नेहपूर्वक कहने लगे—

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥
सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना॥

हे नाथ! आपके न रथ है, न तनकी रक्षा करनेवाला कवच है और न जूते ही हैं। वह बलवान् वीर रावण किस प्रकार जीता जायगा? कृपानिधान श्रीरामजीने कहा—हे सखे! सुनो, जिससे जय होती है, वह रथ दूसरा ही है॥ २॥

सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे॥

शौर्य और धैर्य उस रथके पहिये हैं। सत्य और शील (सदाचार) उसकी मज़बूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम (इन्द्रियोंका वशमें होना) और परोपकार—ये चार उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, दया और समतारूपी डोरीसे रथमें जोड़े हुए हैं॥ ३॥

ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा॥

ईश्वरका भजन ही [उस रथको चलानेवाला] चतुर सारथि है। वैराग्य ढाल है और सन्तोष तलवार है। दान फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है, श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है॥ ४॥

अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा॥

निर्मल (पापरहित) और अचल (स्थिर) मन तरकसके समान है। शम (मनका वशमें होना), [अहिंसादि] यम और [शौचादि] नियम, ये बहुत-से बाण हैं। ब्राह्मणों और गुरुका पूजन अभेद्य कवच है। इसके समान विजयका दूसरा उपाय नहीं है॥ ५॥

सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे सखे ! ऐसा धर्ममय रथ जिसके हो उसके लिये जीतनेको कहीं शत्रु ही है ॥ ६ ॥

दो०—महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर ॥८०(क)॥

हे धीर बुद्धिवाले सखा ! सुनो, जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो, वह वीर संसार (जन्म-मृत्यु) रूपी महान् दुर्जय शत्रुको भी जीत सकता है [रावणकी तो बात ही है] ॥ ८० (क) ॥

सुनि प्रभु बचन बिभीषन हरषि गहे पद कंज।
एहि मिस मोहि उपदेसेहु राम कृपा सुख पुंज ॥८०(ख)॥

प्रभुके वचन सुनकर विभीषणजीने हर्षित होकर उनके चरणकमल पकड़ लिये [और कहा—] हे कृपा और सुखके समूह श्रीरामजी ! आपने इसी बहाने मुझे [महान्] उपदेश दिया ॥ ८० (ख) ॥

उत पचार दसकंधर इत अंगद हनुमान।
लरत निसाचर भालु कपि करि निज निज प्रभु आन ॥८०(ग)॥

उधरसे रावण ललकार रहा है और इधरसे अंगद और हनुमान्। राक्षस और वानर अपने-अपने स्वामीकी दुहाई देकर लड़ रहे हैं ॥ ८० (ग) ॥

चौ०—सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना। देखत रन नभ चढ़े बिमाना ॥
हमहू उमा रहे तेहिं संगा। देखत राम चरित रन रंगा ॥

ब्रह्मा आदि देवता और अनेकों सिद्ध तथा मुनि विमानोंपर चढ़े हुए आकाशसे देख रहे हैं। [शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! मैं भी उस समाजमें था और श्रीरामजीके रण-रंग (रणोत्साह) की लीला देख रहा था ॥ १ ॥

सुभट समर रस दुहु दिसि माते। कपि जयसील राम बल ताते ॥
एक एक सन भिरहिं पचारहिं। एकन्ह एक मर्दि महि पारहिं ॥

दोनों ओरके योद्धा रण-रसमें मतवाले हो रहे हैं। वानरोंको श्रीरामजीका बल है, इससे वे जयशील हैं (जीत रहे हैं)। एक दूसरेसे भिड़ते और ललकारते हैं और एक दूसरेको मसल-मसलकर पृथ्वीपर डाल देते हैं ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मारहिं काटहिं धरहिं पछारहिं। सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं॥
उदर बिदारहिं भुजा उपारहिं। गहि पद अवनि पटकि भट डारहिं॥

वे मारते, काटते, पकड़ते और पछाड़ देते हैं और सिर तोड़कर उन्हीं सिरोंसे दूसरोंको मारते हैं। पेट फाड़ते हैं, भुजाएँ उखाड़ते हैं और योद्धाओंको पैर पकड़कर पृथ्वीपर पटक देते हैं॥ ३॥

निसिचर भट महि गाड़हिं भालू। ऊपर ढारि देहिं बहु बालू॥
बीर बलीमुख जुद्ध बिरुद्धे। देखिअत बिपुल काल जनु क्रुद्धे॥

राक्षस योद्धाओंको भालू पृथ्वीमें गाड़ देते हैं और ऊपरसे बहुत-सी बालू डाल देते हैं। युद्धमें शत्रुओंसे विरुद्ध हुए वीर वानर ऐसे दिखायी पड़ते हैं मानो बहुत-से क्रोधित काल हों॥ ४॥

छं०—क्रुद्धे कृतांत समान कपि तन स्रवत सोनित राजहीं।
मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवंत घन जिमि गाजहीं॥
मारहिं चपेटन्हि डाटि दातन्ह काटि लातन्ह मीजहीं।
चिक्करहिं मर्कट भालु छल बल करहिं जेहिं खल छीजहीं॥१॥

क्रोधित हुए कालके समान वे वानर खून बहते हुए शरीरोंसे शोभित हो रहे हैं। वे बलवान् वीर राक्षसोंकी सेनाके योद्धाओंको मसलते और मेघकी तरह गरजते हैं। डाँटकर चपेटोंसे मारते, दाँतोंसे काटकर लातोंसे पीस डालते हैं। वानर-भालू चिग्घाड़ते और ऐसा छल-बल करते हैं जिससे दुष्ट राक्षस नष्ट हो जायँ॥ १॥

धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँतावरि मेलहीं।
प्रह्लादपति जनु बिबिध तनु धरि समर अंगन खेलहीं॥
धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगन महि भरि रही।
जय राम जो तृन ते कुलिस कर कुलिस ते कर तृन सही॥२॥

वे राक्षसोंके गाल पकड़कर फाड़ डालते हैं, छाती चीर डालते हैं और उनकी अँतड़ियाँ निकालकर गलेमें डाल लेते हैं। वे वानर ऐसे देख पड़ते हैं मानो प्रह्लादके स्वामी श्रीनृसिंह भगवान् अनेकों शरीर धारण करके युद्धके मैदानमें क्रीड़ा कर रहे हों। पकड़ो, मारो, काटो, पछाड़ो आदि घोर शब्द आकाश और पृथ्वीमें भर (छा)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ये हैं । श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो, जो सचमुच तृणसे वज्र और वज्रसे तृण कर देते हैं (निर्बलको सबल और सबलको निर्बल कर देते हैं) ॥ २ ॥

दो०—निज दल बिचलत देखेसि बीस भुजाँ दस चाप ।
रथ चढ़ि चलेउ दसानन फिरहु फिरहु करि दाप ॥ ८१ ॥

अपनी सेनाको विचलित होते हुए देखा, तब बीस भुजाओंमें दस धनुष [illegible]कर रावण रथपर चढ़कर गर्व करके 'लौटो, लौटो' कहता हुआ चला ॥ ८१ ॥

चौ०—धायउ परम क्रुद्ध दसकंधर । सन्मुख चले हूह दै बंदर ॥
गहि कर पादप उपल पहारा । डारेन्हि ता पर एकहिं बारा ॥

रावण अत्यन्त क्रोधित होकर दौड़ा । वानर हुंकार करते हुए [लड़नेके लिये] उसके सामने चले । उन्होंने हाथोंमें वृक्ष, पत्थर और पहाड़ लेकर रावणपर एक ही साथ डाले ॥ १ ॥

लागहिं सैल बज्र तन तासू । खंड खंड होइ फूटहिं आसू ॥
चला न अचल रहा रथ रोपी । रन दुर्मद रावन अति कोपी ॥

पर्वत उसके वज्रतुल्य शरीरमें लगते ही तुरंत टुकड़े-टुकड़े होकर फूट जाते हैं । अत्यन्त क्रोधी रणोन्मत्त रावण रथ रोककर अचल खड़ा रहा, [अपने स्थानसे] जरा भी नहीं हिला ॥ २ ॥

इत उत झपटि दपटि कपि जोधा । मर्दै लाग भयउ अति क्रोधा ॥
चले पराइ भालु कपि नाना । त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना ॥

उसे बहुत ही क्रोध हुआ । वह इधर-उधर झपटकर और डपटकर वानर योद्धाओंको मसलने लगा । अनेकों वानर-भालू 'हे अंगद ! हे हनुमान् ! रक्षा करो, रक्षा करो' [पुकारते हुए] भाग चले ॥ ३ ॥

पाहि पाहि रघुबीर गोसाईं । यह खल खाइ काल की नाईं ॥
तेहिं देखे कपि सकल पराने । दसहुँ चाप सायक संधाने ॥

हे रघुवीर ! हे गोसाईं ! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये । यह दुष्ट कालकी भाँति हमें खा रहा है । उसने देखा कि सब वानर भाग छूटे । तब [रावणने] दसों धनुषोंपर बाण सन्धान किये ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—संधानि धनु सर निकर छाड़ेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं।
रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं॥
भयो अति कोलाहल बिकल कपि दल भालु बोलहिं आतुरे।
रघुबीर करुना सिंधु आरत बंधु जन रच्छक हरे॥

उसने धनुषपर सन्धान करके बाणोंके समूह छोड़े। वे बाण सर्पकी [तरह] उड़कर जा लगते थे। पृथ्वी-आकाश और दिशा-विदिशा सर्वत्र बाण भर रहे। वानर भागें तो कहाँ? अत्यन्त कोलाहल मच गया। वानर-भालुओंकी सेना [व्याकुल] होकर आर्त्त पुकार करने लगी—हे रघुवीर! हे करुणासागर! हे पीड़ितोंके [बन्धु]! हे सेवकोंकी रक्षा करके उनके दुःख हरनेवाले हरि!

दो०—निज दल बिकल देखि कटि कसि निषंग धनु हाथ।
लछिमन चले क्रुद्ध होइ नाइ राम पद माथ॥८२॥

अपनी सेनाको व्याकुल देखकर कमरमें तरकस कसकर और हाथमें धनुष [लेकर] श्रीरघुनाथजीके चरणोंपर मस्तक नवाकर लक्ष्मणजी क्रोधित होकर चले॥८२॥

चौ०—रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि बिलोकु तोर मैं काल॥
खोजत रहेउँ तोहि सुतघाती। आजु निपाति जुड़ावउँ छाती॥

[लक्ष्मणजीने पास जाकर कहा—] अरे दुष्ट! वानर-भालुओंको क्या [मार] रहा है? मुझे देख, मैं तेरा काल हूँ? [रावणने कहा—] अरे मेरे पुत्रके घा[तक!] मैं तुझीको ढूँढ़ रहा था। आज तुझे मारकर [अपनी] छाती ठंडी करूँगा॥१॥

अस कहि छाड़ेसि बान प्रचंडा। लछिमन किए सकल सत खंडा॥
कोटिन्ह आयुध रावन डारे। तिल प्रवान करि काटि निवारे॥

ऐसा कहकर उसने प्रचण्ड बाण छोड़े। लक्ष्मणजीने सबके सैकड़ों टुकड़े [कर] डाले। रावणने करोड़ों अस्त्र-शस्त्र चलाये। लक्ष्मणजीने उनको तिलके बराबर [करके] काटकर हटा दिया॥२॥

पुनि निज बानन्ह कीन्ह प्रहारा। स्यंदनु भंजि सारथी मारा॥
सत सत सर मारे दस भाला। गिरि सृंगन्ह जनु प्रबिसहिं ब्याला॥

फिर अपने बाणोंसे [उसपर] प्रहार किया और [उसके] रथको तो[ड़कर]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थिको मार डाला। [रावणके] दसों मस्तकोंमें सौ-सौ बाण मारे। वे सिरोंमें ऐसे गये मानो पहाड़के शिखरोंमें सर्प प्रवेश कर रहे हों॥ ३॥

पुनि सत सर मारा उर माहीं। परेउ धरनि तल सुधि कछु नाहीं॥
उठा प्रबल पुनि मुरुछा जागी। छाड़िसि ब्रह्म दीन्हि जो साँगी॥

फिर सौ बाण उसकी छातीमें मारे। वह पृथ्वीपर गिर पड़ा, उसे कुछ भी न रहा। फिर मूर्च्छा छूटनेपर वह प्रबल रावण उठा और उसने वह शक्ति थी जो ब्रह्माजीने उसे दी थी॥ ४॥

छं०—सो ब्रह्म दत्त प्रचंड सक्ति अनंत उर लागी सही।
परयो बीर बिकल उठाव दसमुख अतुल बल महिमा रही॥
ब्रह्मांड भवन बिराज जाकें एक सिर जिमि रज कनी।
तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रिभुअन धनी॥

वह ब्रह्माकी दी हुई प्रचण्ड शक्ति लक्ष्मणजीके ठीक छातीमें लगी। वीर णजी व्याकुल होकर गिर पड़े। तब रावण उन्हें उठाने लगा, पर उसके अतुलित की महिमा यों ही रह गयी (व्यर्थ हो गयी, वह उन्हें उठा न सका)। जिनके ही सिरपर ब्रह्माण्डरूपी भवन धूलके एक कणके समान विराजता है, उन्हें मूर्ख उठाना चाहता है। वह तीनों भुवनोंके स्वामी लक्ष्मणजीको नहीं जानता।

दो०—देखि पवनसुत धायउ बोलत बचन कठोर।
आवत कपिहि हन्यो तेहिं मुष्टि प्रहार प्रघोर॥ ८३॥

यह देखकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी कठोर वचन बोलते हुए दौड़े। हनुमान्‌जीके ही रावणने उनपर अत्यन्त भयङ्कर घूँसेका प्रहार किया॥ ८३॥

—जानु टेकि कपि भूमि न गिरा। उठा सँभारि बहुत रिस भरा॥
मुठिका एक ताहि कपि मारा। परेउ सैल जनु बज्र प्रहारा॥

हनुमान्‌जी घुटने टेककर रह गये, पृथ्वीपर गिरे नहीं। और फिर क्रोधसे भरे सँभालकर उठे। हनुमान्‌जीने रावणको एक घूँसा मारा। वह ऐसा गिर पड़ा वज्रकी मारसे पर्वत गिरा हो॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुरुछा गै बहोरि सो जागा। कपि बल बिपुल सराहन
धिग धिग मम पौरुष धिग मोही। जौं तैं जिअत रहेसि सु
मूर्च्छा भंग होनेपर फिर वह जागा और हनुमान्‌जीके बड़े भारी बलकी
लगा। [हनुमान्‌जीने कहा—] मेरे पौरुषको धिक्कार है, धिक्कार है और
धिक्कार है, जो हे देवद्रोही! तू अब भी जीता रह गया॥ २॥

अस कहि लछिमन कहुँ कपि ल्यायो। देखि दसानन बिसमय
कह रघुबीर समुझु जियँ भ्राता। तुम्ह कृतांत भच्छक सुर
ऐसा कहकर और लक्ष्मणजीको उठाकर हनुमान्‌जी श्रीरघुनाथजीके
आये। यह देखकर रावणको आश्चर्य हुआ। श्रीरघुवीरने [लक्ष्मणजीसे]
हे भाई! हृदयमें समझो, तुम कालके भी भक्षक और देवताओंके रक्षक हो॥

सुनत बचन उठि बैठ कृपाला। गई गगन सो सकति
पुनि कोदंड बान गहि धाए। रिपु सन्मुख अति आतुर
ये वचन सुनते ही कृपालु लक्ष्मणजी उठ बैठे। वह कराल शक्ति
चली गयी। लक्ष्मणजी फिर धनुष-बाण लेकर दौड़े और बड़ी शीघ्रतासे
सामने आ पहुँचे॥ ४॥

छं०—आतुर बहोरि बिभंजि स्यंदन सूत हति ब्याकुल कियो।
गिर्‌यो धरनि दसकंधर बिकलतर बान सत बेध्यो हियो॥
सारथी दूसर घालि रथ तेहि तुरत लंका लै गयो।
रघुबीर बंधु प्रताप पुंज बहोरि प्रभु चरनन्हि नयो॥

फिर उन्होंने बड़ी ही शीघ्रतासे रावणके रथको चूर-चूरकर और सारथिको
उसे (रावणको) व्याकुल कर दिया। सौ बाणोंसे उसका हृदय बेध दिया,
रावण अत्यन्त व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। तब दूसरा सारथि उसे रथमें
तुरंत ही लंकाको ले गया। प्रतापके समूह श्रीरघुवीरके भाई लक्ष्मणजीने फिर
प्रभुके चरणोंमें प्रणाम किया।

दो०—उहाँ दसानन जागि करि करै लाग कछु जग्य।
राम बिरोध बिजय चह सठ हठ बस अति अग्य॥ ८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वहाँ (लंकामें) रावण मूर्च्छासे जागकर कुछ यज्ञ करने लगा। वह मूर्ख और अज्ञानी हठवश श्रीरघुनाथजीसे विरोध करके विजय चाहता है ॥ ८४ ॥

इहाँ बिभीषन सब सुधि पाई। सपदि जाइ रघुपतिहि सुनाई ॥
नाथ करइ रावन एक जागा। सिद्ध भएँ नहिं मरिहि अभागा ॥

यहाँ विभीषणजीने सब खबर पायी और तुरंत जाकर श्रीरघुनाथजीको कह कि हे नाथ! रावण एक यज्ञ कर रहा है। उसके सिद्ध होनेपर वह अभागा ही नहीं मरेगा ॥ १ ॥

पठवहु नाथ बेगि भट बंदर। करहिं बिधंस आव दसकंधर ॥
प्रात होत प्रभु सुभट पठाए। हनुमदादि अंगद सब धाए ॥

हे नाथ! तुरंत वानर योद्धाओंको भेजिये, जो यज्ञका विध्वंस करें, जिससे युद्धमें आवे। प्रातःकाल होते ही प्रभुने वीर योद्धाओंको भेजा। हनुमान् और आदि सब [प्रधान वीर] दौड़े ॥ २ ॥

कौतुक कूदि चढ़े कपि लंका। पैठे रावन भवन असंका ॥
जग्य करत जबहीं सो देखा। सकल कपिन्ह भा क्रोध बिसेषा ॥

वानर खेलसे ही कूदकर लंकापर जा चढ़े और निर्भय रावणके महलमें जा घुसे। ही उसको यज्ञ करते देखा, त्यों ही सब वानरोंको बहुत क्रोध हुआ ॥ ३ ॥

रन ते निलज भाजि गृह आवा। इहाँ आइ बक ध्यान लगावा ॥
अस कहि अंगद मारा लाता। चितव न सठ स्वारथ मन राता ॥

[उन्होंने कहा—] अरे ओ निर्लज्ज! रणभूमिसे घर भाग आया और यहाँ बगुलेका-सा ध्यान लगाकर बैठा है? ऐसा कहकर अंगदने लात मारी। पर उसने की ओर देखा भी नहीं, उस दुष्टका मन स्वार्थमें अनुरक्त था ॥ ४ ॥

छं०—नहिं चितव जब करि कोप कपि गहि दसन लातन्ह मारहीं।
धरि केस नारि निकारि बाहेर तेऽतिदीन पुकारहीं ॥
तब उठेउ क्रुद्ध कृतांत सम गहि चरन बानर डारई।
एहि बीच कपिन्ह बिधंस कृत मख देखि मन महुँ हारई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब उसने नहीं देखा, तब वानर क्रोध करके उसे दाँतोंसे पकड़कर [
और] लातोंसे मारने लगे। स्त्रियोंको बाल पकड़कर घरसे बाहर घसीट
अत्यन्त ही दीन होकर पुकारने लगीं। तब रावण कालके समान क्रोधित होकर
और वानरोंको पैर पकड़कर पटकने लगा। इसी बीचमें वानरोंने यज्ञ विध्वंस कर
डाला यह देखकर वह मनमें हारने लगा (निराश होने लगा)।

दो०—जग्य बिधंसि कुसल कपि आए रघुपति पास।
चलेउ निसाचर क्रुद्ध होइ त्यागि जिवन कै आस ॥ ८५ ॥

यज्ञ विध्वंस करके सब चतुर वानर रघुनाथजीके पास आ गये। तब
जीनेकी आशा छोड़कर क्रोधित होकर चला ॥ ८५ ॥

चौ०—चलत होहिं अति असुभ भयंकर। बैठहिं गीध उड़ाइ सिरन्ह
भयउ कालबस काहु न माना। कहेसि बजावहु जुद्ध निसा

चलते समय अत्यन्त भयङ्कर अमङ्गल (अपशकुन) होने लगे। गीध
उड़कर उसके सिरोंपर बैठने लगे। किन्तु वह कालके वश था, इससे कि
अपशकुनको नहीं मानता था। उसने कहा—युद्धका डंका बजाओ ॥ १ ॥

चली तमीचर अनी अपारा। बहु गज रथ पदाति असवा
प्रभु सन्मुख धाए खल कैसें। सलभ समूह अनल कहँ जैं

निशाचरोंकी अपार सेना चली। उसमें बहुत-से हाथी, रथ, घुड़सवार
पैदल हैं। वे दुष्ट प्रभुके सामने कैसे दौड़े, जैसे पतंगोंके समूह अग्निकी ओर [जल
लिये] दौड़ते हैं ॥ २ ॥

इहाँ देवतन्ह अस्तुति कीन्ही। दारुन बिपति हमहि एहिं दीन्ही
अब जनि राम खेलावहु एही। अतिसय दुखित होति बैदेही

इधर देवताओंने स्तुति की कि हे श्रीरामजी! इसने हमको दारुण दुःख
हैं। अब आप इसे [अधिक] न खेलाइये। जानकीजी बहुत ही दुखी हो रही हैं ॥

देव बचन सुनि प्रभु मुसुकाना। उठि रघुबीर सुधारे बाना
जटा जूट दृढ़ बाँधें माथे। सोहहिं सुमन बीच बिच गाथे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देवताओंके वचन सुनकर प्रभु मुसकराये। फिर श्रीरघुवीरने उठकर बाण सुधारे। [म]स्तकपर जटाओंके जूड़ेको कसकर बाँधे हुए हैं, उसके बीच-बीचमें पुष्प गूँथे हुए [शोभ]ित हो रहे हैं ॥ ४ ॥

अरुन नयन बारिद तनु स्यामा। अखिल लोक लोचनाभिरामा ॥
कटितट परिकर कस्यो निषंगा। कर कोदंड कठिन सारंगा ॥

लाल नेत्र और मेघके समान श्याम शरीरवाले और सम्पूर्ण लोकोंके नेत्रोंको [आन]न्द देनेवाले हैं। प्रभुने कमरमें फेंटा तथा तरकस कस लिया और हाथमें कठोर [शार्ङ्ग] धनुष ले लिया ॥ ५ ॥

छं०—सारंग कर सुंदर निषंग सिलीमुखाकर कटि कस्यो।
भुजदंड पीन मनोहरायत उर धरासुर पद लस्यो ॥
कह दास तुलसी जबहिं प्रभु सर चाप कर फेरन लगे।
ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु भूधर डगमगे ॥

प्रभुने हाथमें शार्ङ्गधनुष लेकर कमरमें बाणोंकी खान (अक्षय) सुन्दर तरकस [क]स लिया। उनके भुजदण्ड पुष्ट हैं और मनोहर चौड़ी छातीपर ब्राह्मण (भृगुजी) [के च]रणका चिह्न शोभित है। तुलसीदासजी कहते हैं, ज्यों ही प्रभु धनुष-बाण हाथमें [लेक]र फिराने लगे, त्यों ही ब्रह्माण्ड, दिशाओंके हाथी, कच्छप, शेषजी, पृथ्वी, समुद्र [और] पर्वत सभी डगमगा उठे।

दो०—सोभा देखि हरषि सुर बरषहिं सुमन अपार।
जय जय जय करुनानिधि छबि बल गुन आगार ॥ ८६ ॥

[भगवान्‌की] शोभा देखकर देवता हर्षित होकर फूलोंकी अपार वर्षा करने [लगे] और शोभा, शक्ति और गुणोंके धाम करुणानिधान प्रभुकी जय हो, जय हो, जय [हो] ऐसा पुकारने लगे] ॥ ८६ ॥

[चौ०]—एहीं बीच निसाचर अनी। कसमसात आई अति घनी ॥
देखि चले सन्मुख कपि भट्टा। प्रलयकाल के जनु घन घट्टा ॥

इसी बीचमें निशाचरोंकी अत्यन्त घनी सेना कसमसाती हुई (आपसमें टकराती [हुई]) आयी। उसे देखकर वानर योद्धा इस प्रकार [उसके] सामने चले जैसे [प्रल]यकालके बादलोंके समूह हों ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहु कृपान तरवारि चमंकहिं । जनु दहँ दिसि दामिनीं दमं[कहिं] ॥
गज रथ तुरग चिकार कठोरा । गर्जहिं मनहुँ बलाहक घो[रा] ॥

बहुत-से कृपाण और तलवारें चमक रही हैं। मानो दसों दिशाओंमें बि[जलियाँ]
चमक रही हों। हाथी, रथ और घोड़ोंका कठोर चिग्घाड़ ऐसा लगता है मानो
भयङ्कर गर्जन कर रहे हों ॥ २ ॥

कपि लंगूर बिपुल नभ छाए । मनहुँ इंद्रधनु उए सुहा[ए] ॥
उठइ धूरि मानहुँ जलधारा । बान बुंद भै बृष्टि अपा[रा] ॥

वानरोंकी बहुत-सी पूछें आकाशमें छायी हुई हैं। [वे ऐसी शोभा दे रही हैं]
मानो सुन्दर इन्द्रधनुष उदय हुए हों। धूल ऐसी उठ रही है मानो जलकी धारा
बाणरूपी बूँदोंकी अपार वृष्टि हुई ॥ ३ ॥

दुहुँ दिसि पर्बत करहिं प्रहारा । बज्रपात जनु बारहिं बा[रा] ॥
रघुपति कोपि बान झरि लाई । घायल भै निसिचर समु[दाई] ॥

दोनों ओरसे योद्धा पर्वतोंका प्रहार करते हैं। मानो बारंबार वज्रपात हो रहा
श्रीरघुनाथजीने क्रोध करके बाणोंकी झड़ी लगा दी, [जिससे]राक्षसोंकी सेना घायल हो

लागत बान बीर चिक्करहीं । घुर्मि घुर्मि जहँ तहँ महि पर[हीं] ॥
स्रवहिं सैल जनु निर्झर भारी । सोनित सरि कादर भयका[री] ॥

बाण लगते ही वीर चीत्कार कर उठते हैं और चक्कर खा-खाकर जहाँ-तहाँ पृ[थ्वीपर]
गिर पड़ते हैं। उनके शरीरोंसे ऐसे खून बह रहा है मानो पर्वतके भारी झरनों[से जल]
बह रहा हो। इस प्रकार डरपोकोंको भय उत्पन्न करनेवाली रुधिरकी नदी बह चली

छं०—कादर भयंकर रुधिर सरिता चली परम अपावनी।
दोउ कूल दल रथ रेत चक्र अबर्त बहति भयावनी ॥
जलजंतु गज पदचर तुरग खर बिबिध बाहन को गने।
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने ॥

डरपोकोंको भय उपजानेवाली अत्यन्त अपवित्र रक्तकी नदी बह चली।
दल उसके दोनों किनारे हैं। रथ रेत है और पहिये भँवर हैं। वह नदी बहुत भ[यावनी]
बह रही है। हाथी, पैदल, घोड़े, गदहे तथा अनेकों सवारियाँ ही, जिनकी गिनती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नदीके जलजन्तु हैं। बाण, शक्ति और तोमर सर्प हैं; धनुष तरङ्गें हैं और ढाल [बहु]त-से कछुवे हैं।

दो०—बीर परहिं जनु तीर तरु मज्जा बहु बह फेन।
कादर देखि डरहिं तहँ सुभटन्ह के मन चेन॥ ८७॥

वीर पृथ्वीपर इस तरह गिर रहे हैं, मानो नदी-किनारेके वृक्ष ढह रहे हों। [बहु]त-सी मज्जा बह रही है, वही फेन है। डरपोक जहाँ इसे देखकर डरते हैं, वहाँ उत्तम [यो]द्धाओंके मनमें सुख होता है॥ ८७॥

[चौ]०—मज्जहिं भूत पिसाच बेताला। प्रमथ महा झोटिंग कराला॥
काक कंक लै भुजा उड़ाहीं। एक ते छीनि एक लै खाहीं॥

भूत, पिशाच और बैताल, बड़े-बड़े झोंटोंवाले महान् भयङ्कर झोटिंग और प्रमथ [(शि]वगण) उस नदीमें स्नान करते हैं। कौए और चील भुजाएँ लेकर उड़ते हैं और [एक] दूसरेसे छीनकर खा जाते हैं॥ १॥

एक कहहिं ऐसिउ सौंघाई। सठहु तुम्हार दरिद्र न जाई॥
कहँरत भट घायल तट गिरे। जहँ तहँ मनहुँ अर्धजल परे॥

एक (कोई) कहते हैं, अरे मूर्खो! ऐसी सस्ती (बहुतायत) है, फिर भी तुम्हारी [दरिद्र]ता नहीं जाती? घायल योद्धा तटपर पड़े कराह रहे हैं, मानो जहाँ-तहाँ अर्धजल [(वे] व्यक्ति जो मरनेके समय आधे जलमें रक्खे जाते हैं) पड़े हों॥ २॥

खैंचहिं गीध आँत तट भए। जनु बंसी खेलत चित दए॥
बहु भट बहहिं चढ़े खग जाहीं। जनु नावरि खेलहिं सरि माहीं॥

गीध आँतें खींच रहे हैं, मानो मछलीमार नदी-तटपरसे चित्त लगाये हुए [(ध्या]नस्थ होकर) बंसी खेल रहे हों (बंसीसे मछली पकड़ रहे हों)। बहुत-से [योद्धा] बहे जा रहे हैं और पक्षी उनपर चढ़े चले जा रहे हैं। मानो वे नदीमें नावरि [(नौ]काक्रीडा) खेल रहे हों॥ ३॥

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं। भूत पिसाच बधू नभ नंचहिं॥
भट कपाल करताल बजावहिं। चामुंडा नाना बिधि गावहिं॥

योगिनियाँ खप्परोंमें भर-भरकर खून जमा कर रही हैं। भूत-पिशाचोंकी स्त्रियाँ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आकाशमें नाच रही हैं। चामुण्डाएँ योद्धाओंकी खोपड़ियोंका करताल बजा और नाना प्रकारसे गा रही हैं ॥ ४ ॥

जंबुक निकर कटक्कट कट्टहिं। खाहिं हुआहिं अघाहिं द
कोटिन्ह रुंड मुंड बिनु डोल्लहिं। सीस परे महि जय जय बो

गीदड़ोंके समूह कट-कट शब्द करते हुए मुरदोंको काटते, खाते, हु करते और पेट भर जानेपर एक दूसरेको डाँटते हैं। करोड़ों धड़ बिना सिरके हैं। और सिर पृथ्वीपर पड़े जय-जय बोल रहे हैं ॥ ५ ॥

छं०—बोल्लहिं जो जय जय मुंड रुंड प्रचंड सिर बिनु धावहीं।
खप्परिन्ह खग्ग अलुज्झि जुज्झहिं सुभट भटन्ह ढहावहीं ॥
बानर निसाचर निकर मर्दहिं राम बल दर्पित भए।
संग्राम अंगन सुभट सोवहिं राम सर निकरन्हि हए ॥

मुण्ड (कटे सिर) जय-जय बोलते हैं और प्रचण्ड रुण्ड (धड़) बिना दौड़ते हैं। पक्षी खोपड़ियोंमें उलझ-उलझकर परस्पर लड़े मरते हैं; उत्तम योद्धा योद्धाओंको ढहा रहे हैं। श्रीरामचन्द्रजीके बलसे दर्पित हुए वानर राक्षसोंके मसले डालते हैं। श्रीरामजीके बाण-समूहोंसे मरे हुए योद्धा लड़ाईके मैदानमें सो

दो०—रावन हृदयँ बिचारा भा निसिचर संघार।
मैं अकेल कपि भालु बहु माया करौं अपार ॥ ८८

रावणने हृदयमें विचारा कि राक्षसोंका नाश हो गया है। मैं अकेला हूँ वानर-भालू बहुत हैं, इसलिये मैं अब अपार माया रचूँ ॥ ८८ ॥

चौ०—देवन्ह प्रभुहि पयादें देखा। उपजा उर अति छोभ बिसे
सुरपति निज रथ तुरत पठावा। हरष सहित मातलि लै आ

देवताओंने प्रभुको पैदल (बिना सवारीके युद्ध करते) देखा, तो उनके हृ बड़ा भारी क्षोभ (दुःख) उत्पन्न हुआ। [फिर क्या था] इन्द्रने तुरंत अपना भेज दिया। [उसका सारथि] मातलि हर्षके साथ उसे ले आया ॥ १ ॥

तेज पुंज रथ दिब्य अनूपा। हरषि चढ़े कोसलपुर भूपा
चंचल तुरग मनोहर चारी। अजर अमर मन सम गतिका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उस दिव्य, अनुपम और तेजके पुञ्ज (तेजोमय) रथपर कोसलपुरीके राजा रामचन्द्रजी हर्षित होकर चढ़े। उसमें चार चञ्चल, मनोहर, अजर, अमर और मनकी के समान शीघ्र चलनेवाले (देवलोकके) घोड़े जुते थे॥ २॥

रथारूढ़ रघुनाथहि देखी। धाए कपि बलु पाइ बिसेषी॥
सही न जाइ कपिन्ह कै मारी। तब रावन माया बिस्तारी॥

श्रीरघुनाथजीको रथपर चढ़े देखकर वानर विशेष बल पाकर दौड़े। वानरोंकी सही नहीं जाती। तब रावणने माया फैलायी॥ ३॥

सो माया रघुबीरहि बाँची। लछिमन कपिन्ह सो मानी साँची॥
देखी कपिन्ह निसाचर अनी। अनुज सहित बहु कोसलधनी॥

एक श्रीरघुवीरके ही वह माया नहीं लगी। सब वानरोंने और लक्ष्मणजीने भी उस याको सच मान लिया। वानरोंने राक्षसी सेनामें भाई लक्ष्मणजीसहित बहुत-से ोंको देखा॥ ४॥

छं०—बहु राम लछिमन देखि मर्कट भालु मन अति अपडरे।
जनु चित्र लिखित समेत लछिमन जहँ सो तहँ चितवहिं खरे॥
निज सेन चकित बिलोकि हँसि सर चाप सजि कोसल धनी।
माया हरी हरि निमिष महुँ हरषी सकल मर्कट अनी॥

बहुत-से राम-लक्ष्मण देखकर वानर-भालू मनमें मिथ्या डरसे बहुत ही डर गये। क्ष्मणजीसहित वे मानो चित्रलिखे-से जहाँ-के-तहाँ खड़े देखने लगे। अपनी सेनाको श्चर्यचकित देखकर कोसलपति भगवान् हरि (दुःखोंके हरनेवाले श्रीरामजी) ने हँसकर नुषपर बाण चढ़ाकर, पलभरमें सारी माया हर ली। वानरोंकी सारी सेना हर्षित हो गयी।

दो०—बहुरि राम सब तन चितइ बोले बचन गँभीर।
द्वंदजुद्ध देखहु सकल श्रमित भए अति बीर॥ ८९॥

फिर श्रीरामजी सबकी ओर देखकर गम्भीर वचन बोले—हे वीरो! तुम सब बहुत ही थक गये हो, इसलिये अब [मेरा और रावणका] द्वन्द्वयुद्ध देखो॥ ८९॥

चौ०—अस कहि रथ रघुनाथ चलावा। बिप्र चरन पंकज सिरु नावा॥
तब लंकेस क्रोध उर छावा। गर्जत तर्जत सन्मुख धावा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा कहकर श्रीरघुनाथजीने ब्राह्मणोंके चरणकमलोंमें सिर नवाया और [illegible] चलाया। तब रावणके हृदयमें क्रोध छा गया और वह गरजता तथा ललकारता [illegible] सामने दौड़ा ॥ १ ॥

जीतेहु जे भट संजुग माहीं। सुनु तापस मैं तिन्ह सम [illegible]
रावन नाम जगत जस जाना। लोकप जाकें बंदीख[illegible]

[उसने कहा—] अरे तपस्वी! सुनो, तुमने युद्धमें जिन योद्धाओंको [illegible] मैं उनके समान नहीं हूँ। मेरा नाम रावण है, मेरा यश सारा जगत जान[illegible] लोकपालतक जिसके कैदखानेमें पड़े हैं ॥ २ ॥

खर दूषन बिराध तुम्ह मारा। बधेहु ब्याध इव बालि बिचा[illegible]
निसिचर निकर सुभट संघारेहु। कुंभकरन घननादहि मा[illegible]

तुमने खर, दूषण और विराधको मारा। बेचारे बालिका व्याधकी तरह [illegible] किया। बड़े-बड़े राक्षस योद्धाओंके समूहका संहार किया और कुम्भकर्ण तथा मे[illegible] को भी मारा ॥ ३ ॥

आजु बयरु सबु लेउँ निबाही। जौं रन भूप भाजि नहिं जा[illegible]
आजु करउँ खलु काल हवाले। परेहु कठिन रावन के पा[illegible]

अरे राजा! यदि तुम रणसे भाग न गये तो आज मैं [वह] सारा वैर नि[illegible] लूँगा। आज मैं तुम्हें निश्चय ही कालके हवाले कर दूँगा। तुम कठिन रा[illegible] पाले पड़े हो ॥ ४ ॥

सुनि दुर्बचन कालबस जाना। बिहँसि बचन कह कृपानिधा[illegible]
सत्य सत्य सब तव प्रभुताई। जल्पसि जनि देखाउ मनुसा[illegible]

रावणके दुर्वचन सुनकर और उसे कालवश जान कृपानिधान श्रीरामजीने [illegible] कर यह वचन कहा—तुम्हारी सारी प्रभुता, जैसा तुम कहते हो, बिल्कुल सच [illegible] पर अब व्यर्थ बकवाद न करो, अपना पुरुषार्थ दिखलाओ ॥ ५ ॥

छं०—जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा।
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल रसाल पनस समा॥
एक सुमनप्रद एक सुमन फल एक फलइ केवल लागहीं।
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्यर्थ बकवाद करके अपने सुन्दर यशका नाश न करो। क्षमा करना, तुम्हें सुनाता हूँ, सुनो। संसारमें तीन प्रकारके पुरुष होते हैं—पाटल (गुलाब), और कटहलके समान। एक (पाटल) फूल देते हैं, एक (आम) फूल और दोनों देते हैं और एक (कटहल) में केवल फल ही लगते हैं। इसी प्रकार ोंमें] एक कहते हैं [करते नहीं]; दूसरे कहते और करते भी हैं और एक रे) केवल करते हैं, पर वाणीसे कहते नहीं।

दो०—राम बचन सुनि बिहँसा मोहि सिखावत ग्यान।
बयरु करत नहिं तब डरे अब लागे प्रिय प्रान॥ ९०॥

श्रीरामजीके वचन सुनकर वह खूब हँसा [और बोला—] मुझे ज्ञान सिखाते उस समय वैर करते तो नहीं डरे, अब प्राण प्यारे लग रहे हैं॥ ९०॥

—कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर। कुलिस समान लाग छाँड़ै सर॥
नानाकार सिलीमुख धाए। दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाए॥

दुर्वचन कहकर रावण क्रुद्ध होकर वज्रके समान बाण छोड़ने लगा। अनेकों ारके बाण दौड़े और दिशा, विदिशा तथा आकाश और पृथ्वीमें, सब जगह छा गये।

पावक सर छाँड़ेउ रघुबीरा। छन महुँ जरे निसाचर तीरा॥
छाड़िसि तीब्र सक्ति खिसिआई। बान संग प्रभु फेरि चलाई॥

श्रीरघुवीरने अग्निबाण छोड़ा, [जिससे] रावणके सब बाण क्षणभरमें भस्म हो । तब उसने खिसियाकर तीक्ष्ण शक्ति छोड़ी। [किन्तु] श्रीरामचन्द्रजीने उसको के साथ वापस भेज दिया॥ २॥

कोटिन्ह चक्र त्रिसूल पबारै। बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारै॥
निफल होहिं रावन सर कैसें। खल के सकल मनोरथ जैसें॥

वह करोड़ों चक्र और त्रिशूल चलाता है, परन्तु प्रभु उन्हें बिना ही परिश्रम टकर हटा देते हैं। रावणके बाण किस प्रकार निष्फल होते हैं, जैसे दुष्ट मनुष्यके मनोरथ!॥ ३॥

तब सत बान सारथी मारेसि। परेउ भूमि जय राम पुकारेसि॥
राम कृपा करि सूत उठावा। तब प्रभु परम क्रोध कहुँ पावा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब उसने श्रीरामजीके सारथिको सौ बाण मारे। वह श्रीरामजीकी जय कहकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। श्रीरामजीने कृपा करके सारथिको उठाया। तब प्रभु अत्यन्त क्रोधको प्राप्त हुए॥ ४॥

छं०—भए क्रुद्ध जुद्ध बिरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसमसे।
कोदंड धुनि अति चंड सुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे॥
मंदोदरी उर कंप कंपति कमठ भू भूधर त्रसे।
चिक्करहिं दिग्गज दसन गहि महि देखि कौतुक सुर हँसे॥

युद्धमें शत्रुके विरुद्ध श्रीरघुनाथजी क्रोधित हुए, तब तरकसमें बाण कसमसाने लगे (बाहर निकलनेको आतुर होने लगे)। उनके धनुषका अत्यन्त प्रचण्ड शब्द (टङ्कार) सुनकर मनुष्यभक्षी सब राक्षस वातग्रस्त हो गये (अत्यन्त भयभीत हो गये)। मन्दोदरीका हृदय काँप उठा; समुद्र, कच्छप, पृथ्वी और पर्वत डर गये। दिशाओंके हाथी पृथ्वीको दाँतोंसे पकड़कर चिग्घाड़ने लगे। यह कौतुक देखकर देवता हँसे।

दो०—तानेउ चाप श्रवन लगि छाँड़े बिसिख कराल।
राम मारगन गन चले लहलहात जनु ब्याल॥ ९१॥

धनुषको कानतक तानकर श्रीरामचन्द्रजीने भयानक बाण छोड़े। श्रीरामजीके बाणसमूह ऐसे चले मानो सर्प लहलहाते (लहराते) हुए जा रहे हों॥ ९१॥

चौ०—चले बान सपच्छ जनु उरगा। प्रथमहिं हतेउ सारथी तुरगा॥
रथ बिभंजि हति केतु पताका। गर्जा अति अंतर बल थाका॥

बाण ऐसे चले मानो पंखवाले सर्प उड़ रहे हों। उन्होंने पहले सारथि और घोड़ोंको मार डाला। फिर रथको चूर-चूर करके ध्वजा और पताकाओंको गिरा दिया। तब रावण बड़े जोरसे गरजा, पर भीतरसे उसका बल थक गया था॥ १॥

तुरत आन रथ चढ़ि खिसिआना। अस्त्र सस्त्र छाँड़ेसि बिधि नाना॥
बिफल होहिं सब उद्यम ताके। जिमि परद्रोह निरत मनसा के॥

तुरंत दूसरे रथपर चढ़कर खिसियाकर उसने नाना प्रकारके अस्त्र-शस्त्र छोड़े। उसके सब उद्योग वैसे ही निष्फल हो रहे हैं जैसे परद्रोहमें लगे हुए चित्तवाले मनुष्यके होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब रावन दस सूल चलावा। बाजि चारि महि मारि गिरावा ॥
तुरग उठाइ कोपि रघुनायक। खैंचि सरासन छाँड़े सायक ॥

तब रावणने दस त्रिशूल चलाये और श्रीरामजीके चारों घोड़ोंको मारकर पृथ्वीपर दिया। घोड़ोंको उठाकर श्रीरघुनाथजीने क्रोध करके धनुष खींचकर बाण छोड़े। ३।

रावन सिर सरोज बनचारी। चलि रघुबीर सिलीमुख धारी ॥
दस दस बान भाल दस मारे। निसरि गए चले रुधिर पनारे ॥

रावणके सिररूपी कमलवनमें विचरण करनेवाले श्रीरघुवीरके बाणरूपी भ्रमरोंकी चली। श्रीरामचन्द्रजीने उसके दसों सिरोंमें दस-दस बाण मारे, जो आर-पार ये और सिरोंसे रक्तके पनाले बह चले ॥ ४ ॥

स्रवत रुधिर धायउ बलवाना। प्रभु पुनि कृत धनु सर संधाना ॥
तीस तीर रघुबीर पबारे। भुजन्हि समेत सीस महि पारे ॥

रुधिर बहते हुए ही बलवान् रावण दौड़ा। प्रभुने फिर धनुषपर बाण सन्धान । श्रीरघुवीरने तीस बाण मारे और बीसों भुजाओंसमेत दसों सिर काटकर पृथ्वी- गिरा दिये ॥ ५ ॥

काटतहीं पुनि भए नबीने। राम बहोरि भुजा सिर छीने ॥
प्रभु बहु बार बाहु सिर हए। कटत झटिति पुनि नूतन भए ॥

[सिर और हाथ] काटते ही फिर नये हो गये। श्रीरामजीने फिर भुजाओं और को काट गिराया। इस तरह प्रभुने बहुत बार भुजाएँ और सिर काटे। परंतु ही वे तुरंत फिर नये हो गये ॥ ६ ॥

पुनि पुनि प्रभु काटत भुज सीसा। अति कौतुकी कोसलाधीसा ॥
रहे छाइ नभ सिर अरु बाहू। मानहुँ अमित केतु अरु राहू ॥

प्रभु बार-बार उसकी भुजा और सिरोंको काट रहे हैं, क्योंकि कोसलपति श्री- जी बड़े कौतुकी हैं। आकाशमें सिर और बाहु ऐसे छा गये हैं, मानो असंख्य और राहु हों ॥ ७ ॥

छं०—जनु राहु केतु अनेक नभ पथ स्रवत सोनित धावहीं ।
रघुबीर तीर प्रचंड लागहिं भूमि गिरन न पावहीं ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक एक सर सिर निकर छेदे नभ उड़त इमि सोहहीं।
जनु कोपि दिनकर कर निकर जहँ तहँ बिधुंतुद पोहहीं॥

मानो अनेकों राहु और केतु रुधिर बहाते हुए आकाशमार्गसे दौड़ रहे श्रीरघुवीरके प्रचण्ड बाणोंके [बार-बार] लगनेसे वे पृथ्वीपर गिरने नहीं पाते एक बाणसे समूह-के-समूह सिर छिदे हुए आकाशमें उड़ते ऐसे शोभा दे रहे हैं सूर्यकी किरणें क्रोध करके जहाँ-तहाँ राहुओंको पिरो रही हों।

दो०—जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत बिषय बिबर्ध जिमि नित नित नूतन मार॥

जैसे-जैसे प्रभु उसके सिरोंको काटते हैं, वैसे-ही-वैसे वे अपार होते जा जैसे विषयोंका सेवन करनेसे काम (उन्हें भोगनेकी इच्छा) दिन-प्रति-दिन न बढ़ता जाता है ॥ ९२ ॥

चौ०—दसमुख देखि सिरन्ह कै बाढ़ी। बिसरा मरन भई रिस गा
गर्जेउ मूढ़ महा अभिमानी। धायउ दसहु सरासन ता

सिरोंकी बाढ़ देखकर रावणको अपना मरण भूल गया और बड़ा गहर हुआ। वह महान् अभिमानी मूर्ख गरजा और दसों धनुषोंको तानकर दौड़ा।

समर भूमि दसकंधर कोप्यो। बरषि बान रघुपति रथ तो
दंड एक रथ देखि न परेऊ। जनु निहार महुँ दिनकर दु

रणभूमिमें रावणने क्रोध किया और बाण बरसाकर श्रीरघुनाथजीके रथ दिया। एक दण्ड (घड़ी) तक रथ दिखलायी न पड़ा, मानो कुहरेमें सूर्य छिप गया

हाहाकार सुरन्ह जब कीन्हा। तब प्रभु कोपि कारमुक ली
सर निवारि रिपु के सिर काटे। ते दिसि बिदिसि गगन महि पा

जब देवताओंने हाहाकार किया, तब प्रभुने क्रोध करके धनुष उठाया। शत्रुके बाणोंको हटाकर उन्होंने शत्रुके सिर काटे और उनसे दिशा-विदिशा, आ और पृथ्वी सबको पाट दिया ॥ ३ ॥

काटे सिर नभ मारग धावहिं। जय जय धुनि करि भय उपजा
कहँ लछिमन सुग्रीव कपीसा। कहँ रघुबीर कोसलाधी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काटे हुए सिर आकाशमार्गसे दौड़ते हैं और जय-जयकी ध्वनि करके भय उत्पन्न करते हैं। 'लक्ष्मण और वानरराज सुग्रीव कहाँ हैं ? कोसलपति रघुवीर कहाँ हैं ?' ॥ ४ ॥

छं०—कहँ रामु कहि सिर निकर धाए देखि मर्कट भजि चले।
संधानि धनु रघुबंसमनि हँसि सरन्हि सिर बेधे भले ॥
सिर मालिका कर कालिका गहि बृंद बृंदन्हि बहु मिलीं।
करि रुधिर सरि मज्जनु मनहुँ संग्राम बट पूजन चलीं ॥

'राम कहाँ हैं ?' यह कहकर सिरोंके समूह दौड़े, उन्हें देखकर वानर भाग चले। तब धनुष सन्धान करके रघुकुलमणि श्रीरामजीने हँसकर बाणोंसे उन सिरोंको भलीभाँति बेध डाला। हाथोंमें मुण्डोंकी मालाएँ लेकर बहुत-सी कालिकाएँ झुंड-की-झुंड मिलकर इकट्ठी हुईं और वे रुधिरकी नदीमें स्नान करके चलीं। मानो संग्रामरूपी वटवृक्षकी पूजा करने जा रही हों।

दो०—पुनि दसकंठ क्रुद्ध होइ छाँड़ी सक्ति प्रचंड।
चली बिभीषन सन्मुख मनहुँ काल कर दंड ॥ ९३ ॥

फिर रावणने क्रोधित होकर प्रचण्ड शक्ति छोड़ी। वह विभीषणके सामने ऐसी चली जैसे काल (यमराज) का दण्ड हो ॥ ९३ ॥

आवत देखि सक्ति अति घोरा। प्रनतारति भंजन पन मोरा ॥
तुरत बिभीषन पाछें मेला। सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला ॥

अत्यन्त भयानक शक्तिको आती देख और यह विचारकर कि मेरा प्रण शरणागतके दुःखका नाश करना है, श्रीरामजीने तुरंत ही विभीषणको पीछे कर लिया और सामने होकर वह शक्ति स्वयं सह ली ॥ १ ॥

लागि सक्ति मुरुछा कछु भई। प्रभु कृत खेल सुरन्ह बिकलई ॥
देखि बिभीषन प्रभु श्रम पायो। गहि कर गदा क्रुद्ध होइ धायो ॥

शक्ति लगनेसे उन्हें कुछ मूर्छा हो गयी। प्रभुने तो यह लीला की, पर देवताओंको व्याकुलता हुई। प्रभुको श्रम (शारीरिक कष्ट) प्राप्त हुआ देखकर विभीषण क्रोधित हो हाथमें गदा लेकर दौड़े ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे। तैं सुर नर मुनि नाग बि[रुद्धे]।
सादर सिव कहुँ सीस चढ़ाए। एक एक के कोटिन्ह पा[ए]।

[और बोले—] अरे अभागे ! मूर्ख, नीच, दुर्बुद्धि ! तूने देवता, मनुष्य, [मुनि,] नाग सभीसे विरोध किया। तूने आदरसहित शिवजीको सिर चढ़ाये। इसीसे एकके बदलेमें करोड़ों पाये ॥ ३ ॥

तेहि कारन खल अब लगि बाँच्यो। अब तव कालु सीस पर नाच्यो।
राम बिमुख सठ चहसि संपदा। अस कहि हनेसि माझ उर ग[दा]।

उसी कारणसे अरे दुष्ट ! तू अबतक बचा है। [किन्तु] अब काल तेरे [सिर]पर नाच रहा है। अरे मूर्ख ! तू रामविमुख होकर सम्पत्ति (सुख) चाहता है ? [ऐसा] कहकर विभीषणने रावणकी छातीके बीचोबीच गदा मारी ॥ ४ ॥

छं०—उर माझ गदा प्रहार घोर कठोर लागत महि पर्‌यो।
दस बदन सोनित स्रवत पुनि संभारि धायो रिस भर्‌यो ॥
द्वौ भिरे अतिबल मल्लजुद्ध बिरुद्ध एकु एकहि हनै।
रघुबीर बल दर्पित बिभीषनु घालि नहिं ता कहुँ गनै ॥

बीच छातीमें कठोर गदाकी घोर और कठिन चोट लगते ही वह पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसके दसों मुखोंसे रुधिर बहने लगा; वह अपनेको फिर सँभालकर क्रोधमें भरा हुआ दौड़ा। दोनों अत्यन्त बलवान् योद्धा भिड़ गये और मल्लयुद्धमें एक दूसरेके विरुद्ध होकर मारने लगे। श्रीरघुवीरके बलसे गर्वित विभीषण उसको (रावण-जैसे जगद्विजयी योद्धाको) पासंगके बराबर भी नहीं समझते।

दो०—उमा बिभीषनु रावनहि सन्मुख चितव कि काउ।
सो अब भिरत काल ज्यों श्रीरघुबीर प्रभाउ ॥ ९४ ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! विभीषण क्या कभी रावणके सामने आँख उठाकर भी देख सकता था ? परन्तु अब वही कालके समान उससे भिड़ रहा है। यह श्रीरघुवीरका ही प्रभाव है ॥ ९४ ॥

चौ०—देखा श्रमित बिभीषनु भारी। धायउ हनूमान गिरि धारी।
रथ तुरंग सारथी निपाता। हृदय माझ तेहि मारेसि लाता।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

विभीषणको बहुत ही थका हुआ देखकर हनुमान्‌जी पर्वत धारण किये हुए उन्होंने उस पर्वतसे रावणके रथ, घोड़े और सारथिका संहार कर डाला और सीनेपर लात मारी ॥ १ ॥

ठाढ़ रहा अति कंपित गाता। गयउ बिभीषनु जहँ जनत्राता ॥
पुनि रावन कपि हतेउ पचारी। चलेउ गगन कपि पूँछ पसारी ॥

रावण खड़ा रहा, पर उसका शरीर अत्यन्त काँपने लगा। विभीषण वहाँ गये जहाँ सेवकोंके रक्षक श्रीरामजी थे। फिर रावणने ललकारकर हनुमान्‌जीको मारा। पूँछ फैलाकर आकाशमें चले गये ॥ २ ॥

गहिसि पूँछ कपि सहित उड़ाना। पुनि फिरि भिरेउ प्रबल हनुमाना ॥
लरत अकास जुगल सम जोधा। एकहि एकु हनत करि क्रोधा ॥

रावणने पूँछ पकड़ ली, हनुमान्‌जी उसको साथ लिये हुए ऊपर उड़े। फिर लौटकर महाबलवान् हनुमान्‌जी उससे भिड़ गये। दोनों समान योद्धा आकाशमें लड़ते हुए एक दूसरेको क्रोध करके मारने लगे ॥ ३ ॥

सोहहिं नभ छल बल बहु करहीं। कज्जलगिरि सुमेरु जनु लरहीं ॥
बुधि बल निसिचर परइ न पारचो। तब मारुतसुत प्रभु संभारचो ॥

दोनों बहुत-से छल-बल करते हुए आकाशमें ऐसे शोभित हो रहे हैं मानो कज्जलगिरि और सुमेरु पर्वत लड़ रहे हों। जब बुद्धि और बलसे राक्षस गिराये न गिरा, तब मारुति श्रीहनुमान्‌जीने प्रभुको स्मरण किया ॥ ४ ॥

छं०—संभारि श्रीरघुबीर धीर पचारि कपि रावनु हन्यो।
महि परत पुनि उठि लरत देवन्ह जुगल कहुँ जय जय भन्यो ॥
हनुमंत संकट देखि मर्कट भालु क्रोधातुर चले।
रन मत्त रावन सकल सुभट प्रचंड भुज बल दलमले ॥

श्रीरघुवीरका स्मरण करके धीर हनुमान्‌जीने ललकारकर रावणको मारा। वे दोनों पृथ्वीपर गिरते और फिर उठकर लड़ते हैं; देवताओंने दोनोंकी 'जय-जय' पुकारी। हनुमान्‌जीपर सङ्कट देखकर वानर-भालू क्रोधातुर होकर दौड़े। किन्तु रण-मद-माते रावणने सब योद्धाओंको अपने प्रचण्ड भुजाओंके बलसे कुचल और मसल डाला।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—तब रघुबीर पचारे धाए कीस प्रचंड।
कपि बल प्रबल देखि तेहिं कीन्ह प्रगट पाषंड ॥ ९५॥

तब श्रीरघुवीरके ललकारनेपर प्रचण्ड वीर वानर दौड़े। वानरोंके प्रबल [दल] देखकर रावणने माया प्रकट की ॥ ९५ ॥

चौ०—अंतरधान भयउ छन एका। पुनि प्रगटे खल रूप अनेका॥
रघुपति कटक भालु कपि जेते। जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते॥

क्षणभरके लिये वह अदृश्य हो गया। फिर उस दुष्टने अनेकों रूप प्रकट कि[ये।] श्रीरघुनाथजीकी सेनामें जितने रीछ-वानर थे, उतने ही रावण जहाँ-तहाँ (चारों [ओर]) प्रकट हो गये ॥ १ ॥

देखे कपिन्ह अमित दससीसा। जहँ तहँ भजे भालु अरु कीसा॥
भागे बानर धरहिं न धीरा। त्राहि त्राहि लछिमन रघुबीरा॥

वानरोंने अपरिमित रावण देखे। भालू और वानर सब जहाँ-तहाँ (इधर-उ[धर]) भाग चले। वानर धीरज नहीं धरते। हे लक्ष्मणजी ! हे रघुवीर ! बचा[इये,] बचाइये, यों पुकारते हुए वे भागे जा रहे हैं ॥ २ ॥

दहँ दिसि धावहिं कोटिन्ह रावन। गर्जहिं घोर कठोर भयावन॥
डरे सकल सुर चले पराई। जय कै आस तजहु अब भाई॥

दसों दिशाओंमें करोड़ों रावण दौड़ते हैं और घोर, कठोर भयानक गर्ज[न कर] रहे हैं। सब देवता डर गये और ऐसा कहते हुए भाग चले कि—हे भाई! [अब] जयकी आशा छोड़ दो ! ॥ ३ ॥

सब सुर जिते एक दसकंधर। अब बहु भए तकहु गिरि कंदर॥
रहे बिरंचि संभु मुनि ग्यानी। जिन्ह जिन्ह प्रभु महिमा कछु जानी॥

एक ही रावणने सब देवताओंको जीत लिया था, अब तो बहुत-से राव[ण हो] गये हैं। इससे अब पहाड़की गुफाओंका आश्रय लो (अर्थात् उनमें छिप रहो)। वहाँ ब्रह्मा, शम्भु और ज्ञानी मुनि ही डटे रहे, जिन्होंने प्रभुकी कुछ महिमा जानी थी॥ [४ ॥]

छं०—जाना प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु माने फुरे।
चले बिचलि मर्कट भालु सकल कृपाल पाहि भयातुरे॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हनुमंत अंगद नील नल अतिबल लरत रन बाँकुरे।
मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपट भू भट अंकुरे ॥

जो प्रभुका प्रताप जानते थे, वे निर्भय डटे रहे। वानरोंने शत्रुओं (बहुत-से ...णों)को सच्चा ही मान लिया। [इससे] सब वानर-भालू विचलित होकर 'हे कृपालु! ...ा कीजिये' [यों पुकारते हुए] भयसे व्याकुल होकर भाग चले। अत्यन्त बलवान् ...बाँकुरे हनुमान्‌जी, अंगद, नील और नल लड़ते हैं और कपटरूपी भूमिसे अङ्कुरकी ...ति उपजे हुए कोटि-कोटि योद्धा रावणोंको मसलते हैं।

दो०—सुर बानर देखे बिकल हँस्यो कोसलाधीस।
सजि सारंग एक सर हते सकल दससीस ॥ ९६ ॥

देवताओं और वानरोंको विकल देखकर कोसलपति श्रीरामजी हँसे और शार्ङ्ग-...नुषपर एक बाण चढ़ाकर [मायाके बने हुए] सब रावणोंको मार डाला ॥ ९६ ॥

...०—प्रभु छन महुँ माया सब काटी। जिमि रबि उएँ जाहिं तम फाटी ॥
रावनु एकु देखि सुर हरषे। फिरे सुमन बहु प्रभु पर बरषे ॥

प्रभुने क्षणभरमें सब माया काट डाली। जैसे सूर्यके उदय होते ही अन्धकारकी ...शि फट जाती है (नष्ट हो जाती है)। अब एक ही रावणको देखकर देवता ...र्षित हुए और उन्होंने लौटकर प्रभुपर बहुत-से पुष्प बरसाये ॥ १ ॥

भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे। फिरे एक एकन्ह तब टेरे ॥
प्रभु बलु पाइ भालु कपि धाए। तरल तमकि संजुग महि आए ॥

श्रीरघुनाथजीने भुजा उठाकर सब वानरोंको लौटाया। तब वे एक दूसरेको ...कार-पुकारकर लौट आये। प्रभुका बल पाकर रीछ-वानर दौड़ पड़े। जल्दीसे कूदकर ...रणभूमिमें आ गये ॥ २ ॥

अस्तुति करत देवतन्हि देखें। भयउँ एक मैं इन्ह के लेखें ॥
सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल। अस कहि कोपि गगन पर धायल ॥

देवताओंको श्रीरामजीकी स्तुति करते देखकर रावणने सोचा, मैं इनकी समझमें ...क हो गया। [परन्तु इन्हें यह पता नहीं कि इनके लिये मैं एक ही बहुत हूँ] ...और कहा—अरे मूर्खो! तुम तो सदाके ही मेरे मरैल (मेरी मार खानेवाले) हो। ऐसा ...कहकर वह क्रोध करके आकाशपर [देवताओंकी ओर] दौड़ा ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हाहाकार करत सुर भागे। खलहु जाहु कहँ मोरें आगें॥
देखि बिकल सुर अंगद धायो। कूदि चरन गहि भूमि गिरायो॥

देवता हाहाकार करते हुए भागे। [रावणने कहा—] दुष्टो! मेरे आगेसे कहाँ जा सकोगे? देवताओंको व्याकुल देखकर अंगद दौड़े और उछलकर रावणका पैर पकड़कर [उन्होंने] उसको पृथ्वीपर गिरा दिया॥ ४॥

छं०—गहि भूमि पार्‌यो लात मार्‌यो बालिसुत प्रभु पहिं गयो।
संभारि उठि दसकंठ घोर कठोर रव गर्जत भयो॥
करि दाप चाप चढ़ाइ दस संधानि सर बहु बरषई।
किए सकल भट घायल भयाकुल देखि निज बल हरषई॥

उसे पकड़कर पृथ्वीपर गिराकर लात मारकर बालिपुत्र अंगद प्रभुके पास चले गये। रावण सँभलकर उठा और बड़े भयङ्कर कठोर शब्दसे गरजने लगा। वह दर्प करके दसों धनुष चढ़ाकर उनपर बहुत-से बाण सन्धान करके बरसाने लगा। उसने सब योद्धाओंको घायल और भयसे व्याकुल कर दिया और अपना बल देखकर वह हर्षित होने लगा।

दो०—तब रघुपति रावन के सीस भुजा सर चाप।
काटे बहुत बढ़े पुनि जिमि तीरथ कर पाप॥ ९७॥

तब श्रीरघुनाथजीने रावणके सिर, भुजाएँ, बाण और धनुष काट डाले। पर वे फिर बहुत बढ़ गये, जैसे तीर्थमें किये हुए पाप बढ़ जाते हैं (कई गुना अधिक भयानक फल उत्पन्न करते हैं)॥ ९७॥

चौ०—सिर भुज बाढ़ि देखि रिपु केरी। भालु कपिन्ह रिस भई घनेरी॥
मरत न मूढ़ कटेहुँ भुज सीसा। धाए कोपि भालु भट कीसा॥

शत्रुके सिर और भुजाओंकी बढ़ती देखकर रीछ-वानरोंको बहुत ही क्रोध हुआ। यह मूर्ख भुजाओंके और सिरोंके कटनेपर भी नहीं मरता, [ऐसा कहते हुए] भालू और वानर योद्धा क्रोध करके दौड़े॥ १॥

बालितनय मारुति नल नीला। बानरराज दुबिद बलसीला॥
बिटप महीधर करहिं प्रहारा। सोइ गिरि तरु गहि कपिन्ह सो मारा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बालिपुत्र अंगद, मारुति हनुमान्‌जी, नल, नील, वानरराज सुग्रीव और द्विविद दि बलवान् उसपर वृक्ष और पर्वतोंका प्रहार करते हैं। वह उन्हीं पर्वतों और वृक्षोंको ड़कर वानरोंको मारता है ॥ २ ॥

एक नखन्हि रिपु बपुष बिदारी। भागि चलहिं एक लातन्ह मारी ॥
तब नल नील सिरन्हि चढ़ि गयऊ। नखन्हि लिलार बिदारत भयऊ ॥

कोई एक वानर नखोंसे शत्रुके शरीरको फाड़कर भाग जाते हैं, तो कोई उसे तोंसे मारकर। तब नल और नील रावणके सिरोंपर चढ़ गये और नखोंसे उसके टको फाड़ने लगे ॥ ३ ॥

रुधिर देखि बिषाद उर भारी। तिन्हहि धरन कहुँ भुजा पसारी ॥
गहे न जाहिं करन्हि पर फिरहीं। जनु जुग मधुप कमल बन चरहीं ॥

खून देखकर उसे हृदयमें बड़ा दुःख हुआ। उसने उनको पकड़नेके लिये हाथ ये, पर वे पकड़में नहीं आते, हाथोंके ऊपर-ऊपर ही फिरते हैं मानो दो भौंरे लोंके वनमें विचरण कर रहे हों ॥ ४ ॥

कोपि कूदि द्वौ धरेसि बहोरी। महि पटकत भजे भुजा मरोरी ॥
पुनि सकोप दस धनु कर लीन्हे। सरन्हि मारि घायल कपि कीन्हे ॥

तब उसने क्रोध करके उछलकर दोनोंको पकड़ लिया। पृथ्वीपर पटकते वे उसकी भुजाओंको मरोड़कर भाग छूटे। फिर उसने क्रोध करके हाथोंमें धनुष लिये और वानरोंको बाणोंसे मारकर घायल कर दिया ॥ ५ ॥

हनुमदादि मुरुछित करि बंदर। पाइ प्रदोष हरष दसकंधर ॥
मुरुछित देखि सकल कपि बीरा। जामवंत धायउ रनधीरा ॥

हनुमान्‌जी आदि सब वानरोंको मूर्च्छित करके और सन्ध्याका समय पाकर रावण हुआ। समस्त वानर वीरोंको मूर्च्छित देखकर रणधीर जाम्बवान् दौड़े ॥ ६ ॥

संग भालु भूधर तरु धारी। मारन लगे पचारि पचारी ॥
भयउ क्रुद्ध रावन बलवाना। गहि पद महि पटकइ भट नाना ॥

जाम्बवान्‌के साथ जो भालू थे, वे पर्वत और वृक्ष धारण किये रावणको ललकार-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ललकारकर मारने लगे। बलवान् रावण क्रोधित हुआ और पैर पकड़-पकड़कर अनेकों योद्धाओंको पृथ्वीपर पटकने लगा ॥ ७ ॥

देखि भालुपति निज दल घाता। कोपि माझ उर मारेसि ला

जाम्बवान्‌ने अपने दलका विध्वंस देखकर क्रोध करके रावणकी छातीमें लात

छं०—उर लात घात प्रचंड लागत बिकल रथ ते महि परा।
गहि भालु बीसहुँ कर मनहुँ कमलन्हि बसे निसि मधुकरा॥
मुरुछित बिलोकि बहोरि पद हति भालुपति प्रभु पहिं गयो।
निसि जानि स्यंदन घालि तेहि तब सूत जतनु करत भयो॥

छातीमें लातका प्रचण्ड आघात लगते ही रावण व्याकुल होकर रथसे पृ गिर पड़ा। उसने बीसों हाथोंमें भालुओंको पकड़ रक्खा था। [ऐसा जान पड़ता मानो रात्रिके समय भौंरे कमलोंमें बसे हुए हों। उसे मूर्छित देखकर, फिर लात म ऋक्षराज जाम्बवान् प्रभुके पास चले गये। रात्रि जानकर सारथि रावणको रथमें डा उसे होशमें लानेका उपाय करने लगा।

दो०—मुरुछा बिगत भालु कपि सब आए प्रभु पास।
निसिचर सकल रावनहि घेरि रहे अति त्रास॥ ९८

मूर्छा दूर होनेपर सब रीछ-वानर प्रभुके पास आये। उधर सब राक्षसोंने ही भयभीत होकर रावणको घेर लिया॥ ९८॥

मासपारायण, छब्बीसवाँ विश्राम

चौ०—तेही निसि सीता पहिं जाई। त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई॥
सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपु केरी। सीता उर भइ त्रास घनेरी॥

उसी रात त्रिजटाने सीताजीके पास जाकर उन्हें सब कथा कह सुनायी। श सिर और भुजाओंकी बढ़तीका संवाद सुनकर सीताजीके हृदयमें बड़ा भय हुआ॥

मुख मलीन उपजी मन चिंता। त्रिजटा सन बोली तब सीता॥
होइहि कहा कहसि किन माता। केहि बिधि मरिहि बिस्व दुखदाता॥

[उनका] मुख उदास हो गया, मनमें चिन्ता उत्पन्न हो गयी। तब सी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

त्रिजटासे बोलीं—हे माता ! बताती क्यों नहीं ? क्या होगा ? सम्पूर्ण विश्वको दुःख देनेवाला यह किस प्रकार मरेगा ? ॥ २ ॥

रघुपति सर सिर कटेहुँ न मरई। बिधि बिपरीत चरित सब करई ॥
मोर अभाग्य जिआवत ओही। जेहिं हौं हरि पद कमल बिछोही ॥

श्रीरघुनाथजीके बाणोंसे सिर कटनेपर भी नहीं मरता। विधाता सारे चरित्र विपरीत (उलटे) ही कर रहा है। [सच बात तो यह है कि] मेरा दुर्भाग्य ही उसे जिला रहा है, जिसने मुझे भगवान्‌के चरण-कमलोंसे अलग कर दिया है ॥ ३ ॥

जेहिं कृत कपट कनक मृग झूठा। अजहुँ सो दैव मोहि पर रूठा ॥
जेहिं बिधि मोहि दुख दुसह सहाए। लछिमन कहुँ कटु बचन कहाए ॥

जिसने कपटका झूठा स्वर्णमृग बनाया था, वही दैव अब भी मुझपर रूठा हुआ है, जिस विधाताने मुझसे दुःसह दुःख सहन कराये और लक्ष्मणको कड़ुवे वचन कहलाये,

रघुपति बिरह सबिष सर भारी। तकि तकि मार बार बहु मारी ॥
ऐसेहुँ दुख जो राख मम प्राना। सोइ बिधि ताहि जिआव न आना ॥

जो श्रीरघुनाथजीके विरहरूपी बड़े विषैले बाणोंसे तक-तककर मुझे बहुत बार मारकर अब भी मार रहा है; और ऐसे दुःखमें भी जो मेरे प्राणोंको रख रहा है, वही विधाता उस (रावण) को जिला रहा है, दूसरा कोई नहीं ॥ ५ ॥

बहु बिधि कर बिलाप जानकी। करि करि सुरति कृपानिधान की ॥
कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी। उर सर लागत मरइ सुरारी ॥

कृपानिधान श्रीरामजीकी याद कर-करके जानकीजी बहुत प्रकारसे विलाप कर रही हैं। त्रिजटाने कहा—हे राजकुमारी ! सुनो, देवताओंका शत्रु रावण हृदयमें बाण लगते ही मर जायगा ॥ ६ ॥

प्रभु ताते उर हतइ न तेही। एहि के हृदयँ बसति बैदेही ॥

परन्तु प्रभु उसके हृदयमें बाण इसलिये नहीं मारते कि इसके हृदयमें जानकीजी (आप) बसती हैं ॥ ७ ॥

छं०—एहि के हृदयँ बस जानकी जानकी उर मम बास है।
मम उदर भुअन अनेक लागत बान सब कर नास है ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनि बचन हरष बिषाद मन अति देखि पुनि त्रिजटाँ कहा।
अब मरिहि रिपु एहि बिधि सुनहि सुंदरि तजहि संसय महा॥

[वे यही सोचकर रह जाते हैं कि] इसके हृदयमें जानकीका निवास है, जानकीके हृदयमें मेरा निवास है और मेरे उदरमें अनेकों भुवन हैं। अतः रावणके हृदयमें बाण लगते ही सब भुवनोंका नाश हो जायगा। यह वचन सुनकर, सीताजीके मनमें अत्यन्त हर्ष और विषाद हुआ देखकर त्रिजटाने फिर कहा—हे सुन्दरी! महान् सन्देहका त्याग कर दो; अब सुनो, शत्रु इस प्रकार मरेगा—

दो०—काटत सिर होइहि बिकल छुटि जाइहि तव ध्यान।
तब रावनहि हृदय महुँ मरिहहिं रामु सुजान॥ ९९॥

सिरोंके बार-बार काटे जानेसे जब वह व्याकुल हो जायगा और उसके हृदयसे तुम्हारा ध्यान छूट जायगा, तब सुजान (अन्तर्यामी) श्रीरामजी रावणके हृदयमें बाण मारेंगे॥ ९९॥

चौ०—अस कहि बहुत भाँति समुझाई। पुनि त्रिजटा निज भवन सिधाई॥
राम सुभाउ सुमिरि बैदेही। उपजी बिरह बिथा अति तेही॥

ऐसा कहकर और सीताजीको बहुत प्रकारसे समझाकर फिर त्रिजटा अपने घर चली गयी। श्रीरामचन्द्रजीके स्वभावका स्मरण करके जानकीजीको अत्यन्त विरहव्यथा उत्पन्न हुई॥ १॥

निसिहि ससिहि निंदति बहु भाँती। जुग सम भई सिराति न राती॥
करति बिलाप मनहिं मन भारी। राम बिरहँ जानकी दुखारी॥

वे रात्रिकी और चन्द्रमाकी बहुत प्रकारसे निन्दा कर रही हैं [और कह रही हैं—] रात युगके समान बड़ी हो गयी, वह बीतती ही नहीं। जानकीजी श्रीरामजीके विरहमें दुखी होकर मन-ही-मन भारी विलाप कर रही हैं॥ २॥

जब अति भयउ बिरह उर दाहू। फरकेउ बाम नयन अरु बाहू॥
सगुन बिचारि धरी मन धीरा। अब मिलिहहिं कृपाल रघुबीरा॥

जब विरहके मारे हृदयमें दारुण दाह हो गया, तब उनका बायाँ नेत्र और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[ब]हु फड़क उठे। शकुन समझकर उन्होंने मनमें धैर्य धारण किया कि अब कृपालु [र]घुवीर अवश्य मिलेंगे ॥ ३ ॥

इहाँ अर्धनिसि रावनु जागा। निज सारथि सन खीझन लागा ॥
सठ रनभूमि छड़ाइसि मोही। धिग धिग अधम मंदमति तोही ॥

यहाँ आधी रातको रावण [मूर्च्छासे] जगा और अपने सारथिपर रुष्ट होकर [कह]ने लगा—अरे मूर्ख ! तूने मुझे रणभूमिसे अलग कर दिया। अरे अधम ! मन्दबुद्धि ! तुझे धिक्कार है, धिक्कार है ! ॥ ४ ॥

तेहिं पद गहि बहु बिधि समुझावा। भोरु भएँ रथ चढ़ि पुनि धावा ॥
सुनि आगवनु दसानन केरा। कपि दल खरभर भयउ घनेरा ॥

सारथिने चरण पकड़कर रावणको बहुत प्रकारसे समझाया। सबेरा होते ही वह रथपर [चढ़]कर फिर दौड़ा। रावणका आना सुनकर वानरोंकी सेनामें बड़ी खलबली मच गयी ॥ ५ ॥

जहँ तहँ भूधर बिटप उपारी। धाए कटकटाइ भट भारी ॥

वे भारी योद्धा जहाँ-तहाँसे पर्वत और वृक्ष उखाड़कर [क्रोधसे] दाँत कटकटाकर दौड़े।

छं०—धाए जो मर्कट बिकट भालु कराल कर भूधर धरा।
अति कोप करहिं प्रहार मारत भजि चले रजनीचरा ॥
बिचलाइ दल बलवंत कीसन्ह घेरि पुनि रावनु लियो।
चहुँ दिसि चपेटन्हि मारि नखन्हि बिदारि तनु ब्याकुल कियो॥

विकट और विकराल वानर-भालु हाथोंमें पर्वत लिये दौड़े। वे अत्यन्त क्रोध [कर]के प्रहार करते हैं। उनके मारनेसे राक्षस भाग चले। बलवान् वानरोंने शत्रुकी [से]नाको विचलित करके फिर रावणको घेर लिया। चारों ओरसे चपेटे मारकर और [नखों]से शरीर विदीर्णकर वानरोंने उसको व्याकुल कर दिया।

दो०—देखि महा मर्कट प्रबल रावन कीन्ह बिचार।
अंतरहित होइ निमिष महुँ कृत माया बिस्तार ॥१००॥

वानरोंको बड़ा ही प्रबल देखकर रावणने विचार किया और अन्तर्धान होकर [क्ष]णभरमें उसने माया फैलायी ॥ १०० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—जब कीन्ह तेहिं पाषंड। भए प्रगट जंतु प्रचंड॥
बेताल भूत पिसाच। कर धरें धनु नाराच॥
जब उसने पाखण्ड (माया) रचा तब भयङ्कर जीव प्रकट हो गये। बेताल, भूत और पिशाच हाथोंमें धनुष-बाण लिये प्रकट हुए! ॥ १ ॥

जोगिनि गहें करबाल। एक हाथ मनुज कपाल॥
करि सद्य सोनित पान। नाचहिं करहिं बहु गान॥
योगिनियाँ एक हाथमें तलवार और दूसरे हाथमें मनुष्यकी खोपड़ी लिये खून पीकर नाचने और बहुत तरहके गीत गाने लगीं ॥ २ ॥

धरु मारु बोलहिं घोर। रहि पूरि धुनि चहुँ ओर॥
मुख बाइ धावहिं खान। तब लगे कीस परान॥
वे 'पकड़ो, मारो' आदि घोर शब्द बोल रही हैं। चारों ओर (सब दिशाओंमें) ध्वनि भर गयी। वे मुख फैलाकर खाने दौड़ती हैं। तब वानर भागने लगे ॥ ३ ॥

जहँ जाहिं मर्कट भागि। तहँ बरत देखहिं आगि॥
भए बिकल बानर भालु। पुनि लाग बरषै बालु॥
वानर भागकर जहाँ भी जाते हैं, वहीं आग जलती देखते हैं। वानर-भालू व्याकुल हो गये। फिर रावण बालू बरसाने लगा ॥ ४ ॥

जहँ तहँ थकित करि कीस। गर्जेउ बहुरि दससीस॥
लछिमन कपीस समेत। भए सकल बीर अचेत॥
वानरोंको जहाँ-तहाँ थकित (शिथिल) कर रावण फिर गरजा। लक्ष्मणजी और सुग्रीवसहित सभी वीर अचेत हो गये ॥ ५ ॥

हा राम हा रघुनाथ। कहि सुभट मीजहिं हाथ॥
एहि बिधि सकल बल तोरि। तेहिं कीन्ह कपट बहोरि॥
हा राम! हा रघुनाथ! पुकारते हुए श्रेष्ठ योद्धा अपने हाथ मलते (पछताते) हैं। इस प्रकार सबका बल तोड़कर रावणने फिर दूसरी माया रची ॥ ६ ॥

प्रगटेसि बिपुल हनुमान। धाए गहे पाषान॥
तिन्ह रामु घेरे जाइ। चहुँ दिसि बरूथ बनाइ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसने बहुत-से हनुमान् प्रकट किये, जो पत्थर लिये दौड़े। उन्होंने चारों दल बनाकर श्रीरामचन्द्रजीको जा घेरा॥ ७॥

मारहु धरहु जनि जाइ। कटकटहिं पूँछ उठाइ॥
दहँ दिसि लँगूर बिराज। तेहिं मध्य कोसलराज॥ ८॥

वे पूँछ उठाकर कटकटाते हुए पुकारने लगे, 'मारो, पकड़ो, जाने न पावे'। उनके (पूँछ) दसों दिशाओंमें शोभा दे रहे हैं और उनके बीचमें कोसलराज श्रीरामजी हैं। ८।

छं०—तेहिं मध्य कोसलराज सुंदर स्याम तन सोभा लही।
जनु इंद्रधनुष अनेक की बर बारि तुंग तमालही॥
प्रभु देखि हरष बिषाद उर सुर बदत जय जय जय करी।
रघुबीर एकहिं तीर कोपि निमेष महुँ माया हरी॥ १॥

उनके बीचमें कोसलराजका सुन्दर श्याम शरीर ऐसा शोभा पा रहा है, मानो तमाल वृक्षके लिये अनेक इन्द्रधनुषोंकी श्रेष्ठ बाड़ (घेरा) बनायी गयी हो। प्रभु-देखकर देवता हर्ष और विषादयुक्त हृदयसे 'जय, जय, जय' ऐसा बोलने लगे। तब रघुवीरने क्रोध करके एक ही बाणसे निमेषमात्रमें रावणकी सारी माया हर ली॥ १॥

माया बिगत कपि भालु हरषे बिटप गिरि गहि सब फिरे।
सर निकर छाड़े राम रावन बाहु सिर पुनि महि गिरे॥
श्रीराम रावन समर चरित अनेक कल्प जो गावहीं।
सत सेष सारद निगम कबि तेउ तदपि पार न पावहीं॥ २॥

माया दूर हो जानेपर वानर-भालू हर्षित हुए और वृक्ष तथा पर्वत ले-लेकर सब लौट पड़े। श्रीरामजीने बाणोंके समूह छोड़े, जिनसे रावणके हाथ और सिर फिर कट-कटकर पृथ्वीपर गिर पड़े। श्रीरामजी और रावणके युद्धका चरित्र यदि सैकड़ों शेष, सरस्वती, वेद और कवि अनेक कल्पोंतक गाते रहें, तो भी वे उसका पार नहीं पा सकते॥ २॥

दो०—ताके गुन गन कछु कहे जड़मति तुलसीदास।
जिमि निज बल अनुरूप ते माछी उड़इ अकास॥ १०१ (क)॥

उसी चरित्रके कुछ गुणगण मन्दबुद्धि तुलसीदासने कहे हैं, जैसे मक्खी भी अपने पुरुषार्थके अनुसार आकाशमें उड़ती है॥ १०१ (क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काटे सिर भुज बार बहु मरत न भट लंकेस।
प्रभु क्रीड़त सुर सिद्ध मुनि ब्याकुल देखि कलेस ॥१०१॥

सिर और भुजाएँ बहुत बार काटी गयीं, फिर भी वीर रावण मरता नहीं। प्रभु तो खेल कर रहे हैं; परन्तु मुनि, सिद्ध और देवता उस क्लेशको देखकर (प्रभुको क्लेश पाते समझकर) व्याकुल हैं ॥ १०१ (ख) ॥

चौ०—काटत बढ़हिं सीस समुदाई। जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई॥
मरइ न रिपु श्रम भयउ बिसेषा। राम बिभीषन तन तब देखा॥

काटते ही सिरोंका समूह बढ़ जाता है जैसे प्रत्येक लाभपर लोभ बढ़ता है। शत्रु मरता नहीं और परिश्रम बहुत हुआ। तब श्रीरामचन्द्रजीने विभीषणकी ओर देखा ॥१॥

उमा काल मर जाकीं ईछा। सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा॥
सुनु सरबग्य चराचर नायक। प्रनतपाल सुर मुनि सुखदायक॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! जिसकी इच्छामात्रसे काल भी मर जाता है, वही प्रभु सेवककी प्रीतिकी परीक्षा ले रहे हैं। [विभीषणजीने कहा—] हे सर्वज्ञ! हे चराचरके स्वामी! हे शरणागतके पालन करनेवाले! हे देवता और मुनियोंको सुख देनेवाले! सुनिये—॥ २ ॥

नाभिकुंड पियूष बस याकें। नाथ जिअत रावनु बल ताकें॥
सुनत बिभीषन बचन कृपाला। हरषि गहे कर बान कराला॥

इसके नाभिकुण्डमें अमृतका निवास है। हे नाथ! रावण उसीके बलपर जीता है। विभीषणके वचन सुनते ही कृपालु श्रीरघुनाथजीने हर्षित होकर हाथमें विकराल बाण लिये ॥३॥

असुभ होन लागे तब नाना। रोवहिं खर सृकाल बहु स्वाना॥
बोलहिं खग जग आरति हेतू। प्रगट भए नभ जहँ तहँ केतू॥

उस समय नाना प्रकारके अशकुन होने लगे। बहुत-से गदहे, स्यार और कुत्ते रोने लगे। जगत्‌के दुःख (अशुभ) को सूचित करनेके लिये पक्षी बोलने लगे। आकाशमें जहाँ-तहाँ केतु (पुच्छल तारे) प्रकट हो गये ॥ ४ ॥

दस दिसि दाह होन अति लागा। भयउ परब बिनु रबि उपरागा॥
मंदोदरि उर कंपति भारी। प्रतिमा स्त्रवहिं नयन मग बारी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दसों दिशाओंमें अत्यन्त दाह होने लगा (आग लगने लगी)। बिना ही पर्व (योग) सूर्यग्रहण होने लगा। मन्दोदरीका हृदय बहुत काँपने लगा। मूर्तियाँ नेत्र-[से] जल बहाने लगीं ॥ ५ ॥

छं०-प्रतिमा रुदहिं पबिपात नभ अति बात बह डोलति मही।
बरषहिं बलाहक रुधिर कच रज असुभ अति सक को कही॥
उतपात अमित बिलोकि नभ सुर बिकल बोलहिं जय जए।
सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भए॥

मूर्तियाँ रोने लगीं, आकाशसे वज्रपात होने लगे, अत्यन्त प्रचण्ड वायु बहने [लग]ी, पृथ्वी हिलने लगी, बादल रक्त, बाल और धूलकी वर्षा करने लगे। इस प्रकार [इत]ने अधिक अमङ्गल होने लगे कि उनको कौन कह सकता है? अपरिमित उत्पात [देख]कर आकाशमें देवता व्याकुल होकर जय-जय पुकार उठे। देवताओंको भयभीत [जा]नकर कृपालु श्रीरघुनाथजी धनुषपर बाण सन्धान करने लगे।

दो०-खैंचि सरासन श्रवन लगि छाड़े सर एकतीस।
रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस॥१०२॥

कानोंतक धनुषको खींचकर श्रीरघुनाथजीने इकतीस बाण छोड़े। वे श्रीरामचन्द्र-[जी]के बाण ऐसे चले मानो कालसर्प हों॥ १०२॥

[चौ]०-सायक एक नाभि सर सोषा। अपर लगे भुज सिर करि रोषा॥
लै सिर बाहु चले नाराचा। सिर भुज हीन रुंड महि नाचा॥

एक बाणने नाभिके अमृतकुण्डको सोख लिया। दूसरे तीस बाण कोप करके [उस]के सिरों और भुजाओंमें लगे। बाण सिरों और भुजाओंको लेकर चले। सिरों [औ]र भुजाओंसे रहित रुण्ड (धड़) पृथ्वीपर नाचने लगा॥ १॥

धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा। तब सर हति प्रभु कृत दुइ खंडा॥
गर्जेउ मरत घोर रव भारी। कहाँ रामु रन हतौं पचारी॥

धड़ प्रचण्ड वेगसे दौड़ता है, जिससे धरती धँसने लगी। तब प्रभुने बाण [मा]रकर उसके दो टुकड़े कर दिये। मरते समय रावण बड़े घोर शब्दसे गरजकर [बो]ला—राम कहाँ हैं? मैं ललकारकर उनको युद्धमें मारूँ!॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

डोली भूमि गिरत दसकंधर। छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर॥
धरनि परेउ द्वौ खंड बढ़ाई। चापि भालु मर्कट समुदाई॥

रावणके गिरते ही पृथ्वी हिल गयी। समुद्र, नदियाँ, दिशाओंके हाथी और पर्वत क्षुब्ध हो उठे। रावण धड़के दोनों टुकड़ोंको फैलाकर भालू और वानरोंके समुदायको दबाता हुआ पृथ्वीपर गिर पड़ा॥ ३॥

मंदोदरि आगें भुज सीसा। धरि सर चले जहाँ जगदीसा॥
प्रबिसे सब निषंग महुँ जाई। देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाई॥

रावणकी भुजाओं और सिरोंको मन्दोदरीके सामने रखकर राम-बाण वहाँ चले, जहाँ जगदीश्वर श्रीरामजी थे। सब बाण जाकर तरकसमें प्रवेश कर गये। यह देखकर देवताओंने नगाड़े बजाये॥ ४॥

तासु तेज समान प्रभु आनन। हरषे देखि संभु चतुरानन॥
जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा। जय रघुबीर प्रबल भुजदंडा॥

रावणका तेज प्रभुके मुखमें समा गया। यह देखकर शिवजी और ब्रह्माजी हर्षित हुए। ब्रह्माण्डभरमें जय-जयकी ध्वनि भर गयी। प्रबल भुजदण्डोंवाले श्रीरघुवीरकी जय हो॥ ५॥

बरषहिं सुमन देव मुनि बृंदा। जय कृपाल जय जयति मुकुंदा॥

देवता और मुनियोंके समूह फूल बरसाते हैं और कहते हैं—कृपालुकी जय हो, मुकुन्दकी जय हो, जय हो!॥ ६॥

छं०—जय कृपा कंद मुकुंद द्वंद हरन सरन सुखप्रद प्रभो।
खल दल बिदारन परम कारन कारुनीक सदा बिभो॥
सुर सुमन बरषहिं हरष संकुल बाज दुंदुभि गहगही।
संग्राम अंगन राम अंग अनंग बहु सोभा लही॥ १॥

हे कृपाके कन्द! हे मोक्षदाता मुकुन्द! हे [राग-द्वेष, हर्ष-शोक, जन्म-मृत्यु आदि] द्वन्द्वोंके हरनेवाले! हे शरणागतको सुख देनेवाले प्रभो! हे दुष्ट-दलको विदीर्ण करनेवाले! हे कारणोंके भी परम कारण! हे सदा करुणा करनेवाले! हे सर्वव्यापक विभो! आपकी जय हो। देवता हर्षमें भरे हुए पुष्प बरसाते हैं, घमाघम नगाड़े बज रहे हैं। रणभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीके अङ्गोंने बहुत-से कामदेवोंकी शोभा प्राप्त की॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सिर जटा मुकुट प्रसून बिच बिच अति मनोहर राजहीं।
जनु नीलगिरि पर तड़ित पटल समेत उडुगन भ्राजहीं॥
भुजदंड सर कोदंड फेरत रुधिर कन तन अति बने।
जनु रायमुनीं तमाल पर बैठीं बिपुल सुख आपने॥ २॥

सिरपर जटाओंका मुकुट है, जिसके बीच-बीचमें अत्यन्त मनोहर पुष्प शोभा रहे हैं। मानो नीले पर्वतपर बिजलीके समूहसहित नक्षत्र सुशोभित हो रहे हैं। श्रीरामजी अपने भुजदण्डोंसे बाण और धनुष फिरा रहे हैं। शरीरपर रुधिरके कण अत्यन्त सुन्दर लगते हैं। मानो तमालके वृक्षपर बहुत-सी ललमुनियाँ चिड़ियाँ अपने महान सुखमें मग्न हुई निश्चल बैठी हों॥ २॥

दो०—कृपादृष्टि करि बृष्टि प्रभु अभय किए सुर बृंद।
भालु कीस सब हरषे जय सुख धाम मुकुंद॥१०३॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कृपादृष्टिकी वर्षा करके देवसमूहको निर्भय कर दिया। वानर-भालू सब हर्षित हुए और सुखधाम मुकुन्दकी जय हो, ऐसा पुकारने लगे।

चौ०—पति सिर देखत मंदोदरी। मुरुछित बिकल धरनि खसि परी॥
जुबति बृंद रोवत उठि धाईं। तेहि उठाइ रावन पहिं आईं॥

पतिके सिर देखते ही मन्दोदरी व्याकुल और मूर्च्छित होकर धरतीपर गिर पड़ी। स्त्रियाँ रोती हुई उठ दौड़ीं और उस (मन्दोदरी) को उठाकर रावणके पास आयीं।

पति गति देखि ते करहिं पुकारा। छूटे कच नहिं बपुष सँभारा॥
उर ताड़ना करहिं बिधि नाना। रोवत करहिं प्रताप बखाना॥

पतिकी दशा देखकर वे पुकार-पुकारकर रोने लगीं। उनके बाल खुल गये, देहकी सँभाल नहीं रही। वे अनेकों प्रकारसे छाती पीटती हैं और रोती हुई रावणके प्रतापका बखान करती हैं॥ २॥

तव बल नाथ डोल नित धरनी। तेज हीन पावक ससि तरनी॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा। सो तनु भूमि परेउ भरि छारा॥

[वे कहती हैं—] हे नाथ! तुम्हारे बलसे पृथ्वी सदा काँपती रहती थी। अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तुम्हारे सामने तेजहीन थे। शेष और कच्छप भी जिसका भार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं सह सकते थे, वही तुम्हारा शरीर आज धूलमें भरा हुआ पृथ्वीपर पड़ा है।

बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा॥
भुजबल जितेहु काल जम साईं। आजु परेहु अनाथ की नाईं॥

वरुण, कुबेर, इन्द्र और वायु, इनमेंसे किसीने भी रणमें तुम्हारे सामने धैर्य धारण नहीं किया। हे स्वामी! तुमने अपने भुजबलसे काल और यमराजको भी जीत लिया था। वही तुम आज अनाथकी तरह पड़े हो॥ ४॥

जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई। सुत परिजन बल बरनि न जाई॥
राम बिमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा॥

तुम्हारी प्रभुता जगत्‌भरमें प्रसिद्ध है। तुम्हारे पुत्रों और कुटुम्बियोंके बलका, हाय! वर्णन ही नहीं हो सकता। श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होनेसे ही तुम्हारी ऐसी दुर्दशा हुई कि आज कुलमें कोई रोनेवाला भी न रह गया॥ ५॥

तव बस बिधि प्रपंच सब नाथा। सभय दिसिप नित नावहिं माथा॥
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं। राम बिमुख यह अनुचित नाहीं॥

हे नाथ! विधाताकी सारी सृष्टि तुम्हारे वशमें थी। लोकपाल सदा भयभीत होकर तुमको मस्तक नवाते थे। किन्तु हाय! अब तुम्हारे सिर और भुजाओंको गीदड़ खा रहे हैं! रामविमुखके लिये ऐसा होना अनुचित भी नहीं है (अर्थात् उचित ही है)॥ ६॥

काल बिबस पति कहा न माना। अग जग नाथु मनुज करि जाना॥

हे पति! कालके पूर्ण वशमें होनेसे तुमने [किसीका] कहना नहीं माना और चराचरके नाथ परमात्माको मनुष्य करके जाना॥ ७॥

छं०—जान्यो मनुज करि दनुज कानन दहन पावक हरि स्वयं।
जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिय भजेहु नहिं करुनामयं॥
आजन्म ते परद्रोह रत पापौघमय तव तनु अयं।
तुम्हहू दियो निजधाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं॥

दैत्यरूपी वनको जलानेके लिये अग्निस्वरूप साक्षात् श्रीहरिको तुमने मनुष्य करके जाना। शिव और ब्रह्मा आदि देवता जिनको नमस्कार करते हैं, उन करुणामय भगवान्‌को हे प्रियतम! तुमने नहीं भजा। तुम्हारा यह शरीर जन्मसे ही दूसरों

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करनेमें तत्पर तथा पापसमूहमय रहा ! इतनेपर भी जिन निर्विकार ब्रह्म श्रीरामजीने को अपना धाम दिया, उनको मैं नमस्कार करती हूँ ।

दो०—अहह नाथ रघुनाथ सम कृपासिंधु नहिं आन ।
जोगि बृंद दुर्लभ गति तोहि दीन्हि भगवान ॥ १०४ ॥

अहह ! नाथ ! श्रीरघुनाथजीके समान कृपाका समुद्र दूसरा कोई नहीं है, भगवान्ने तुमको वह गति दी जो योगिसमाजको भी दुर्लभ है ॥ १०४ ॥

—मंदोदरी बचन सुनि काना । सुर मुनि सिद्ध सबन्हि सुख माना ॥
अज महेस नारद सनकादी । जे मुनिबर परमारथबादी ॥

मन्दोदरीके वचन कानोंसे सुनकर देवता, मुनि और सिद्ध सभीने सुख माना । , महादेव, नारद और सनकादि तथा और भी जो परमार्थवादी (परमात्माके तत्त्व-जानने और कहनेवाले) श्रेष्ठ मुनि थे ॥ १ ॥

भरि लोचन रघुपतिहि निहारी । प्रेम मगन सब भए सुखारी ॥
रुदन करत देखीं सब नारी । गयउ बिभीषनु मन दुख भारी ॥

वे सभी श्रीरघुनाथजीको नेत्र भरकर निरखकर प्रेममग्न हो गये और अत्यन्त हुए । अपने घरकी सब स्त्रियोंको रोती हुई देखकर विभीषणजीके मनमें बड़ा दुःख हुआ और वे उनके पास गये ॥ २ ॥

बंधु दसा बिलोकि दुख कीन्हा । तब प्रभु अनुजहि आयसु दीन्हा ॥
लछिमन तेहि बहु बिधि समुझायो । बहुरि बिभीषन प्रभु पहिं आयो ॥

उन्होंने भाईकी दशा देखकर दुःख किया । तब प्रभु श्रीरामजीने छोटे भाईको ज्ञा दी [कि जाकर विभीषणको धैर्य बँधाओ] । लक्ष्मणजीने उन्हें बहुत प्रकारसे झाया । तब विभीषण प्रभुके पास लौट आये ॥ ३ ॥

कृपादृष्टि प्रभु ताहि बिलोका । करहु क्रिया परिहरि सब सोका ॥
कीन्हि क्रिया प्रभु आयसु मानी । बिधिवत देस काल जियँ जानी ॥

प्रभुने उनको कृपापूर्ण दृष्टिसे देखा [और कहा—] सब शोक त्यागकर रावणकी न्त्येष्टि क्रिया करो । प्रभुकी आज्ञा मानकर और हृदयमें देश और कालका विचार रके विभीषणजीने विधिपूर्वक सब क्रिया की ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०–मंदोदरी आदि सब देइ तिलांजलि ताहि।
भवन गईं रघुपति गुन गन बरनत मन माहि॥ १०५॥

मन्दोदरी आदि सब स्त्रियाँ उसे (रावणको) तिलाञ्जलि देकर मनमें श्रीरघुनाथजीके गुणसमूहोंका वर्णन करती हुई महलको गयीं॥ १०५॥

चौ०–आइ बिभीषन पुनि सिरु नायो। कृपासिंधु तब अनुज बोलायो॥
तुम्ह कपीस अंगद नल नीला। जामवंत मारुति नयसीला॥
सब मिलि जाहु बिभीषन साथा। सारेहु तिलक कहेउ रघुनाथा॥
पिता बचन मैं नगर न आवउँ। आपु सरिस कपि अनुज पठावउँ॥

सब क्रिया-कर्म करनेके बाद विभीषणने आकर पुनः सिर नवाया। तब कृपासमुद्र श्रीरामजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको बुलाया। श्रीरघुनाथजीने कहा कि तुम, वानरराज सुग्रीव, अंगद, नल, नील, जाम्बवान् और मारुति सब नीतिनिपुण लोग मिलकर विभीषणके साथ जाओ और उन्हें राजतिलक कर दो। पिताजीके वचनोंके कारण मैं नगरमें नहीं आ सकता। पर अपने ही समान वानर और छोटे भाईको भेजता हूँ॥ १-२॥

तुरत चले कपि सुनि प्रभु बचना। कीन्ही जाइ तिलक की रचना॥
सादर सिंहासन बैठारी। तिलक सारि अस्तुति अनुसारी॥

प्रभुके वचन सुनकर वानर तुरंत चले और उन्होंने जाकर राजतिलककी व्यवस्था की। आदरके साथ विभीषणको सिंहासनपर बैठाकर राजतिलक किया और स्तुति की॥ ३॥

जोरि पानि सबहीं सिर नाए। सहित बिभीषन प्रभु पहिं आए॥
तब रघुबीर बोलि कपि लीन्हे। कहि प्रिय बचन सुखी सब कीन्हे॥

सभीने हाथ जोड़कर उनको सिर नवाये। तदनन्तर विभीषणजीसहित सब वानर प्रभुके पास आये। तब श्रीरघुवीरने वानरोंको बुला लिया और प्रिय वचन कहकर सबको सुखी किया॥ ४॥

छं०–किए सुखी कहि बानी सुधा सम बल तुम्हारें रिपु हयो।
पायो बिभीषन राज तिहुँ पुर जसु तुम्हारो नित नयो॥
मोहि सहित सुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जो गाइहैं।
संसार सिंधु अपार पार प्रयास बिनु नर पाइहैं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवान्‌ने अमृतके समान यह वाणी कहकर सबको सुखी किया कि तुम्हारे ही [बल]से यह प्रबल शत्रु मारा गया और विभीषणने राज्य पाया। इसके कारण तुम्हारा [यश] तीनों लोकोंमें नित्य नया बना रहेगा। जो लोग मेरेसहित तुम्हारी शुभ कीर्तिको प्रेमके साथ गायेंगे वे बिना ही परिश्रम इस अपार संसारसागरका पार पा जायँगे।

दो०—प्रभु के बचन श्रवन सुनि नहिं अघाहिं कपि पुंज।
बार बार सिर नावहिं गहहिं सकल पद कंज॥ १०६॥

प्रभुके वचन कानोंसे सुनकर वानरसमूह तृप्त नहीं होते। वे सब बार-बार सिर [नवा]ते हैं और चरणकमलोंको पकड़ते हैं॥ १०६॥

चौ०—पुनि प्रभु बोलि लियउ हनुमाना। लंका जाहु कहेउ भगवाना॥
समाचार जानकिहि सुनावहु। तासु कुसल लै तुम्ह चलि आवहु॥

फिर प्रभुने हनुमान्‌जीको बुला लिया। भगवान्‌ने कहा—तुम लङ्का जाओ। [जान]कीको सब समाचार सुनाओ और उसका कुशल-समाचार लेकर तुम चले आओ।

तब हनुमंत नगर महुँ आए। सुनि निसिचरी निसाचर धाए॥
बहु प्रकार तिन्ह पूजा कीन्ही। जनकसुता देखाइ पुनि दीन्ही॥

तब हनुमान्‌जी नगरमें आये। यह सुनकर राक्षस-राक्षसी [उनके सत्कारके [लि]ये] दौड़े। उन्होंने बहुत प्रकारसे हनुमान्‌जीकी पूजा की और फिर श्रीजानकीजी-[को] दिखला दिया॥ २॥

दूरिहि ते प्रनाम कपि कीन्हा। रघुपति दूत जानकीं चीन्हा॥
कहहु तात प्रभु कृपानिकेता। कुसल अनुज कपि सेन समेता॥

हनुमान्‌जीने [सीताजीको] दूरसे ही प्रणाम किया। जानकीजीने पहचान लिया [कि] यह वही श्रीरघुनाथजीका दूत है [और पूछा—] हे तात! कहो कृपाके धाम मेरे [प्रभु] छोटे भाई और वानरोंकी सेनासहित कुशलसे तो हैं?॥ ३॥

सब बिधि कुसल कोसलाधीसा। मातु समर जीत्यो दससीसा॥
अबिचल राजु बिभीषन पायो। सुनि कपि बचन हरष उर छायो॥

[हनुमान्‌जीने कहा—] हे माता! कोसलपति श्रीरामजी सब प्रकारसे सकुशल [हैं]। उन्होंने संग्राममें दस सिरवाले रावणको जीत लिया है और विभीषणने अचल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राज्य प्राप्त किया है। हनुमान्‌जीके वचन सुनकर सीताजीके हृदयमें हर्ष छा गया॥

छं०-अति हरष मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा।
का देउँ तोहि त्रैलोक महुँ कपि किमपि नहिं बानी समा॥
सुनु मातु मैं पायो अखिल जग राजु आजु न संसयं।
रन जीति रिपुदल बंधु जुत पस्यामि राममनामयं॥

श्रीजानकीजीके हृदयमें अत्यन्त हर्ष हुआ। उनका शरीर पुलकित हो गया और ... में [आनन्दाश्रुओंका] जल छा गया। वे बार-बार कहती हैं—हे हनुमान्! मैं तुझे ... दूँ ? इस वाणी (समाचार) के समान तीनों लोकोंमें और कुछ भी नहीं ... [हनुमान्‌जीने कहा—] हे माता ! सुनिये, मैंने आज निःसन्देह सारे जगत्‌का रा... लिया, जो मैं रणमें शत्रुसेनाको जीतकर भाईसहित निर्विकार श्रीरामजीको देख ...

दो०-सुनु सुत सदगुन सकल तव हृदयँ बसहुँ हनुमंत।
सानुकूल कोसलपति रहहुँ समेत अनंत॥१०...

[जानकीजीने कहा—] हे पुत्र ! सुन, समस्त सद्‌गुण तेरे हृदयमें बसें ... हे हनुमान् ! शेष (लक्ष्मणजी) सहित कोसलपति प्रभु सदा तुझपर प्रसन्न रहें॥१...

चौ०-अब सोइ जतन करहु तुम्ह ताता। देखौं नयन स्याम मृदु गा...
तब हनुमान राम पहिं जाई। जनकसुता कै कुसल सुना...

हे तात ! अब तुम वही उपाय करो जिससे मैं इन नेत्रोंसे प्रभुके कोमल श्याम ... दर्शन करूँ। तब श्रीरामचन्द्रजीके पास जाकर हनुमान्‌जीने जानकीजीका कु... समाचार सुनाया॥ १ ॥

सुनि संदेसु भानुकुलभूषन। बोलि लिए जुबराज बिभीष...
मारुतसुत के संग सिधावहु। सादर जनकसुतहि लै आवहु...

सूर्यकुलभूषण श्रीरामजीने सन्देश सुनकर युवराज अंगद और विभीषणको बुला ... [और कहा—] पवनपुत्र हनुमान्‌के साथ जाओ और जानकीको आदरके साथ ले आ...

तुरतहिं सकल गए जहँ सीता। सेवहिं सब निसिचरीं बिनीता...
बेगि बिभीषन तिन्हहि सिखायो। तिन्ह बहु बिधि मज्जन करवायो...

सब तुरंत ही वहाँ गये जहाँ सीताजी थीं। सब-की-सब राक्षसियाँ न...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

...उनकी सेवा कर रही थीं। विभीषणजीने शीघ्र ही उन लोगोंको समझा दिया। ...उन्होंने बहुत प्रकारसे सीताजीको स्नान कराया, ॥ ३ ॥

बहु प्रकार भूषन पहिराए। सिबिका रुचिर साजि पुनि ल्याए ॥
ता पर हरषि चढ़ी बैदेही। सुमिरि राम सुखधाम सनेही ॥

बहुत प्रकारके गहने पहनाये और फिर वे एक सुन्दर पालकी सजाकर ले आये। सीता-...जी प्रसन्न होकर सुखके धाम प्रियतम श्रीरामजीका स्मरण करके उसपर हर्षके साथ चढ़ीं॥ ४॥

बेतपानि रच्छक चहु पासा। चले सकल मन परम हुलासा ॥
देखन भालु कीस सब आए। रच्छक कोपि निवारन धाए ॥

चारों ओर हाथोंमें छड़ी लिये रक्षक चले। सबके मनोंमें परम उल्लास (उमंग) है। ...रीछ-वानर सब दर्शन करनेके लिये आये, तब रक्षक क्रोध करके उनको रोकने दौड़े ॥ ५ ॥

कह रघुबीर कहा मम मानहु। सीतहि सखा पयादें आनहु ॥
देखहुँ कपि जननी की नाईं। बिहसि कहा रघुनाथ गोसाईं ॥

श्रीरघुवीरने कहा—हे मित्र ! मेरा कहना मानो और सीताको पैदल ले आओ जिससे ...वानर उसको माताकी तरह देखें। गोसाईं श्रीरामजीने हँसकर ऐसा कहा ॥ ६ ॥

सुनि प्रभु बचन भालु कपि हरषे। नभ ते सुरन्ह सुमन बहु बरषे ॥
सीता प्रथम अनल महुँ राखी। प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी ॥

प्रभुके वचन सुनकर रीछ-वानर हर्षित हो गये। आकाशसे देवताओंने बहुतसे ...फूल बरसाये। सीताजी [के असली स्वरूप] को पहले अग्निमें रक्खा था। अब ...भीतरके साक्षी भगवान् उनको प्रकट करना चाहते हैं ॥ ७ ॥

दो०—तेहि कारन करुनानिधि कहे कछुक दुर्बाद।
सुनत जातुधानीं सब लागीं करै बिषाद ॥१०८॥

इसी कारण करुणाके भण्डार श्रीरामजीने लीलासे कुछ कड़े वचन कहे, जिन्हें ...सुनकर सब राक्षसियाँ विषाद करने लगीं ॥ १०८ ॥

चौ०—प्रभु के बचन सीस धरि सीता। बोली मन क्रम बचन पुनीता ॥
लछिमन होहु धरम के नेगी। पावक प्रगट करहु तुम्ह बेगी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुके वचनोंको सिर चढ़ाकर मन, वचन और कर्मसे पवित्र श्रीसीताजी बोलीं—लक्ष्मण! तुम मेरे धर्मके नेगी (धर्माचरणमें सहायक) बनो और तुरंत आग तैयार करो॥

सुनि लछिमन सीता कै बानी। बिरह बिबेक धरम निति सानी॥
लोचन सजल जोरि कर दोऊ। प्रभु सन कछु कहि सकत न ओऊ॥

श्रीसीताजीकी विरह, विवेक, धर्म और नीतिसे सनी हुई वाणी सुनकर लक्ष्मणजीके नेत्रोंमें [विषादके आँसुओंका] जल भर आया। वे दोनों हाथ जोड़े खड़े रहे। वे भी प्रभुसे कुछ कह नहीं सकते॥ २॥

देखि राम रुख लछिमन धाए। पावक प्रगटि काठ बहु लाए॥
पावक प्रबल देखि बैदेही। हृदयँ हरष नहिं भय कछु तेही॥

फिर श्रीरामजीका रुख देखकर लक्ष्मणजी दौड़े और आग तैयार करके बहुत-सी लकड़ी ले आये। अग्निको खूब बढ़ी हुई देखकर जानकीजीके हृदयमें हर्ष हुआ। उन्हें भय कुछ भी नहीं हुआ॥ ३॥

जौं मन बच क्रम मम उर माहीं। तजि रघुबीर आन गति नाहीं॥
तौ कृसानु सब कै गति जाना। मो कहुँ होउ श्रीखंड समाना॥

[सीताजीने लीलासे कहा—] यदि मन, वचन और कर्मसे मेरे हृदयमें श्रीरघुवीरको छोड़कर दूसरी गति (अन्य किसीका आश्रय) नहीं है, तो अग्निदेव जो सबके मनकी गति जानते हैं, [मेरे भी मनकी गति जानकर] मेरे लिये चन्दनके समान शीतल हो जायँ॥ ४॥

छं०—श्रीखंड सम पावक प्रबेस कियो सुमिरि प्रभु मैथिली।
जय कोसलेस महेस बंदित चरन रति अति निर्मली॥
प्रतिबिंब अरु लौकिक कलंक प्रचंड पावक महुँ जरे।
प्रभु चरित काहुँ न लखे नभ सुर सिद्ध मुनि देखहिं खरे॥ १॥

प्रभु श्रीरामजीका स्मरण करके, और जिनके चरण महादेवजीके द्वारा वन्दित हैं तथा जिनमें सीताजीकी अत्यन्त विशुद्ध प्रीति है, उन कोसलपतिकी जय बोलकर जानकीजीने चन्दनके समान शीतल हुई अग्निमें प्रवेश किया। प्रतिबिम्ब (सीताजीकी छायामूर्ति) और उनका लौकिक कलंक प्रचण्ड अग्निमें जल गये। प्रभुके इन चरित्रोंको किसीने नहीं जाना। देवता, सिद्ध और मुनि सब आकाशमें खड़े देखते हैं॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो ।
जिमि छीरसागर इंदिरा रामहि समर्पी आनि सो ॥
सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली ।
नव नील नीरज निकट मानहुँ कनक पंकज की कली ॥ २ ॥

तब अग्निने शरीर धारण करके वेदोंमें और जगत्में प्रसिद्ध वास्तविक श्री (सीताजी) का हाथ पकड़ उन्हें श्रीरामजीको वैसे ही समर्पित किया जैसे क्षीरसागरने विष्णुभगवान्को लक्ष्मी समर्पित की थीं। वे सीताजी श्रीरामचन्द्रजीके वाम भागमें विराजित हुईं। उनकी उत्तम शोभा अत्यन्त ही सुन्दर है। मानो नये खिले हुए नीले कमलके पास सोनेके कमलकी कली सुशोभित हो ॥ २ ॥

दो०—बरषहिं सुमन हरषि सुर बाजहिं गगन निसान ।
गावहिं किंनर सुरबधू नाचहिं चढ़ीं बिमान ॥१०९(क)॥

देवता हर्षित होकर फूल बरसाने लगे। आकाशमें डंके बजने लगे। किन्नर गाने लगे। विमानोंपर चढ़ी अप्सराएँ नाचने लगीं ॥ १०९ (क) ॥

जनकसुता समेत प्रभु सोभा अमित अपार ।
देखि भालु कपि हरषे जय रघुपति सुख सार ॥१०९(ख)॥

श्रीजानकीजीसहित प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी अपरिमित और अपार शोभा देखकर रीछ-वानर हर्षित हो गये और सुखके सार श्रीरघुनाथजीकी जय बोलने लगे ॥ १०९ (ख)॥

चौ०—तब रघुपति अनुसासन पाई । मातलि चलेउ चरन सिरु नाई ॥
आए देव सदा स्वारथी । बचन कहहिं जनु परमारथी ॥

तब श्रीरघुनाथजीकी आज्ञा पाकर इन्द्रका सारथि मातलि चरणोंमें सिर नवाकर [रथ लेकर] चला गया। तदनन्तर सदाके स्वार्थी देवता आये। वे ऐसे वचन कह रहे हैं मानो बड़े परमार्थी हों ॥ १ ॥

दीन बंधु दयाल रघुराया । देव कीन्हि देवन्ह पर दाया ॥
बिस्व द्रोह रत यह खल कामी । निज अघ गयउ कुमारगगामी ॥

हे दीनबन्धु! हे दयालु रघुराज! हे परमदेव! आपने देवताओंपर बड़ी दया की। विश्वके द्रोहमें तत्पर यह दुष्ट, कामी और कुमार्गपर चलनेवाला रावण अपने ही पापसे नष्ट हो गया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुम्ह समरूप ब्रह्म अबिनासी । सदा एकरस सहज उदासी ।
अकल अगुन अज अनघ अनामय । अजित अमोघसक्ति करुनामय ॥

आप समरूप, ब्रह्म, अविनाशी, नित्य, एकरस, स्वभावसे ही उदासीन (शत्रु-मित्र-भावरहित), अखण्ड, निर्गुण (मायिक गुणोंसे रहित), अजन्मा, निष्पाप, निर्विकार, अजेय, अमोघशक्ति (जिनकी शक्ति कभी व्यर्थ नहीं होती) और दयामय हैं ॥ ३ ॥

मीन कमठ सूकर नरहरी । बामन परसुराम बपु धरी ।
जब जब नाथ सुरन्ह दुखु पायो । नाना तनु धरि तुम्हइँ नसायो ॥

आपने ही मत्स्य, कच्छप, वाराह, नृसिंह, वामन और परशुरामके शरीर धारण किये । हे नाथ ! जब-जब देवताओंने दुःख पाया, तब-तब अनेकों शरीर धारण करके आपने ही उनका दुःख नाश किया ॥ ४ ॥

यह खल मलिन सदा सुरद्रोही । काम लोभ मद रत अति कोही ।
अधम सिरोमनि तव पद पावा । यह हमरें मन बिसमय आवा ॥

यह दुष्ट, मलिनहृदय, देवताओंका नित्य शत्रु, काम, लोभ और मदके परायण, तथा अत्यन्त क्रोधी था । ऐसे अधमोंके शिरोमणिने भी आपका परमपद पा लिया । इस बातका हमारे मनमें आश्चर्य हुआ ॥ ५ ॥

हम देवता परम अधिकारी । स्वारथ रत प्रभु भगति बिसारी ।
भव प्रबाहँ संतत हम परे । अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे ॥

हम देवता श्रेष्ठ अधिकारी होकर भी स्वार्थपरायण हो आपकी भक्तिको भुलाकर निरन्तर भवसागरके प्रवाह (जन्म-मृत्युके चक्र) में पड़े हैं । अब हे प्रभो ! हम आपकी शरणमें आ गये हैं, हमारी रक्षा कीजिये ॥ ६ ॥

दो०—करि बिनती सुर सिद्ध सब रहे जहँ तहँ कर जोरि ।
अति सप्रेम तन पुलकि बिधि अस्तुति करत बहोरि ॥ ११० ॥

विनती करके देवता और सिद्ध सब जहाँ-के-तहाँ हाथ जोड़े खड़े रहे । तब अत्यन्त प्रेमसे पुलकितशरीर होकर ब्रह्माजी स्तुति करने लगे— ॥ ११० ॥

छं०—जय राम सदा सुखधाम हरे । रघुनायक सायक चाप धरे ॥
भव बारन दारन सिंह प्रभो । गुन सागर नागर नाथ बिभो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे नित्य सुखधाम और [दुःखोंको हरनेवाले] हरि! हे धनुष-बाण धारण किये हुए [रघुनाथ]जी! आपकी जय हो। हे प्रभो! आप भव (जन्म-मरण) रूपी हाथीको विदीर्ण [करने]के लिये सिंहके समान हैं। हे नाथ! हे सर्वव्यापक! आप गुणोंके समुद्र और परम चतुर हैं।

तन काम अनेक अनूप छबी। गुन गावत सिद्ध मुनींद्र कबी॥
जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा॥

आपके शरीरकी अनेकों कामदेवोंके समान, परन्तु अनुपम छवि है। सिद्ध, [मुनी]श्वर और कवि आपके गुण गाते रहते हैं। आपका यश पवित्र है। आपने [रावण]रूपी महासर्पको गरुड़की तरह क्रोध करके पकड़ लिया॥ २॥

जन रंजन भंजन सोक भयं। गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं॥
अवतार उदार अपार गुनं। महि भार बिभंजन ग्यानघनं॥

हे प्रभो! आप सेवकोंको आनन्द देनेवाले, शोक और भयका नाश करनेवाले, [सदा] क्रोधरहित और नित्य ज्ञानस्वरूप हैं। आपका अवतार श्रेष्ठ, अपार दिव्य गुणों-[वाला], पृथ्वीका भार उतारनेवाला और ज्ञानका समूह है॥ ३॥

अज ब्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा॥
रघुबंस बिभूषन दूषन हा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा॥

[किन्तु अवतार लेनेपर भी] आप नित्य, अजन्मा, व्यापक, एक (अद्वितीय) [और] अनादि हैं। हे करुणाकी खान श्रीरामजी! मैं आपको बड़े ही हर्षके साथ नमस्कार [कर]ता हूँ। हे रघुकुलके आभूषण! हे दूषण राक्षसको मारनेवाले तथा समस्त दोषोंको [हर]नेवाले! विभीषण दीन था, उसे आपने [लङ्काका] राजा बना दिया॥ ४॥

गुन ग्यान निधान अमान अजं। नित राम नमामि बिभुं बिरजं॥
भुजदंड प्रचंड प्रताप बलं। खल बृंद निकंद महा कुसलं॥

हे गुण और ज्ञानके भण्डार! हे मानरहित! हे अजन्मा, व्यापक और मायिक [वि]कारोंसे रहित श्रीराम! मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ। आपके भुजदण्डोंका [प्र]ताप और बल प्रचण्ड है। दुष्टसमूहके नाश करनेमें आप परम निपुण हैं॥ ५॥

बिनु कारन दीन दयाल हितं। छबि धाम नमामि रमा सहितं॥
भव तारन कारन काज परं। मन संभव दारुन दोष हरं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे बिना ही कारण दीनोंपर दया तथा उनका हित करनेवाले और
धाम ! मैं श्रीजानकीजीसहित आपको नमस्कार करता हूँ। आप भवसागरसे तारने
हैं, कारणरूपा प्रकृति और कार्यरूप जगत् दोनोंसे परे हैं और मनसे उत्पन्न होने
कठिन दोषोंको हरनेवाले हैं ॥ ६ ॥

सर चाप मनोहर त्रोन धरं। जलजारुन लोचन भूप
सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार मुधा ममता स

आप मनोहर बाण, धनुष और तरकस धारण करनेवाले हैं। [लाल] क
समान रक्तवर्ण आपके नेत्र हैं। आप राजाओंमें श्रेष्ठ, सुखके मन्दिर, सुन्द
(लक्ष्मीजी) के वल्लभ तथा मद (अहङ्कार), काम और झूठी ममताके नाश करनेवाले हैं।

अनवद्य अखंड न गोचर गो। सबरूप सदा सब होइ न
इति बेद बदंति न दंतकथा। रबि आतप भिन्नमभिन्न ज

आप अनिन्द्य या दोषरहित हैं, अखण्ड हैं, इन्द्रियोंके विषय नहीं हैं।
सर्वरूप होते हुए भी आप वह सब कभी हुए ही नहीं, ऐसा वेद कहते हैं।
[कोई] दन्तकथा (कोरी कल्पना) नहीं है। जैसे सूर्य और सूर्यका प्रकाश अ
अलग हैं और अलग नहीं भी हैं, वैसे ही आप भी संसारसे भिन्न तथा अ
दोनों ही हैं ॥ ८ ॥

कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंति तवानन सादर
धिग जीवन देव सरीर हरे। तव भक्ति बिना भव भूलि प

हे व्यापक प्रभो ! ये सब वानर कृतार्थरूप हैं, जो आदरपूर्वक ये आपका
देख रहे हैं। [और] हे हरे ! हमारे [अमर] जीवन और देव (दिव्य) शरी
धिक्कार है, जो हम आपकी भक्तिसे रहित हुए संसारमें (सांसारिक विषयोंमें) भूले पड़े हैं

अब दीनदयाल दया करिऐ। मति मोरि बिभेदकरी हरिऐ
जेहि ते बिपरीत क्रिया करिऐ। दुख सो सुख मानि सुखी चरिऐ

हे दीनदयालु ! अब दया कीजिये और मेरी उस विभेद उत्पन्न करने
बुद्धिको हर लीजिये, जिससे मैं विपरीत कर्म करता हूँ और जो दुःख है, उसे
मानकर आनन्दसे विचरता हूँ ॥ १० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

खल खंडन मंडन रम्य छमा। पद पंकज सेवित संभु उमा॥
नृप नायक दे बरदानमिदं। चरनांबुज प्रेमु सदा सुभदं॥
आप दुष्टोंका खण्डन करनेवाले और पृथ्वीके रमणीय आभूषण हैं। आपके
[चरण]कमल श्रीशिव-पार्वतीद्वारा सेवित हैं। हे राजाओंके महाराज! मुझे यह वरदान
[दी]जिये कि आपके चरणकमलोंमें सदा मेरा कल्याणदायक [अनन्य] प्रेम हो॥११॥

दो०—बिनय कीन्हि चतुरानन प्रेम पुलक अति गात।
सोभासिंधु बिलोकत लोचन नहीं अघात॥१११॥

इस प्रकार ब्रह्माजीने अत्यन्त प्रेम-पुलकित शरीरसे विनती की। शोभाके समुद्र
[श्री]रामजीके दर्शन करते-करते उनके नेत्र तृप्त ही नहीं होते थे॥ १११॥

[चौ]०—तेहि अवसर दसरथ तहँ आए। तनय बिलोकि नयन जल छाए॥
अनुज सहित प्रभु बंदन कीन्हा। आसिरबाद पिताँ तब दीन्हा॥
उसी समय दशरथजी वहाँ आये। पुत्र (श्रीरामजी) को देखकर उनके नेत्रोंमें
[प्रे]माश्रुओंका] जल छा गया। छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित प्रभुने उनकी वन्दना
[की] और तब पिताने उनको आशीर्वाद दिया॥ १॥

तात सकल तव पुन्य प्रभाऊ। जीत्यों अजय निसाचर राऊ॥
सुनि सुत बचन प्रीति अति बाढ़ी। नयन सलिल रोमावलि ठाढ़ी॥
[श्रीरामजीने कहा—] हे तात! यह सब आपके पुण्योंका प्रभाव है, जो मैंने
[अ]जय राक्षसराजको जीत लिया। पुत्रके वचन सुनकर उनकी प्रीति अत्यन्त बढ़
[ग]यी। नेत्रोंमें जल छा गया और रोमावली खड़ी हो गयी॥ २॥

रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना। चितइ पितहि दीन्हेउ दृढ़ ग्याना॥
ताते उमा मोच्छ नहिं पायो। दसरथ भेद भगति मन लायो॥
श्रीरघुनाथजीने पहलेके (जीवित कालके) प्रेमको विचारकर, पिताकी ओर
[दे]खकर ही उन्हें अपने स्वरूपका दृढ़ ज्ञान करा दिया। हे उमा! दशरथजीने भेद-
[भ]क्तिमें अपना मन लगाया था, इसीसे उन्होंने [कैवल्य] मोक्ष नहीं पाया॥ ३॥

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं। तिन्ह कहुँ राम भगति निज देहीं॥
बार बार करि प्रभुहि प्रनामा। दसरथ हरषि गए सुरधामा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[मायारहित सच्चिदानन्दमय स्वरूपभूत दिव्यगुणयुक्त] सगुणस्वरूपकी उ... करनेवाले भक्त इस प्रकारका मोक्ष लेते भी नहीं। उनको श्रीरामजी अपनी भक्ति ... हैं। प्रभुको [इष्टबुद्धिसे] बार-बार प्रणाम करके दशरथजी हर्षित होकर देवलोकको चले...

दो०—अनुज जानकी सहित प्रभु कुसल कोसलाधीस।
सोभा देखि हरषि मन अस्तुति कर सुर ईस ॥११...

छोटे भाई लक्ष्मणजी और जानकीजीसहित परम कुशल प्रभु श्रीकोशलाधी... शोभा देखकर देवराज इन्द्र मनमें हर्षित होकर स्तुति करने लगे—॥ ११२॥

छं०—जय राम सोभा धाम। दायक प्रनत बिश्राम॥
धृत त्रोन बर सर चाप। भुजदंड प्रबल प्रताप॥१॥

शोभाके धाम, शरणागतको विश्राम देनेवाले, श्रेष्ठ तरकस, धनुष और ... धारण किये हुए, प्रबल प्रतापी भुजदण्डोंवाले श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो!॥ १॥

जय दूषनारि खरारि। मर्दन निसाचर धारि॥
यह दुष्ट मारेउ नाथ। भए देव सकल सनाथ॥२॥

हे खर और दूषणके शत्रु और राक्षसोंकी सेनाके मर्दन करनेवाले! आपकी ... हो। हे नाथ! आपने इस दुष्टको मारा, जिससे सब देवता सनाथ (सुरक्षित) हो गये॥...

जय हरन धरनी भार। महिमा उदार अपार॥
जय रावनारि कृपाल। किए जातुधान बिहाल॥३॥

हे भूमिका भार हरनेवाले! हे अपार श्रेष्ठ महिमावाले! आपकी जय हो! हे राव... के शत्रु! हे कृपालु! आपकी जय हो! आपने राक्षसोंको बेहाल (तहस-नहस) कर दिया॥३...

लंकेस अति बल गर्ब। किए बस्य सुर गंधर्ब॥
मुनि सिद्ध नर खग नाग। हठि पंथ सब कें लाग॥४॥

लङ्कापति रावणको अपने बलका बहुत घमंड था। उसने देवता और गन्ध... सभीको अपने वशमें कर लिया था। और वह मुनि, सिद्ध, मनुष्य, पक्षी और ना... आदि सभीके हठपूर्वक (हाथ धोकर) पीछे पड़ गया था॥ ४॥

परद्रोह रत अति दुष्ट। पायो सो फलु पापिष्ट॥
अब सुनहु दीन दयाल। राजीव नयन बिसाल॥५॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह दूसरोंसे द्रोह करनेमें तत्पर और अत्यन्त दुष्ट था। उस पापीने वैसा ही फल पाया। अब हे दीनोंपर दया करनेवाले! हे कमलके समान विशाल नेत्रोंवाले! सुनिये।५।

मोहि रहा अति अभिमान। नहिं कोउ मोहि समान॥
अब देखि प्रभु पद कंज। गत मान प्रद दुख पुंज॥ ६॥

मुझे अत्यन्त अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं है, पर अब प्रभु (आप) के चरणकमलोंके दर्शन करनेसे दुःखसमूहका देनेवाला मेरा वह अभिमान जाता रहा।६।

कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव। अब्यक्त जेहि श्रुति गाव॥
मोहि भाव कोसल भूप। श्रीराम सगुन सरूप॥ ७॥

कोई उन निर्गुण ब्रह्मका ध्यान करते हैं जिन्हें वेद अव्यक्त (निराकार) कहते हैं। परन्तु हे रामजी! मुझे तो आपका यह सगुण कोसलराज-स्वरूप ही प्रिय लगता है॥ ७॥

बैदेहि अनुज समेत। मम हृदयँ करहु निकेत॥
मोहि जानिऐ निज दास। दे भक्ति रमानिवास॥ ८॥

श्रीजानकीजी और छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित मेरे हृदयमें अपना घर बनाइये। हे रमानिवास! मुझे अपना दास समझिये और अपनी भक्ति दीजिये॥ ८॥

छं०—दे भक्ति रमानिवास त्रास हरन सरन सुखदायकं।
सुख धाम राम नमामि काम अनेक छबि रघुनायकं॥
सुर बृंद रंजन द्वंद भंजन मनुजतनु अतुलितबलं।
ब्रह्मादि संकर सेब्य राम नमामि करुना कोमलं॥

हे रमानिवास! हे शरणागतके भयको हरनेवाले और उसे सब प्रकारका सुख देनेवाले! मुझे अपनी भक्ति दीजिये! हे सुखके धाम! हे अनेकों कामदेवोंकी छबिवाले रघुकुलके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे देवसमूहको आनन्द देनेवाले, [जन्म-मृत्यु, हर्ष-विषाद, सुख-दुःख आदि] द्वन्द्वोंके नाश करनेवाले, मनुष्यशरीरधारी, अतुलनीय बलवाले, ब्रह्मा और शिव आदिसे सेवनीय, करुणासे कोमल श्रीरामजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयसु देहु कृपाल।
काह करौं सुनि प्रिय बचन बोले दीनदयाल ॥११३॥

हे कृपालु ! अब मेरी ओर कृपा करके (कृपादृष्टिसे) देखकर आज्ञा दीजिये कि मैं क्या [सेवा] करूँ ? इन्द्रके ये प्रिय वचन सुनकर दीनदयालु श्रीरामजी बोले— ॥११३॥

चौ०—सुनु सुरपति कपि भालु हमारे। परे भूमि निसिचरन्हि जे मारे॥
मम हित लागि तजे इन्ह प्राना। सकल जिआउ सुरेस सुजाना॥

हे देवराज ! सुनो, हमारे वानर-भालू, जिन्हें निशाचरोंने मार डाला है, पृथ्वीपर पड़े हैं। इन्होंने मेरे हितके लिये अपना प्राण त्याग दिये। हे सुजान देवराज ! इन सबको जिला दो ॥१॥

सुनु खगेस प्रभु कै यह बानी। अति अगाध जानहिं मुनि ग्यानी॥
प्रभु सक त्रिभुअन मारि जिआई। केवल सक्रहि दीन्हि बड़ाई॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़ ! सुनिये, प्रभुके ये वचन अत्यन्त गहन (गूढ़) हैं। ज्ञानी मुनि ही इन्हें जान सकते हैं। प्रभु श्रीरामजी त्रिलोकीको मारकर जिला सकते हैं। यहाँ तो उन्होंने केवल इन्द्रको बड़ाई दी है ॥२॥

सुधा बरषि कपि भालु जिआए। हरषि उठे सब प्रभु पहिं आए॥
सुधाबृष्टि भै दुहु दल ऊपर। जिए भालु कपि नहिं रजनीचर॥

इन्द्रने अमृत बरसाकर वानर-भालुओंको जिला दिया। सब हर्षित होकर उठे और प्रभुके पास आये। अमृतकी वर्षा दोनों ही दलोंपर हुई। पर रीछ-वानर ही जीवित हुए, राक्षस नहीं ! ॥३॥

रामाकार भए तिन्ह के मन। मुक्त भए छूटे भव बंधन॥
सुर अंसिक सब कपि अरु रीछा। जिए सकल रघुपति कीं ईछा॥

क्योंकि राक्षसोंके मन तो मरते समय रामाकार हो गये थे। अतः वे मुक्त हो गये, उनके भव-बन्धन छूट गये। किन्तु वानर और भालू तो सब देवांश (भगवान्‌की लीलाके परिकर) थे। इसलिये वे सब श्रीरघुनाथजीकी इच्छासे जीवित हो गये ॥४॥

राम सरिस को दीन हितकारी। कीन्हे मुकुत निसाचर झारी॥
खल मल धाम काम रत रावन। गति पाई जो मुनिबर पाव न॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामचन्द्रजीके समान दीनोंका हित करनेवाला कौन है ? जिन्होंने सारे राक्षसोंको मुक्त कर दिया। दुष्ट, पापोंके घर और कामी रावणने भी वह गति पायी जिसे श्रेष्ठ मुनि भी नहीं पाते ॥ ५ ॥

दो०—सुमन बरषि सब सुर चले चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान।
देखि सुअवसर प्रभु पहिं आयउ संभु सुजान ॥११४(क)॥

फूलोंकी वर्षा करके सब देवता सुन्दर विमानोंपर चढ़-चढ़कर चले। तब सुअवसर जानकर सुजान शिवजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये—॥ ११४ (क) ॥

परम प्रीति कर जोरि जुग नलिन नयन भरि बारि।
पुलकित तन गदगद गिराँ बिनय करत त्रिपुरारि ॥११४(ख)॥

और परम प्रेमसे दोनों हाथ जोड़कर, कमलके समान नेत्रोंमें जल भरकर, पुलकित शरीर और गद्‌गद वाणीसे त्रिपुरारि शिवजी विनती करने लगे—॥ ११४ (ख) ॥

छं०—मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥
मोह महा घन पटल प्रभंजन। संसय बिपिन अनल सुर रंजन॥

हे रघुकुलके स्वामी ! सुन्दर हाथोंमें श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण धारण किये हुए आप मेरी रक्षा कीजिये। आप महामोहरूपी मेघसमूहके [उड़ानेके] लिये प्रचण्ड पवन हैं, संशयरूपी वनके [भस्म करनेके] लिये अग्नि हैं और देवताओंको आनन्द देनेवाले हैं ॥ १ ॥

अगुन सगुन गुन मंदिर सुंदर। भ्रम तम प्रबल प्रताप दिवाकर॥
काम क्रोध मद गज पंचानन। बसहु निरंतर जन मन कानन॥

आप निर्गुण, सगुण, दिव्य गुणोंके धाम और परम सुन्दर हैं। भ्रमरूपी अन्धकारके [नाशके] लिये प्रबल प्रतापी सूर्य हैं। काम, क्रोध और मदरूपी हाथियोंके [वधके] लिये सिंहके समान आप इस सेवकके मनरूपी वनमें निरन्तर निवास कीजिये।

बिषय मनोरथ पुंज कंज बन। प्रबल तुषार उदार पार मन॥
भव बारिधि मंदर परमं दर। बारय तारय संसृति दुस्तर॥

विषयकामनाओंके समूहरूपी कमलवनके [नाशके] लिये आप प्रबल पाला हैं, आप उदार और मनसे परे हैं। भवसागर [को मथने] के लिये आप मन्दराचल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर्वत हैं। आप हमारे परम भयको दूर कीजिये और हमें दुस्तर संसारसागरसे पार कीजिये

स्याम गात राजीव बिलोचन। दीन बंधु प्रनतारति मोचन॥
अनुज जानकी सहित निरंतर। बसहु राम नृप मम उर अंतर॥
मुनि रंजन महि मंडल मंडन। तुलसिदास प्रभु त्रास बिखंडन॥

हे श्यामसुन्दर-शरीर! हे कमलनयन! हे दीनबन्धु! हे शरणागतको दुःखसे छुड़ानेवाले! हे राजा रामचन्द्रजी! आप छोटे भाई लक्ष्मण और जानकीजीसहित निरन्तर मेरे हृदयके अंदर निवास कीजिये। आप मुनियोंको आनन्द देनेवाले, पृथ्वीमण्डलके भूषण, तुलसीदासके प्रभु और भयका नाश करनेवाले हैं॥ ४-५॥

दो०—नाथ जबहिं कोसलपुरीं होइहि तिलक तुम्हार।
कृपासिंधु मैं आउब देखन चरित उदार॥११५॥

हे नाथ! जब अयोध्यापुरीमें आपका राजतिलक होगा, तब हे कृपासागर! मैं आपकी उदार लीला देखने आऊँगा॥ ११५॥

चौ०—करि बिनती जब संभु सिधाए। तब प्रभु निकट बिभीषनु आए॥
नाइ चरन सिरु कह मृदु बानी। बिनय सुनहु प्रभु सारँगपानी॥

जब शिवजी विनती करके चले गये, तब विभीषणजी प्रभुके पास आये और चरणोंमें सिर नवाकर कोमल वाणीसे बोले—हे शार्ङ्गधनुषके धारण करनेवाले प्रभो! मेरी विनती सुनिये—॥ १॥

सकुल सदल प्रभु रावन मार्‌यो। पावन जस त्रिभुवन बिस्तार्‌यो॥
दीन मलीन हीन मति जाती। मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती॥

आपने कुल और सेनासहित रावणका वध किया, त्रिभुवनमें अपना पवित्र यश फैलाया और मुझ दीन, पापी, बुद्धिहीन और जातिहीनपर बहुत प्रकारसे कृपा की॥ २॥

अब जन गृह पुनीत प्रभु कीजे। मज्जनु करिअ समर श्रम छीजे॥
देखि कोस मंदिर संपदा। देहु कृपाल कपिन्ह कहुँ मुदा॥

अब हे प्रभु! इस दासके घरको पवित्र कीजिये और वहाँ चलकर स्नान कीजिये, जिससे युद्धकी थकावट दूर हो जाय! हे कृपालु! खजाना, महल और सम्पत्तिका निरीक्षण कर प्रसन्नतापूर्वक वानरोंको दीजिये॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब बिधि नाथ मोहि अपनाइअ। पुनि मोहि सहित अवधपुर जाइअ॥
सुनत बचन मृदु दीनदयाला। सजल भए द्वौ नयन बिसाला॥

हे नाथ! मुझे सब प्रकारसे अपना लीजिये और फिर हे प्रभो! मुझे साथ लेकर अयोध्यापुरीको पधारिये। विभीषणजीके कोमल वचन सुनते ही दीनदयालु प्रभुके दोनों विशाल नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया॥ ४॥

दो०—तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु भ्रात।
भरत दसा सुमिरत मोहि निमिष कल्प सम जात॥११६(क)॥

[श्रीरामजीने कहा—] हे भाई! सुनो, तुम्हारा खजाना और घर सब मेरा ही है, यह बात सच है। पर भरतकी दशा याद करके मुझे एक-एक पल कल्पके समान बीत रहा है॥ ११६ (क)॥

तापस बेष गात कृस जपत निरंतर मोहि।
देखौं बेगि सो जतनु करु सखा निहोरउँ तोहि॥११६(ख)॥

तपस्वीके वेषमें कृश (दुबले) शरीरसे निरन्तर मेरा नाम-जप कर रहे हैं। हे सखा! वही उपाय करो जिससे मैं जल्दी-से-जल्दी उन्हें देख सकूँ। मैं तुमसे निहोरा (अनुरोध) करता हूँ॥ ११६ (ख)॥

बीतें अवधि जाउँ जौं जिअत न पावउँ बीर।
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु पुनि पुनि पुलक सरीर॥११६(ग)॥

यदि अवधि बीत जानेपर जाता हूँ तो भाईको जीता न पाऊँगा। छोटे भाई भरतजीकी प्रीतिका स्मरण करके प्रभुका शरीर बार-बार पुलकित हो रहा है॥ ११६ (ग)॥

करेहु कल्प भरि राजु तुम्ह मोहि सुमिरेहु मन माहिं।
पुनि मम धाम पाइहहु जहाँ संत सब जाहिं॥११६(घ)॥

[श्रीरामजीने फिर कहा—] हे विभीषण! तुम कल्पभर राज्य करना, मनमें मेरा निरन्तर स्मरण करते रहना। फिर तुम मेरे उस धामको पा जाओगे जहाँ सब संत जाते हैं॥ ११६ (घ)॥

चौ०—सुनत बिभीषन बचन राम के। हरषि गहे पद कृपाधाम के॥
बानर भालु सकल हरषाने। गहि प्रभु पद गुन बिमल बखाने॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनते ही विभीषणजीने हर्षित होकर कृपाके धाम श्रीराम-
जीके चरण पकड़ लिये। सभी वानर-भालू हर्षित हो गये और प्रभुके चरण पकड़-
कर उनके निर्मल गुणोंका बखान करने लगे ॥ १ ॥

बहुरि बिभीषन भवन सिधायो। मनि गन बसन बिमान भरायो॥
लै पुष्पक प्रभु आगें राखा। हँसि करि कृपासिंधु तब भाषा॥

फिर विभीषणजी महलको गये और उन्होंने मणियोंके समूहों (रत्नों) से और वस्त्रोंसे विमानको भर लिया। फिर उस पुष्पकविमानको लाकर प्रभुके सामने रक्खा। तब कृपासागर श्रीरामजीने हँसकर कहा—॥ २ ॥

चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन। गगन जाइ बरषहु पट भूषन॥
नभ पर जाइ बिभीषन तबही। बरषि दिए मनि अंबर सबही॥

हे सखा विभीषण! सुनो, विमानपर चढ़कर आकाशमें जाकर वस्त्रों और गहनोंको बरसा दो। तब (आज्ञा सुनते) ही विभीषणजीने आकाशमें जाकर सब मणियों और वस्त्रोंको बरसा दिया ॥ ३ ॥

जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं। मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं॥
हँसे रामु श्री अनुज समेता। परम कौतुकी कृपा निकेता॥

जिसके मनको जो अच्छा लगता है, वह वही ले लेता है। मणियोंको मुँहमें लेकर वानर फिर उन्हें खानेकी चीज न समझकर उगल देते हैं। यह तमाशा देखकर परम विनोदी और कृपाके धाम श्रीरामजी सीताजी और लक्ष्मणजीसहित हँसने लगे।

दो०—मुनि जेहि ध्यान न पावहिं नेति नेति कह बेद।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन करत अनेक बिनोद ॥ ११७ (क)॥

जिनको मुनि ध्यानमें भी नहीं पाते, जिन्हें वेद नेति-नेति कहते हैं, वे ही कृपाके समुद्र श्रीरामजी वानरोंके साथ अनेकों प्रकारके विनोद कर रहे हैं ॥ ११७ (क)॥

उमा जोग जप दान तप नाना मख ब्रत नेम।
राम कृपा नहिं करहिं तसि जसि निष्केवल प्रेम ॥ ११७ (ख)॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! अनेकों प्रकारके योग, जप, दान, तप, यज्ञ, व्रत और नियम करनेपर भी श्रीरामचन्द्रजी वैसी कृपा नहीं करते जैसी अनन्य प्रेम होनेपर करते हैं ॥ ११७ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—भालु कपिन्ह पट भूषन पाए। पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए॥
नाना जिनस देखि सब कीसा। पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा॥

भालुओं और वानरोंने कपड़े-गहने पाये और उन्हें पहन-पहनकर वे श्रीरघुनाथजीके पास आये। अनेकों जातियोंके वानरोंको देखकर कोसलपति श्रीरामजी बार-बार हँस रहे हैं॥ १॥

चितइ सबन्हि पर कीन्ही दाया। बोले मृदुल बचन रघुराया॥
तुम्हरें बल मैं रावनु मारयो। तिलक बिभीषन कहँ पुनि सारयो॥

श्रीरघुनाथजीने कृपादृष्टिसे देखकर सबपर दया की। फिर वे कोमल वचन बोले—हे भाइयो! तुम्हारे ही बलसे मैंने रावणको मारा और फिर विभीषणका राजतिलक किया।

निज निज गृह अब तुम्ह सब जाहू। सुमिरेहु मोहि डरपहु जनि काहू॥
सुनत बचन प्रेमाकुल बानर। जोरि पानि बोले सब सादर॥

अब तुम सब अपने-अपने घर जाओ। मेरा स्मरण करते रहना और किसीसे डरना नहीं। ये वचन सुनते ही सब वानर ऐसा प्रेममें विह्वल होकर हाथ जोड़कर आदरपूर्वक बोले—॥ ३॥

प्रभु जोइ कहहु तुम्हहि सब सोहा। हमरें होत बचन सुनि मोहा॥
दीन जानि कपि किए सनाथा। तुम्ह त्रैलोक ईस रघुनाथा॥

प्रभो! आप जो कुछ भी कहें, आपको सब सोहता है। पर आपके वचन सुनकर हमको मोह होता है। हे रघुनाथजी! आप तीनों लोकोंके ईश्वर हैं। हम वानरोंको दीन जानकर ही आपने सनाथ (कृतार्थ) किया है॥ ४॥

सुनि प्रभु बचन लाज हम मरहीं। मसक कहूँ खगपति हित करहीं॥
देखि राम रुख बानर रीछा। प्रेम मगन नहिं गृह कै ईछा॥

प्रभुके [ऐसे] वचन सुनकर हम लाजके मारे मरे जा रहे हैं। कहीं मच्छर भी गरुड़का हित कर सकते हैं? श्रीरामजीकी रुख देखकर रीछ-वानर प्रेममें मग्न हो गये। उनकी घर जानेकी इच्छा नहीं है॥ ५॥

दो०—प्रभु प्रेरित कपि भालु सब राम रूप उर राखि।
हरष बिषाद सहित चले बिनय बिबिध बिधि भाषि॥११८(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु प्रभुकी प्रेरणा (आज्ञा) से सब वानर-भालू श्रीरामजीके रूपको हृदय
रखकर और अनेकों प्रकारसे विनती करके हर्ष और विषादसहित घरको चले ॥ ११८(क)॥

कपिपति नील रीछपति अंगद नल हनुमान।
सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान ॥ ११८(ख)॥

वानरराज सुग्रीव, नील, ऋक्षराज जाम्बवान्, अंगद, नल और हनुमान
विभीषणसहित और जो बलवान् वानर सेनापति हैं, ॥ ११८ (ख) ॥

कहि न सकहिं कछु प्रेम बस भरि भरि लोचन बारि।
सन्मुख चितवहिं राम तन नयन निमेष निवारि ॥ ११८(ग)॥

वे कुछ कह नहीं सकते; प्रेमवश नेत्रोंमें जल भर-भरकर, नेत्रोंका पलक मारना
छोड़कर (टकटकी लगाये) सम्मुख होकर श्रीरामजीकी ओर देख रहे हैं॥ ११८ (ग)॥

चौ०—अतिसय प्रीति देखि रघुराई। लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई॥
मन महुँ बिप्र चरन सिरु नायो। उत्तर दिसिहि बिमान चलायो॥

श्रीरघुनाथजीने उनका अतिशय प्रेम देखकर सबको विमानपर चढ़ा लिया।
तदनन्तर मन-ही-मन विप्रचरणोंमें सिर नवाकर उत्तर दिशाकी ओर विमान चलाया॥

चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई॥
सिंहासन अति उच्च मनोहर। श्री समेत प्रभु बैठे ता पर॥

विमानके चलते समय बड़ा शोर हो रहा है। सब कोई श्रीरघुवीरकी जय कह
रहे हैं। विमानमें एक अत्यन्त ऊँचा मनोहर सिंहासन है। उसपर सीताजीसहित
प्रभु श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हो गये॥ २॥

राजत रामु सहित भामिनी। मेरु सृंग जनु घन दामिनी॥
रुचिर बिमानु चलेउ अति आतुर। कीन्ही सुमन बृष्टि हरषे सुर॥

पत्नीसहित श्रीरामजी ऐसे सुशोभित हो रहे हैं मानो सुमेरुके शिखरपर बिजली
सहित श्याम मेघ हो। सुन्दर विमान बड़ी शीघ्रतासे चला। देवता हर्षित हुए और
उन्होंने फूलोंकी वर्षा की॥ ३॥

परम सुखद चलि त्रिबिध बयारी। सागर सर सरि निर्मल बारी॥
सगुन होहिं सुंदर चहुँ पासा। मन प्रसन्न निर्मल नभ आसा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्यन्त सुख देनेवाली तीन प्रकारकी (शीतल, मन्द, सुगन्धित) वायु चलने लगी। समुद्र, तालाब और नदियोंका जल निर्मल हो गया। चारों ओर सुन्दर शकुन होने लगे। सबके मन प्रसन्न हैं, आकाश और दिशाएँ निर्मल हैं॥ ४॥

कह रघुबीर देखु रन सीता। लछिमन इहाँ हत्यो इँद्रजीता॥
हनूमान अंगद के मारे। रन महि परे निसाचर भारे॥

श्रीरघुवीरने कहा—हे सीते! रणभूमि देखो। लक्ष्मणने यहाँ इन्द्रको जीतनेवाले मेघनादको मारा था। हनुमान् और अंगदके मारे हुए ये भारी-भारी निशाचर रणभूमिमें पड़े हैं॥ ५॥

कुंभकरन रावन द्वौ भाई। इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई॥

देवताओं और मुनियोंको दुःख देनेवाले कुम्भकर्ण और रावण दोनों भाई यहाँ मारे गये।

दो०—इहाँ सेतु बाँध्यों अरु थापेउँ सिव सुख धाम।
सीता सहित कृपानिधि संभुहि कीन्ह प्रनाम॥११९ (क)॥

मैंने यहाँ पुल बाँधा (बँधवाया) और सुखधाम श्रीशिवजीकी स्थापना की। तदनन्तर कृपानिधान श्रीरामजीने सीताजीसहित श्रीरामेश्वर महादेवको प्रणाम किया॥ ११९ (क)॥

जहँ जहँ कृपासिंधु बन कीन्ह बास बिश्राम।
सकल देखाए जानकिहि कहे सबन्हि के नाम॥११९ (ख)॥

वनमें जहाँ-जहाँ करुणासागर श्रीरामचन्द्रजीने निवास और विश्राम किया था, वे सब स्थान प्रभुने जानकीजीको दिखलाये और सबके नाम बतलाये॥ ११९ (ख)॥

चौ०—तुरत बिमान तहाँ चलि आवा। दंडक बन जहँ परम सुहावा॥
कुंभजादि मुनिनायक नाना। गए रामु सब कें अस्थाना॥

विमान शीघ्र ही वहाँ चला आया जहाँ परम सुन्दर दण्डकवन था, और अगस्त्य आदि बहुत-से मुनिराज रहते थे। श्रीरामजी इन सबके स्थानोंमें गये॥ १॥

सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आए जगदीसा॥
तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा। चला बिमानु तहाँ ते चोखा॥

सम्पूर्ण ऋषियोंसे आशीर्वाद पाकर जगदीश्वर श्रीरामजी चित्रकूट आये। वहाँ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुनियोंको सन्तुष्ट किया। [फिर] विमान वहाँसे आगे तेजीके साथ चला ॥ २ ॥

बहुरि राम जानकिहि देखाई। जमुना कलि मल हरनि सुहाई॥
पुनि देखी सुरसरी पुनीता। राम कहा प्रनाम करु सीता॥

फिर श्रीरामजीने जानकीजीको कलियुगके पापोंका हरण करनेवाली सुहावनी यमुनाजीके दर्शन कराये। फिर पवित्र गङ्गाजीके दर्शन किये। श्रीरामजीने कहा—हे सीते! इन्हें प्रणाम करो॥ ३ ॥

तीरथपति पुनि देखु प्रयागा। निरखत जन्म कोटि अघ भागा॥
देखु परम पावनि पुनि बेनी। हरनि सोक हरि लोक निसेनी॥
पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि॥

फिर तीर्थराज प्रयागको देखो, जिसके दर्शनसे ही करोड़ों जन्मोंके पाप भाग जाते हैं। फिर परम पवित्र त्रिवेणीजीके दर्शन करो, जो शोकोंको हरनेवाली और श्रीहरिके परम धाम [पहुँचने] के लिये सीढ़ीके समान है। फिर अत्यन्त पवित्र अयोध्यापुरीके दर्शन करो, जो तीनों प्रकारके तापों और भव (आवागमनरूपी) रोगका नाश करनेवाली है॥ ४ ॥

दो०—सीता सहित अवध कहुँ कीन्ह कृपाल प्रनाम।
सजल नयन तन पुलकित पुनि पुनि हरषित राम॥ १२० (क)॥

यों कहकर कृपालु श्रीरामजीने सीताजीसहित अवधपुरीको प्रणाम किया। सजल नेत्र और पुलकित शरीर होकर श्रीरामजी बार-बार हर्षित हो रहे हैं॥ १२० (क)॥

पुनि प्रभु आइ त्रिबेनीं हरषित मज्जनु कीन्ह।
कपिन्ह सहित बिप्रन्ह कहुँ दान बिबिध बिधि दीन्ह॥ १२० (ख)॥

फिर त्रिवेणीमें आकर प्रभुने हर्षित होकर स्नान किया और वानरोंसहित ब्राह्मणोंको अनेकों प्रकारके दान दिये॥ १२० (ख)॥

चौ०—प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई। धरि बटु रूप अवधपुर जाई॥
भरतहि कुसल हमारि सुनाएहु। समाचार लै तुम्ह चलि आएहु॥

तदनन्तर प्रभुने हनुमान्‌जीको समझाकर कहा—तुम ब्रह्मचारीका रूप धरकर अवधपुरीको जाओ। भरतको हमारी कुशल सुनाना और उनका समाचार लेकर चले आना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुरत पवनसुत गवनत भयऊ। तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयऊ॥
नाना बिधि मुनि पूजा कीन्ही। अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही॥

पवनपुत्र हनुमान्‌जी तुरंत ही चल दिये। तब प्रभु भरद्वाजजीके पास गये। [मुनिने [इष्टबुद्धिसे] उनकी अनेकों प्रकारसे पूजा की और स्तुति की, और फिर [लीलाकी दृष्टिसे] आशीर्वाद दिया॥ २॥

मुनि पद बंदि जुगल कर जोरी। चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी॥
इहाँ निषाद सुना प्रभु आए। नाव नाव कहँ लोग बोलाए॥

दोनों हाथ जोड़कर तथा मुनिके चरणोंकी वन्दना करके प्रभु विमानपर चढ़कर [फिर] (आगे) चले। यहाँ जब निषादराजने सुना कि प्रभु आ गये, तब उसने 'नाव [क]हाँ है? नाव कहाँ है?' पुकारते हुए लोगोंको बुलाया॥ ३॥

सुरसरि नाघि जान तब आयो। उतरेउ तट प्रभु आयसु पायो॥
तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥

इतनेमें ही विमान गङ्गाजीको लाँघकर [इस पार] आ गया और प्रभुकी आज्ञा [पाक]र वह किनारेपर उतरा। तब सीताजी बहुत प्रकारसे गङ्गाजीकी पूजा करके फिर [उन]के चरणोंपर गिरीं॥ ४॥

दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा॥
सुनत गुहा धायउ प्रेमाकुल। आयउ निकट परम सुख संकुल॥

गङ्गाजीने मनमें हर्षित होकर आशीर्वाद दिया—हे सुन्दरी! तुम्हारा सुहाग [अख]ण्ड हो। भगवान्‌के तटपर उतरनेकी बात सुनते ही निषादराज गुह प्रेममें विह्वल [होकर] दौड़ा। परम सुखसे परिपूर्ण होकर वह प्रभुके समीप आया,॥ ५॥

प्रभुहि सहित बिलोकि बैदेही। परेउ अवनि तन सुधि नहिं तेही॥
प्रीति परम बिलोकि रघुराई। हरषि उठाइ लियो उर लाई॥

और श्रीजानकीजीसहित प्रभुको देखकर वह [आनन्द-समाधिमें मग्न होकर] [पृथ्]वीपर गिर पड़ा, उसे शरीरकी सुधि न रही। श्रीरघुनाथजीने उसका परम प्रेम [दे]खकर उसे उठाकर हर्षके साथ हृदयसे लगा लिया॥ ६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—लियो हृदयँ लाइ कृपा निधान सुजान रायँ रमापती।
बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो कर बीनती॥
अब कुसल पद पंकज बिलोकि बिरंचि संकर सेब्य जे।
सुख धाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते॥१

सुजानोंके राजा (शिरोमणि), लक्ष्मीकान्त, कृपानिधान भगवान्‌ने उ हृदयसे लगा लिया और अत्यन्त निकट बैठाकर कुशल पूछी। वह वि करने लगा—आपके जो चरणकमल ब्रह्माजी और शङ्करजीसे सेवित हैं, उनके द करके मैं अब सकुशल हूँ। हे सुखधाम! हे पूर्णकाम श्रीरामजी! मैं आ नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ॥ १॥

सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइयो।
मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोह बस बिसराइयो॥
यह रावनारि चरित्र पावन राम पद रतिप्रद सदा।
कामादिहर बिग्यानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा॥२

सब प्रकारसे नीच उस निषादको भगवान्‌ने भरतजीकी भाँति हृदयसे लिया। तुलसीदासजी कहते हैं—इस मन्दबुद्धिने (मैंने) मोहवश उस प्रभुको दिया। रावणके शत्रुका यह पवित्र करनेवाला चरित्र सदा ही श्रीरामजीके च प्रीति उत्पन्न करनेवाला है। यह कामादि विकारोंका हरनेवाला और [भगव स्वरूपका] विशेष ज्ञान उत्पन्न करनेवाला है। देवता, सिद्ध और मुनि आन होकर इसे गाते हैं॥ २॥

दो०—समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान।
बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहि देहिं भगवान॥१२१

जो सुजान लोग श्रीरघुवीरकी समरविजयसम्बन्धी लीलाको सुनते हैं, उ भगवान् नित्य विजय, विवेक और विभूति (ऐश्वर्य) देते हैं॥ १२१ (क)

यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार॥१२१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अरे मन ! विचार करके देख ! यह कलिकाल पापोंका घर है । इसमें श्रीरघुनाथजीके नामको छोड़कर [पापोंसे बचनेके लिये] दूसरा कोई आधार नहीं है ॥ १२१ (ख) ॥

मासपारायण, सत्ताईसवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने षष्ठः सोपानः समाप्तः ।

कलियुगके समस्त पापोंका नाश करनेवाले श्रीरामचरितमानसका यह छठा सोपान समाप्त हुआ ।

(लंकाकाण्ड समाप्त)



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

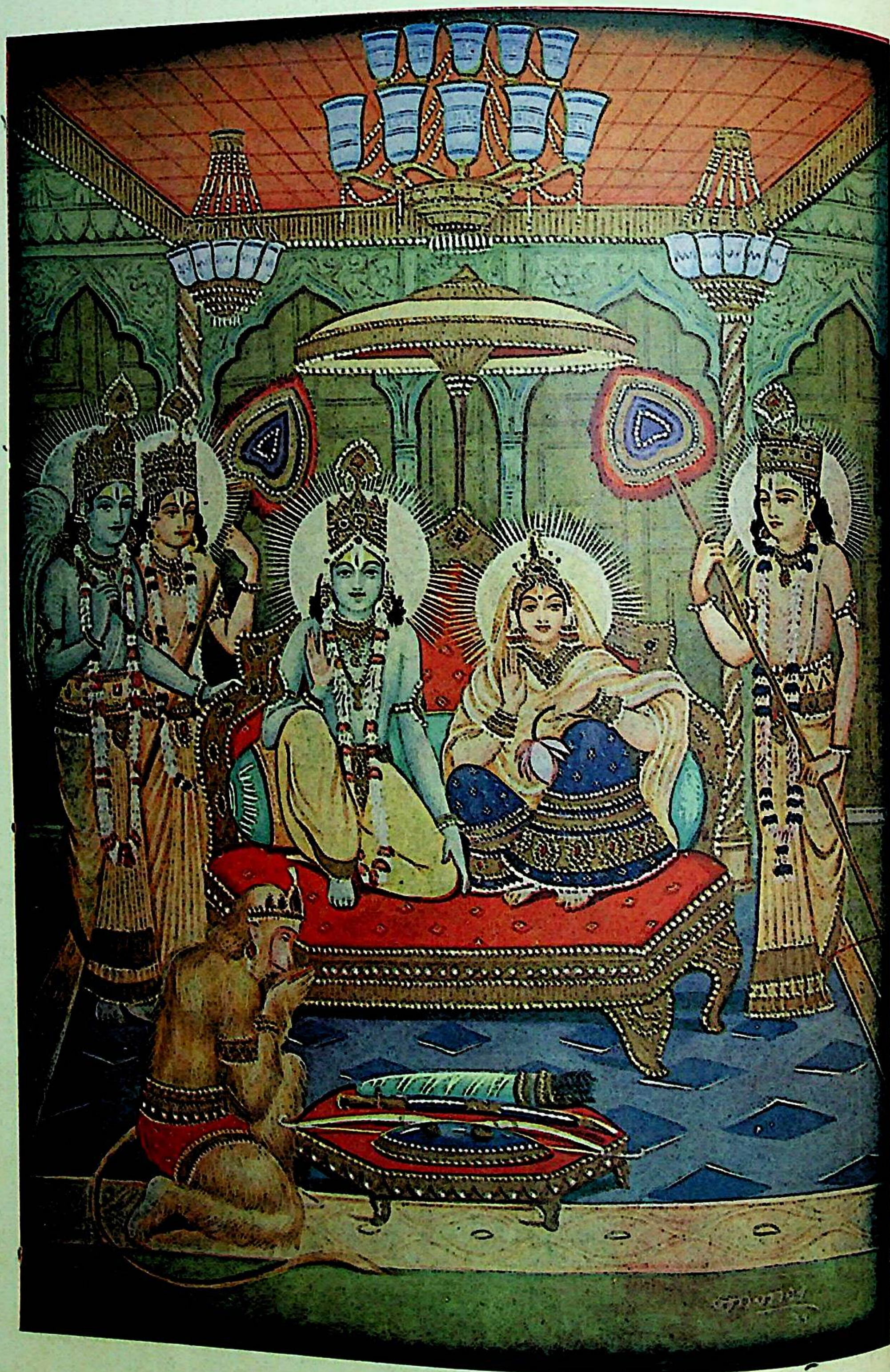
गुरु-वन्दन



धाइ धरे गुर चरन सरोरुह ।
अनुज सहित अति पुलक तनोरुह ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri



श्रीरामकी झाँकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

सप्तम सोपान

उत्तरकाण्ड

श्लोक

केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम् ।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम् ॥ १ ॥

मोरके कण्ठकी आभाके समान (हरिताभ) नीलवर्ण, देवताओंमें श्रेष्ठ, ब्राह्मण (भृगुजी) के चरणकमलके चिह्नसे सुशोभित, शोभासे पूर्ण, पीताम्बरधारी, कमलनेत्र, सदा प्रसन्न, हाथोंमें बाण और धनुष धारण किये हुए, वानरसमूहसे युक्त, भाई लक्ष्मणजीसे सेवित, स्तुति किये जाने योग्य, श्रीजानकीजीके पति, रघुकुलश्रेष्ठ, पुष्पक-विमानपर सवार श्रीरामचन्द्रजीको मैं निरन्तर नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

कोसलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ ।
जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ ॥ २ ॥

कोसलपुरीके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर और कोमल दोनों चरणकमल ब्रह्माजी और शिवजीके द्वारा वन्दित हैं, श्रीजानकीजीके करकमलोंसे दुलराये हुए हैं और चिन्तन करनेवालेके मनरूपी भौंरेके नित्य संगी हैं अर्थात् चिन्तन करनेवालोंका मनरूपी भ्रमर सदा उन चरणकमलोंमें बसा रहता है ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शङ्करमनङ्गमोचनम् ॥ ३ ॥

कुन्दके फूल, चन्द्रमा और शङ्खके समान सुन्दर गौरवर्ण, जगज्जननी श्रीपार्वतीजीके पति, वाञ्छित फलके देनेवाले, [दुखियोंपर सदा] दया करनेवाले, सुन्दर कमलके समान नेत्रवाले, कामदेवसे छुड़ानेवाले, [कल्याणकारी] श्रीशङ्करजीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

दो०—रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग।
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस तन राम बियोग ॥

[श्रीरामजीके लौटनेकी] अवधिका एक ही दिन बाकी रह गया, अतएव नगरके लोग बहुत आतुर (अधीर) हो रहे हैं। रामके वियोगमें दुबले हुए स्त्री-पुरुष जहाँ-तहाँ सोच (विचार) कर रहे हैं [कि क्या बात है, श्रीरामजी क्यों नहीं आये]।

सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सब केर।
प्रभु आगवन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर ॥

इतनेमें ही सब सुन्दर शकुन होने लगे और सबके मन प्रसन्न हो गये। नगर भी चारों ओरसे रमणीक हो गया। मानो ये सब-के-सब चिह्न प्रभुके [शुभ] आगमनको जना रहे हैं।

कौसल्यादि मातु सब मन अनंद अस होइ।
आयउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब कोइ ॥

कौसल्या आदि सब माताओंके मनमें ऐसा आनन्द हो रहा है जैसे अभी कोई कहना ही चाहता है कि सीताजी और लक्ष्मणजीसहित प्रभु श्रीरामचन्द्रजी आ गये।

भरत नयन भुज दच्छिन फरकत बारहिं बार।
जानि सगुन मन हरष अति लागे करन बिचार ॥

भरतजीकी दाहिनी आँख और दाहिनी भुजा बार-बार फड़क रही हैं। इसे शुभ शकुन जानकर उनके मनमें अत्यन्त हर्ष हुआ और वे विचार करने लगे—

चौ०—रहेउ एक दिन अवधि अधारा। समुझत मन दुख भयउ अपारा।
कारन कवन नाथ नहिं आयउ। जानि कुटिल किधौं मोहि बिसराय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राणोंकी आधाररूप अवधिका एक ही दिन शेष रह गया। यह सोचते ही भरतजीके मनमें अपार दुःख हुआ। क्या कारण हुआ कि नाथ नहीं आये? प्रभुने कुटिल जानकर मुझे कहीं भुला तो नहीं दिया?॥ १॥

अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पदारबिंदु अनुरागी॥
कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ताते नाथ संग नहिं लीन्हा॥

अहाहा! लक्ष्मण बड़े धन्य एवं बड़भागी हैं, जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणारविन्दके प्रेमी हैं (अर्थात् उनसे अलग नहीं हुए)। मुझे तो प्रभुने कपटी और कुटिल पहचान लिया, इसीसे नाथने मुझे साथ नहीं लिया!॥ २॥

जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कलप सत कोरी॥
जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ॥

[बात भी ठीक ही है, क्योंकि] यदि प्रभु मेरी करनीपर ध्यान दें, तो सौ करोड़ (असंख्य) कल्पोंतक भी मेरा निस्तार (छुटकारा) नहीं हो सकता। [परन्तु आशा इतनी ही है कि] प्रभु सेवकका अवगुण कभी नहीं मानते। वे दीनबन्धु हैं और अत्यन्त ही कोमल स्वभावके हैं॥ ३॥

मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई। मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई॥
बीतें अवधि रहहिं जौं प्राना। अधम कवन जग मोहि समाना॥

अतएव मेरे हृदयमें ऐसा पक्का भरोसा है कि श्रीरामजी अवश्य मिलेंगे, [क्योंकि] मुझे शकुन बड़े शुभ हो रहे हैं। किन्तु अवधि बीत जानेपर यदि मेरे प्राण रह गये तो जगत्‌में मेरे समान नीच कौन होगा?॥ ४॥

दो०—राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत।
बिप्र रूप धरि पवनसुत आइ गयउ जनु पोत॥ १ (क)॥

श्रीरामजीके विरह-समुद्रमें भरतजीका मन डूब रहा था, उसी समय पवनपुत्र हनुमान्‌जी ब्राह्मणका रूप धरकर इस प्रकार आ गये, मानो [उन्हें डूबनेसे बचानेके लिये] नाव आ गयी हो॥ १ (क)॥

बैठे देखि कुसासन जटा मुकुट कृस गात।
राम राम रघुपति जपत स्रवत नयन जलजात॥ १ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हनुमान्‌जीने दुर्बलशरीर भरतजीको जटाओंका मुकुट बनाये, राम ! रा रघुपति ! जपते और कमलके समान नेत्रोंसे [प्रेमाश्रुओंका] जल बहाते कु आसनपर बैठे देखा ॥ १ (ख) ॥

चौ०—देखत हनूमान अति हरषेउ । पुलक गात लोचन जल बरषेउ ॥
मन महँ बहुत भाँति सुख मानी । बोलेउ श्रवन सुधा सम बानी ॥

उन्हें देखते ही हनुमान्‌जी अत्यन्त हर्षित हुए । उनका शरीर पुलकित गया, नेत्रोंसे [प्रेमाश्रुओंका] जल बरसने लगा । मनमें बहुत प्रकारसे सुख मान वे कानोंके लिये अमृतके समान वाणी बोले—॥ १ ॥

जासु बिरहँ सोचहु दिन राती । रटहु निरंतर गुन गन पाँती ॥
रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता । आयउ कुसल देव मुनि त्राता ॥

जिनके विरहमें आप दिन-रात सोच करते (घुलते) रहते हैं और जिनके गु समूहोंकी पंक्तियोंको आप निरन्तर रटते रहते हैं, वे ही रघुकुलके तिलक, सज्जनों सुख देनेवाले और देवताओं तथा मुनियोंके रक्षक श्रीरामजी सकुशल आ गये ॥ २

रिपु रन जीति सुजस सुर गावत । सीता सहित अनुज प्रभु आवत ॥
सुनत बचन बिसरे सब दूखा । तृषावंत जिमि पाइ पियूषा ॥

शत्रुको रणमें जीतकर सीताजी और लक्ष्मणजीसहित प्रभु आ रहे हैं; दे उनका सुन्दर यश गा रहे हैं । ये वचन सुनते ही [भरतजीको] सारे दुःख भू गये । जैसे प्यासा आदमी अमृत पाकर प्यासके दुःखको भूल जाय ॥ ३ ॥

को तुम्ह तात कहाँ ते आए । मोहि परम प्रिय बचन सुनाए ॥
मारुत सुत मैं कपि हनुमाना । नामु मोर सुनु कृपानिधाना ॥

[भरतजीने पूछा—] हे तात ! तुम कौन हो ? और कहाँसे आये हो [जो] तुमने मुझको [ये] परम प्रिय (अत्यन्त आनन्द देनेवाले) वचन सुनाये [हनुमान्‌जीने कहा—] हे कृपानिधान ! सुनिये; मैं पवनका पुत्र और जातिसे वानर हूँ; मेरा नाम हनुमान् है ॥ ४ ॥

दीनबंधु रघुपति कर किंकर । सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर ॥
मिलत प्रेम नहिं हृदयँ समाता । नयन स्रवत जल पुलकित गाता ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं दीनोंके बन्धु श्रीरघुनाथजीका दास हूँ। यह सुनते ही भरतजी उठकर आदरपूर्वक हनुमान्‌जीसे गले लगकर मिले। मिलते समय प्रेम हृदयमें नहीं समाता। नेत्रोंसे [आनन्द और प्रेमके आँसुओंका] जल बहने लगा और शरीर पुलकित हो गया।

कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आजु मोहि राम पिरीते॥
बार बार बूझी कुसलाता। तो कहुँ देउँ काह सुनु भ्राता॥

[भरतजीने कहा—] हे हनुमान्! तुम्हारे दर्शनसे मेरे समस्त दुःख समाप्त हो गये (दुःखोंका अन्त हो गया)। [तुम्हारे रूपमें] आज मुझे प्यारे रामजी ही मिल गये। भरतजीने बार-बार कुशल पूछी [और कहा—] हे भाई! सुनो, [इस शुभ संवादके बदलेमें] तुम्हें क्या दूँ?॥ ६॥

एहि संदेस सरिस जग माहीं। करि बिचार देखेउँ कछु नाहीं॥
नाहिन तात उरिन मैं तोही। अब प्रभु चरित सुनावहु मोही॥

इस सन्देशके समान (इसके बदलेमें देने लायक पदार्थ) जगत्‌में कुछ भी नहीं है, मैंने यह विचार कर देख लिया है। [इसलिये] हे तात! मैं तुमसे किसी प्रकार भी उऋण नहीं हो सकता। अब मुझे प्रभुका चरित्र (हाल) सुनाओ॥ ७॥

तब हनुमंत नाइ पद माथा। कहे सकल रघुपति गुन गाथा॥
कहु कपि कबहुँ कृपाल गोसाईं। सुमिरहिं मोहि दास की नाईं॥

तब हनुमान्‌जीने भरतजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर श्रीरघुनाथजीकी सारी गुणगाथा कही। [भरतजीने पूछा—] हे हनुमान्! कहो, कृपालु स्वामी श्रीरामचन्द्रजी कभी मुझे अपने दासकी तरह याद भी करते हैं?॥ ८॥

छं०—निज दास ज्यों रघुबंसभूषन कबहुँ मम सुमिरन करॺो।
सुनि भरत बचन बिनीत अति कपि पुलकि तन चरनन्हि परॺो॥
रघुबीर निज मुख जासु गुन गन कहत अग जग नाथ जो।
काहे न होइ बिनीत परम पुनीत सदगुन सिंधु सो॥

रघुवंशके भूषण श्रीरामजी क्या कभी अपने दासकी भाँति मेरा स्मरण करते रहे हैं? भरतजीके अत्यन्त नम्र वचन सुनकर हनुमान्‌जी पुलकित शरीर होकर उनके चरणोंपर गिर पड़े [और मनमें विचारने लगे कि] जो चराचरके स्वामी हैं वे श्रीरघुवीर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने श्रीमुखसे जिनके गुणसमूहोंका वर्णन करते हैं, वे भरतजी ऐसे विनम्र, पवित्र और सद्‌गुणोंके समुद्र क्यों न हों ?

दो०—राम प्रान प्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात।
पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदयँ समात ॥ २ (क) ॥

[हनुमान्‌जीने कहा—] हे नाथ ! आप श्रीरामजीको प्राणोंके समान प्रिय हैं। हे तात ! मेरा वचन सत्य है। यह सुनकर भरतजी बार-बार मिलते हैं, हृदयमें हर्ष समाता नहीं है ॥ २ (क) ॥

सो०—भरत चरन सिरु नाइ तुरित गयउ कपि राम पहिं।
कही कुसल सब जाइ हरषि चलेउ प्रभु जान चढ़ि ॥ २ (ख) ॥

फिर भरतजीके चरणोंमें सिर नवाकर हनुमान्‌जी तुरंत ही श्रीरामजीके पास [लौट] गये और जाकर उन्होंने सब कुशल कही। तब प्रभु हर्षित होकर विमानपर चढ़कर चले ॥ २ (ख) ॥

चौ०—हरषि भरत कोसलपुर आए। समाचार सब गुरहि सुनाए॥
पुनि मंदिर महँ बात जनाई। आवत नगर कुसल रघुराई॥

इधर भरतजी भी हर्षित होकर अयोध्यापुरीमें आये और उन्होंने गुरुजीको सब समाचार सुनाया। फिर राजमहलमें खबर जनायी कि श्रीरघुनाथजी कुशलपूर्वक नगरको आ रहे हैं ॥ १ ॥

सुनत सकल जननी उठि धाईं। कहि प्रभु कुसल भरत समुझाईं॥
समाचार पुरबासिन्ह पाए। नर अरु नारि हरषि सब धाए॥

खबर सुनते ही सब माताएँ उठ दौड़ीं। भरतजीने प्रभुकी कुशल कहकर सबको समझाया। नगरनिवासियोंने यह समाचार पाया, तो स्त्री-पुरुष सभी हर्षित होकर दौड़े ॥ २ ॥

दधि दुर्बा रोचन फल फूला। नव तुलसी दल मंगल मूला॥
भरि भरि हेम थार भामिनी। गावत चलिं सिंधुरगामिनी॥

[श्रीरामजीके स्वागतके लिये] दही, दूब, गोरोचन, फल, फूल और मङ्गलके मूल नवीन तुलसीदल आदि वस्तुएँ सोनेके थालोंमें भर-भरकर हथिनीकी-सी चालवाली सौभाग्यवती स्त्रियाँ [उन्हें लेकर] गाती हुई चलीं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जे जैसेहिं तैसेहिं उठि धावहिं । बाल बृद्ध कहँ संग न लावहिं ॥
एक एकन्ह कहँ बूझहिं भाई । तुम्ह देखे दयाल रघुराई ॥

जो जैसे हैं (जहाँ जिस दशामें हैं) वे वैसे ही (वहींसे उसी दशामें) उठ दौड़ते हैं। [देर हो जानेके डरसे] बालकों और बूढ़ोंको कोई साथ नहीं लाते। एक दूसरेसे पूछते हैं—भाई! तुमने दयालु श्रीरघुनाथजीको देखा है? ॥ ४ ॥

अवधपुरी प्रभु आवत जानी । भई सकल सोभा कै खानी ॥
बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा । भइ सरजू अति निर्मल नीरा ॥

प्रभुको आते जानकर अवधपुरी सम्पूर्ण शोभाओंकी खान हो गयी। तीनों प्रकारकी सुन्दर वायु बहने लगी। सरयूजी अति निर्मल जलवाली हो गयीं (अर्थात् सरयूजीका जल अत्यन्त निर्मल हो गया) ॥ ५ ॥

दो०—हरषित गुर परिजन अनुज भूसुर बृंद समेत ।
चले भरत मन प्रेम अति सन्मुख कृपानिकेत ॥ ३ (क) ॥

गुरु वशिष्ठजी, कुटुम्बी, छोटे भाई शत्रुघ्न तथा ब्राह्मणोंके समूहके साथ हर्षित होकर भरतजी अत्यन्त प्रेमपूर्ण मनसे कृपाधाम श्रीरामजीके सामने (अर्थात् उनकी अगवानीके लिये) चले ॥ ३ (क) ॥

बहुतक चढ़ीं अटारिन्ह निरखहिं गगन बिमान ।
देखि मधुर सुर हरषित करहिं सुमंगल गान ॥ ३ (ख) ॥

बहुत-सी स्त्रियाँ अटारियोंपर चढ़ी आकाशमें विमान देख रही हैं और उसे देखकर हर्षित होकर मीठे स्वरसे सुन्दर मङ्गलगीत गा रही हैं ॥ ३ (ख) ॥

राका ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरषान ।
बढ़्यो कोलाहल करत जनु नारि तरंग समान ॥ ३ (ग) ॥

श्रीरघुनाथजी पूर्णिमाके चन्द्रमा हैं, तथा अवधपुर समुद्र है, जो उस पूर्णचन्द्रको देखकर हर्षित हो रहा है और शोर करता हुआ बढ़ रहा है। [इधर-उधर दौड़ती हुई] स्त्रियाँ उसकी तरंगोंके समान लगती हैं ॥ ३ (ग) ॥

चौ०—इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर । कपिन्ह देखावत नगर मनोहर ॥
सुनु कपीस अंगद लंकेसा । पावन पुरी रुचिर यह देसा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यहाँ (विमानपरसे) सूर्यकुलरूपी कमलके प्रफुल्लित करनेवाले सूर्य श्री वानरोंको मनोहर नगर दिखला रहे हैं। [वे कहते हैं—] हे सुग्रीव ! हे अं हे लंकापति विभीषण ! सुनो। यह पुरी पवित्र है और यह देश सुन्दर है ॥ १ ॥

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना।
अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥

यद्यपि सबने वैकुण्ठकी बड़ाई की है—यह वेद-पुराणोंमें प्रसिद्ध है और जानता है—परन्तु अवधपुरीके समान मुझे वह भी प्रिय नहीं है। यह बात (को कोई-कोई (विरले ही) जानते हैं ॥ २ ॥

जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरजू पावनि।
जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं बासा॥

यह सुहावनी पुरी मेरी जन्म-भूमि है। इसके उत्तर दिशामें [जीवोंको] प करनेवाली सरयू नदी बहती है, जिसमें स्नान करनेसे मनुष्य बिना ही परिश्रम समीप निवास (सामीप्य मुक्ति) पा जाते हैं ॥ ३ ॥

अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी। मम धामदा पुरी सुख रासी।
हरषे सब कपि सुनि प्रभु बानी। धन्य अवध जो राम बखानी॥

यहाँके निवासी मुझे बहुत ही प्रिय हैं। यह पुरी सुखकी राशि और मेरे प धामको देनेवाली है। प्रभुकी वाणी सुनकर सब वानर हर्षित हुए [और कहने लगे कि जिस अवधकी स्वयं श्रीरामजीने बड़ाई की, वह [अवश्य ही] धन्य है ॥ ४ ॥

दो०—आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान।
नगर निकट प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि बिमान ॥ ४ (क) ॥

कृपासागर भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने सब लोगोंको आते देखा, तो प्रभुने विमान को नगरके समीप उतरनेकी प्रेरणा की। तब वह पृथ्वीपर उतरा ॥ ४ (क) ॥

उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।
प्रेरित राम चलेउ सो हरषु बिरहु अति ताहु ॥ ४ (ख) ॥

बिमानसे उतरकर प्रभुने पुष्पकविमानसे कहा कि तुम अब कुबेरके पास जाओ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामजीकी प्रेरणासे वह चला; उसे [अपने स्वामीके पास जानेका] हर्ष है और श्रीरामचन्द्रजीसे अलग होनेका अत्यन्त दुःख भी ॥ ४ (ख) ॥

चौ०-आए भरत संग सब लोगा । कृस तन श्रीरघुबीर बियोगा ॥
बामदेव बसिष्ट मुनिनायक । देखे प्रभु महि धरि धनु सायक ॥

भरतजीके साथ सब लोग आये। श्रीरघुवीरके वियोगसे सबके शरीर दुबले हो रहे हैं। प्रभुने वामदेव, वशिष्ठ आदि मुनिश्रेष्ठोंको देखा, तो उन्होंने धनुष-बाण पृथ्वीपर रखकर—॥ १ ॥

धाइ धरे गुर चरन सरोरुह । अनुज सहित अति पुलक तनोरुह ॥
भेंटि कुसल बूझी मुनिराया । हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया ॥

छोटे भाई लक्ष्मणजीसहित दौड़कर गुरुजीके चरणकमल पकड़ लिये; उनके रोम-रोम अत्यन्त पुलकित हो रहे हैं। मुनिराज वशिष्ठजीने [उठाकर] उन्हें गले लगाकर कुशल पूछी। [प्रभुने कहा—] आपहीकी दयामें हमारी कुशल है ॥ २ ॥

सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा । धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा ॥
गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज । नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज ॥

धर्मकी धुरी धारण करनेवाले रघुकुलके स्वामी श्रीरामजीने सब ब्राह्मणोंसे मिलकर उन्हें मस्तक नवाया। फिर भरतजीने प्रभुके वे चरणकमल पकड़े जिन्हें देवता, मुनि, शङ्करजी और ब्रह्माजी [भी] नमस्कार करते हैं ॥ ३ ॥

परे भूमि नहिं उठत उठाए । बर करि कृपासिंधु उर लाए ॥
स्यामल गात रोम भए ठाढ़े । नव राजीव नयन जल बाढ़े ॥

भरतजी पृथ्वीपर पड़े हैं, उठाये उठते नहीं। तब कृपासिन्धु श्रीरामजीने उन्हें जबर्दस्ती उठाकर हृदयसे लगा लिया। [उनके] साँवले शरीरपर रोएँ खड़े हो गये। नवीन कमलके समान नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंके] जलकी बाढ़ आ गयी ॥ ४ ॥

छं०-राजीव लोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी ।
अति प्रेम हृदयँ लगाइ अनुजहि मिले प्रभु त्रिभुअन धनी ॥
प्रभु मिलत अनुजहि सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही ।
जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुषमा लही ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कमलके समान नेत्रोंसे जल बह रहा है। सुन्दर शरीरमें पुलकावली [अत्यन्त] शोभा दे रही है। त्रिलोकीके स्वामी प्रभु श्रीरामजी छोटे भाई भरतजीको अत्यन्त प्रेमसे हृदयसे लगाकर मिले। भाईसे मिलते समय प्रभु जैसे शोभित हो रहे हैं उसकी उपमा मुझसे कही नहीं जाती। मानो प्रेम और श्रृंगार शरीर धारण करके मिले और श्रेष्ठ शोभाको प्राप्त हुए॥ १॥

बूझत कृपानिधि कुसल भरतहि बचन बेगि न आवई।
सुनु सिवा सो सुख बचन मन ते भिन्न जान जो पावई॥
अब कुसल कौसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो।
बूड़त बिरह बारीस कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥ २॥

कृपानिधान श्रीरामजी भरतजीसे कुशल पूछते हैं परन्तु आनन्दवश भरतजीके मुखसे वचन शीघ्र नहीं निकलते। [शिवजीने कहा—] हे पार्वती! सुनो, वह सुख (जो उस समय भरतजीको मिल रहा था) वचन और मनसे परे है; उसे वही जानता है जो उसे पाता है। [भरतजीने कहा—] हे कोसलनाथ! आपने आर्त (दुखी) जानकर दासको दर्शन दिये, इससे अब कुशल है। विरहसमुद्रमें डूबते हुए मुझको कृपानिधानने हाथ पकड़कर बचा लिया!॥ २॥

दो०—पुनि प्रभु हरषि सत्रुहन भेंटे हृदयँ लगाइ।
लछिमन भरत मिले तब परम प्रेम दोउ भाइ॥ ५॥

फिर प्रभु हर्षित होकर शत्रुघ्नजीको हृदयसे लगाकर उनसे मिले। तब लक्ष्मणजी और भरतजी दोनों भाई परम प्रेमसे मिले॥ ५॥

चौ०—भरतानुज लछिमन पुनि भेंटे। दुसह बिरह संभव दुख मेटे॥
सीता चरन भरत सिरु नावा। अनुज समेत परम सुख पावा॥

फिर लक्ष्मणजी शत्रुघ्नजीसे गले लगकर मिले और इस प्रकार विरहसे उत्पन्न दुःसह दुःखका नाश किया। फिर भाई शत्रुघ्नजीसहित भरतजीने सीताजीके चरणोंमें सिर नवाया और परम सुख प्राप्त किया॥ १॥

प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी। जनित बियोग बिपति सब नासी॥
प्रेमातुर सब लोग निहारी। कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुको देखकर अयोध्यावासी सब हर्षित हुए। वियोगसे उत्पन्न सब दुःख दूर हो गये। सब लोगोंको प्रेमविह्वल [और मिलनेके लिये अत्यन्त आतुर] देखकर खरके शत्रु कृपालु श्रीरामजीने एक चमत्कार किया ॥ २ ॥

अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला ॥
कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी ॥

उसी समय कृपालु श्रीरामजी असंख्य रूपोंमें प्रकट हो गये और सबसे [एक ही साथ] यथायोग्य मिले। श्रीरघुवीरने कृपाकी दृष्टिसे देखकर सब नर-नारियोंको शोकसे रहित कर दिया ॥ ३ ॥

छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना ॥
एहि बिधि सबहि सुखी करि रामा। आगें चले सील गुन धामा ॥

भगवान् क्षणमात्रमें सबसे मिल लिये। हे उमा ! यह रहस्य किसीने नहीं जाना। इस प्रकार शील और गुणोंके धाम श्रीरामजी सबको सुखी करके आगे बढ़े ॥ ४ ॥

कौसल्यादि मातु सब धाई। निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई ॥

कौसल्या आदि माताएँ ऐसे दौड़ीं मानो नयी ब्यायी हुई गौएँ अपने बछड़ोंको देखकर दौड़ी हों ॥ ५ ॥

छं०–जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृहँ चरन बन परबस गईं।
दिन अंत पुर रुख स्त्रवत थन हुंकार करि धावत भईं ॥
अति प्रेम प्रभु सब मातु भेटीं बचन मृदु बहुबिधि कहे।
गइ बिषम बिपति बियोगभव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे ॥

मानो नयी ब्यायी हुई गौएँ अपने छोटे बछड़ोंको घरपर छोड़ परवश होकर वनमें चरने गयी हों और दिनका अन्त होनेपर [बछड़ोंसे मिलनेके लिये] हुंकार करके थनसे दूध गिराती हुई नगरकी ओर दौड़ी हों। प्रभुने अत्यन्त प्रेमसे सब माताओंसे मिलकर उनसे बहुत प्रकारके कोमल वचन कहे। वियोगसे उत्पन्न भयानक विपत्ति दूर हो गयी और सबने [भगवान्‌से मिलकर और उनके वचन सुनकर] अगणित सुख और हर्ष प्राप्त किये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—भेटेउ तनय सुमित्राँ राम चरन रति जानि।
रामहि मिलत कैकई हृदयँ बहुत सकुचानि ॥ ६ (क) ॥

सुमित्राजी अपने पुत्र लक्ष्मणजीकी श्रीरामजीके चरणोंमें प्रीति जानकर उनसे मिलीं। श्रीरामजीसे मिलते समय कैकेयीजी हृदयमें बहुत सकुचायीं ॥ ६ (क) ॥

लछिमन सब मातन्ह मिलि हरषे आसिष पाइ।
कैकइ कहँ पुनि पुनि मिले मन कर छोभु न जाइ ॥ ६ (ख) ॥

लक्ष्मणजी भी सब माताओंसे मिलकर और आशीर्वाद पाकर हर्षित हुए। कैकेयीजीसे बार-बार मिले, परन्तु उनके मनका क्षोभ (रोष) नहीं जाता ॥ ६ (ख) ॥

चौ०—सासुन्ह सबनि मिली बैदेही। चरनन्हि लागि हरषु अति तेही॥
देहिं असीस बूझि कुसलाता। होइ अचल तुम्हार अहिवाता॥

जानकीजी सब सासुओंसे मिलीं और उनके चरणों लगकर उन्हें अत्यन्त हर्ष हुआ। सासुएँ कुशल पूछकर आशिष दे रही हैं कि तुम्हारा सुहाग अचल हो ॥ १ ॥

सब रघुपति मुख कमल बिलोकहिं। मंगल जानि नयन जल रोकहिं॥
कनक थार आरती उतारहिं। बार बार प्रभु गात निहारहिं॥

सब माताएँ श्रीरघुनाथजीका कमल-सा मुखड़ा देख रही हैं। [नेत्रोंसे प्रेमके आँसू उमड़े आते हैं, परन्तु] मङ्गलका समय जानकर वे आँसुओंके जलको नेत्रोंमें ही रोक रखती हैं। सोनेके थालसे आरती उतारती हैं और बार-बार प्रभुके श्रीअंगोंकी ओर देखती हैं ॥ २ ॥

नाना भाँति निछावरि करहीं। परमानंद हरष उर भरहीं॥
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहि। चितवति कृपासिंधु रनधीरहि॥

अनेकों प्रकारसे निछावरें करती हैं और हृदयमें परमानन्द तथा हर्ष भर रही हैं। कौसल्याजी बार-बार कृपाके समुद्र और रणधीर श्रीरघुवीरको देख रही हैं ॥ ३ ॥

हृदयँ बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा॥
अति सुकुमार जुगल मेरे बारे। निसिचर सुभट महाबल भारे॥

वे बार-बार हृदयमें विचारती हैं कि इन्होंने लंकापति रावणको कैसे मारा? मेरे ये दोनों बच्चे बड़े ही सुकुमार हैं और राक्षस तो बड़े भारी योद्धा और महान् बली थे ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०-लछिमन अरु सीता सहित प्रभुहि बिलोकति मातु।
परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु ॥ ७ ॥

लक्ष्मणजी और सीताजीसहित प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको माता देख रही हैं। उनका [मन] परमानन्दमें मग्न है और शरीर बार-बार पुलकित हो रहा है ॥ ७ ॥

[चौ]०-लंकापति कपीस नल नीला। जामवंत अंगद सुभसीला ॥
हनुमदादि सब बानर बीरा। धरे मनोहर मनुज सरीरा ॥

लंकापति विभीषण, वानरराज सुग्रीव, नल, नील, जाम्बवान् और अंगद तथा [ह]नुमान्जी आदि सभी उत्तम स्वभाववाले वीर वानरोंने मनुष्योंके मनोहर शरीर [धा]रण कर लिये ॥ १ ॥

भरत सनेह सील ब्रत नेमा। सादर सब बरनहिं अति प्रेमा ॥
देखि नगरबासिन्ह कै रीती। सकल सराहहिं प्रभु पद प्रीती ॥

वे सब भरतजीके प्रेम, सुन्दर स्वभाव, [त्यागके] व्रत और नियमोंकी अत्यन्त [प्रे]मसे आदरपूर्वक बड़ाई कर रहे हैं। और नगरनिवासियोंकी [प्रेम, शील और विनयसे [पू]र्ण] रीति देखकर वे सब प्रभुके चरणोंमें उनके प्रेमकी सराहना कर रहे हैं ॥ २ ॥

पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनि पद लागहु सकल सिखाए ॥
गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे ॥

फिर श्रीरघुनाथजीने सब सखाओंको बुलाया और सबको सिखाया कि मुनिके चरणों[में] लगो। ये गुरु वशिष्ठजी हमारे कुलभरके पूज्य हैं। इन्हींकी कृपासे रणमें राक्षस मारे गये हैं।

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ बेरे ॥
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे ॥

[फिर गुरुजीसे कहा—] हे मुनि ! सुनिये। ये सब मेरे सखा हैं। ये संग्रामरूपी [स]मुद्रमें मेरे लिये बेड़े (जहाज) के समान हुए। मेरे हितके लिये इन्होंने अपने जन्म[त]क हार दिये (अपने प्राणोंतकको होम दिया)। ये मुझे भरतसे भी अधिक प्रिय हैं ॥ ४ ॥

सुनि प्रभु बचन मगन सब भए। निमिष निमिष उपजत सुख नए ॥

प्रभुके वचन सुनकर सब प्रेम और आनन्दमें मग्न हो गये। इस प्रकार पल-पलमें उन्हें नये-नये सुख उत्पन्न हो रहे हैं ॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नायउ माथ।
आसिष दीन्हे हरषि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ ॥ ८ (क)॥

फिर उन लोगोंने कौसल्याजीके चरणोंमें मस्तक नवाये। कौसल्याजीने हर्षित होकर आशिषें दीं [और कहा—] तुम मुझे रघुनाथके समान प्यारे हो ॥ ८ (क)॥

सुमन बृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर नारि नर बृंद ॥ ८ (ख)॥

आनन्दकन्द श्रीरामजी अपने महलको चले, आकाश फूलोंकी वृष्टिसे छा गया। नगरके स्त्री-पुरुषोंके समूह अटारियोंपर चढ़कर उनके दर्शन कर रहे हैं ॥ ८ (ख)॥

चौ०—कंचन कलस बिचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे॥
बंदनवार पताका केतू। सबन्हि बनाए मंगल हेतू॥

सोनेके कलशोंको विचित्र रीतिसे [मणि-रत्नादिसे] अलंकृत कर और सजाकर सब लोगोंने अपने-अपने दरवाजोंपर रख लिया। सब लोगोंने मङ्गलके लिये बंदनवार, ध्वजा और पताकाएँ लगायीं ॥ १ ॥

बीथीं सकल सुगंध सिंचाईं। गजमनि रचि बहु चौक पुराईं॥
नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे॥

सारी गलियाँ सुगन्धित द्रवोंसे सिंचायी गयीं। गजमुक्ताओंसे रचकर बहुत-सी चौकें पुरायी गयीं। अनेकों प्रकारके सुन्दर मङ्गल-साज सजाये गये और हर्षपूर्वक नगरमें बहुत-से डंके बजने लगे ॥ २ ॥

जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं। देहिं असीस हरष उर भरहीं॥
कंचन थार आरतीं नाना। जुबतीं सजें करहिं सुभ गाना॥

स्त्रियाँ जहाँ-तहाँ निछावर कर रही हैं, और हृदयमें हर्षित होकर आशीर्वाद देती हैं। बहुत-सी युवती [सौभाग्यवती] स्त्रियाँ सोनेके थालोंमें अनेकों प्रकारकी आरती सजकर मङ्गलगान कर रही हैं ॥ ३ ॥

करहिं आरती आरतिहर कें। रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें॥
पुर सोभा संपति कल्याना। निगम सेष सारदा बखाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वे आर्तिहर (दुःखोंको हरनेवाले) और सूर्यकुलरूपी कमलवनके प्रफुल्लित करने-
सूर्य श्रीरामजीकी आरती कर रही हैं। नगरकी शोभा, सम्पत्ति और कल्याणका
शेषजी और सरस्वतीजी वर्णन करते हैं—॥ ४ ॥

तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं। उमा तासु गुन नर किमि कहहीं ॥

परन्तु वे भी यह चरित्र देखकर ठगे-से रह जाते हैं (स्तम्भित हो रहते हैं)।
[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! तब भला मनुष्य उनके गुणोंको कैसे कह सकते हैं ?॥५॥

दो०—नारि कुमुदिनीं अवध सर रघुपति बिरह दिनेस।
अस्त भएँ बिगसत भईं निरखि राम राकेस॥ ९ (क)॥

स्त्रियाँ कुमुदिनी हैं, अयोध्या सरोवर है और श्रीरघुनाथजीका विरह सूर्य है [इस
विरह-सूर्यके तापसे वे मुरझा गयी थीं]। अब उस विरहरूपी सूर्यके अस्त होनेपर
श्रीरामरूपी पूर्णचन्द्रको निरखकर वे खिल उठीं ॥ ९ (क) ॥

होहिं सगुन सुभ बिबिधि बिधि बाजहिं गगन निसान।
पुर नर नारि सनाथ करि भवन चले भगवान॥ ९ (ख)॥

अनेक प्रकारके शुभ शकुन हो रहे हैं, आकाशमें नगाड़े बज रहे हैं। नगरके
पुरुषों और स्त्रियोंको सनाथ (दर्शनद्वारा कृतार्थ) करके भगवान् श्रीरामचन्द्रजी महल-
को चले ॥ ९ (ख) ॥

चौ०—प्रभु जानी कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी ॥
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! प्रभुने जान लिया कि माता कैकेयी लज्जित
हो गयी हैं। [इसलिये] वे पहले उन्हींके महलको गये और उन्हें समझा-बुझाकर
बहुत सुख दिया। फिर श्रीहरिने अपने महलको गमन किया ॥ १ ॥

कृपासिंधु जब मंदिर गए। पुर नर नारि सुखी सब भए ॥
गुर बसिष्ट द्विज लिए बुलाई। आजु सुघरी सुदिन समुदाई ॥

कृपाके समुद्र श्रीरामजी जब अपने महलको गये, तब नगरके स्त्री-पुरुष सब
सुखी हुए। गुरु वशिष्ठजीने ब्राह्मणोंको बुला लिया [और कहा—] आज शुभ घड़ी,
सुन्दर दिन आदि सभी शुभ योग हैं ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब द्विज देहु हरषि अनुसासन । रामचंद्र बैठहिं सिंघास
मुनि बसिष्ट के बचन सुहाए । सुनत सकल बिप्रन्ह अति भ

आप सब ब्राह्मण हर्षित होकर आज्ञा दीजिये, जिसमें श्रीरामचन्द्रजी सिंहास
विराजमान हों। वशिष्ठ मुनिके सुहावने वचन सुनते ही सब ब्राह्मणोंको बहुत ही अच्छे

कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका । जग अभिराम राम अभिषे
अब मुनिबर बिलंब नहिं कीजै । महाराज कहँ तिलक करी

वे सब अनेकों ब्राह्मण कोमल वचन कहने लगे कि श्रीरामजीका राज्याभि
सम्पूर्ण जगत्को आनन्द देनेवाला है । हे मुनिश्रेष्ठ ! अब विलम्ब न कीजिये
महाराजका तिलक शीघ्र कीजिये ॥ ४ ॥

दो०–तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ हरषाइ ।
रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारे जाइ ॥ १०

तब मुनिने सुमन्त्रजीसे कहा, वे सुनते ही हर्षित होकर चले । उन्होंने
ही जाकर अनेकों रथ, घोड़े और हाथी सजाये; ॥ १० (क) ॥

जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मंगल द्रब्य मगाइ ।
हरष समेत बसिष्ट पद पुनि सिरु नायउ आइ ॥ १०(ख)

और जहाँ-तहाँ [सूचना देनेवाले] दूतोंको भेजकर माङ्गलिक वस्तुएँ मँग
फिर हर्षके साथ आकर वशिष्ठजीके चरणोंमें सिर नवाया ॥ १० (ख) ॥

नवाह्नपारायण, आठवाँ विश्राम

चौ०–अवधपुरी अति रुचिर बनाई । देवन्ह सुमन बृष्टि झरि लाई
राम कहा सेवकन्ह बुलाई । प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई

अवधपुरी बहुत ही सुन्दर सजायी गयी । देवताओंने पुष्पोंकी वर्षाकी झ
लगा दी । श्रीरामचन्द्रजीने सेवकोंको बुलाकर कहा कि तुमलोग जाकर पहले
सखाओंको स्नान कराओ ॥ १ ॥

सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए । सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए
पुनि करुनानिधि भरतु हँकारे । निज कर राम जटा निरुआरे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवान्‌के वचन सुनते ही सेवक जहाँ-तहाँ दौड़े और तुरंत ही उन्होंने ... आदिको स्नान कराया। फिर करुणानिधान श्रीरामजीने भरतजीको बुलाया और ... की जटाओंको अपने हाथोंसे सुलझाया॥ २॥

अन्हवाए प्रभु तीनिउ भाई। भगत बछल कृपाल रघुराई॥
भरत भाग्य प्रभु कोमलताई। सेष कोटि सत सकहिं न गाई॥

तदनन्तर भक्तवत्सल कृपालु प्रभु श्रीरघुनाथजीने तीनों भाइयोंको स्नान कराया। ...जीका भाग्य और प्रभुकी कोमलताका वर्णन अरबों शेषजी भी नहीं कर सकते॥३॥

पुनि निज जटा राम बिबराए। गुर अनुसासन मागि नहाए॥
करि मज्जन प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग देखि सत लाजे॥

फिर श्रीरामजीने अपनी जटाएँ खोलीं और गुरुजीकी आज्ञा माँगकर स्नान किया। ...करके प्रभुने आभूषण धारण किये। उनके [सुशोभित] अंगोंको देखकर सैकड़ों (...संख्य) कामदेव लजा गये॥ ४॥

दो०—सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जन तुरत कराइ।
दिब्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बनाइ॥११ (क)॥

[इधर] सासुओंने जानकीजीको आदरके साथ तुरंत ही स्नान कराके उनके अंग-... दिव्य वस्त्र और श्रेष्ठ आभूषण भलीभाँति सजा दिये (पहना दिये)॥ ११ (क)॥

राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि॥ ११ (ख)॥

श्रीरामके बायीं ओर रूप और गुणोंकी खान रमा (श्रीजानकीजी) शोभित हो ... हैं। उन्हें देखकर सब माताएँ अपना जन्म (जीवन) सफल समझकर हर्षित ...॥ ११ (ख)॥

सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृंद।
चढ़ि बिमान आए सब सुर देखन सुखकंद॥ ११ (ग)॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे पक्षिराज गरुड़जी ! सुनिये; उस समय ब्रह्मा-...जी, शिवजी और मुनियोंके समूह तथा विमानोंपर चढ़कर सब देवता आनन्दकन्द ...भगवान्‌के दर्शन करनेके लिये आये॥ ११ (ग)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मा
रबि सम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह सिरु ना

प्रभुको देखकर मुनि वशिष्ठजीके मनमें प्रेम भर आया। उन्होंने तुरंत ही
सिंहासन मँगवाया, जिसका तेज सूर्यके समान था। उसका सौन्दर्य वर्णन नहीं
जा सकता। ब्राह्मणोंको सिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजी उसपर विराज गये॥ १

जनकसुता समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनि समुदा
बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुका

श्रीजानकीजीके सहित श्रीरघुनाथजीको देखकर मुनियोंका समुदाय अत्यन्त
हर्षित हुआ। तब ब्राह्मणोंने वेदमन्त्रोंका उच्चारण किया। आकाशमें देवता और
'जय हो, जय हो' ऐसी पुकार करने लगे॥ २ ॥

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्
सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उता

[सबसे] पहले मुनि वशिष्ठजीने तिलक किया। फिर उन्होंने सब ब्राह्म
[तिलक करनेकी] आज्ञा दी। पुत्रको राजसिंहासनपर देखकर माताएँ हर्षित हुईं
उन्होंने बार-बार आरती उतारी॥ ३ ॥

बिप्रन्ह दान बिबिधि बिधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक की
सिंघासन पर त्रिभुअन साईं। देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजा

उन्होंने ब्राह्मणोंको अनेकों प्रकारके दान दिये और सम्पूर्ण याचकोंको अ
बना दिया (मालामाल कर दिया)। त्रिभुवनके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको [अयोध्या
सिंहासनपर [विराजित] देखकर देवताओंने नगाड़े बजाये॥ ४ ॥

छं०—नभ दुंदुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किंनर गावहीं।
नाचहिं अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥
भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहें छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म सक्ति बिराजते॥

आकाशमें बहुत-से नगाड़े बज रहे हैं। गन्धर्व और किन्नर गा रहे
अप्सराओंके झुंड-के-झुंड नाच रहे हैं। देवता और मुनि परमानन्द प्राप्त कर रहे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

...त, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजी, विभीषण, अंगद, हनुमान् और सुग्रीव आदिसहित क्रमशः ...चँवर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल और शक्ति लिये हुए सुशोभित हैं ॥ १ ॥

श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव अंबुधर बर गात अंबर पीत सुर मन मोहई॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे ॥ २ ॥

श्रीसीताजीसहित सूर्यवंशके विभूषण श्रीरामजीके शरीरमें अनेकों कामदेवोंकी शोभा दे रही है। नवीन जलयुक्त मेघोंके समान सुन्दर श्याम शरीरपर पीताम्बर ...ताओंके मनको भी मोहित कर रहा है। मुकुट, बाजूबंद आदि विचित्र आभूषण ...अंगमें सजे हुए हैं। कमलके समान नेत्र हैं, चौड़ी छाती है और लंबी भुजाएँ ...जो उनके दर्शन करते हैं वे मनुष्य धन्य हैं ॥ २ ॥

दो०—वह सोभा समाज सुख कहत न बनइ खगेस।
बरनहिं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस ॥ १२ (क)॥

हे पक्षिराज गरुड़जी ! वह शोभा, वह समाज और वह सुख मुझसे कहते ...हीं बनता। सरस्वतीजी, शेषजी और वेद निरन्तर उसका वर्णन करते हैं; और ...का रस (आनन्द) महादेवजी ही जानते हैं ॥ १२ (क) ॥

भिन्न भिन्न अस्तुति करि गए सुर निज निज धाम।
बंदी बेष बेद तब आए जहँ श्रीराम ॥ १२ (ख)॥

सब देवता अलग-अलग स्तुति करके अपने-अपने लोकको चले गये। तब ...टोंका रूप धारण करके चारों वेद वहाँ आये जहाँ श्रीरामजी थे ॥ १२ (ख) ॥

प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान।
लखेउ न काहूँ मरम कछु लगे करन गुन गान ॥ १२ (ग)॥

कृपानिधान सर्वज्ञ प्रभुने [उन्हें पहचानकर] उनका बहुत ही आदर किया। ...सका भेद किसीने कुछ भी नहीं जाना। वेद गुणगान करने लगे ॥ १२ (ग) ॥

छं०—जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे ॥

हे सगुण और निर्गुणरूप! हे अनुपम रूप-लावण्ययुक्त! हे राजाओंके शिरो[मणि!] आपकी ज़य हो। आपने रावण आदि प्रचण्ड, प्रबल और दुष्ट निशाचरोंको [अपनी] भुजाओंके बलसे मार डाला। आपने मनुष्य-अवतार लेकर संसारके भारको नष्ट [करके] अत्यन्त कठोर दुःखोंको भस्म कर दिया। हे दयालु! हे शरणागतकी रक्षा करनेवाले [प्रभो!] आपकी जय हो। मैं शक्ति (सीताजी) सहित शक्तिमान् आपको नमस्कार करता हूँ॥

तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुख ते निर्बहे।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥

हे हरे! आपकी दुस्तर मायाके वशीभूत होनेके कारण देवता, राक्षस, [नाग,] मनुष्य और चर, अचर सभी काल, कर्म और गुणोंसे भरे हुए (उनके वशीभूत हु[ए]) दिन-रात अनन्त भव (आवागमन) के मार्गमें भटक रहे हैं। हे नाथ! इनमेंसे जि[नको] आपने कृपा करके (कृपादृष्टिसे) देख लिया, वे [मायाजनित] तीनों प्रकारके दु[ःखोंसे] छूट गये। हे जन्म-मरणके श्रमको काटनेमें कुशल श्रीरामजी! हमारी रक्षा कीजि[ये।] हम आपको नमस्कार करते हैं॥ २॥

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥ ३

जिन्होंने मिथ्या ज्ञानके अभिमानमें विशेषरूपसे मतवाले होकर जन्म-मृत्यु [के] भय] को हरनेवाली आपकी भक्तिका आदर नहीं किया, हे हरि! उन्हें देवदु[र्लभ] (देवताओंको भी बड़ी कठिनतासे प्राप्त होनेवाले, ब्रह्मा आदिके) पदको पाकर [भी] हम उस पदसे नीचे गिरते देखते हैं। [परन्तु] जो सब आशाओंको छोड़कर आ[प]पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं, वे केवल आपका नाम ही जपकर बि[ना] ही परिश्रम भवसागरसे तर जाते हैं। हे नाथ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी ।
नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी ॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे ।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे ॥ ४ ॥

जो चरण शिवजी और ब्रह्माजीके द्वारा पूज्य हैं, तथा जिन चरणोंकी कल्याण-[मयी] रजका स्पर्श पाकर [शिला बनी हुई] गौतमऋषिकी पत्नी अहल्या तर गयी; [जि]न चरणोंके नखसे मुनियोंद्वारा वन्दित, त्रैलोक्यको पवित्र करनेवाली देवनदी गङ्गाजी [नि]कलीं और ध्वजा, वज्र, अङ्कुश और कमल, इन चिह्नोंसे युक्त जिन चरणोंमें [वन]में फिरते समय काँटे चुभ जानेसे घट्ठे पड़ गये हैं; हे मुकुन्द ! हे राम ! हे [रमा]पति ! हम आपके उन्हीं दोनों चरणकमलोंको नित्य भजते रहते हैं ॥ ४ ॥

अव्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।
षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने ॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे ।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे ॥ ५ ॥

वेद-शास्त्रोंने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है; जो [प्रवाह-[रू]पसे] अनादि है; जिसके चार त्वचाएँ, छः तने, पचीस शाखाएँ और अनेकों पत्ते [औ]र बहुत-से फूल हैं; जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकारके फल लगे हैं; जिसपर एक ही [बेल] है, जो उसीके आश्रित रहती है; जिसमें नित्य नये पत्ते और फूल निकलते रहते हैं; [ऐ]से संसारवृक्षस्वरूप (विश्वरूपमें प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं ॥ ५ ॥

जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं ।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं ॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं ।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥ ६ ॥

ब्रह्म अजन्मा है, अद्वैत है, केवल अनुभवसे ही जाना जाता है और मनसे परे है—जो [इस प्रकार कहकर उस] ब्रह्मका ध्यान करते हैं, वे ऐसा कहा करें और जाना करें, किन्तु हे नाथ ! हम तो नित्य आपका सगुण यश ही गाते हैं । हे करुणाके धाम प्रभो ! हे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सद्गुणोंकी खान ! हे देव ! हम यह वर माँगते हैं कि मन, वचन और
विकारोंको त्यागकर आपके चरणोंमें ही प्रेम करें ॥ ६ ॥

दो०—सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार।
अंतर्धान भए पुनि गए ब्रह्म आगार ॥१३(क)॥

वेदोंने सबके देखते यह श्रेष्ठ विनती की। फिर वे अन्तर्धान हो गये
ब्रह्मलोकको चले गये ॥ १३ (क) ॥

बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर।
बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर ॥ १३(ख)॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़जी ! सुनिये, तब शिवजी वहाँ आये जहाँ
रघुवीर थे और गद्गद वाणीसे स्तुति करने लगे। उनका शरीर पुलकावलीसे पूर्ण हो गया

छं०—जय राम रमारमनं समनं। भव ताप भयाकुल पाहि जनं
अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो

हे राम ! हे रमारमण (लक्ष्मीकान्त) ! हे जन्म-मरणके संतापका नाश
करनेवाले ! आपकी जय हो; आवागमनके भयसे व्याकुल इस सेवककी रक्षा कीजिये।
हे अवधपति ! हे देवताओंके स्वामी ! हे रमापति ! हे विभो ! मैं शरणागत आपसे
यही माँगता हूँ कि हे प्रभो ! मेरी रक्षा कीजिये ॥ १ ॥

दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा
रजनीचर बृंद पतंग रहे। सर पावक तेज प्रचंड दहे

हे दस सिर और बीस भुजाओंवाले रावणका विनाश करके पृथ्वीके सब महान्
रोगों (कष्टों) को दूर करनेवाले श्रीरामजी ! राक्षससमूहरूपी जो पतंगे थे, वे
आपके बाणरूपी अग्निके प्रचण्ड तेजसे भस्म हो गये ॥ २ ॥

महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग बरं
मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेज अनी

आप पृथ्वी-मण्डलके अत्यन्त सुन्दर आभूषण हैं; आप श्रेष्ठ बाण, धनुष और
तरकस धारण किये हुए हैं। महान् मद, मोह और ममतारूपी रात्रिके अन्धकार
समूहके नाश करनेके लिये आप सूर्यके तेजोमय किरणसमूह हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मनजात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे। बिषया बन पावँर भूलि परे॥

कामदेवरूपी भीलने मनुष्यरूपी हिरनोंके हृदयमें कुभोगरूपी बाण मारकर उन्हें मार दिया है। हे नाथ! हे [पाप-तापका हरण करनेवाले] हरे! उसे मारकर विषयरूपी वनमें भूले पड़े हुए इन पामर अनाथ जीवोंकी रक्षा कीजिये॥ ४॥

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥
भव सिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते॥

लोग बहुत-से रोगों और वियोगों (दुःखों) से मारे हुए हैं। ये सब आपके चरणोंके निरादरके फल हैं। जो मनुष्य आपके चरणकमलोंमें प्रेम नहीं करते, वे अथाह भवसागरमें पड़े हैं॥ ५॥

अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं॥
अवलंब भवंत कथा जिन्ह कें। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें॥

जिन्हें आपके चरणकमलोंमें प्रीति नहीं है वे नित्य ही अत्यन्त दीन, मलिन (उदास) और दुखी रहते हैं। और जिन्हें आपकी लीला-कथाका आधार है, उनको संत और भगवान् सदा प्रिय लगने लगते हैं॥ ६॥

नहिं राग न लोभ न मान मदा। तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा॥
एहि ते तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा॥

उनमें न राग (आसक्ति) है, न लोभ; न मान है, न मद। उनको सम्पत्ति (सुख) और विपत्ति (दुःख) समान है। इसीसे मुनिलोग योग (साधन) का भरोसा सदाके लिये त्याग देते हैं और प्रसन्नताके साथ आपके सेवक बन जाते हैं॥ ७॥

करि प्रेम निरंतर नेम लिएँ। पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ॥
सम मानि निरादर आदरही। सब संत सुखी बिचरंति मही॥

वे प्रेमपूर्वक नियम लेकर निरन्तर शुद्ध हृदयसे आपके चरणकमलोंकी सेवा करते रहते हैं। और निरादर और आदरको समान मानकर वे सब संत सुखी होकर पृथ्वीपर विचरते हैं॥ ८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुनि मानस पंकज भृंग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे॥
तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी॥

हे मुनियोंके मनरूपी कमलके भ्रमर! हे महान् रणधीर एवं अजेय श्रीरघुवीर! मैं आपको भजता हूँ (आपकी शरण ग्रहण करता हूँ)। हे हरि! आपका नाम जपता हूँ और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म-मरणरूपी रोगकी महान् औषध और अभिमानके शत्रु हैं॥ ९॥

गुन सील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं॥
रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं॥

आप गुण, शील और कृपाके परम स्थान हैं। आप लक्ष्मीपति हैं, मैं आपको निरन्तर प्रणाम करता हूँ। हे रघुनन्दन! [आप जन्म-मरण, सुख-दुःख, राग-द्वेषादि] द्वन्द्वसमूहोंका नाश कीजिये। हे पृथ्वीकी पालना करनेवाले राजन्! इस दीन जनकी ओर भी दृष्टि डालिये॥

दो०—बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥ १४(क)॥

मैं आपसे बार-बार यही वरदान माँगता हूँ कि मुझे आपके चरणकमलोंकी अचल भक्ति और आपके भक्तोंका सत्सङ्ग सदा प्राप्त हो। हे लक्ष्मीपते! हर्षित होकर मुझे यही दीजिये॥

बरनि उमापति राम गुन हरषि गए कैलास।
तब प्रभु कपिन्ह दिवाए सब बिधि सुखप्रद बास॥ १४(ख)॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करके उमापति महादेवजी हर्षित होकर कैलासको चले गये। तब प्रभुने वानरोंको सब प्रकारसे सुख देनेवाले डेरे दिलवाये॥ १४ (ख)॥

चौ०—सुनु खगपति यह कथा पावनी। त्रिबिध ताप भव भय दावनी॥
महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिबेका॥

हे गरुड़जी! सुनिये, यह कथा [सबको] पवित्र करनेवाली है, [दैहिक, दैविक, भौतिक] तीनों प्रकारके तापोंका और जन्म-मृत्युके भयका नाश करनेवाली है। महाराज श्रीरामचन्द्रजीके कल्याणमय राज्याभिषेकका चरित्र [निष्काम भावसे] सुनकर मनुष्य वैराग्य और ज्ञान प्राप्त करते हैं॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं । सुख संपति नाना बिधि पावहिं ॥
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं । अंतकाल रघुपति पुर जाहीं ॥

और जो मनुष्य सकामभावसे सुनते और जो गाते हैं, वे अनेकों प्रकारके सुख और सम्पत्ति पाते हैं। वे जगत्‌में देवदुर्लभ सुखोंको भोगकर अन्तकालमें श्रीरघुनाथजीके परमधामको जाते हैं ॥ २ ॥

सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई । लहहिं भगति गति संपति नई ॥
खगपति राम कथा मैं बरनी । स्वमति बिलास त्रास दुख हरनी ॥

इसे जो जीवन्मुक्त, विरक्त और विषयी सुनते हैं, वे [क्रमशः] भक्ति, मुक्ति और नवीन सम्पत्ति (नित्य नये भोग) पाते हैं। हे पक्षिराज गरुड़जी ! मैंने अपनी बुद्धिकी पहुँचके अनुसार रामकथा वर्णन की है, जो [जन्म-मरणके] भय और दुःखको हरनेवाली है ॥ ३ ॥

बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी । मोह नदी कहँ सुंदर तरनी ॥
नित नव मंगल कौसलपुरी । हरषित रहहिं लोग सब कुरी ॥

यह वैराग्य, विवेक और भक्तिको दृढ़ करनेवाली है तथा मोहरूपी नदीके [पार करनेके] लिये सुन्दर नाव है। अवधपुरीमें नित-नये मङ्गलोत्सव होते हैं। सभी वर्गोंके लोग हर्षित रहते हैं ॥ ४ ॥

नित नइ प्रीति राम पद पंकज । सब कें जिन्हहि नमत सिव मुनि अज ॥
मंगन बहु प्रकार पहिराए । द्विजन्ह दान नाना बिधि पाए ॥

श्रीरामजीके चरणकमलोंमें—जिन्हें श्रीशिवजी, मुनिगण और ब्रह्माजी भी नमस्कार करते हैं—सबकी नित्य नवीन प्रीति है। भिक्षुकोंको बहुत प्रकारके वस्त्राभूषण पहनाये गये और ब्राह्मणोंने नाना प्रकारके दान पाये ॥ ५ ॥

दो०—ब्रह्मानंद मगन कपि सब कें प्रभु पद प्रीति ।
जात न जाने दिवस तिन्ह गए मास षट बीति ॥ १५ ॥

वानर सब ब्रह्मानन्दमें मग्न हैं। प्रभुके चरणोंमें सबका प्रेम है ! उन्होंने दिन जाते जाने ही नहीं और [बात-की-बातमें] छः महीने बीत गये ॥ १५ ॥

चौ०—बिसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाहीं । जिमि परद्रोह संत मन माहीं ॥
तब रघुपति सब सखा बोलाए । आइ सबन्हि सादर सिरु नाए ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उन लोगोंको अपने घर भूल ही गये । [जाग्रत्की तो बात ही क्या] स्वप्नमें भी घरकी सुध (याद) नहीं आती, जैसे संतोंके मनमें दूसरोंसे द्रोह करने की बात कभी नहीं आती । तब श्रीरघुनाथजीने सब सखाओंको बुलाया । सबने आकर आदरसहित सिर नवाया ॥ १ ॥

परम प्रीति समीप बैठारे । भगत सुखद मृदु बचन उचारे ॥
तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई । मुख पर केहि बिधि करौं बड़ाई ॥

बड़े ही प्रेमसे श्रीरामजीने उनको अपने पास बैठाया और भक्तोंको सुख देनेवाले कोमल वचन कहे—तुमलोगोंने मेरी बड़ी सेवा की है । मुँहपर किस प्रकार तुम्हारी बड़ाई करूँ ? ॥ २ ॥

ताते मोहि तुम्ह अति प्रिय लागे । मम हित लागि भवन सुख त्यागे ॥
अनुज राज संपति बैदेही । देह गेह परिवार सनेही ॥

मेरे हितके लिये तुमलोगोंने घरोंको तथा सब प्रकारके सुखोंको त्याग दिया । इससे तुम मुझे अत्यन्त ही प्रिय लग रहे हो । छोटे भाई, राज्य, सम्पत्ति, जानकी, अपना शरीर, घर, कुटुम्ब और मित्र—॥ ३ ॥

सब मम प्रिय नहिं तुम्हहि समाना । मृषा न कहउँ मोर यह बाना ॥
सब कें प्रिय सेवक यह नीती । मोरें अधिक दास पर प्रीती ॥

ये सभी मुझे प्रिय हैं, परन्तु तुम्हारे समान नहीं ! मैं झूठ नहीं कहता, यह मेरा स्वभाव है । सेवक सभीको प्यारे लगते हैं, यह नीति (नियम) है । [पर] मेरा तो दासपर [स्वाभाविक ही] विशेष प्रेम है ॥ ४ ॥

दो०—अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम ।
सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम ॥ १६ ॥

हे सखागण ! अब सब लोग घर जाओ; वहाँ दृढ़ नियमसे मुझे भजते रहना । मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका हित करनेवाला जानकर अत्यन्त प्रेम करना ॥ १६ ॥

चौ०—सुनि प्रभु बचन मगन सब भए । को हम कहाँ बिसरि तन गए ॥
एकटक रहे जोरि कर आगे । सकहिं न कछु कहि अति अनुरागे ॥

प्रभुके वचन सुनकर सब-के-सब प्रेममग्न हो गये । हम कौन हैं और कहाँ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और देहकी सुध भी भूल गयी। वे प्रभुके सामने हाथ जोड़कर टकटकी लगाये देखते रह गये। अत्यन्त प्रेमके कारण कुछ कह नहीं सकते ॥ १ ॥

परम प्रेम तिन्ह कर प्रभु देखा। कहा बिबिधि बिधि ग्यान बिसेषा ॥
प्रभु सन्मुख कछु कहन न पारहिं। पुनि पुनि चरन सरोज निहारहिं ॥

प्रभुने उनका अत्यन्त प्रेम देखा, [तब] उन्हें अनेकों प्रकारसे विशेष ज्ञानका उपदेश दिया। प्रभुके सम्मुख वे कुछ कह नहीं सकते। बार-बार प्रभुके चरणकमलोंको देखते हैं ॥ २ ॥

तब प्रभु भूषन बसन मगाए। नाना रंग अनूप सुहाए ॥
सुग्रीवहि प्रथमहिं पहिराए। बसन भरत निज हाथ बनाए ॥

तब प्रभुने अनेक रंगोंके अनुपम और सुन्दर गहने-कपड़े मँगवाये। सबसे पहले भरतजीने अपने हाथसे सँवारकर सुग्रीवको वस्त्राभूषण पहनाये ॥ ३ ॥

प्रभु प्रेरित लछिमन पहिराए। लंकापति रघुपति मन भाए ॥
अंगद बैठ रहा नहिं डोला। प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोला ॥

फिर प्रभुकी प्रेरणासे लक्ष्मणजीने विभीषणजीको गहने-कपड़े पहनाये, जो रघुनाथजीके मनको बहुत ही अच्छे लगे। अंगद बैठे ही रहे, वे अपनी जगहसे हिलेतक नहीं। उनका उत्कट प्रेम देखकर प्रभुने उनको नहीं बुलाया ॥ ४ ॥

दो०—जामवंत नीलादि सब पहिराए रघुनाथ।
हियँ धरि राम रूप सब चले नाइ पद माथ ॥१७ (क)॥

जाम्बवान् और नील आदि सबको श्रीरघुनाथजीने स्वयं भूषण-वस्त्र पहनाये। वे सब अपने हृदयोंमें श्रीरामचन्द्रजीके रूपको धारण करके उनके चरणोंमें मस्तक नवाकर चले ॥ १७ (क)॥

तब अंगद उठि नाइ सिरु सजल नयन कर जोरि।
अति बिनीत बोलेउ बचन मनहुँ प्रेम रस बोरि ॥१७ (ख)॥

तब अंगद उठकर सिर नवाकर, नेत्रोंमें जल भरकर और हाथ जोड़कर अत्यन्त विनम्र तथा मानो प्रेमके रसमें डुबोये हुए (मधुर) वचन बोले ॥ १७ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०–सुनु सर्बग्य कृपा सुख सिंधो। दीन दयाकर आरत
मरती बेर नाथ मोहि बाली। गयउ तुम्हारेहि कोंछें

हे सर्वज्ञ! हे कृपा और सुखके समुद्र! हे दीनोंपर दया करनेवाले! हे आ
के बन्धु! सुनिये। हे नाथ! मरते समय मेरा पिता बालि मुझे आपकी ही गो
डाल गया था॥ १॥

असरन सरन बिरदु संभारी। मोहि जनि तजहु भगत हितकारी
मोरें तुम्ह प्रभु गुर पितु माता। जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता

अतः हे भक्तोंके हितकारी! अपना अशरण-शरण विरद (बाना) याद करके
त्यागिये नहीं। मेरे तो स्वामी, गुरु, पिता और माता, सब कुछ आप ही हैं। आ
चरणकमलोंको छोड़कर मैं कहाँ जाऊँ?॥ २॥

तुम्हहि बिचारि कहहु नरनाहा। प्रभु तजि भवन काज मम काहा
बालक ग्यान बुद्धि बल हीना। राखहु सरन नाथ जन दीना

हे महाराज! आप ही विचारकर कहिये, प्रभु (आप) को छोड़कर घरमें
क्या काम है? हे नाथ! इस ज्ञान, बुद्धि और बलसे हीन बालक तथा दीन सेव
शरणमें रखिये॥ ३॥

नीचि टहल गृह कै सब करिहउँ। पद पंकज बिलोकि भव तरिहउँ
अस कहि चरन परेउ प्रभु पाही। अब जनि नाथ कहहु गृह जाही

मैं घरकी सब नीची-से-नीची सेवा करूँगा और आपके चरण-कमलोंको
देखकर भवसागरसे तर जाऊँगा। ऐसा कहकर वे श्रीरामजीके चरणोंमें गिर पड़े [
बोले—] हे प्रभो! मेरी रक्षा कीजिये। हे नाथ! अब यह न कहिये कि तू घर जा॥ ४

दो०–अंगद बचन बिनीत सुनि रघुपति करुना सींव।
प्रभु उठाइ उर लायउ सजल नयन राजीव॥ १८ (क)

अंगदके विनम्र वचन सुनकर करुणाकी सीमा प्रभु श्रीरघुनाथजीने उनको उ
कर हृदयसे लगा लिया। प्रभुके नेत्रकमलोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया॥ १८ (क)

निज उर माल बसन मनि बालितनय पहिराइ।
बिदा कीन्हि भगवान तब बहु प्रकार समुझाइ॥ १८ (ख)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब भगवान्‌ने अपने हृदयकी माला, वस्त्र और मणि (रत्नोंके आभूषण) बालि-पुत्र अंगदको पहनाकर और बहुत प्रकारसे समझाकर उनकी विदाई की ॥ १८ (ख)॥

चौ०-भरत अनुज सौमित्रि समेता। पठवन चले भगत कृत चेता ॥
अंगद हृदयँ प्रेम नहिं थोरा। फिरि फिरि चितव राम कीं ओरा ॥

भक्तकी करनीको याद करके भरतजी छोटे भाई शत्रुघ्नजी और लक्ष्मणजीसहित उनको पहुँचाने चले। अंगदके हृदयमें थोड़ा प्रेम नहीं है (अर्थात् बहुत अधिक प्रेम है)। वे फिर-फिरकर श्रीरामजीकी ओर देखते हैं, ॥ १ ॥

बार बार कर दंड प्रनामा। मन अस रहन कहहिं मोहि रामा ॥
राम बिलोकनि बोलनि चलनी। सुमिरि सुमिरि सोचत हँसि मिलनी ॥

और बार-बार दण्डवत्-प्रणाम करते हैं। मनमें ऐसा आता है कि श्रीरामजी मुझे रहनेको कह दें। वे श्रीरामजीके देखनेकी, बोलनेकी, चलनेकी तथा हँसकर मिलनेकी रीतिको याद कर-करके सोचते हैं (दुखी होते हैं) ॥ २ ॥

प्रभु रुख देखि बिनय बहु भाषी। चलेउ हृदयँ पद पंकज राखी ॥
अति आदर सब कपि पहुँचाए। भाइन्ह सहित भरत पुनि आए ॥

किन्तु प्रभुका रुख देखकर, बहुत-से विनय-वचन कहकर तथा हृदयमें चरण-कमलोंको रखकर वे चले। अत्यन्त आदरके साथ सब वानरोंको पहुँचाकर भाइयों-सहित भरतजी लौट आये ॥ ३ ॥

तब सुग्रीव चरन गहि नाना। भाँति बिनय कीन्हे हनुमाना ॥
दिन दस करि रघुपति पद सेवा। पुनि तव चरन देखिहउँ देवा ॥

तब हनुमान्‌जीने सुग्रीवके चरण पकड़कर अनेक प्रकारसे विनती की और कहा—हे देव ! दस (कुछ) दिन श्रीरघुनाथजीकी चरणसेवा करके फिर मैं आकर आपके चरणोंके दर्शन करूँगा ॥ ४ ॥

पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा। सेवहु जाइ कृपा आगारा ॥
अस कहि कपि सब चले तुरंता। अंगद कहइ सुनहु हनुमंता ॥

[सुग्रीवने कहा—] हे पवनकुमार ! तुम पुण्यकी राशि हो [जो भगवान्‌ने तुमको अपनी सेवामें रख लिया]। जाकर कृपाधाम श्रीरामजीकी सेवा करो। सब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वानर ऐसा कहकर तुरंत चल पड़े। अंगदने कहा—हे हनुमान्! सुनो—॥ ५॥

दो०—कहेहु दंडवत प्रभु सैं तुम्हहि कहउँ कर जोरि।
बार बार रघुनायकहि सुरति कराएहु मोरि॥ १९ (क)॥

मैं तुमसे हाथ जोड़कर कहता हूँ, प्रभुसे मेरी दण्डवत् कहना और श्रीरघुनाथजीको बार-बार मेरी याद कराते रहना॥ १९ (क)॥

अस कहि चलेउ बालिसुत फिरि आयउ हनुमंत।
तासु प्रीति प्रभु सन कही मगन भए भगवंत॥ १९ (ख)॥

ऐसा कहकर बालिपुत्र अंगद चले; तब हनुमान्जी लौट आये और आकर प्रभुसे उनका प्रेम वर्णन किया। उसे सुनकर भगवान् प्रेममग्न हो गये॥ १९ (ख)॥

कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि।
चित्त खगेस राम कर समुझि परइ कहु काहि॥ १९ (ग)॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे गरुड़जी! श्रीरामजीका चित्त वज्रसे भी अत्यन्त कठोर और फूलसे भी अत्यन्त कोमल है। तब कहिये, वह किसकी समझमें आ सकता है?॥ १९ (ग)॥

चौ०—पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा। दीन्हे भूषन बसन प्रसादा॥
जाहु भवन मम सुमिरन करेहू। मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू॥

फिर कृपालु श्रीरामजीने निषादराजको बुला लिया और उसे भूषण, वस्त्र प्रसादमें दिये। [फिर कहा—] अब तुम भी घर जाओ, वहाँ मेरा स्मरण करते रहना और मन, वचन तथा कर्मसे धर्मके अनुसार चलना॥ १॥

तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता। सदा रहेहु पुर आवत जाता॥
बचन सुनत उपजा सुख भारी। परेउ चरन भरि लोचन बारी॥

तुम मेरे मित्र हो और भरतके समान भाई हो। अयोध्यामें सदा आते-जाते रहना। यह वचन सुनते ही उसको भारी सुख उत्पन्न हुआ। नेत्रोंमें [आनन्द और प्रेमके आँसुओंका] जल भरकर वह चरणोंमें गिर पड़ा॥ २॥

चरन नलिन उर धरि गृह आवा। प्रभु सुभाउ परिजनन्हि सुनावा॥
रघुपति चरित देखि पुरबासी। पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फिर भगवान्‌के चरणकमलोंको हृदयमें रखकर वह घर आया और आकर अपने कुटुम्बियोंको उसने प्रभुका स्वभाव सुनाया। श्रीरघुनाथजीका यह चरित्र देखकर अवधवासी बार-बार कहते हैं कि सुखकी राशि श्रीरामचन्द्रजी धन्य हैं ॥ ३ ॥

राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका ॥
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके राज्यपर प्रतिष्ठित होनेपर तीनों लोक हर्षित हो गये, उनके सारे शोक जाते रहे। कोई किसीसे वैर नहीं करता। श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे सबकी विषमता (आन्तरिक भेदभाव) मिट गयी ॥ ४ ॥

दो०—बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग ॥ २० ॥

सब लोग अपने-अपने वर्ण और आश्रमके अनुकूल धर्ममें तत्पर हुए सदा वेदमार्गपर चलते हैं और सुख पाते हैं। उन्हें न किसी बातका भय है, न शोक है और न कोई रोग ही सताता है ॥ २० ॥

चौ०—दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा ॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ॥

'राम-राज्य' में दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसीको नहीं व्यापते। सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं और वेदोंमें बतायी हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने-अपने धर्मका पालन करते हैं ॥ १ ॥

चारिउ चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं ॥
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी ॥

धर्म अपने चारों चरणों (सत्य, शौच, दया और दान) से जगत्‌में परिपूर्ण हो रहा है, स्वप्नमें भी कहीं पाप नहीं है। पुरुष और स्त्री सभी रामभक्तिके परायण हैं और सभी परमगति (मोक्ष) के अधिकारी हैं ॥ २ ॥

अल्पमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा ॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना ॥

छोटी अवस्थामें मृत्यु नहीं होती, न किसीको कोई पीड़ा होती है। सभीके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शरीर सुन्दर और नीरोग हैं। न कोई दरिद्र है, न दुखी है और न दीन ही है।
न कोई मूर्ख है और न शुभ लक्षणोंसे हीन ही है॥ ३॥

सब निर्दंभ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी॥

सभी दम्भरहित हैं, धर्मपरायण हैं और पुण्यात्मा हैं। पुरुष और स्त्री सभी चतुर और गुणवान् हैं। सभी गुणोंका आदर करनेवाले और पण्डित हैं तथा सभी ज्ञानी हैं। सभी कृतज्ञ (दूसरेके किये हुए उपकारको माननेवाले) हैं, कपटभरी चतुराई (धूर्तता) किसीमें नहीं है॥ ४॥

दो०—राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं॥ २१॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे पक्षिराज गरुड़जी! सुनिये। श्रीरामजीके राज्यमें जड़, चेतन सारे जगत्में काल, कर्म, स्वभाव और गुणोंसे उत्पन्न हुए दुःख किसीको भी नहीं होते (अर्थात् इनके बन्धनमें कोई नहीं है)॥ २१॥

चौ०—भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला॥
भुअन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥

अयोध्यामें श्रीरघुनाथजी सात समुद्रोंकी मेखला (करधनी) वाली पृथ्वीके एकमात्र राजा हैं। जिनके एक-एक रोममें अनेकों ब्रह्माण्ड हैं, उनके लिये सात द्वीपोंकी यह प्रभुता कुछ अधिक नहीं है॥ १॥

सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी॥
सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरि एहिं चरित तिन्हहुँ रति मानी॥

बल्कि प्रभुकी उस महिमाको समझ लेनेपर तो यह कहनेमें [कि वे सात समुद्रोंसे घिरी हुई सप्तद्वीपमयी पृथ्वीके एकच्छत्र सम्राट् हैं] उनकी बड़ी हीनता होती है। परन्तु हे गरुड़जी! जिन्होंने वह महिमा जान भी ली है, वे भी फिर इस लीलामें बड़ा प्रेम मानते हैं॥ २॥

सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहिं महा मुनिबर दमसीला॥
राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा॥

क्योंकि उस महिमाको भी जाननेका फल यह लीला (इस लीलाका अनुभव)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है, इन्द्रियोंका दमन करनेवाले श्रेष्ठ महामुनि ऐसा कहते हैं। रामराज्यकी सुख-सम्पत्तिका वर्णन शेषजी और सरस्वतीजी भी नहीं कर सकते॥ ३॥

सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी॥
एकनारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥

सभी नर-नारी उदार हैं, सभी परोपकारी हैं और सभी ब्राह्मणोंके चरणोंके सेवक हैं। सभी पुरुषमात्र एकपत्नीव्रती हैं। इसी प्रकार स्त्रियाँ भी मन, वचन और कर्मसे पतिका हित करनेवाली हैं॥ ४॥

दो०—दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस रामचंद्र कें राज॥ २२॥

श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें दण्ड केवल संन्यासियोंके हाथोंमें है और भेद नाचनेवालोंके नृत्यसमाजमें है और 'जीतो' शब्द केवल मनके जीतनेके लिये ही सुनायी पड़ता है (अर्थात् राजनीतिमें शत्रुओंको जीतने तथा चोर-डाकुओं आदिको दमन करनेके लिये साम, दान, दण्ड और भेद—ये चार उपाय किये जाते हैं। रामराज्यमें कोई शत्रु है ही नहीं, इसलिये 'जीतो' शब्द केवल मनके जीतनेके लिये ही कहा जाता है। कोई अपराध करता ही नहीं, इसलिये दण्ड किसीको नहीं होता; 'दण्ड' शब्द केवल संन्यासियोंके हाथमें रहनेवाले दण्डके लिये ही रह गया है। तथा सभी अनुकूल होनेके कारण भेदनीतिकी आवश्यकता ही नहीं रह गयी; 'भेद' शब्द केवल सुर-तालके भेदके लिये ही कामोंमें आता है।)॥ २२॥

चौ०—फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन॥
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥

वनोंमें वृक्ष सदा फूलते और फलते हैं। हाथी और सिंह [वैर भूलकर] एक साथ रहते हैं। पक्षी और पशु सभीने स्वाभाविक वैर भुलाकर आपसमें प्रेम बढ़ा लिया है॥ १॥

कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा॥

पक्षी कूजते (मीठी बोली बोलते) हैं, भाँति-भाँतिके पशुओंके समूह वनमें निर्भय विचरते और आनन्द करते हैं। शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चलता रहता है। भौंरे पुष्पोंका रस लेकर चलते हुए गुंजार करते जाते हैं॥ २॥

लता बिटप मागें मधु चवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥

बेलें और वृक्ष माँगनेसे ही मधु (मकरन्द) टपका देते हैं। गौएँ मनचाहा दूध देती हैं। धरती सदा खेतीसे भरी रहती है। त्रेतामें सत्ययुगकी करनी (स्थिति) हो गयी॥ ३॥

प्रगटीं गिरिन्ह बिबिधि मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी॥

समस्त जगत्‌के आत्मा भगवान्‌को जगत्‌का राजा जानकर पर्वतोंने अनेक प्रकारकी मणियोंकी खानें प्रकट कर दीं। सब नदियाँ श्रेष्ठ, शीतल, निर्मल और सुखप्रद स्वादिष्ट जल बहने लगीं॥ ४॥

सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं॥
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा॥

समुद्र अपनी मर्यादामें रहते हैं। वे लहरोंके द्वारा किनारोंपर रत्न डाल देते हैं, जिन्हें मनुष्य पा जाते हैं। सब तालाब कमलोंसे परिपूर्ण हैं। दसों दिशाओंके विभाग (अर्थात् सभी प्रदेश) अत्यन्त प्रसन्न हैं॥ ५॥

दो०—बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र कें राज॥ २३॥

श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें चन्द्रमा अपनी [अमृतमयी] किरणोंसे पृथ्वीको पूर्ण कर देते हैं। सूर्य उतना ही तपते हैं जितनेकी आवश्यकता होती है और मेघ माँगनेसे [जब जहाँ जितना चाहिये उतना ही] जल देते हैं॥ २३॥

चौ०—कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे। दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे॥
श्रुति पथ पालक धर्म धुरंधर। गुनातीत अरु भोग पुरंदर॥

प्रभु श्रीरामजीने करोड़ों अश्वमेध यज्ञ किये और ब्राह्मणोंको अनेकों दान दिये। श्रीरामचन्द्रजी वेदमार्गके पालनेवाले, धर्मकी धुरीको धारण करनेवाले, [प्रकृतिजन्य सत्त्व, रज और तम] तीनों गुणोंसे अतीत और भोगों (ऐश्वर्य) में इन्द्रके समान हैं॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पति अनुकूल सदा रह सीता। सोभा खानि सुसील बिनीता॥
जानति कृपासिंधु प्रभुताई। सेवति चरन कमल मन लाई॥

शोभाकी खान, सुशील और विनम्र सीताजी सदा पतिके अनुकूल रहती हैं। कृपासागर श्रीरामजीकी प्रभुता (महिमा) को जानती हैं और मन लगाकर चरणकमलोंकी सेवा करती हैं॥ २॥

जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी। बिपुल सदा सेवा बिधि गुनी॥
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई॥

यद्यपि घरमें बहुत-से (अपार) दास और दासियाँ हैं और वे सभी सेवाकी विधि- कुशल हैं, तथापि [स्वामीकी सेवाका महत्त्व जाननेवाली] श्रीसीताजी घरकी सब अपने ही हाथोंसे करती हैं और श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाका अनुसरण करती हैं॥ ३॥

जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानइ। सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ॥
कौसल्यादि सासु गृह माहीं। सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं॥

कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी जिस प्रकारसे सुख मानते हैं, श्रीजी वही करती हैं; कि वे सेवाकी विधिको जाननेवाली हैं। घरमें कौसल्या आदि सभी सासुओंकी सीता- सेवा करती हैं, उन्हें किसी बातका अभिमान और मद नहीं है॥ ४॥

उमा रमा ब्रह्मादि बंदिता। जगदंबा संततमनिंदिता॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! जगज्जननी रमा (सीताजी) ब्रह्मा आदि ताओंसे वन्दित और सदा अनिन्दित (सर्वगुणसम्पन्न) हैं॥ ५॥

दो०—जासु कृपा कटाच्छु सुर चाहत चितव न सोइ।
राम पदारबिंद रति करति सुभावहि खोइ॥ २४॥

देवता जिनका कृपाकटाक्ष चाहते हैं, परन्तु वे उनकी ओर देखतीं भी नहीं, ही लक्ष्मीजी (जानकीजी) अपने [महामहिम] स्वभावको छोड़कर श्रीरामचन्द्र- के चरणारविन्दमें प्रीति करती हैं॥ २४॥

चौ०—सेवहिं सानकूल सब भाई। राम चरन रति अति अधिकाई॥
प्रभु मुख कमल बिलोकत रहहीं। कबहुँ कृपाल हमहि कछु कहहीं॥

सब भाई अनुकूल रहकर उनकी सेवा करते हैं। श्रीरामजीके चरणोंमें उनकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अत्यन्त अधिक प्रीति है। वे सदा प्रभुका मुखारविन्द ही देखते रहते हैं कि श्रीरामजी कभी हमें कुछ सेवा करनेको कहें ॥ १ ॥

राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती। नाना भाँति सिखावहिं नीती॥
हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा॥

श्रीरामचन्द्रजी भी भाइयोंपर प्रेम करते हैं और उन्हें नाना प्रकारकी नीतियाँ सिखलाते हैं। नगरके लोग हर्षित रहते हैं और सब प्रकारके देवदुर्लभ (देवताओंको भी कठिनतासे प्राप्त होने योग्य) भोग भोगते हैं ॥ २ ॥

अहनिसि बिधिहि मनावत रहहीं। श्रीरघुबीर चरन रति चहहीं॥
दुइ सुत सुंदर सीताँ जाए। लव कुस बेद पुरानन्ह गाए॥

वे दिन-रात ब्रह्माजीको मनाते रहते हैं और [उनसे] श्रीरघुवीरके चरणोंमें [प्रीति] चाहते हैं। सीताजीके लव और कुश—ये दो पुत्र उत्पन्न हुए, जिनका वेद-पुराणोंने वर्णन किया है ॥ ३ ॥

दोउ बिजई बिनई गुन मंदिर। हरि प्रतिबिंब मनहुँ अति सुंदर॥
दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्ह केरे। भए रूप गुन सील घनेरे॥

वे दोनों ही विजयी (विख्यात योद्धा), नम्र और गुणोंके धाम हैं और अत्यन्त सुन्दर हैं, मानो श्रीहरिके प्रतिबिम्ब ही हों। दो-दो पुत्र सभी भाइयोंके हुए, जो बड़े ही सुन्दर, गुणवान् और सुशील थे ॥ ४ ॥

दो०—ग्यान गिरा गोतीत अज माया मन गुन पार।
सोइ सच्चिदानंद घन कर नर चरित उदार ॥ २५॥

जो [बौद्धिक] ज्ञान, वाणी और इन्द्रियोंसे परे और अजन्मा हैं तथा माया, मन और गुणोंके परे हैं, वही सच्चिदानन्दघन भगवान् श्रेष्ठ नरलीला करते हैं ॥ २५ ॥

चौ०—प्रातकाल सरऊ करि मज्जन। बैठहिं सभाँ संग द्विज सज्जन॥
बेद पुरान बसिष्ट बखानहिं। सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं॥

प्रातःकाल सरयूजीमें स्नान करके ब्राह्मणों और सज्जनोंके साथ सभामें बैठते हैं। वशिष्ठजी वेद और पुराणोंकी कथाएँ वर्णन करते हैं और श्रीरामजी सुनते हैं, यद्यपि वे सब जानते हैं ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननीं सुख भरहीं॥
भरत सत्रुहन दोनउ भाई। सहित पवनसुत उपबन जाई॥

वे भाइयोंको साथ लेकर भोजन करते हैं। उन्हें देखकर सभी माताएँ आनन्दसे [भर] जाती हैं। भरतजी और शत्रुघ्नजी दोनों भाई हनुमान्‌जीसहित उपवनोंमें जाकर, ॥२॥

बूझहिं बैठि राम गुन गाहा। कह हनुमान सुमति अवगाहा॥
सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं। बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं॥

वहाँ बैठकर श्रीरामजीके गुणोंकी कथाएँ पूछते हैं और हनुमान्‌जी अपनी [सुन्दर] बुद्धिसे उन गुणोंमें गोता लगाकर उनका वर्णन करते हैं। श्रीरामचन्द्रजीके [निर्मल] गुणोंको सुनकर दोनों भाई अत्यन्त सुख पाते हैं और विनय करके बार-बार [कह]लवाते हैं॥३॥

सब कें गृह गृह होहिं पुराना। राम चरित पावन बिधि नाना॥
नर अरु नारि राम गुन गानहिं। करहिं दिवस निसि जात न जानहिं॥

सबके यहाँ घर-घरमें पुराणों और अनेक प्रकारके पवित्र रामचरित्रोंकी कथा [होती] है। पुरुष और स्त्री सभी श्रीरामचन्द्रजीका गुणगान करते हैं और इस [आन]न्दमें दिन-रातका बीतना भी नहीं जान पाते॥४॥

दो०—अवधपुरी बासिन्ह कर सुख संपदा समाज।
सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज॥२६॥

जहाँ भगवान् श्रीरामचन्द्रजी स्वयं राजा होकर विराजमान हैं, उस अवधपुरीके [नि]वासियोंके सुख-सम्पत्तिके समुदायका वर्णन हजारों शेषजी भी नहीं कर सकते॥२६॥

[चौ०]—नारदादि सनकादि मुनीसा। दरसन लागि कोसलाधीसा॥
दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं। देखि नगरु बिरागु बिसरावहिं॥

नारद आदि और सनक आदि मुनीश्वर सब कोसलराज श्रीरामजीके दर्शनके लिये [प्र]तिदिन अयोध्या आते हैं और उस [दिव्य] नगरको देखकर वैराग्य भुला देते हैं॥१॥

जातरूप मनि रचित अटारीं। नाना रंग रुचिर गच ढारीं॥
पुर चहुँ पास कोट अति सुंदर। रचे कँगूरा रंग रंग बर॥

[दिव्य] स्वर्ण और रत्नोंसे बनी हुई अटारियाँ हैं। उनमें [मणि-रत्नोंकी]

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेक रंगोंकी सुन्दर ढली हुई फर्शें हैं। नगरके चारों ओर अत्यन्त सुन्दर परकोटा बना है, जिसपर सुन्दर रंग-बिरंगे कँगूरे बने हैं ॥ २ ॥

नव ग्रह निकर अनीक बनाई। जनु घेरी अमरावति आ
महि बहु रंग रचित गच काँचा। जो बिलोकि मुनिबर मन नाच

मानो नवग्रहोंने बड़ी भारी सेना बनाकर अमरावतीको आकर घेर लिया पृथ्वी (सड़कों) पर अनेकों रंगोंके (दिव्य) काँचों (रत्नों) की गच बनायी (गयी है, जिसे देखकर श्रेष्ठ मुनियोंके भी मन नाच उठते हैं ॥ ३ ॥

धवल धाम ऊपर नभ चुंबत। कलस मनहुँ रबि ससि दुति नि
बहु मनि रचित झरोखा भ्राजहिं। गृह गृह प्रति मनि दीप बिराज

उज्ज्वल महल ऊपर आकाशको चूम (छू) रहे हैं। महलोंपरके कलश [दिव्य प्रकाशसे] मानो सूर्य, चन्द्रमाके प्रकाशकी भी निन्दा (तिरस्कार) करते [महलोंमें] बहुत-सी मणियोंसे रचे हुए झरोखे सुशोभित हैं और घर-घरमें म के दीपक शोभा पा रहे हैं ॥ ४ ॥

छं०—मनि दीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरीं बिद्रुम रची।
मनि खंभ भीति बिरंचि बिरची कनक मनि मरकत खची ॥
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे।
प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन्हि खचे ॥

घरोंमें मणियोंके दीपक शोभा दे रहे हैं। मूँगोंकी बनी हुई देहलियाँ च रही हैं। मणियों (रत्नों) के खम्भे हैं। मरकतमणियों (पन्नों) से जड़ी हुई सो दीवारें ऐसी सुन्दर हैं मानो ब्रह्माने खास तौरसे बनायी हों। महल सुन्दर, म और विशाल हैं। उनमें सुन्दर स्फटिकके आँगन बने हैं। प्रत्येक द्वारपर बहु खरादे हुए हीरोंसे जड़े हुए सोनेके किंवाड़ हैं।

दो०—चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बनाइ।
राम चरित जे निरख मुनि ते मन लेहिं चोराइ ॥ २७ ॥

घर-घरमें सुन्दर चित्रशालाएँ हैं, जिनमें श्रीरामजीके चरित्र बड़ी सुन्दरताके सँवारकर अङ्कित किये हुए हैं। जिन्हें मुनि देखते हैं, तो वे उनके भी चित्तको चुरा लेते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—सुमन बाटिका सबहिं लगाईं। बिबिध भाँति करि जतन बनाईं ॥
लता ललित बहु जाति सुहाईं। फूलहिं सदा बसंत कि नाईं ॥

सभी लोगोंने भिन्न-भिन्न प्रकारकी पुष्पोंकी वाटिकाएँ यत्न करके लगा रक्खी हैं, जिनमें बहुत जातियोंकी सुन्दर और ललित लताएँ सदा वसंतकी तरह फूलती रहती हैं ॥ १ ॥

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिबिधि सदा बह सुंदर ॥
नाना खग बालकन्हि जिआए। बोलत मधुर उड़ात सुहाए ॥

भौंरे मनोहर स्वरसे गुंजार करते हैं। सदा तीनों प्रकारकी सुन्दर वायु बहती रहती है। बालकोंने बहुत-से पक्षी पाल रक्खे हैं, जो मधुर बोली बोलते हैं और उड़नेमें सुन्दर लगते हैं ॥ २ ॥

मोर हंस सारस पारावत। भवननि पर सोभा अति पावत ॥
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं ॥

मोर, हंस, सारस और कबूतर घरोंके ऊपर बड़ी ही शोभा पाते हैं। वे पक्षी [मणियोंकी दीवारोंमें और छतमें] जहाँ-तहाँ अपनी परछाईं देखकर [वहाँ दूसरे पक्षी समझकर] बहुत प्रकारसे मधुर बोली बोलते और नृत्य करते हैं ॥ ३ ॥

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जन पालक ॥
राज दुआर सकल बिधि चारू। बीथीं चौहट रुचिर बजारू ॥

बालक तोता-मैनाको पढ़ाते हैं कि कहो—'राम' 'रघुपति' 'जनपालक'। राजद्वार सब प्रकारसे सुन्दर है। गलियाँ, चौराहे और बाजार सभी सुन्दर हैं ॥ ४ ॥

छं०—बाजार रुचिर न बनइ बरनत बस्तु बिनु गथ पाइए।
जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गाइए ॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुंदर नारि नर सिसु जरठ जे ॥

सुन्दर बाजार है, जो वर्णन करते नहीं बनता; वहाँ वस्तुएँ बिना ही मूल्य मिलती हैं। जहाँ स्वयं लक्ष्मीपति राजा हों, वहाँकी सम्पत्तिका वर्णन कैसे किया जाय ? बजाज (कपड़ेका व्यापार करनेवाले), शराफ (रुपये-पैसेका लेन-देन करनेवाले) आदि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वणिक् (व्यापारी) बैठे हुए ऐसे जान पड़ते हैं मानो अनेक कुबेर हों। स्त्री, पु
बच्चे और बूढ़े जो भी हैं, सभी सुखी, सदाचारी और सुन्दर हैं।

दो०—उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गंभीर।
बाँधे घाट मनोहर स्वल्प पंक नहिं तीर ॥ २८ ॥

नगरके उत्तर दिशामें सरयूजी बह रही हैं, जिनका जल निर्मल और गहरा है। मनोहर घाट बँधे हुए हैं, किनारेपर जरा भी कीचड़ नहीं है ॥ २८ ॥

चौ०—दूरि फराक रुचिर सो घाटा। जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाटा॥
पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना॥

अलग कुछ दूरीपर वह सुन्दर घाट है, जहाँ घोड़ों और हाथियोंके ठट्ट-के-ठट्ट जल पिया करते हैं। पानी भरनेके लिये बहुत-से [जनाने] घाट हैं, जो बड़े मनोहर हैं। वहाँ पुरुष स्नान नहीं करते ॥ १ ॥

राजघाट सब बिधि सुंदर बर। मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर॥
तीर तीर देवन्ह के मंदिर। चहुँ दिसि तिन्ह के उपबन सुंदर॥

राजघाट सब प्रकारसे सुन्दर और श्रेष्ठ है, जहाँ चारों वर्णोंके पुरुष स्नान करते हैं। सरयूजीके किनारे-किनारे देवताओंके मन्दिर हैं, जिनके चारों ओर सुन्दर उपवन (बगीचे) हैं ॥ २ ॥

कहुँ कहुँ सरिता तीर उदासी। बसहिं ग्यान रत मुनि संन्यासी॥
तीर तीर तुलसिका सुहाई। बृंद बृंद बहु मुनिन्ह लगाई॥

नदीके किनारे कहीं-कहीं विरक्त और ज्ञानपरायण, मुनि और संन्यासी निवास करते हैं। सरयूजीके किनारे-किनारे सुन्दर तुलसीजीके झुंड-के-झुंड बहुत-से पेड़ मुनियोंने लगा रक्खे हैं ॥ ३ ॥

पुर सोभा कछु बरनि न जाई। बाहेर नगर परम रुचिराई॥
देखत पुरी अखिल अघ भागा। बन उपबन बापिका तड़ागा॥

नगरकी शोभा तो कुछ कही नहीं जाती। नगरके बाहर भी परम सुन्दरता है। श्रीअयोध्यापुरीके दर्शन करते ही सम्पूर्ण पाप भाग जाते हैं। [वहाँ] वन, उपवन, बावलियाँ और तालाब सुशोभित हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छं०—बापीं तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं॥
बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हंकारहीं॥

अनुपम बावलियाँ, तालाब और मनोहर तथा विशाल कुएँ शोभा दे रहे हैं, [उ]नकी सुन्दर [रत्नोंकी] सीढ़ियाँ और निर्मल जल देखकर देवता और मुनितक [मो]हित हो जाते हैं। [तालाबोंमें] अनेक रंगोंके कमल खिल रहे हैं, अनेकों पक्षी [कूज] रहे हैं और भौंरे गुंजार कर रहे हैं। [परम] रमणीय बगीचे कोयल आदि [पक्षि]योंकी [सुन्दर बोलीसे] मानो राह चलनेवालोंको बुला रहे हैं।

दो०—रमानाथ जहँ राजा सो पुर बरनि कि जाइ।
अनिमादिक सुख संपदा रहीं अवध सब छाइ॥२९॥

स्वयं लक्ष्मीपति भगवान् जहाँ राजा हों, उस नगरका कहीं वर्णन किया जा सकता [है]? अणिमा आदि आठों सिद्धियाँ और समस्त सुख-सम्पत्तियाँ अयोध्यामें छा रही हैं॥२९॥

[चौ]०—जहँ तहँ नर रघुपति गुन गावहिं। बैठि परसपर इहइ सिखावहिं॥
भजहु प्रनत प्रतिपालक रामहि। सोभा सील रूप गुन धामहि॥

लोग जहाँ-तहाँ श्रीरघुनाथजीके गुण गाते हैं और बैठकर एक दूसरेको यही [सि]खा देते हैं कि शरणागतका पालन करनेवाले श्रीरामजीको भजो; शोभा, शील, रूप [औ]र गुणोंके धाम श्रीरघुनाथजीको भजो॥ १ ॥

जलज बिलोचन स्यामल गातहि। पलक नयन इव सेवक त्रातहि॥
धृत सर रुचिर चाप तूनीरहि। संत कंज बन रबि रनधीरहि॥

कमलनयन और साँवले शरीरवालेको भजो। पलक जिस प्रकार नेत्रोंकी रक्षा [कर]ते हैं उसी प्रकार अपने सेवकोंकी रक्षा करनेवालेको भजो। सुन्दर बाण, धनुष [औ]र तरकस धारण करनेवालेको भजो। संतरूपी कमलवनके [खिलानेके] लिये [सू]र्यरूप रणधीर श्रीरामजीको भजो॥ २ ॥

काल कराल ब्याल खगराजहि। नमत राम अकाम ममता जहि॥
लोभ मोह मृगजूथ किरातहि। मनसिज करि हरि जन सुखदातहि॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कालरूपी भयानक सर्पके भक्षण करनेवाले श्रीरामरूप गरुड़जीको भजो। निष्कामभावसे प्रणाम करते ही ममताका नाश कर देनेवाले श्रीरामजीको भजो। लोभ-मोहरूपी हरिनोंके समूहके नाश करनेवाले श्रीरामरूप किरातको भजो। कामदेवरूपी हाथीके लिये सिंहरूप तथा सेवकोंको सुख देनेवाले श्रीरामको भजो ॥ ३ ॥

संसय सोक निबिड़ तम भानुहि। दनुज गहन घन दहन कृसानुहि॥
जनकसुता समेत रघुबीरहि। कस न भजहु भंजन भव भीरहि॥

संशय और शोकरूपी घने अन्धकारके नाश करनेवाले श्रीरामरूप सूर्यको भजो। राक्षसरूपी घने वनको जलानेवाले श्रीरामरूप अग्निको भजो। जन्म-मृत्युके भयको नाश करनेवाले श्रीजानकीजीसमेत श्रीरघुवीरको क्यों नहीं भजते ? ॥ ४ ॥

बहु बासना मसक हिम रासिहि। सदा एक रस अज अबिनासिहि॥
मुनि रंजन भंजन महि भारहि। तुलसिदास के प्रभुहि उदारहि॥

बहुत-सी वासनाओंरूपी मच्छरोंको नाश करनेवाले श्रीरामरूप हिमराशि (बर्फके ढेर) को भजो। नित्य एकरस, अजन्मा और अविनाशी श्रीरघुनाथजीको भजो। मुनियोंको आनन्द देनेवाले, पृथ्वीका भार उतारनेवाले और तुलसीदासके उदार (दयालु) स्वामी श्रीरामजीको भजो ॥ ५ ॥

दो०—एहि बिधि नगर नारि नर करहिं राम गुन गान।
सानुकूल सब पर रहहिं संतत कृपानिधान ॥ ३० ॥

इस प्रकार नगरके स्त्री-पुरुष श्रीरामजीका गुण-गान करते हैं और कृपानिधान श्रीरामजी सदा सबपर अत्यन्त प्रसन्न रहते हैं ॥ ३० ॥

चौ०—जब ते राम प्रताप खगेसा। उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा॥
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका। बहुतेन्ह सुख बहुतन मन सोका॥

[काकभुशुण्डिजी कहते हैं—] हे पक्षिराज गरुड़जी ! जबसे रामप्रतापरूपी अत्यन्त प्रचण्ड सूर्य उदित हुआ, तबसे तीनों लोकोंमें पूर्ण प्रकाश भर गया है। इससे बहुतोंको सुख और बहुतोंके मनमें शोक हुआ ॥ १ ॥

जिन्हहि सोक ते कहउँ बखानी। प्रथम अबिद्या निसा नसानी॥
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम क्रोध कैरव सकुचाने॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जिन-जिनको शोक हुआ, उन्हें मैं बखानकर कहता हूँ। [सर्वत्र प्रकाश छा [जाने]से] पहले तो अविद्यारूपी रात्रि नष्ट हो गयी। पापरूपी उल्लू जहाँ-तहाँ छिप [गये] और काम-क्रोधरूपी कुमुद मुँद गये ॥ २ ॥

बिबिध कर्म गुन काल सुभाऊ। ए चकोर सुख लहहिं न काऊ ॥
मत्सर मान मोह मद चोरा। इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा ॥

भाँति-भाँतिके [बन्धनकारक] कर्म, गुण, काल और स्वभाव—ये चकोर हैं, [जो] [रामप्रतापरूपी सूर्यके प्रकाशमें] कभी सुख नहीं पाते। मत्सर (डाह), मान, मोह और [मद]रूपी जो चोर हैं, उनका हुनर (कला) भी किसी ओर नहीं चल पाता ॥ ३ ॥

धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना। ए पंकज बिकसे बिधि नाना ॥
सुख संतोष बिराग बिबेका। बिगत सोक ए कोक अनेका ॥

धर्मरूपी तालाबमें ज्ञान, विज्ञान—ये अनेकों प्रकारके कमल खिल उठे। सुख, [सं]तोष, वैराग्य और विवेक—ये अनेकों चकवे शोकरहित हो गये ॥ ४ ॥

दो०—यह प्रताप रबि जाकें उर जब करइ प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास ॥ ३१ ॥

यह श्रीरामप्रतापरूपी सूर्य जिसके हृदयमें जब प्रकाश करता है, तब जिनका [वर्ण]न पीछेसे किया गया है, वे (धर्म, ज्ञान, विज्ञान, सुख, संतोष, वैराग्य और विवेक) [बढ़] जाते हैं और जिनका वर्णन पहले किया गया है, वे (अविद्या, पाप, काम, क्रोध, [कर्म], काल, गुण, स्वभाव आदि) नाशको प्राप्त होते (नष्ट हो जाते) हैं ॥ ३१ ॥

[चौ]०—भ्रातन्ह सहित रामु एक बारा। संग परम प्रिय पवनकुमारा ॥
सुंदर उपबन देखन गए। सब तरु कुसुमित पल्लव नए ॥

एक बार भाइयोंसहित श्रीरामचन्द्रजी परम प्रिय हनुमान्‌जीको साथ लेकर सुन्दर [उप]वन देखने गये। वहाँके सब वृक्ष फूले हुए और नये पत्तोंसे युक्त थे ॥ १ ॥

जानि समय सनकादिक आए। तेज पुंज गुन सील सुहाए ॥
ब्रह्मानंद सदा लयलीना। देखत बालक बहुकालीना ॥

सुअवसर जानकर सनकादि मुनि आये, जो तेजके पुञ्ज, सुन्दर गुण और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शीलसे युक्त तथा सदा ब्रह्मानन्दमें लवलीन रहते हैं। देखनेमें तो वे बालक हैं, परन्तु हैं बहुत समयके ॥ २ ॥

रूप धरें जनु चारिउ बेदा। समदरसी मुनि बिगत बिभेदा॥
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं। रघुपति चरित होइ तहँ सुनहीं॥

मानो चारों वेद ही बालकरूप धारण किये हों। वे मुनि समदर्शी और भेदरहित हैं। दिशाएँ ही उनके वस्त्र हैं। उनके एक ही व्यसन है कि जहाँ श्रीरघुनाथजीकी चरित्र-कथा होती है वहाँ जाकर वे उसे अवश्य सुनते हैं ॥ ३ ॥

तहाँ रहे सनकादि भवानी। जहँ घटसंभव मुनिबर ग्यानी॥
राम कथा मुनिबर बहु बरनी। ग्यान जोनि पावक जिमि अरनी॥

[शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! सनकादि मुनि वहाँ गये थे (वहाँसे चले आ रहे थे) जहाँ ज्ञानी मुनिश्रेष्ठ श्रीअगस्त्यजी रहते थे। श्रेष्ठ मुनिने श्रीरामजीकी बहुत-सी कथाएँ वर्णन की थीं, जो ज्ञान उत्पन्न करनेमें उसी प्रकार समर्थ हैं, जैसे अरणि लकड़ीसे अग्नि उत्पन्न होती है ॥ ४ ॥

दो०—देखि राम मुनि आवत हरषि दंडवत कीन्ह।
स्वागत पूँछि पीत पट प्रभु बैठन कहँ दीन्ह ॥ ३२ ॥

सनकादि मुनियोंको आते देखकर श्रीरामचन्द्रजीने हर्षित होकर दण्डवत् की और स्वागत (कुशल) पूछकर प्रभुने [उनके] बैठनेके लिये अपना पीताम्बर बिछा दिया ॥ ३२ ॥

चौ०—कीन्ह दंडवत तीनिउँ भाई। सहित पवनसुत सुख अधिकाई॥
मुनि रघुपति छबि अतुल बिलोकी। भए मगन मन सके न रोकी॥

फिर हनुमान्‌जीसहित तीनों भाइयोंने दण्डवत् की; सबको बड़ा सुख हुआ। मुनि श्रीरघुनाथजीकी अतुलनीय छबि देखकर उसीमें मग्न हो गये। वे मनको रोक न सके॥ १॥

स्यामल गात सरोरुह लोचन। सुंदरता मंदिर भव मोचन॥
एकटक रहे निमेष न लावहिं। प्रभु कर जोरें सीस नवावहिं॥

वे जन्म-मृत्यु [के चक्र] से छुड़ानेवाले, श्यामशरीर, कमलनयन, सुन्दरता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीराम श्रीरामजीको टकटकी लगाये देखते ही रह गये, पलक नहीं मारते। और प्रभु हाथ जोड़े सिर नवा रहे हैं ॥ २ ॥

तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा। स्रवत नयन जल पुलक सरीरा ॥
कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे। परम मनोहर बचन उचारे ॥

उनकी [प्रेमविह्वल] दशा देखकर [उन्हींकी भाँति] श्रीरघुनाथजीके नेत्रोंसे [प्रेमाश्रुओंका] जल बहने लगा और शरीर पुलकित हो गया। तदनन्तर प्रभुने हाथ पकड़कर श्रेष्ठ मुनियोंको बैठाया और परम मनोहर वचन कहे—॥ ३ ॥

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा। तुम्हरें दरस जाहिं अघ खीसा ॥
बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा ॥

हे मुनीश्वरो ! सुनिये, आज मैं धन्य हूँ। आपके दर्शनोंहीसे [सारे] पाप नष्ट हो जाते हैं। बड़े ही भाग्यसे सत्संगकी प्राप्ति होती है, जिससे बिना ही परिश्रम जन्म-मृत्युका चक्र नष्ट हो जाता है ॥ ४ ॥

दो०—संत संग अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद श्रुति पुरान सदग्रंथ ॥ ३३ ॥

संतका संग मोक्ष (भव-बन्धनसे छूटने) का और कामीका संग जन्म-मृत्युके बन्धनमें पड़नेका मार्ग है। संत, कवि और पण्डित तथा वेद, पुराण [आदि] सभी सद्ग्रन्थ ऐसा कहते हैं ॥ ३३ ॥

चौ०—सुनि प्रभु बचन हरषि मुनि चारी। पुलकित तन अस्तुति अनुसारी ॥
जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय ॥

प्रभुके वचन सुनकर चारों मुनि हर्षित होकर, पुलकित शरीरसे स्तुति करने लगे—हे भगवन् ! आपकी जय हो। आप अन्तरहित, विकाररहित, पापरहित, अनेक (सब रूपोंमें प्रकट), एक (अद्वितीय) और करुणामय हैं ॥ १ ॥

जय निर्गुन जय जय गुन सागर। सुख मंदिर सुंदर अति नागर ॥
जय इंदिरा रमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि सोभाकर ॥

हे निर्गुण ! आपकी जय हो। हे गुणके समुद्र ! आपकी जय हो, जय हो। आप सुखके धाम, [अत्यन्त] सुन्दर और अति चतुर हैं। हे लक्ष्मीपति ! आपकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जय हो। हे पृथ्वीके धारण करनेवाले ! आपकी जय हो। आप उपमारहित, अज, अनादि और शोभाकी खान हैं ॥ २ ॥

ग्यान निधान अमान मानप्रद । पावन सुजस पुरान बेद ब
तग्य कृतग्य अग्यता भंजन । नाम अनेक अनाम निरंजन

आप ज्ञानके भण्डार, [स्वयं] मानरहित और [दूसरोंको] मान देनेवाले वेद और पुराण आपका पावन सुन्दर यश गाते हैं। आप तत्त्वके जाननेवाले, हुई सेवाको माननेवाले और अज्ञानका नाश करनेवाले हैं। हे निर (मायारहित) ! आपके अनेकों (अनन्त) नाम हैं और कोई नाम नहीं (अर्थात् आप सब नामोंके परे हैं) ॥ ३ ॥

सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय । बससि सदा हम कहुँ परिपालय
द्वंद बिपति भव फंद बिभंजय । हृदि बसि राम काम मद गंजय

आप सर्वरूप हैं, सबमें व्याप्त हैं और सबके हृदयरूपी घरमें सदा निवास क हैं; [अतः] आप हमारा परिपालन कीजिये। [राग-द्वेष, अनुकूलता-प्रतिकूल जन्म-मृत्यु आदि] द्वन्द्व, विपत्ति और जन्म-मृत्युके जालको काट दीजिये। हे रामज आप हमारे हृदयमें बसकर काम और मदका नाश कर दीजिये ॥ ४ ॥

दो०—परमानंद कृपायतन मन परिपूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम ॥ ३४॥

आप परमानन्दस्वरूप, कृपाके धाम और मनकी कामनाओंको परिपूर्ण करने हैं। हे श्रीरामजी ! हमको अपनी अविचल प्रेमा-भक्ति दीजिये ॥ ३४ ॥

चौ०—देहु भगति रघुपति अति पावनि । त्रिबिधि ताप भव दाप नसावनि
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु । होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह ब

हे रघुनाथजी ! आप हमें अपनी अत्यन्त पवित्र करनेवाली और तीनों प्रकार तापों और जन्म-मरणके क्लेशोंका नाश करनेवाली भक्ति दीजिये। हे शरणागतों कामना पूर्ण करनेके लिये कामधेनु और कल्पवृक्षरूप प्रभो ! प्रसन्न होकर ह यही वर दीजिये ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भव बारिधि कुंभज रघुनायक। सेवत सुलभ सकल सुख दायक॥
मन संभव दारुन दुख दारय। दीनबंधु समता बिस्तारय॥

हे रघुनाथजी! आप जन्म-मृत्युरूप समुद्रको सोखनेके लिये अगस्त्य मुनिके समान हैं। आप सेवा करनेमें सुलभ हैं तथा सब सुखोंके देनेवाले हैं। हे दीनबन्धो! मनसे उत्पन्न दारुण दुःखोंका नाश कीजिये और [हममें] समदृष्टिका विस्तार कीजिये॥ २॥

आस त्रास इरिषादि निवारक। बिनय बिबेक बिरति बिस्तारक॥
भूप मौलि मनि मंडन धरनी। देहि भगति संसृति सरि तरनी॥

आप [विषयोंकी] आशा, भय और ईर्ष्या आदिके निवारण करनेवाले हैं तथा विनय, विवेक और वैराग्यके विस्तार करनेवाले हैं। हे राजाओंके शिरोमणि एवं पृथ्वीके भूषण श्रीरामजी! संसृति (जन्म-मृत्युके प्रवाह) रूपी नदीके लिये नौकारूप अपनी भक्ति प्रदान कीजिये॥ ३॥

मुनि मन मानस हंस निरंतर। चरन कमल बंदित अज संकर॥
रघुकुल केतु सेतु श्रुति रच्छक। काल करम सुभाउ गुन भच्छक॥

हे मुनियोंके मनरूपी मानसरोवरमें निरन्तर निवास करनेवाले हंस! आपके चरणकमल ब्रह्माजी और शिवजीके द्वारा वन्दित हैं। आप रघुकुलके केतु वेदमर्यादाके रक्षक और काल, कर्म, स्वभाव तथा गुण [रूप बन्धनों] के भक्षक (नाशक) हैं।

तारन तरन हरन सब दूषन। तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन॥

आप तरन-तारन (स्वयं तरे हुए और दूसरोंको तारनेवाले) तथा सब दोषोंको हरनेवाले हैं। तीनों लोकोंके विभूषण आप ही तुलसीदासके स्वामी हैं॥ ५॥

दो०—बार बार अस्तुति करि प्रेम सहित सिरु नाइ।
ब्रह्म भवन सनकादि गे अति अभीष्ट बर पाइ॥ ३५॥

प्रेमसहित बार-बार स्तुति करके और सिर नवाकर तथा अपना अत्यन्त मनचाहा वर पाकर सनकादि मुनि ब्रह्मलोकको गये॥ ३५॥

चौ०—सनकादिक बिधि लोक सिधाए। भ्रातन्ह राम चरन सिरु नाए॥
पूछत प्रभुहि सकल सकुचाहीं। चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं॥

सनकादि मुनि ब्रह्मलोकको चले गये। तब भाइयोंने श्रीरामजीके चरणोंमें सिर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नवाया। सब भाई प्रभुसे पूछते सकुचाते हैं [इसलिये] सब हनुमान्‌जीकी
देख रहे हैं ॥ १ ॥

सुनी चहहिं प्रभु मुख कै बानी। जो सुनि होइ सकल भ्रम हानी॥
अंतरजामी प्रभु सभ जाना। बूझत कहहु काह हनुमाना॥

वे प्रभुके श्रीमुखकी वाणी सुनना चाहते हैं, जिसे सुनकर सारे भ्रमोंका नाश हो जाता
है। अन्तर्यामी प्रभु सब जान गये और पूछने लगे—कहो हनुमान्! क्या बात है?॥

जोरि पानि कह तब हनुमंता। सुनहु दीनदयाल भगवंता॥
नाथ भरत कछु पूँछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं॥

तब हनुमान्‌जी हाथ जोड़कर बोले—हे दीनदयालु भगवान्! सुनिये। हे नाथ!
भरतजी कुछ पूछना चाहते हैं, पर प्रश्न करते मनमें सकुचा रहे हैं॥ ३ ॥

तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ। भरतहि मोहि कछु अंतर काऊ॥
सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना। सुनहु नाथ प्रनतारति हरना॥

[भगवान्‌ने कहा—] हनुमान्! तुम तो मेरा स्वभाव जानते ही हो। भरत
और मेरे बीचमें कभी भी कोई अन्तर (भेद) है? प्रभुके वचन सुनकर भरतजीने
चरण पकड़ लिये [और कहा—] हे नाथ! हे शरणागतके दुःखोंको हरनेवाले! सुनिये।

दो०—नाथ न मोहि संदेह कछु सपनेहुँ सोक न मोह।
केवल कृपा तुम्हारिहि कृपानंद संदोह॥ ३६॥

हे नाथ! न तो मुझे कुछ सन्देह है और न स्वप्नमें भी शोक और मोह है।
हे कृपा और आनन्दके समूह! यह केवल आपकी ही कृपाका फल है॥ ३६॥

चौ०—करउँ कृपानिधि एक ढिठाई। मैं सेवक तुम्ह जन सुखदाई॥
संतन्ह कै महिमा रघुराई। बहु बिधि बेद पुरानन्ह गाई॥

तथापि हे कृपानिधान! मैं आपसे एक धृष्टता करता हूँ। मैं सेवक हूँ और आप
सेवकको सुख देनेवाले हैं [इससे मेरी धृष्टताको क्षमा कीजिये और मेरे प्रश्नका उत्तर देकर
सुख दीजिये]। हे रघुनाथजी! वेद-पुराणोंने संतोंकी महिमा बहुत प्रकारसे गायी है॥ १॥

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ाई। तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिकाई॥
सुना चहउँ प्रभु तिन्ह कर लच्छन। कृपासिंधु गुन ग्यान बिचच्छन॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आपने भी अपने श्रीमुखसे उनकी बड़ाई की है और उनपर प्रभु (आप) प्रेम भी बहुत है। हे प्रभो ! मैं उनके लक्षण सुनना चाहता हूँ। आप कृपाके हैं और गुण तथा ज्ञानमें अत्यन्त निपुण हैं ॥ २ ॥

संत असंत भेद बिलगाई। प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई ॥
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिख्याता ॥

हे शरणागतका पालन करनेवाले ! संत और असंतके भेद अलग-अलग करके समझाकर कहिये। [श्रीरामजीने कहा—] हे भाई ! संतोंके लक्षण (गुण) असंख्य हैं, जो वेद और पुराणोंमें प्रसिद्ध हैं ॥ ३ ॥

संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥

संत और असंतोंकी करनी ऐसी है जैसे कुल्हाड़ी और चन्दनका आचरण होता है। हे भाई ! सुनो, कुल्हाड़ी चन्दनको काटती है [क्योंकि उसका स्वभाव या काम वृक्षोंको काटना है]; किन्तु चन्दन [अपने स्वभाववश] अपना गुण देकर (काटनेवाली कुल्हाड़ीको) सुगन्धसे सुवासित कर देता है ॥ ४ ॥

दो०—ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड ॥ ३७ ॥

इसी गुणके कारण चन्दन देवताओंके सिरोंपर चढ़ता है और जगत्‌का प्रिय हो रहा है और कुल्हाड़ीके मुखको यह दण्ड मिलता है कि उसको आगमें जलाकर फिर घनसे पीटते हैं।

चौ०—बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर ॥
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी ॥

संत विषयोंमें लंपट (लिप्त) नहीं होते, शील और सद्गुणोंकी खान होते हैं। उन्हें पराया दुःख देखकर दुःख और सुख देखकर सुख होता है। वे [सबमें, सर्वत्र, सब समय] समता रखते हैं, उनके मन कोई उनका शत्रु नहीं है, वे मदसे रहित और वैराग्यवान् होते हैं तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भयका त्याग किये हुए रहते हैं ॥ १ ॥

कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥
सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by

उनका चित्त बड़ा कोमल होता है। वे दीनोंपर दया करते हैं तथा मन, वचन और कर्मसे मेरी निष्कपट (विशुद्ध) भक्ति करते हैं। सबको सम्मान देते पर स्वयं मानरहित होते हैं। हे भरत ! वे प्राणी (संतजन) मेरे प्राणोंके समान हैं।

बिगत काम मम नाम परायन। सांति बिरति बिनती मुदितायन॥
सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री॥

उनको कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नामके परायण होते हैं। शान्ति, वैराग्य, विनय और प्रसन्नताके घर होते हैं। उनमें शीतलता, सरलता, सबके प्रति मित्रभाव और ब्राह्मणके चरणोंमें प्रीति होती है, जो धर्मोंको उत्पन्न करनेवाली है॥ ३ ॥

ए सब लच्छन बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं॥

हे तात ! ये सब लक्षण जिसके हृदयमें बसते हों, उसको सदा सच्चा संत जानना। जो शम (मनके निग्रह), दम (इन्द्रियोंके निग्रह), नियम और नीतिसे कभी विचलित नहीं होते और मुखसे कभी कठोर वचन नहीं बोलते; ॥ ४ ॥

दो०—निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज॥ ३८॥

जिन्हें निन्दा और स्तुति (बड़ाई) दोनों समान हैं और मेरे चरणकमलोंमें जिनकी ममता है, वे गुणोंके धाम और सुखकी राशि संतजन मुझे प्राणोंके समान प्रिय हैं॥ ३८॥

चौ०—सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ। भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई॥

अब असंतों (दुष्टों) का स्वभाव सुनो; कभी भूलकर भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिये। उनका संग सदा दुःख देनेवाला होता है। जैसे हरहाई (बुरी जातिकी) गाय कपिला (सीधी और दुधार) गायको अपने संगसे नष्ट कर डालती है॥ १॥

खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई। हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई॥

दुष्टोंके हृदयमें बहुत अधिक सन्ताप रहता है। वे परायी सम्पत्ति (सुख) देखकर सदा जलते रहते हैं। वे जहाँ कहीं दूसरेकी निन्दा सुन पाते हैं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हाँ ऐसे हर्षित होते हैं मानो रास्तेमें पड़ी निधि (खजाना)पा ली हो ॥ २ ॥

काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥
बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों ॥

वे काम, क्रोध, मद और लोभके परायण तथा निर्दयी, कपटी, कुटिल और पापोंके घर होते हैं। वे बिना ही कारण सब किसीसे वैर किया करते हैं। जो भलाई करता है उसके साथ भी बुराई करते हैं॥ ३ ॥

झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना ॥
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा ॥

उनका झूठा ही लेना और झूठा ही देना होता है । झूठा ही भोजन होता है और झूठा ही चबेना होता है (अर्थात् वे लेने-देनेके व्यवहारमें झूठका आश्रय लेकर दूसरोंका हक मार लेते हैं अथवा झूठी डींग हाँका करते हैं कि हमने लाखों रुपये ले लिये, करोड़ोंका दान कर दिया। इसी प्रकार खाते हैं चनेकी रोटी और कहते हैं कि आज खूब माल खाकर आये । अथवा चबेना चबाकर रह जाते हैं और कहते हैं हमें बढ़िया भोजनसे वैराग्य है, इत्यादि । मतलब यह कि वे सभी बातोंमें झूठ ही बोला करते हैं।) जैसे मोर [बहुत मीठा बोलता है, परन्तु उस] का हृदय ऐसा कठोर होता है कि वह महान् विषैले साँपोंको भी खा जाता है । वैसे ही वे भी ऊपरसे मीठे वचन बोलते हैं [परन्तु हृदयके बड़े ही निर्दयी होते हैं] ॥ ४ ॥

दो०—पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद ॥ ३९ ॥

वे दूसरोंसे द्रोह करते हैं और परायी स्त्री, पराये धन तथा परायी निन्दामें आसक्त रहते हैं। वे पामर और पापमय मनुष्य नर-शरीर धारण किये हुए राक्षस ही हैं ॥ ३९॥

चौ०—लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न ॥
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥

लोभ ही उनका ओढ़ना और लोभ ही बिछौना होता है (अर्थात् लोभहीसे वे सदा घिरे हुए रहते हैं)। वे पशुओंके समान आहार और मैथुनके ही परायण होते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं, उन्हें यमपुरका भय नहीं लगता। यदि किसीकी बड़ाई सुन पाते हैं, तो वे [दुःखभरी] साँस लेते हैं मानो उन्हें जूड़ी आ गयी हो ॥ १ ॥

जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती॥
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी॥

और जब किसीकी विपत्ति देखते हैं, तब ऐसे सुखी होते हैं मानो जगत्‌भरके राजा हो गये हों। वे स्वार्थपरायण, परिवारवालोंके विरोधी, काम और लोभके कारण लंपट और अत्यन्त क्रोधी होते हैं ॥ २ ॥

मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं॥
करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा॥

वे माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण किसीको नहीं मानते। आप तो नष्ट हुए ही रहते हैं, [साथ ही अपने सङ्गसे] दूसरोंको भी नष्ट करते हैं। मोहवश दूसरोंसे द्रोह करते हैं। उन्हें न संतोंका सङ्ग अच्छा लगता है, न भगवान्‌की कथा ही सुहाती है ॥ ३ ॥

अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा॥

वे अवगुणोंके समुद्र, मन्दबुद्धि, कामी (रागयुक्त), वेदोंके निन्दक और जबर्दस्ती पराये धनके स्वामी (लूटनेवाले) होते हैं। वे दूसरोंसे द्रोह तो करते ही हैं परन्तु ब्राह्मण-द्रोह विशेषतासे करते हैं। उनके हृदयमें दम्भ और कपट भरा रहता है, परन्तु वे [ऊपरसे] सुन्दर वेष धारण किये रहते हैं ॥ ४ ॥

दो०—ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु होइहहिं कलिजुग माहिं ॥ ४० ॥

ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य सत्ययुग और त्रेतामें नहीं होते। द्वापरमें थोड़े-से होंगे और कलियुगमें तो इनके झुंड-के-झुंड होंगे ॥ ४० ॥

चौ०—पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥
निर्नय सकल पुरान बेद कर। कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर॥

हे भाई! दूसरोंकी भलाईके समान कोई धर्म नहीं है और दूसरोंको दुःख पहुँचानेके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान कोई नीचता (पाप) नहीं है । हे तात ! समस्त पुराणों और वेदोंका यह निर्णय (निश्चित सिद्धान्त) मैंने तुमसे कहा है, इस बातको पण्डितलोग जानते हैं ॥ १ ॥

नर सरीर धरि जे पर पीरा । करहिं ते सहहिं महा भव भीरा ॥
करहिं मोह बस नर अघ नाना । स्वारथ रत परलोक नसाना ॥

मनुष्यका शरीर धारण करके जो लोग दूसरोंको दुःख पहुँचाते हैं, उनको जन्म-मृत्युके महान् संकट सहने पड़ते हैं । मनुष्य मोहवश स्वार्थपरायण होकर अनेकों पाप करते हैं, इसीसे उनका परलोक नष्ट हुआ रहता है ॥ २ ॥

कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता । सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता ॥
अस बिचारि जे परम सयाने । भजहिं मोहि संसृत दुख जाने ॥

हे भाई ! मैं उनके लिये कालरूप (भयंकर) हूँ और उनके अच्छे और बुरे कर्मोंका [यथायोग्य] फल देनेवाला हूँ । ऐसा विचारकर जो लोग परम चतुर हैं वे संसार [के प्रवाह] को दुःखरूप जानकर मुझे ही भजते हैं ॥ ३ ॥

त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक । भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक ॥
संत असंतन्ह के गुन भाषे । ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे ॥

इसीसे वे शुभ और अशुभ फल देनेवाले कर्मोंको त्याग कर देवता, मनुष्य और मुनियोंके नायक मुझको भजते हैं । [इस प्रकार] मैंने संतों और असंतोंके गुण कहे । जिन लोगोंने इन गुणोंको समझ रक्खा है, वे जन्म-मरणके चक्करमें नहीं पड़ते ॥ ४ ॥

दो०—सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक ।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक ॥ ४१ ॥

हे तात ! सुनो, मायासे रचे हुए ही अनेक (सब) गुण और दोष हैं (इनकी कोई वास्तविक सत्ता नहीं है) । गुण (विवेक) इसीमें है कि दोनों ही न देखे जायँ; इन्हें देखना ही अविवेक है ॥ ४१ ॥

चौ०—श्रीमुख बचन सुनत सब भाई । हरषे प्रेम न हृदयँ समाई ॥
करहिं बिनय अति बारहिं बारा । हनूमान हियँ हरष अपारा ॥

भगवान्‌के श्रीमुखसे ये वचन सुनकर सब भाई हर्षित हो गये । प्रेम उनके हृदयोंमें समाता नहीं । वे बार-बार बड़ी विनती करते हैं । विशेषकर हनुमान्‌जीके हृदयमें अपार हर्ष है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eG

पुनि रघुपति निज मंदिर गए। एहि बिधि चरित करत नित नए॥
बार बार नारद मुनि आवहिं। चरित पुनीत राम के गावहिं॥

तदनन्तर श्रीरामचन्द्रजी अपने महलको गये। इस प्रकार वे नित्य नयी लीला करते हैं। नारदमुनि अयोध्यामें बार-बार आते हैं और आकर श्रीरामजीके पवित्र चरित्र गाते हैं॥ २॥

नित नव चरित देखि मुनि जाहीं। ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं॥
सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं। पुनि पुनि तात करहु गुन गानहिं॥

मुनि यहाँसे नित्य नये-नये चरित्र देखकर जाते हैं और ब्रह्मलोकमें जाकर सब कथा कहते हैं। ब्रह्माजी सुनकर अत्यन्त सुख मानते हैं [और कहते हैं—] हे तात ! बार-बार श्रीरामजीके गुणोंका गान करो॥ ३॥

सनकादिक नारदहि सराहहिं। जद्यपि ब्रह्म निरत मुनि आहहिं॥
सुनि गुन गान समाधि बिसारी। सादर सुनहिं परम अधिकारी॥

सनकादि मुनि नारदजीकी सराहना करते हैं। यद्यपि वे (सनकादि) मुनि ब्रह्मनिष्ठ हैं, परन्तु श्रीरामजीका गुणगान सुनकर वे भी अपनी ब्रह्मसमाधिको भूल जाते हैं और आदरपूर्वक उसे सुनते हैं। वे [रामकथा सुननेके] श्रेष्ठ अधिकारी हैं॥ ४॥

दो०—जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान।
जे हरि कथाँ न करहिं रति तिन्ह के हिय पाषान॥ ४२॥

सनकादि मुनि-जैसे जीवन्मुक्त और ब्रह्मनिष्ठ पुरुष भी ध्यान (ब्रह्म-समाधि) छोड़कर श्रीरामजीके चरित्र सुनते हैं। यह जानकर भी जो श्रीहरिकी कथासे प्रेम नहीं करते, उनके हृदय [सचमुच ही] पत्थर [के समान] हैं॥ ४२॥

चौ०—एक बार रघुनाथ बोलाए। गुर द्विज पुरबासी सब आए॥
बैठे गुर मुनि अरु द्विज सज्जन। बोले बचन भगत भव भंजन॥

एक बार श्रीरघुनाथजीके बुलाये हुए गुरु वशिष्ठजी, ब्राह्मण और अन्य सब नगर-निवासी सभामें आये। जब गुरु, मुनि, ब्राह्मण तथा अन्य सब सज्जन यथायोग्य बैठ गये, तब भक्तोंके जन्म-मरणको मिटानेवाले श्रीरामजी वचन बोले—॥ १॥

सुनहु सकल पुरजन मम बानी। कहउँ न कछु ममता उर आनी॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई। सुनहु करहु जो तुम्हहि सोहाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे समस्त नगरनिवासियो ! मेरी बात सुनिये। यह बात मैं हृदयमें कुछ ममता लाकर नहीं कहता हूँ। न अनीतिकी बात कहता हूँ और न इसमें कुछ प्रभुता ही है। इसलिये [संकोच और भय छोड़कर, ध्यान देकर] मेरी बातोंको सुन लो और [फिर] यदि तुम्हें अच्छी लगे, तो उसके अनुसार करो ! ॥ २ ॥

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुसासन मानै जोई ॥
जौं अनीति कछु भाषौं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई ॥

वही मेरा सेवक है, और वही प्रियतम है, जो मेरी आज्ञा माने। हे भाई ! यदि मैं कुछ अनीतिकी बात कहूँ तो भय भुलाकर (बेखटके) मुझे रोक देना ॥ ३ ॥

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥

बड़े भाग्यसे यह मनुष्यशरीर मिला है। सब ग्रन्थोंने यही कहा है कि यह शरीर देवताओंको भी दुर्लभ है (कठिनतासे मिलता है)। यह साधनका धाम और मोक्षका दरवाजा है। इसे पाकर भी जिसने परलोक न बना लिया, ॥ ४ ॥

दो०—सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ ॥ ४३ ॥

वह परलोकमें दुःख पाता है, सिर पीट-पीटकर पछताता है तथा [अपना दोष न समझकर] कालपर, कर्मपर और ईश्वरपर मिथ्या दोष लगाता है ॥ ४३ ॥

चौ०—एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई ॥
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

हे भाई ! इस शरीरके प्राप्त होनेका फल विषयभोग नहीं है। [इस जगत्के भोगोंकी तो बात ही क्या] स्वर्गका भोग भी बहुत थोड़ा है और अन्तमें दुःख देनेवाला है। अतः जो लोग मनुष्यशरीर पाकर विषयोंमें मन लगा देते हैं, वे मूर्ख अमृतको बदलकर विष ले लेते हैं ॥ १ ॥

ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई। गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई ॥
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी ॥

जो पारसमणिको खोकर बदलेमें घुँघची ले लेता है, उसको कभी कोई भला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by

(बुद्धिमान्) नहीं कहता। यह अविनाशी जीव [अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज] चार खानों और चौरासी लाख योनियोंमें चक्कर लगाता रहता है ॥ २ ॥

फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥
कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥

मायाकी प्रेरणासे काल, कर्म, स्वभाव और गुणसे घिरा हुआ (इनके वशमें हुआ) यह सदा भटकता रहता है। बिना ही कारण स्नेह करनेवाले ईश्वर कभी विरले ही दया करके इसे मनुष्यका शरीर देते हैं॥ ३ ॥

नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो॥
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा॥

यह मनुष्यका शरीर भवसागर [से तारने] के लिये बेड़ा (जहाज) है। मेरी कृपा ही अनुकूल वायु है। सद्गुरु इस मजबूत जहाजके कर्णधार (खेनेवाले) हैं। इस प्रकार दुर्लभ (कठिनतासे मिलनेवाले) साधन सुलभ होकर (भगवत्कृपासे सहज ही) उसे प्राप्त हो गये हैं, ॥ ४ ॥

दो०—जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ॥४४॥

जो मनुष्य ऐसे साधन पाकर भी भवसागरसे न तरे, वह कृतघ्न और मन्दबुद्धि है और आत्महत्या करनेवालेकी गतिको प्राप्त होता है॥ ४४ ॥

चौ०—जौं परलोक इहाँ सुख चहहू। सुनि मम बचन हृदयँ दृढ़ गहहू॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई॥

यदि परलोकमें और यहाँ [दोनों जगह] सुख चाहते हो, तो मेरे वचन सुनकर उन्हें हृदयमें दृढ़तासे पकड़ रक्खो। हे भाई! यह मेरी भक्तिका मार्ग सुलभ और सुखदायक है, पुराणों और वेदोंने इसे गाया है॥ १ ॥

ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ। भक्ति हीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ॥

ज्ञान अगम (दुर्गम) है, [और] उसकी प्राप्तिमें अनेकों विघ्न हैं। उसका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साधन कठिन है और उसमें मनके लिये कोई आधार नहीं है। बहुत कष्ट करनेपर कोई उसे पा भी लेता है, तो वह भी भक्तिरहित होनेसे मुझको प्रिय नहीं होता। २।

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता॥

भक्ति स्वतन्त्र है और सब सुखोंकी खान है। परन्तु सत्संग (संतोंके संग)के बिना प्राणी इसे नहीं पा सकते। और पुण्यसमूहके बिना संत नहीं मिलते। सत्संगति ही संसृति (जन्म-मरणके चक्र) का अन्त करती है॥ ३॥

पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा॥

जगत्‌में पुण्य एक ही है, [उसके समान] दूसरा नहीं। वह है—मन, कर्म और वचनसे ब्राह्मणोंके चरणोंकी पूजा करना। जो कपटका त्याग करके ब्राह्मणोंकी सेवा करता है उसपर मुनि और देवता प्रसन्न रहते हैं॥ ४॥

दो०—औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि॥ ४५॥

और भी एक गुप्त मत है, मैं उसे सबसे हाथ जोड़कर कहता हूँ कि शङ्करजीके भजन बिना मनुष्य मेरी भक्ति नहीं पाता॥ ४५॥

चौ०—कहहु भगति पथ कवन प्रयासा। जोग न मख जप तप उपवासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई॥

कहो तो भक्तिमार्गमें कौन-सा परिश्रम है? इसमें न योगकी आवश्यकता है, न यज्ञ, जप, तप और उपवासकी! [यहाँ इतना ही आवश्यक है कि] सरल स्वभाव हो, मनमें कुटिलता न हो और जो कुछ मिले उसीमें सदा सन्तोष रक्खे॥ १॥

मोर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई। एहि आचरन बस्य मैं भाई॥

मेरा दास कहलाकर यदि कोई मनुष्योंकी आशा करता है, तो तुम्हीं कहो, उसका क्या विश्वास है? (अर्थात् उसकी मुझपर आस्था बहुत ही निर्बल है।) बहुत बात बढ़ाकर क्या कहूँ? हे भाइयो! मैं तो इसी आचरणके वशमें हूँ॥ २॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized

बैर न बिग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा॥
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी॥

न किसीसे वैर करे, न लड़ाई-झगड़ा करे, न आशा रक्खे, न भय ही करे। उसके लिये सभी दिशाएँ सदा सुखमयी हैं। जो कोई भी आरम्भ (फलकी इच्छासे कर्म) नहीं करता, जिसका कोई अपना घर नहीं है (जिसकी घरमें ममता नहीं है); जो मानहीन, पापहीन और क्रोधहीन है, जो [भक्ति करनेमें] निपुण और विज्ञानवान् है॥ ३॥

प्रीति सदा सज्जन संसर्गा। तृन सम बिषय स्वर्ग अपबर्गा॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई। दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई॥

संतजनोंके संसर्ग (सत्सङ्ग) से जिसे सदा प्रेम है, जिसके मनमें सब विषय यहाँतक कि स्वर्ग और मुक्तितक [भक्तिके सामने] तृणके समान हैं, जो भक्तिके पक्षमें हठ करता है, पर [दूसरेके मतका खण्डन करनेकी] मूर्खता नहीं करता तथा जिसने सब कुतर्कोंको दूर बहा दिया है,॥ ४॥

दो०—मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ता कर सुख सोइ जानइ परानंद संदोह॥ ४६॥

जो मेरे गुणसमूहोंके और मेरे नामके परायण है, एवं ममता, मद और मोहसे रहित है, उसका सुख वही जानता है, जो [परमात्मारूप] परमानन्दराशिको प्राप्त है॥ ४६॥

चौ०—सुनत सुधासम बचन राम के। गहे सबनि पद कृपाधाम के॥
जननि जनक गुर बंधु हमारे। कृपा निधान प्रान ते प्यारे॥

श्रीरामचन्द्रजीके अमृतके समान वचन सुनकर सबने कृपाधामके चरण पकड़ लिये [और कहा—] हे कृपानिधान! आप हमारे माता, पिता, गुरु, भाई सब कुछ हैं और प्राणोंसे भी अधिक प्रिय हैं॥ १॥

तनु धनु धाम राम हितकारी। सब बिधि तुम्ह प्रनतारति हारी॥
असि सिख तुम्ह बिनु देइ न कोऊ। मातु पिता स्वारथ रत ओऊ॥

और हे शरणागतके दुःख हरनेवाले रामजी! आप ही हमारे शरीर, धन, घर-द्वार और सभी प्रकारसे हित करनेवाले हैं। ऐसी शिक्षा आपके अतिरिक्त कोई

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दे सकता। माता-पिता [हितैषी हैं और शिक्षा भी देते हैं] परन्तु वे भी स्वार्थपरायण हैं [इसलिये ऐसी परम हितकारी शिक्षा नहीं देते] ॥ २ ॥

हेतु रहित जग जुग उपकारी। तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी ॥
स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं ॥

हे असुरोंके शत्रु! जगत्‌में बिना हेतुके (निःस्वार्थ) उपकार करनेवाले तो दो ही हैं—एक आप, दूसरे आपके सेवक। जगत्‌में [शेष] सभी स्वार्थके मित्र हैं। हे प्रभो! उनमें स्वप्नमें भी परमार्थका भाव नहीं है ॥ ३ ॥

सब के बचन प्रेम रस साने। सुनि रघुनाथ हृदयँ हरषाने ॥
निज निज गृह गए आयसु पाई। बरनत प्रभु बतकही सुहाई ॥

सबके प्रेमरसमें सने हुए वचन सुनकर श्रीरघुनाथजी हृदयमें हर्षित हुए। फिर आज्ञा पाकर सब प्रभुकी सुन्दर बातचीतका वर्णन करते हुए अपने-अपने घर गये ॥४॥

दो०—उमा अवधबासी नर नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानंद घन रघुनायक जहँ भूप ॥४७॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा! अयोध्यामें रहनेवाले पुरुष और स्त्री सभी कृतार्थस्वरूप हैं, जहाँ स्वयं सच्चिदानन्दघन ब्रह्म श्रीरघुनाथजी राजा हैं ॥ ४७ ॥

चौ०—एक बार बसिष्ट मुनि आए। जहाँ राम सुखधाम सुहाए ॥
अति आदर रघुनायक कीन्हा। पद पखारि पादोदक लीन्हा ॥

एक बार मुनि वशिष्ठजी वहाँ आये जहाँ सुन्दर सुखके धाम श्रीरामजी थे। श्रीरघुनाथजीने उनका बहुत ही आदर-सत्कार किया और उनके चरण धोकर चरणामृत लिया ॥ १ ॥

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी। कृपासिंधु बिनती कछु मोरी ॥
देखि देखि आचरन तुम्हारा। होत मोह मम हृदयँ अपारा ॥

मुनिने हाथ जोड़कर कहा—हे कृपासागर श्रीरामजी! मेरी कुछ विनती सुनिये। आपके आचरणों (मनुष्योचित चरित्रों) को देख-देखकर मेरे हृदयमें अपार मोह (भ्रम) हो रहा है ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by

महिमा अमिति बेद नहिं जाना। मैं केहि भाँति कहउँ भगवाना॥
उपरोहित्य कर्म अति मंदा। बेद पुरान सुमृति कर निंदा॥

हे भगवन्! आपकी महिमाकी सीमा नहीं है, उसे वेद भी नहीं जानते। फि मैं किस प्रकार कह सकता हूँ? पुरोहितीका कर्म (पेशा) बहुत ही नीचा है। वे पुराण और स्मृति सभी इसकी निन्दा करते हैं॥ ३॥

जब न लेउँ मैं तब बिधि मोही। कहा लाभ आगें सुत तोही॥
परमातमा ब्रह्म नर रूपा। होइहि रघुकुल भूषन भूपा॥

जब मैं उसे (सूर्यवंशकी पुरोहितीका काम) नहीं लेता था, तब ब्रह्माजी मुझे कहा था—हे पुत्र! इससे तुमको आगे चलकर बहुत लाभ होगा। स्वयं ब्र परमात्मा मनुष्यरूप धारण कर रघुकुलके भूषण राजा होंगे॥ ४॥

दो०—तब मैं हृदयँ बिचारा जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करिअ सो पैहउँ धर्म न एहि सम आन॥ ४८॥

तब मैंने हृदयमें विचार किया कि जिसके लिये योग, यज्ञ, व्रत और दान किये ज हैं, उसे मैं इसी कर्मसे पा जाऊँगा; तब तो इसके समान दूसरा कोई धर्म ही नहीं है॥ ४

चौ०—जप तप नियम जोग निज धर्मा। श्रुति संभव नाना सुभ कर्मा॥
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन। जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन॥

जप, तप, नियम, योग, अपने-अपने [वर्णाश्रमके] धर्म, श्रुतियोंसे उ (वेदविहित) बहुत-से शुभ कर्म, ज्ञान, दया, दम (इन्द्रियनिग्रह) तीर्थस्नान आ जहाँतक वेद और संतजनोंने धर्म कहे हैं [उनके करनेका]—॥ १॥

आगम निगम पुरान अनेका। पढ़े सुने कर फल प्रभु एका॥
तव पद पंकज प्रीति निरंतर। सब साधन कर यह फल सुंदर॥

[तथा] हे प्रभो! अनेक तन्त्र, वेद और पुराणोंके पढ़ने और सुननेका सर्वो फल एक ही है और सब साधनोंका भी यही एक सुन्दर फल है कि आप चरणकमलोंमें सदा-सर्वदा प्रेम हो॥ २॥

छूटइ मल कि मलहि के धोएँ। घृत कि पाव कोइ बारि बिलोएँ॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई। अभिअंतर मल कबहुँ न जाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैलसे धोनेसे क्या मैल छूटता है ? जलके मथनेसे क्या कोई घी-पा सकता है ? [उसी प्रकार] हे रघुनाथजी ! प्रेम-भक्तिरूपी [निर्मल] जलके बिना अन्तःकरणका मल कभी नहीं जाता ॥ ३ ॥

सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पंडित । सोइ गुन गृह बिग्यान अखंडित ॥
दच्छ सकल लच्छन जुत सोई । जाकें पद सरोज रति होई ॥

वही सर्वज्ञ है, वही तत्त्वज्ञ और पण्डित है, वही गुणोंका घर और अखण्ड विज्ञानवान् है; वही चतुर और सब सुलक्षणोंसे युक्त है, जिसका आपके चरणकमलोंमें प्रेम है ॥ ४ ॥

दो०—नाथ एक बर मागउँ राम कृपा करि देहु ।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहुँ घटै जनि नेहु ॥ ४९ ॥

हे नाथ ! हे श्रीरामजी ! मैं आपसे एक वर माँगता हूँ, कृपा करके दीजिये । प्रभु (आप) के चरणकमलोंमें मेरा प्रेम जन्म-जन्मान्तरमें भी कभी न घटे ॥ ४९ ॥

चौ०—अस कहि मुनि बसिष्ट गृह आए । कृपासिंधु के मन अति भाए ॥
हनूमान भरतादिक भ्राता । संग लिए सेवक सुखदाता ॥

ऐसा कहकर मुनि वशिष्ठजी घर आये । वे कृपासागर श्रीरामजीके मनको बहुत ही अच्छे लगे । तदनन्तर सेवकोंको सुख देनेवाले श्रीरामजीने हनुमान्‌जी तथा भरतजी आदि भाइयोंको साथ लिया, ॥ १ ॥

पुनि कृपाल पुर बाहेर गए । गज रथ तुरग मगावत भए ॥
देखि कृपा करि सकल सराहे । दिए उचित जिन्ह जिन्ह तेइ चाहे ॥

और फिर कृपालु श्रीरामजी नगरके बाहर गये और वहाँ उन्होंने हाथी, रथ और घोड़े मँगवाये । उन्हें देखकर, कृपा करके प्रभुने सबकी सराहना की और उनको जिस-जिसने चाहा, उस-उसको उचित जानकर दिया ॥ २ ॥

हरन सकल श्रम प्रभु श्रम पाई । गए जहाँ सीतल अवँराई ॥
भरत दीन्ह निज बसन डसाई । बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई ॥

संसारके सभी श्रमोंको हरनेवाले प्रभुने [हाथी, घोड़े आदि बाँटनेमें] श्रमका अनुभव किया और [श्रम मिटानेको] वहाँ गये जहाँ शीतल अमराई (आमोंका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by

बगीचा) थी। वहाँ भरतजीने अपना वस्त्र बिछा दिया। प्रभु उसपर बैठ गये और सब भाई उनकी सेवा करने लगे ॥ ३ ॥

मारुतसुत तब मारुत करई। पुलक बपुष लोचन जल भरई॥
हनूमान सम नहिं बड़भागी। नहिं कोउ राम चरन अनुरागी॥
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई। बार बार प्रभु निज मुख गाई॥

उस समय पवनपुत्र हनुमान्‌जी पवन (पंखा) करने लगे। उनका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रोंमें [प्रेमाश्रुओंका] जल भर आया। [शिवजी कहने लगे—] हे गिरिजे! हनुमान्‌जीके समान न तो कोई बड़भागी है और न कोई श्रीरामजीके चरणोंका प्रेमी ही है, जिनके प्रेम और सेवाकी [स्वयं] प्रभुने अपने श्रीमुखसे बार-बार बड़ाई की है ॥ ४-५ ॥

दो०—तेहिं अवसर मुनि नारद आए करतल बीन।
गावन लगे राम कल कीरति सदा नबीन ॥ ५० ॥

उसी अवसरपर नारदमुनि हाथमें वीणा लिये हुए आये। वे श्रीरामजीकी सुन्दर और नित्य नवीन रहनेवाली कीर्ति गाने लगे ॥ ५० ॥

चौ०—मामवलोकय पंकज लोचन। कृपा बिलोकनि सोच बिमोचन॥
नील तामरस स्याम काम अरि। हृदय कंज मकरंद मधुप हरि॥

कृपापूर्वक देख लेनेमात्रसे शोकके छुड़ानेवाले हे कमलनयन! मेरी ओर देखिये (मुझपर भी कृपादृष्टि कीजिये)। हे हरि! आप नील कमलके समान श्यामवर्ण और कामदेवके शत्रु महादेवजीके हृदयकमलके मकरन्द (प्रेम-रस) के पान करनेवाले भ्रमर हैं॥ १॥

जातुधान बरूथ बल भंजन। मुनि सज्जन रंजन अघ गंजन॥
भूसुर ससि नव बृंद बलाहक। असरन सरन दीन जन गाहक॥

आप राक्षसोंकी सेनाके बलको तोड़नेवाले हैं। मुनियों और संतजनोंको आनन्द देनेवाले और पापोंके नाश करनेवाले हैं। ब्राह्मणरूपी खेतीके लिये आप नये मेघसमूह हैं और शरणहीनोंको शरण देनेवाले तथा दीन जनोंको अपने आश्रयमें ग्रहण करनेवाले हैं॥ २॥

भुज बल बिपुल भार महि खंडित। खर दूषन बिराध बध पंडित॥
रावनारि सुखरूप भूपबर। जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर॥

अपने बाहुबलसे पृथ्वीके बड़े भारी बोझको नष्ट करनेवाले, खर-दूषण और विराध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[ख]ल वध करनेमें कुशल, रावणके शत्रु, आनन्दस्वरूप, राजाओंमें श्रेष्ठ और दशरथके कुलरूपी कुमुदिनीके चन्द्रमा श्रीरामजी ! आपकी जय हो ॥ ३ ॥

सुजस पुरान बिदित निगमागम । गावत सुर मुनि संत समागम ॥
कारुनीक ब्यलीक मद खंडन । सब बिधि कुसल कोसला मंडन ॥

आपका सुन्दर यश पुराणों, वेदोंमें और तन्त्रादि शास्त्रोंमें प्रकट है । देवता, [मु]नि और संतोंके समुदाय उसे गाते हैं । आप करुणा करनेवाले और झूठे मदका नाश [क]रनेवाले, सब प्रकारसे कुशल (निपुण) और श्रीअयोध्याजीके भूषण ही हैं ॥ ४ ॥

कलि मल मथन नाम ममताहन । तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन ॥

आपका नाम कलियुगके पापोंको मथ डालनेवाला और ममताको मारनेवाला [है] । हे तुलसीदासके प्रभु ! शरणागतकी रक्षा कीजिये ॥ ५ ॥

दो०—प्रेम सहित मुनि नारद बरनि राम गुन ग्राम ।
सोभासिंधु हृदयँ धरि गए जहाँ बिधि धाम ॥ ५१ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुणसमूहोंका प्रेमपूर्वक वर्णन करके मुनि नारदजी शोभाके [स]मुद्र प्रभुको हृदयमें धरकर जहाँ ब्रह्मलोक है वहाँ चले गये ॥ ५१ ॥

[चौ]०—गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा । मैं सब कही मोरि मति जथा ॥
राम चरित सत कोटि अपारा । श्रुति सारदा न बरनै पारा ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे गिरिजे ! सुनो, मैंने यह उज्ज्वल कथा, जैसी [मेरी] बुद्धि थी, वैसी पूरी कह डाली । श्रीरामजीके चरित्र सौ करोड़ [अथवा] अपार [हैं] । श्रुति और शारदा भी उनका वर्णन नहीं कर सकते ॥ १ ॥

राम अनंत अनंत गुनानी । जन्म कर्म अनंत नामानी ॥
जल सीकर महि रज गनि जाहीं । रघुपति चरित न बरनि सिराहीं ॥

भगवान् श्रीराम अनन्त हैं; उनके गुण अनन्त हैं; जन्म, कर्म और नाम भी [अ]नन्त हैं । जलकी बूँदें और पृथ्वीके रज-कण चाहे गिने जा सकते हों, पर [श्री]रघुनाथजीके चरित्र वर्णन करनेसे नहीं चुकते ॥ २ ॥

बिमल कथा हरि पद दायनी । भगति होइ सुनि अनपायनी ॥
उमा कहिउँ सब कथा सुहाई । जो भुसुंडि खगपतिहि सुनाई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह पवित्र कथा भगवान्‌के परमपदको देनेवाली है। इसके सुननेसे अविच भक्ति प्राप्त होती है। हे उमा! मैंने वह सब सुन्दर कथा कही जो काकभुशुण्डि ने गरुड़जीको सुनायी थी ॥ ३ ॥

कछुक राम गुन कहेउँ बखानी। अब का कहौं सो कहहु भवानी॥
सुनि सुभ कथा उमा हरषानी। बोली अति बिनीत मृदु बानी॥

मैंने श्रीरामजीके कुछ थोड़े-से गुण बखानकर कहे हैं। हे भवानी! सो कहो, अब और क्या कहूँ? श्रीरामजीकी मङ्गलमयी कथा सुनकर पार्वतीजी हर्षित हुईं और अत्यन्त विनम्र तथा कोमल वाणी बोलीं—॥ ४ ॥

धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी। सुनेउँ राम गुन भव भय हारी॥

हे त्रिपुरारि! मैं धन्य हूँ, धन्य-धन्य हूँ जो मैंने जन्म-मृत्युके भयको ह करनेवाले श्रीरामजीके गुण (चरित्र) सुने ॥ ५ ॥

दो०—तुम्हरी कृपाँ कृपायतन अब कृतकृत्य न मोह।
जानेउँ राम प्रताप प्रभु चिदानंद संदोह ॥५२(क)॥

हे कृपाधाम! अब आपकी कृपासे मैं कृतकृत्य हो गयी। अब मुझे मोह नहीं गया। हे प्रभु! मैं सच्चिदानन्दघन प्रभु श्रीरामजीके प्रतापको जान गयी ॥ ५२ (क)॥

नाथ तवानन ससि स्रवत कथा सुधा रघुबीर।
श्रवन पुटन्हि मन पान करि नहिं अघात मतिधीर ॥५२(ख)॥

हे नाथ! आपका मुखरूपी चन्द्रमा श्रीरघुवीरकी कथारूपी अमृत बरसाता है। हे मतिधीर! मेरा मन कर्णपुटोंसे उसे पीकर तृप्त नहीं होता ॥ ५२ (ख)॥

चौ०—राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं॥
जीवनमुक्त महामुनि जेऊ। हरि गुन सुनहिं निरंतर तेऊ॥

श्रीरामजीके चरित्र सुनते-सुनते जो तृप्त हो जाते हैं (बस कर देते हैं), उन्होंने तो उसका विशेष रस जाना ही नहीं। जो जीवन्मुक्त महामुनि हैं, वे भी भगवान्‌के गुण निरन्तर सुनते रहते हैं ॥ १ ॥

भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा॥
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुन ग्रामा। श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो संसाररूपी सागरका पार पाना चाहता है उसके लिये तो श्रीरामजीकी कथा दृढ़ नौकाके समान है। श्रीहरिके गुणसमूह तो विषयी लोगोंके लिये भी कानोंको सुख देनेवाले और मनको आनन्द देनेवाले हैं ॥ २ ॥

श्रवनवंत अस को जग माहीं। जाहि न रघुपति चरित सोहाहीं ॥
ते जड़ जीव निजात्मक घाती। जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती ॥

जगत्में कानवाला ऐसा कौन है जिसे श्रीरघुनाथजीके चरित्र न सुहाते हों। जिन्हें श्रीरघुनाथजीकी कथा नहीं सुहाती, वे मूर्ख जीव तो अपनी आत्माकी हत्या करनेवाले हैं ॥ ३ ॥

हरिचरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा ॥
तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई। कागभसुंडि गरुड़ प्रति गाई ॥

हे नाथ! आपने श्रीरामचरितमानसका गान किया, उसे सुनकर मैंने अपार सुख पाया। आपने जो यह कहा कि यह सुन्दर कथा काकभुशुण्डिजीने गरुड़जीसे कही थी—॥ ४ ॥

दो०—बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ राम चरन अति नेह।
बायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह ॥ ५३ ॥

सो कौएका शरीर पाकर भी काकभुशुण्डि वैराग्य, ज्ञान और विज्ञानमें दृढ़ हैं, उनका श्रीरामजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रेम है और उन्हें श्रीरघुनाथजीकी भक्ति भी प्राप्त है, इस बातका मुझे परम सन्देह हो रहा है ॥ ५३ ॥

चौ०—नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होइ धर्म ब्रतधारी ॥
धर्मसील कोटिक महँ कोई। बिषय बिमुख बिराग रत होई ॥

हे त्रिपुरारि! सुनिये, हजारों मनुष्योंमें कोई एक धर्मके व्रतका धारण करनेवाला होता है और करोड़ों धर्मात्माओंमें कोई एक विषयसे विमुख (विषयोंका त्यागी) और वैराग्यपरायण होता है ॥ १ ॥

कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कहई। सम्यक ग्यान सकृत कोउ लहई ॥
ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ। जीवनमुक्त सकृत जग सोऊ ॥

श्रुति कहती है कि करोड़ों विरक्तोंमें कोई एक सम्यक् (यथार्थ) ज्ञानको प्राप्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized b

करता है। और करोड़ों ज्ञानियोंमें कोई एक ही जीवन्मुक्त होता है। जगत्‌में कोई विरला ही ऐसा (जीवन्मुक्त) होगा ॥ २ ॥

तिन्ह सहस्र महुँ सब सुख खानी। दुर्लभ ब्रह्म लीन बिग्यानी॥
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी॥

हजारों जीवन्मुक्तोंमें भी सब सुखोंकी खान, ब्रह्ममें लीन विज्ञानवान् पुरुष और भी दुर्लभ है। धर्मात्मा, वैराग्यवान्, ज्ञानी, जीवन्मुक्त और ब्रह्मलीन—॥ ३ ॥

सब ते सो दुर्लभ सुरराया। राम भगति रत गत मद माया॥
सो हरिभगति काग किमि पाई। बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई॥

इन सबमें भी हे देवाधिदेव महादेवजी! वह प्राणी अत्यन्त दुर्लभ है जो मद और मायासे रहित होकर श्रीरामजीकी भक्तिके परायण हो। हे विश्वनाथ! ऐसी दुर्लभ हरिभक्तिको कौआ कैसे पा गया, मुझे समझाकर कहिये ॥ ४ ॥

दो०—राम परायन ग्यान रत गुनागार मति धीर।
नाथ कहहु केहि कारन पायउ काक सरीर॥ ५४॥

हे नाथ! कहिये, [ऐसे] श्रीरामपरायण, ज्ञाननिरत, गुणधाम और धीरबुद्धि भुशुण्डिजीने कौएका शरीर किस कारण पाया? ॥ ५४ ॥

चौ०—यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काग कहँ पावा॥
तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी। कहहु मोहि अति कौतुक भारी॥

हे कृपालु! बताइये, उस कौएने प्रभुका यह पवित्र और सुन्दर चरित्र कहाँ पाया? और हे कामदेवके शत्रु! यह भी बताइये, आपने इसे किस प्रकार सुना? मुझे बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है ॥ १ ॥

गरुड़ महाग्यानी गुन रासी। हरि सेवक अति निकट निवासी॥
तेहिं केहि हेतु काग सन जाई। सुनी कथा मुनि निकर बिहाई॥

गरुड़जी तो महान् ज्ञानी, सद्‌गुणोंकी राशि, श्रीहरिके सेवक और उनके अत्यन्त निकट रहनेवाले (उनके वाहन ही) हैं। उन्होंने मुनियोंके समूहको छोड़कर, कौएसे जाकर हरिकथा किस कारण सुनी? ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहहु कवन बिधि भा संबादा। दोउ हरिभगत काग उरगादा ॥
गौरि गिरा सुनि सरल सुहाई। बोले सिव सादर सुख पाई ॥
कहिये, काकभुशुण्डि और गरुड़ इन दोनों हरिभक्तोंकी बातचीत किस प्रकार ...? पार्वतीजीकी सरल, सुन्दर वाणी सुनकर शिवजी सुख पाकर आदरके साथ बोले—

धन्य सती पावन मति तोरी। रघुपति चरन प्रीति नहिं थोरी ॥
सुनहु परम पुनीत इतिहासा। जो सुनि सकल लोक भ्रम नासा ॥
हे सती! तुम धन्य हो; तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त पवित्र है। श्रीरघुनाथजीके ...णोंमें तुम्हारा कम प्रेम नहीं है (अत्यधिक प्रेम है)। अब वह परम पवित्र ...तिहास सुनो, जिसे सुननेसे सारे लोकके भ्रमका नाश हो जाता है ॥ ४ ॥

उपजइ राम चरन बिस्वासा। भव निधि तर नर बिनहिं प्रयासा ॥
तथा श्रीरामजीके चरणोंमें विश्वास उत्पन्न होता है और मनुष्य बिना ही परिश्रम ...साररूपी समुद्रसे तर जाता है ॥ ५ ॥

दो०—ऐसिअ प्रस्न बिहंगपति कीन्हि काग सन जाइ।
सो सब सादर कहिहउँ सुनहु उमा मन लाइ ॥ ५५ ॥
पक्षिराज गरुड़जीने भी जाकर काकभुशुण्डिजीसे प्रायः ऐसे ही प्रश्न किये थे। ... उमा! मैं वह सब आदरसहित कहूँगा, तुम मन लगाकर सुनो ॥ ५५ ॥

चौ०—मैं जिमि कथा सुनी भव मोचनि। सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि ॥
प्रथम दच्छ गृह तव अवतारा। सती नाम तब रहा तुम्हारा ॥
मैंने जिस प्रकार वह भव (जन्म-मृत्यु) से छुड़ानेवाली कथा सुनी, हे सुमुखी! हे सुलोचनी! वह प्रसङ्ग सुनो। पहले तुम्हारा अवतार दक्षके घर हुआ था। तब तुम्हारा नाम सती था ॥ १ ॥

दच्छ जग्य तव भा अपमाना। तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना ॥
मम अनुचरन्ह कीन्ह मख भंगा। जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा ॥
दक्षके यज्ञमें तुम्हारा अपमान हुआ। तब तुमने अत्यन्त क्रोध करके प्राण त्याग दिये थे; और फिर मेरे सेवकोंने यज्ञ विध्वंस कर दिया था। वह सारा प्रसङ्ग तुम जानती ही हो ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तब अति सोच भयउ मन मोरें। दुखी भयउँ बियोग प्रिय तोरें॥
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा। कौतुक देखत फिरउँ बेरागा॥

तब मेरे मनमें बड़ा सोच हुआ और हे प्रिये! मैं तुम्हारे वियोगसे दुखी हो गया। मैं विरक्तभावसे सुन्दर वन, पर्वत, नदी और तालाबोंका कौतुक (दृश्य) देखता फिरता था॥ ३॥

गिरि सुमेर उत्तर दिसि दूरी। नील सैल एक सुंदर भूरी॥
तासु कनकमय सिखर सुहाए। चारि चारु मोरें मन भाए॥

सुमेरु पर्वतकी उत्तर दिशामें, और भी दूर, एक बहुत ही सुन्दर नील पर्वत है। उसके सुन्दर स्वर्णमय शिखर हैं, [उनमेंसे] चार सुन्दर शिखर मेरे मनको बहुत ही अच्छे लगे॥ ४॥

तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला। बट पीपर पाकरी रसाला॥
सैलोपरि सर सुंदर सोहा। मनि सोपान देखि मन मोहा॥

उन शिखरोंमें एक-एकपर बरगद, पीपल, पाकर और आमका एक-एक विशाल वृक्ष है। पर्वतके ऊपर एक सुन्दर तालाब शोभित है; जिसकी मणियोंकी सीढ़ियाँ देखकर मन मोहित हो जाता है॥ ५॥

दो०—सीतल अमल मधुर जल जलज बिपुल बहुरंग।
कूजत कल रव हंस गन गुंजत मंजुल भृंग॥ ५६॥

उसका जल शीतल, निर्मल और मीठा है; उसमें रंग-बिरंगे बहुत-से कमल खिले हुए हैं। हंसगण मधुर स्वरसे बोल रहे हैं और भौंरे सुन्दर गुंजार कर रहे हैं॥ ५६॥

चौ०—तेहिं गिरि रुचिर बसइ खग सोई। तासु नास कल्पांत न होई॥
माया कृत गुन दोष अनेका। मोह मनोज आदि अबिबेका॥

उस सुन्दर पर्वतपर वही पक्षी (काकभुशुण्डि) बसता है। उसका नाश कल्पके अन्तमें भी नहीं होता। मायारचित अनेकों गुण-दोष, मोह, काम आदि अविवेक,॥ १॥

रहे ब्यापि समस्त जग माहीं। तेहि गिरि निकट कबहुँ नहिं जाहीं॥
तहँ बसि हरिहि भजइ जिमि कागा। सो सुनु उमा सहित अनुरागा॥

जो सारे जगत्‌में छा रहे हैं, उस पर्वतके पास भी कभी नहीं फटकते। वहाँ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[सु]नकर जिस प्रकार वह काक हरिको भजता है, हे उमा ! उसे प्रेमसहित सुनो ॥ २ ॥

पीपर तरु तर ध्यान सो धरई । जाप जग्य पाकरि तर करई ॥
आँब छाँह कर मानस पूजा । तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा ॥

वह पीपलके वृक्षके नीचे ध्यान धरता है । पाकरके नीचे जपयज्ञ करता है । [आ]मकी छायामें मानसिक पूजा करता है । श्रीहरिके भजनको छोड़कर उसे दूसरा कोई [का]म नहीं है ॥ ३ ॥

बर तर कह हरि कथा प्रसंगा । आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा ॥
राम चरित बिचित्र बिधि नाना । प्रेम सहित कर सादर गाना ॥

बरगदके नीचे वह श्रीहरिकी कथाओंके प्रसङ्ग कहता है । वहाँ अनेकों पक्षी [आ]ते और कथा सुनते हैं । वह विचित्र रामचरित्रको अनेकों प्रकारसे प्रेमसहित आदर[पू]र्वक गान करता है ॥ ४ ॥

सुनहिं सकल मति बिमल मराला । बसहिं निरंतर जे तेहिं ताला ॥
जब मैं जाइ सो कौतुक देखा । उर उपजा आनंद बिसेषा ॥

सब निर्मल बुद्धिवाले हंस, जो सदा उस तालाबपर बसते हैं, उसे सुनते हैं । [ज]ब मैंने वहाँ जाकर यह कौतुक (दृश्य) देखा, तब मेरे हृदयमें विशेष आनन्द [उ]त्पन्न हुआ ॥ ५ ॥

दो०—तब कछु काल मराल तनु धरि तहँ कीन्ह निवास ।
सादर सुनि रघुपति गुन पुनि आयउँ कैलास ॥ ५७ ॥

तब मैंने हंसका शरीर धारण कर कुछ समय वहाँ निवास किया और श्रीरघुनाथजीके [गु]णोंको आदरसहित सुनकर फिर कैलासको लौट आया ॥ ५७ ॥

[चौ]०—गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा । मैं जेहि समय गयउँ खग पासा ॥
अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू । गयउ काग पहिं खग कुल केतू ॥

हे गिरिजे ! मैंने वह सब इतिहास कहा कि जिस समय मैं काकभुशुण्डिके पास गया [थ]ा । अब वह कथा सुनो जिस कारणसे पक्षिकुलके ध्वजा गरुड़जी उस काकके पास गये थे ।

जब रघुनाथ कीन्हि रन क्रीड़ा । समुझत चरित होति मोहि ब्रीड़ा ॥
इंद्रजीत कर आपु बँधायो । तब नारद मुनि गरुड़ पठायो ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब श्रीरघुनाथजीने ऐसी रणलीला की जिस लीलाका स्मरण करनेसे मुझे ल
होती है—मेघनादके हाथों अपनेको बँधा लिया—तब नारद मुनिने गरुड़को भेज

बंधन काटि गयो उरगादा। उपजा हृदयँ प्रचंड बिषाद
प्रभु बंधन समुझत बहु भाँती। करत बिचार उरग आराती

सर्पोंके भक्षक गरुड़जी बन्धन काटकर गये, तब उनके हृदयमें बड़ा भारी विष
उत्पन्न हुआ। प्रभुके बन्धनको स्मरण करके सर्पोंके शत्रु गरुड़जी बहुत प्रकारसे वि
करने लगे—॥ ३ ॥

ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं। देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं

जो व्यापक, विकाररहित वाणीके पति और माया-मोहसे परे ब्रह्म परमेश्वर
मैंने सुना था कि जगत्‌में उन्हींका अवतार है। पर मैंने उस (अवतार) का प्रभाव कु
भी नहीं देखा॥ ४ ॥

दो०—भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जा कर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम॥ ५८॥

जिनका नाम जपकर मनुष्य संसारके बन्धनसे छूट जाते हैं उन्हीं रामको ए
तुच्छ राक्षसने नागपाशसे बाँध लिया॥ ५८ ॥

चौ०—नाना भाँति मनहि समुझावा। प्रगट न ग्यान हृदयँ भ्रम छावा॥
खेद खिन्न मन तर्क बढ़ाई। भयउ मोहबस तुम्हरिहिं नाईं॥

गरुड़जीने अनेकों प्रकारसे अपने मनको समझाया। पर उन्हें ज्ञान नहीं हुआ,
हृदयमें भ्रम और भी अधिक छा गया। [सन्देहजनित] दुःखसे दुखी होकर, मनमें
कुतर्क बढ़ाकर वे तुम्हारी ही भाँति मोहवश हो गये॥ १ ॥

ब्याकुल गयउ देवरिषि पाहीं। कहेसि जो संसय निज मन माहीं॥
सुनि नारदहि लागि अति दाया। सुनु खग प्रबल राम कै माया॥

व्याकुल होकर वे देवर्षि नारदजीके पास गये और मनमें जो सन्देह था, वह
उनसे कहा। उसे सुनकर नारदको अत्यन्त दया आयी। [उन्होंने कहा—] हे गरुड़!
सुनिये! श्रीरामजीकी माया बड़ी ही बलवती है॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई। बरिआईं बिमोह मन करई॥
जेहिं बहु बार नचावा मोही। सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही॥

जो ज्ञानियोंके चित्तको भी भलीभाँति हरण कर लेती है और उनके मनमें बर्दस्ती बड़ा भारी मोह उत्पन्न कर देती है, तथा जिसने मुझको भी बहुत बार नचाया हे पक्षिराज! वही माया आपको भी व्याप गयी है॥ ३॥

महामोह उपजा उर तोरें। मिटिहि न बेगि कहें खग मोरें॥
चतुरानन पहिं जाहु खगेसा। सोइ करेहु जेहि होइ निदेसा॥

हे गरुड़! आपके हृदयमें बड़ा भारी मोह उत्पन्न हो गया है। यह मेरे समझानेसे त नहीं मिटेगा। अतः हे पक्षिराज! आप ब्रह्माजीके पास जाइये और वहाँ जिस मके लिये आदेश मिले, वही कीजियेगा॥ ४॥

दो०—अस कहि चले देवरिषि करत राम गुन गान।
हरि माया बल बरनत पुनि पुनि परम सुजान॥ ५९॥

ऐसा कहकर परम सुजान देवर्षि नारदजी श्रीरामजीका गुणगान करते हुए और बार श्रीहरिकी मायाका बल वर्णन करते हुए चले॥ ५९॥

चौ०—तब खगपति बिरंचि पहिं गयऊ। निज संदेह सुनावत भयऊ॥
सुनि बिरंचि रामहि सिरु नावा। समुझि प्रताप प्रेम अति छावा॥

तब पक्षिराज गरुड़ ब्रह्माजीके पास गये और अपना सन्देह उन्हें कह सुनाया। से सुनकर ब्रह्माजीने श्रीरामचन्द्रजीको सिर नवाया और उनके प्रतापको समझकर नके अत्यन्त प्रेम छा गया॥ १॥

मन महुँ करइ बिचार बिधाता। माया बस कबि कोबिद ग्याता॥
हरि माया कर अमिति प्रभावा। बिपुल बार जेहिं मोहि नचावा॥

ब्रह्माजी मनमें विचार करने लगे कि कवि, कोविद और ज्ञानी सभी मायाके श हैं। भगवान्‌की मायाका प्रभाव असीम है, जिसने मुझतकको अनेकों बार चाया है॥ २॥

अग जगमय जग मम उपराजा। नहिं आचरज मोह खगराजा॥
तब बोले बिधि गिरा सुहाई। जान महेस राम प्रभुताई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यह सारा चराचर जगत् तो मेरा रचा हुआ है। जब मैं ही मायावश नाचने लगता हूँ, तब पक्षिराज गरुड़को मोह होना कोई आश्चर्य [की बात] नहीं है। तदनन्तर ब्रह्माजी सुन्दर वाणी बोले—श्रीरामजीकी महिमाको महादेवजी जानते हैं ॥ ३ ॥

बैनतेय संकर पहिं जाहू। तात अनत पूछहु जनि काहू॥
तहँ होइहि तव संसय हानी। चलेउ बिहंग सुनत बिधि बानी॥

हे गरुड़ ! तुम शंकरजीके पास जाओ। हे तात ! और कहीं किसीसे न पूछना। तुम्हारे सन्देहका नाश वहीं होगा। ब्रह्माजीका वचन सुनते ही गरुड़ चल दिये ॥ ४ ॥

दो०—परमातुर बिहंगपति आयउ तब मो पास।
जात रहेउँ कुबेर गृह रहिहु उमा कैलास ॥ ६० ॥

तब बड़ी आतुरता (उतावली) से पक्षिराज गरुड़ मेरे पास आये। हे उमा ! उस समय मैं कुबेरके घर जा रहा था और तुम कैलासपर थीं ॥ ६० ॥

चौ०—तेहिं मम पद सादर सिरु नावा। पुनि आपन संदेह सुनावा॥
सुनि ता करि बिनती मृदु बानी। प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी॥

गरुड़ने आदरपूर्वक मेरे चरणोंमें सिर नवाया और फिर मुझको अपना सन्देह सुनाया। हे भवानी ! उनकी विनती और कोमल वाणी सुनकर मैंने प्रेमसहित उनसे कहा—॥ १ ॥

मिलेहु गरुड़ मारग महँ मोही। कवन भाँति समुझावौं तोही॥
तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहु काल करिअ सतसंगा॥

हे गरुड़ ! तुम मुझे रास्तेमें मिले हो। राह चलते मैं तुम्हें किस प्रकार समझाऊँ ? सब सन्देहोंका तो तभी नाश हो जब दीर्घकालतक सत्सङ्ग किया जाय ॥ २ ॥

सुनिअ तहाँ हरि कथा सुहाई। नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई॥
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना। प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना॥

और वहाँ (सत्सङ्गमें) सुन्दर हरिकथा सुनी जाय, जिसे मुनियोंने अनेकों प्रकारसे गाया है और जिसके आदि, मध्य और अन्तमें भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ही प्रतिपाद्य प्रभु हैं ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नित हरि कथा होत जहँ भाई। पठवउँ तहाँ सुनहु तुम्ह जाई॥
जाइहि सुनत सकल संदेहा। राम चरन होइहि अति नेहा॥

हे भाई! जहाँ प्रतिदिन हरिकथा होती है, तुमको मैं वहीं भेजता हूँ, तुम जाकर सुनो। उसे सुनते ही तुम्हारा सब सन्देह दूर हो जायगा और तुम्हें श्रीरामजीके ...णोंमें अत्यन्त प्रेम होगा॥ ४॥

दो०—बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग॥ ६१॥

सत्सङ्गके बिना हरिकी कथा सुननेको नहीं मिलती, उसके बिना मोह नहीं ...ता और मोहके गये बिना श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ (अचल) प्रेम नहीं होता।

...—मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ग्यान बिरागा॥
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला। तहँ रह काकभुसुंडि सुसीला॥

बिना प्रेमके केवल योग, तप, ज्ञान और वैराग्यादिके करनेसे श्रीरघुनाथजी ...ीं मिलते। [अतएव तुम सत्सङ्गके लिये वहाँ जाओ जहाँ] उत्तर दिशामें एक ...र नील पर्वत है। वहाँ परम सुशील काकभुशुण्डिजी रहते हैं॥ १॥

राम भगति पथ परम प्रबीना। ग्यानी गुन गृह बहु कालीना॥
राम कथा सो कहइ निरंतर। सादर सुनहिं बिबिध बिहंगबर॥

वे रामभक्तिके मार्गमें परम प्रवीण हैं, ज्ञानी हैं, गुणोंके धाम हैं और बहुत ...लके हैं। वे निरन्तर श्रीरामचन्द्रजीकी कथा कहते रहते हैं, जिसे भाँति-भाँतिके ... पक्षी आदरसहित सुनते हैं॥ २॥

जाइ सुनहु तहँ हरि गुन भूरी। होइहि मोह जनित दुख दूरी॥
मैं जब तेहि सब कहा बुझाई। चलेउ हरषि मम पद सिरु नाई॥

वहाँ जाकर श्रीहरिके गुणसमूहोंको सुनो। उनके सुननेसे मोहसे उत्पन्न तुम्हारा ...ख दूर हो जायगा। मैंने उसे जब सब समझाकर कहा, तब वह मेरे चरणोंमें सिर ...ाकर हर्षित होकर चला गया॥ ३॥

ताते उमा न मैं समुझावा। रघुपति कृपाँ मरमु मैं पावा॥
होइहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना। सो खोवै चह कृपानिधाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitize...

हे उमा ! मैंने उसको इसीलिये नहीं समझाया कि मैं श्रीरघुनाथजीकी कृपा उसका मर्म (भेद) पा गया था । उसने कभी अभिमान किया होगा, जिस कृपानिधान श्रीरामजी नष्ट करना चाहते हैं ॥ ४ ॥

कछु तेहि ते पुनि मैं नहिं राखा । समुझइ खग खगही कै भाषा ॥
प्रभु माया बलवंत भवानी । जाहि न मोह कवन अस ग्यानी ॥

फिर कुछ इस कारण भी मैंने उसको अपने पास नहीं रक्खा कि पक्षी पक्षी ही बोली समझते हैं । हे भवानी ! प्रभुकी माया [बड़ी ही] बलवती है, ऐसा कौ ज्ञानी है, जिसे वह न मोह ले ? ॥ ५ ॥

दो०—ग्यानी भगत सिरोमनि त्रिभुवनपति कर जान ।
ताहि मोह माया नर पावँर करहिं गुमान ॥ ६२ (क)

जो ज्ञानियोंमें और भक्तोंमें शिरोमणि हैं एवं त्रिभुवनपति भगवान्‌के वाहन हैं उन गरुड़को भी मायाने मोह लिया । फिर भी नीच मनुष्य मूर्खतावश घमं किया करते हैं ॥ ६२ (क) ॥

मासपारायण, अट्ठाईसवाँ विश्राम

सिव बिरंचि कहुँ मोहइ को है बपुरा आन ।
अस जियँ जानि भजहिं मुनि माया पति भगवान ॥ ६२ (ख)

यह माया जब शिवजी और ब्रह्माजीको भी मोह लेती है, तब दूसरा बेचा क्या चीज है ? जीमें ऐसा जानकर ही मुनिलोग उस मायाके स्वामी भगवान्‌ भजन करते हैं ॥ ६२ (ख) ॥

चौ०—गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडा । मति अकुंठ हरि भगति अखंडा ॥
देखि सैल प्रसन्न मन भयऊ । माया मोह सोच सब गयऊ ॥

गरुड़जी वहाँ गये जहाँ निर्बाध बुद्धि और पूर्ण भक्तिवाले काकभुशुण्डिजी बसते थे । उस पर्वतको देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया और [उसके दर्शनसे ही] सब माया, मोह तथा सोच जाता रहा ॥ १ ॥

करि तड़ाग मज्जन जलपाना । बट तर गयउ हृदयँ हरषाना ॥
बृद्ध बृद्ध बिहंग तहँ आए । सुनै राम के चरित सुहाए ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तालाबमें स्नान और जलपान करके वे प्रसन्नचित्तसे वटवृक्षके नीचे गये। वहाँ [रा]मजीके सुन्दर चरित्र सुननेके लिये बूढ़े-बूढ़े पक्षी आये हुए थे॥ २॥

कथा अरंभ करै सोइ चाहा। तेही समय गयउ खगनाहा॥
आवत देखि सकल खगराजा। हरषेउ बायस सहित समाजा॥

[का]भुशुण्डिजी कथा आरम्भ करना ही चाहते थे कि उसी समय पक्षिराज गरुड़[जी] वहाँ जा पहुँचे। पक्षियोंके राजा गरुड़जीको आते देखकर काकभुशुण्डिजीसहित [सारा] पक्षिसमाज हर्षित हुआ॥ ३॥

अति आदर खगपति कर कीन्हा। स्वागत पूछि सुआसन दीन्हा॥
करि पूजा समेत अनुरागा। मधुर बचन तब बोलेउ कागा॥

उन्होंने पक्षिराज गरुड़जीका बहुत ही आदर-सत्कार किया और स्वागत [(कु]शल) पूछकर बैठनेके लिये सुन्दर आसन दिया। फिर प्रेमसहित पूजा करके [का]कभुशुण्डिजी मधुर वचन बोले—॥ ४॥

दो०—नाथ कृतारथ भयउँ मैं तव दरसन खगराज।
आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयहु केहि काज॥ ६३ (क)॥

हे नाथ! हे पक्षिराज! आपके दर्शनसे मैं कृतार्थ हो गया। आप जो आज्ञा [दें] मैं अब वही करूँ। हे प्रभो! आप किस कार्यके लिये आये हैं?॥ ६३ (क)॥

सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस।
जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस॥ ६३ (ख)॥

पक्षिराज गरुड़जीने कोमल वचन कहे—आप तो सदा ही कृतार्थरूप हैं, जिनकी [बड़ा]ई स्वयं महादेवजीने आदरपूर्वक अपने श्रीमुखसे की है॥ ६३ (ख)॥

[चौ]०—सुनहु तात जेहि कारन आयउँ। सो सब भयउ दरस तव पायउँ॥
देखि परम पावन तव आश्रम। गयउ मोह संसय नाना भ्रम॥

हे तात! सुनिये, मैं जिस कारणसे आया था, वह सब कार्य तो यहाँ आते ही हो गया। फिर आपके दर्शन भी प्राप्त हो गये। आपका परम पवित्र आश्रम [देख]कर ही मेरा मोह, सन्देह और अनेक प्रकारके भ्रम सब जाते रहे॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अब श्रीराम कथा अति पावनि । सदा सुखद दुख पुंज नसावनि ॥
सादर तात सुनावहु मोही । बार बार बिनवउँ प्रभु तोही ॥

अब हे तात ! आप मुझे श्रीरामजीकी अत्यन्त पवित्र करनेवाली, सदा सुख देनेवाली और दुःखसमूहका नाश करनेवाली कथा आदरसहित सुनाइये । हे प्रभो ! मैं बार-बार आपसे यही विनती करता हूँ ॥ २ ॥

सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता । सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता ॥
भयउ तासु मन परम उछाहा । लाग कहै रघुपति गुन गाहा ॥

गरुड़जीकी विनम्र, सरल, सुन्दर प्रेमयुक्त, सुखप्रद और अत्यन्त पवित्र वाणी सुनते ही भुशुण्डिजीके मनमें परम उत्साह हुआ और वे श्रीरघुनाथजीके गुणोंकी कथा कहने लगे ॥ ३ ॥

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी । रामचरित सर कहेसि बखानी ॥
पुनि नारद कर मोह अपारा । कहेसि बहुरि रावन अवतारा ॥

हे भवानी ! पहले तो उन्होंने बड़े ही प्रेमसे रामचरितमानस सरोवरका रूपक समझाकर कहा । फिर नारदजीका अपार मोह और फिर रावणका अवतार कहा ॥ ४ ॥

प्रभु अवतार कथा पुनि गाई । तब सिसु चरित कहेसि मन लाई ॥

फिर प्रभुके अवतारकी कथा वर्णन की । तदनन्तर मन लगाकर श्रीरामजीकी बाललीलाएँ कहीं ॥ ५ ॥

दो०—बालचरित कहि बिबिधि बिधि मन महँ परम उछाह ।
रिषि आगवन कहेसि पुनि श्री रघुबीर बिबाह ॥ ६४ ॥

मनमें परम उत्साह भरकर अनेकों प्रकारकी बाललीलाएँ कहकर, फिर ऋषि विश्वामित्रजीका अयोध्या आना और श्रीरघुवीरजीका विवाह वर्णन किया ॥ ६४ ॥

चौ०—बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा । पुनि नृप बचन राज रस भंगा ॥
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा । कहेसि राम लछिमन संबादा ॥

फिर श्रीरामजीके राज्याभिषेकका प्रसङ्ग, फिर राजा दशरथजीके वचनसे राज रस (राज्याभिषेकके आनन्द) में भङ्ग पड़ना, फिर नगरनिवासियोंका विरह, विषाद और श्रीराम-लक्ष्मणका संवाद (बातचीत) कहा ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिपिन गवन केवट अनुरागा। सुरसरि उतरि निवास प्रयागा॥
बालमीक प्रभु मिलन बखाना। चित्रकूट जिमि बसे भगवाना॥

श्रीरामका वनगमन, केवटका प्रेम, गङ्गाजीसे पार उतरकर प्रयागमें निवास, [वाल्]मीकिजी और प्रभु श्रीरामजीका मिलन और जैसे भगवान् चित्रकूटमें बसे, वह [सब] कहा॥ २॥

सचिवागवन नगर नृप मरना। भरतागवन प्रेम बहु बरना॥
करि नृप क्रिया संग पुरबासी। भरत गए जहँ प्रभु सुख रासी॥

फिर मन्त्री सुमन्त्रजीका नगरमें लौटना, राजा दशरथजीका मरण, भरतजीका [ननिहालसे] अयोध्यामें आना और उनके प्रेमका बहुत वर्णन किया। राजाकी [अ]न्त्येष्टि क्रिया करके नगरनिवासियोंको साथ लेकर भरतजी वहाँ गये जहाँ सुखकी [रा]शि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी थे॥ ३॥

पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाए। लै पादुका अवधपुर आए॥
भरत रहनि सुरपति सुत करनी। प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी॥

फिर श्रीरघुनाथजीने उनको बहुत प्रकारसे समझाया, जिससे वे खड़ाऊँ लेकर [अ]योध्यापुरी लौट आये, यह सब कथा कही। भरतजीकी नन्दिग्राममें रहनेकी रीति, इन्द्रपुत्र [ज]यन्तकी नीच करनी और फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी और अत्रिजीका मिलाप वर्णन किया॥ ४॥

दो०—कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजी सरभंग।
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभु अगस्ति सतसंग॥ ६५॥

जिस प्रकार विराधका वध हुआ और शरभंगजीने शरीर त्याग किया, वह प्रसङ्ग कह[क]र, फिर सुतीक्ष्णजीका प्रेम वर्णन करके प्रभु और अगस्त्यजीका सत्सङ्ग-वृत्तान्त कहा॥ ६५॥

[चौ]०—कहि दंडक बन पावनताई। गीध मइत्री पुनि तेहिं गाई॥
पुनि प्रभु पंचबटीं कृत बासा। भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा॥

दण्डकवनका पवित्र करना कहकर फिर भुशुण्डिजीने गृध्रराजके साथ मित्रताका वर्णन [कि]या। फिर जिस प्रकार प्रभुने पञ्चवटीमें निवास किया और सब मुनियोंके भयका नाश किया,

पुनि लछिमन उपदेस अनूपा। सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा॥
खर दूषन बध बहुरि बखाना। जिमि सब मरमु दसानन जाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection

और फिर जैसे लक्ष्मणजीको अनुपम उपदेश दिया और शूर्पणखाको कुरूप किया, वह सब वर्णन किया। फिर खर-दूषण-वध और जिस प्रकार रावणने सब समाचार जाना, वह बखानकर कहा, ॥ २ ॥

दसकंधर मारीच बतकही। जेहि बिधि भई सो सब तेहिं कही॥
पुनि माया सीता कर हरना। श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना॥

तथा जिस प्रकार रावण और मारीचकी बातचीत हुई, वह सब उन्होंने कही। फिर मायासीताका हरण और श्रीरघुवीरके विरहका कुछ वर्णन किया ॥ ३ ॥

पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही। बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही॥
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा। जेहि बिधि गए सरोबर तीरा॥

फिर प्रभुने गिद्ध जटायुकी जिस प्रकार क्रिया की, कबन्धका वध करके शबरीको परमगति दी और फिर जिस प्रकार विरह-वर्णन करते हुए श्रीरघुवीरजी पंपासरके तीरपर गये, वह सब कहा ॥ ४ ॥

दो०—प्रभु नारद संबाद कहि मारुति मिलन प्रसंग।
पुनि सुग्रीव मिताई बालि प्रान कर भंग ॥ ६६ (क)॥

प्रभु और नारदजीका संवाद और मारुतिके मिलनेका प्रसङ्ग कहकर फिर सुग्रीवसे मित्रता और बालिके प्राणनाशका वर्णन किया ॥ ६६ (क) ॥

कपिहि तिलक करि प्रभु कृत सैल प्रबरषन बास।
बरनन बर्षा सरद अरु राम रोष कपि त्रास ॥ ६६ (ख)॥

सुग्रीवका राजतिलक करके प्रभुने प्रवर्षण पर्वतपर निवास किया, वह तथा वर्षा और शरद्‌का वर्णन, श्रीरामजीका सुग्रीवपर रोष और सुग्रीवका भय आदि प्रसङ्ग कहे ॥ ६६ (ख)॥

चौ०—जेहि बिधि कपिपति कीस पठाए। सीता खोज सकल दिसि धाए॥
बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँती। कपिन्ह बहोरि मिला संपाती॥

जिस प्रकार वानरराज सुग्रीवने वानरोंको भेजा और वे सीताजीकी खोजमें जिस प्रकार सब दिशाओंमें गये, जिस प्रकार उन्होंने बिलमें प्रवेश किया और फिर जैसे वानरोंको सम्पाती मिला, वह कथा कही ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनि सब कथा समीरकुमारा। नाघत भयउ पयोधि अपारा॥
लंकाँ कपि प्रबेस जिमि कीन्हा। पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा॥

संपातीसे सब कथा सुनकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी जिस तरह अपार समुद्रको लाँघ गये, हनुमान्‌जीने जैसे लंकामें प्रवेश किया और फिर जैसे सीताजीको धीरज दिया, सो सब कहा

बन उजारि रावनहि प्रबोधी। पुर दहि नाघेउ बहुरि पयोधी॥
आए कपि सब जहँ रघुराई। बैदेही की कुसल सुनाई॥

अशोकवनको उजाड़कर, रावणको समझाकर, लंकापुरीको जलाकर फिर जैसे [उन्हों]ने समुद्रको लाँघा और जिस प्रकार सब वानर वहाँ आये जहाँ श्रीरघुनाथजी [थे औ]र आकर श्रीजानकीजीकी कुशल सुनायी, ॥ ३ ॥

सेन समेति जथा रघुबीरा। उतरे जाइ बारिनिधि तीरा॥
मिला बिभीषन जेहि बिधि आई। सागर निग्रह कथा सुनाई॥

फिर जिस प्रकार सेनासहित श्रीरघुवीर जाकर समुद्रके तटपर उतरे और जिस प्रकार [विभी]षणजी आकर उनसे मिले, वह सब और समुद्रके बाँधनेकी कथा उसने सुनायी॥४॥

दो०—सेतु बाँधि कपि सेन जिमि उतरी सागर पार।
गयउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार॥६७(क)॥

पुल बाँधकर जिस प्रकार वानरोंकी सेना समुद्रके पार उतरी और जिस प्रकार [वीर]श्रेष्ठ बालिपुत्र अंगद दूत बनकर गये, वह सब कहा॥६७(क)॥

निसिचर कीस लराई बरनिसि बिबिधि प्रकार।
कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संघार॥६७(ख)॥

फिर राक्षसों और वानरोंके युद्धका अनेकों प्रकारसे वर्णन किया। फिर कुम्भकर्ण [औ]र मेघनादके बल, पुरुषार्थ और संहारकी कथा कही॥६७(ख)॥

[चौ]०—निसिचर निकर मरन बिधि नाना। रघुपति रावन समर बखाना॥
रावन बध मंदोदरि सोका। राज बिभीषन देव असोका॥

नाना प्रकारके राक्षससमूहोंके मरण और श्रीरघुनाथजी और रावणके अनेक [प्र]कारके युद्धका वर्णन किया। रावणवध, मन्दोदरीका शोक, विभीषणका राज्याभिषेक [औ]र देवताओंका शोकरहित होना कहकर, ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digiti...

सीता रघुपति मिलन बहोरी। सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी॥
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता। अवध चले प्रभु कृपा निकेता॥

फिर सीताजी और श्रीरघुनाथजीका मिलाप कहा। जिस प्रकार देवताओंने हाथ जोड़कर स्तुति की और फिर जैसे वानरोंसमेत पुष्पकविमानपर चढ़कर कृपाधाम प्रभु अवधपुरीको चले, वह कहा॥ २॥

जेहि बिधि राम नगर निज आए। बायस बिसद चरित सब गाए॥
कहेसि बहोरि राम अभिषेका। पुर बरनत नृपनीति अनेका॥

जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी अपने नगर (अयोध्या) में आये, वे सब उज्ज्वल चरित्र काकभुशुण्डिजीने विस्तारपूर्वक वर्णन किये। फिर उन्होंने श्रीरामजीका राज्याभिषेक कहा। [शिवजी कहते हैं—] अयोध्यापुरीका और अनेक प्रकारकी राजनीतिका वर्णन करते हुए—

कथा समस्त भुसुंड बखानी। जो मैं तुम्ह सन कही भवानी॥
सुनि सब राम कथा खगनाहा। कहत बचन मन परम उछाहा॥

भुशुण्डिजीने वह सब कथा कही जो हे भवानी! मैंने तुमसे कही। सारी रामकथा सुनकर पक्षिराज गरुड़जी मनमें बहुत उत्साहित (आनन्दित) होकर वचन कहने लगे—॥

सो०—गयउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक॥ ६८ (क)॥

श्रीरघुनाथजीके सब चरित्र मैंने सुने, जिससे मेरा सन्देह जाता रहा। हे काकशिरोमणि! आपके अनुग्रहसे श्रीरामजीके चरणोंमें मेरा प्रेम हो गया॥ ६८ (क)॥

मोहि भयउ अति मोह प्रभु बंधन रन महुँ निरखि।
चिदानंद संदोह राम बिकल कारन कवन॥ ६८ (ख)॥

युद्धमें प्रभुका नागपाशसे बन्धन देखकर मुझे अत्यन्त मोह हो गया था कि श्रीरामजी तो सच्चिदानन्दघन हैं, वे किस कारण व्याकुल हैं॥ ६८ (ख)॥

चौ०—देखि चरित अति नर अनुसारी। भयउ हृदयँ मम संसय भारी॥
सोइ भ्रम अब हित करि मैं माना। कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना॥

बिल्कुल ही लौकिक मनुष्योंका-सा चरित्र देखकर मेरे हृदयमें भारी सन्देह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं अब उस भ्रम (सन्देह) को अपने लिये हित करके समझता हूँ। विधानने मुझपर यह बड़ा अनुग्रह किया ॥ १ ॥

जो अति आतप ब्याकुल होई। तरु छाया सुख जानइ सोई ॥
जौं नहिं होत मोह अति मोही। मिलतेउँ तात कवन बिधि तोही ॥

जो धूपसे अत्यन्त व्याकुल होता है, वही वृक्षकी छायाका सुख जानता है। हे यदि मुझे अत्यन्त मोह न होता तो मैं आपसे किस प्रकार मिलता ? ॥ २ ॥

सुनतेउँ किमि हरि कथा सुहाई। अति बिचित्र बहु बिधि तुम्ह गाई ॥
निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा ॥

और कैसे अत्यन्त विचित्र यह सुन्दर हरिकथा सुनता, जो आपने बहुत प्रकारसे है ? वेद, शास्त्र और पुराणोंका यही मत है; सिद्ध और मुनि भी यही कहते इसमें सन्देह नहीं कि—॥ ३ ॥

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही ॥
राम कृपाँ तव दरसन भयऊ। तव प्रसाद सब संसय गयऊ ॥

शुद्ध (सच्चे) संत उसीको मिलते हैं जिसे श्रीरामजी कृपा करके देखते हैं। रामजीकी कृपासे मुझे आपके दर्शन हुए और आपकी कृपासे मेरा सन्देह चला गया ॥ ४ ॥

दो०—सुनि बिहंगपति बानी सहित बिनय अनुराग।
पुलक गात लोचन सजल मन हरषेउ अति काग ॥ ६९ (क) ॥

पक्षिराज गरुड़जीकी विनय और प्रेमयुक्त वाणी सुनकर काकभुशुण्डिजीका शरीर पुलकित हो गया, उनके नेत्रोंमें जल भर आया और वे मनमें अत्यन्त हर्षित हुए ॥ ६९ (क) ॥

श्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरि दास।
पाइ उमा अति गोप्यमपि सज्जन करहिं प्रकास ॥ ६९ (ख) ॥

हे उमा! सुन्दर बुद्धिवाले, सुशील, पवित्र कथाके प्रेमी और हरिके सेवक श्रोताको पाकर सज्जन अत्यन्त गोपनीय (सबके सामने प्रकट न करने योग्य) रहस्यको भी प्रकट कर देते हैं।

चौ०—बोलेउ काकभसुंड बहोरी। नभग नाथ पर प्रीति न थोरी ॥
सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे। कृपापात्र रघुनायक केरे ॥

काकभुशुण्डिजीने फिर कहा—पक्षिराजपर उनका प्रेम कम न था (अर्थात् बहुत था)—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digiti

हे नाथ ! आप सब प्रकारसे मेरे पूज्य हैं और श्रीरघुनाथजीके कृपापात्र हैं ॥ १ ॥

तुम्हहि न संसय मोह न माया । मो पर नाथ कीन्हि तुम्ह दाया ॥
पठइ मोह मिस खगपति तोही । रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही ॥

आपको न सन्देह है और न मोह अथवा माया ही है । हे नाथ ! आपने तो मुझपर दया की है । हे पक्षिराज ! मोहके बहाने श्रीरघुनाथजीने आपको यहाँ भेजकर मुझे बड़ाई दी है ॥ २ ॥

तुम्ह निज मोह कही खग साईं । सो नहिं कछु आचरज गोसाईं ॥
नारद भव बिरंचि सनकादी । जे मुनिनायक आतमबादी ॥

हे पक्षियोंके स्वामी ! आपने अपना मोह कहा, सो हे गोसाईं ! यह कुछ आश्चर्य नहीं है । नारदजी, शिवजी, ब्रह्माजी और सनकादि जो आत्मतत्त्वके मर्मी और उसका उपदेश करनेवाले श्रेष्ठ मुनि हैं ॥ ३ ॥

मोह न अंध कीन्ह केहि केही । को जग काम नचाव न जेही ॥
तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा । केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा ॥

उनमेंसे भी किस-किसको मोहने अंधा (विवेकशून्य) नहीं किया ? जगतमें ऐसा कौन है जिसे कामने न नचाया हो ? तृष्णाने किसको मतवाला नहीं बनाया ? क्रोधने किसका हृदय नहीं जलाया ? ॥ ४ ॥

दो०—ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार ।
केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न एहिं संसार ॥ ७०(क)॥

इस संसारमें ऐसा कौन ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, विद्वान् और गुणोंका धाम है, जिसकी लोभने विडम्बना (मिट्टी पलीद) न की हो ॥ ७० (क)॥

श्री मद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि ।
मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि ॥ ७०(ख)॥

लक्ष्मीके मदने किसको टेढ़ा और प्रभुताने किसको बहरा नहीं कर दिया ? ऐसा कौन है, जिसे मृगनयनी (युवती स्त्री) के नेत्र-बाण न लगे हों ॥ ७० (ख)॥

चौ०—गुन कृत सन्यपात नहिं केही । कोउ न मान मद तजेउ निबेही ॥
जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा । ममता केहि कर जस न नसावा ॥

[रज, तम आदि] गुणोंका किया हुआ सन्निपात किसे नहीं हुआ ? ऐसा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं है जिसे मान और मदने अछूता छोड़ा हो। यौवनके ज्वरने किसे आपेसे नहीं किया ? ममताने किसके यशका नाश नहीं किया ?॥ १ ॥

मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा॥
चिंता साँपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया॥

मत्सर (डाह) ने किसको कलङ्क नहीं लगाया ? शोकरूपी पवनने किसे नहीं दिया ? चिन्तारूपी साँपिनने किसे नहीं खा लिया ? जगत्में ऐसा कौन है, जिसे न व्यापी हो ?॥ २ ॥

कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥
सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥

मनोरथ कीड़ा है, शरीर लकड़ी है। ऐसा धैर्यवान् कौन है, जिसके शरीरमें कीड़ा न लगा हो ? पुत्रकी, धनकी और लोकप्रतिष्ठाकी—इन तीन प्रबल ओंने किसकी बुद्धिको मलिन नहीं कर दिया (बिगाड़ नहीं दिया) ?॥ ३ ॥

यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा॥
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं॥

यह सब मायाका बड़ा बलवान् परिवार है। यह अपार है, इसका वर्णन कौन कर ता है ? शिवजी और ब्रह्माजी भी जिससे डरते हैं, तब दूसरे जीव तो किस गिनतीमें हैं ?

दो०—ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड॥ ७१ (क)॥

मायाकी प्रचण्ड सेना संसारभरमें छायी हुई है। कामादि (काम, क्रोध और लोभ) के सेनापति हैं और दंभ, कपट और पाखण्ड योद्धा हैं॥ ७१ (क)॥

सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि॥ ७१ (ख)॥

वह माया श्रीरघुवीरकी दासी है। यद्यपि समझ लेनेपर वह मिथ्या ही है वह श्रीरामजीकी कृपाके बिना छूटती नहीं। हे नाथ ! यह मैं प्रतिज्ञा करके हूँ॥ ७१ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digiti

चौ०-जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहुँ न पावा॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥
जो माया सारे जगत्‌को नचाती है और जिसका चरित्र (करनी) किसीने नहीं लख पाया, हे खगराज गरुड़जी! वही माया प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी भ्रुकुटीके इशारेपर अपने समाज (परिवार) सहित नटीकी तरह नाचती है॥ १॥

सोइ सच्चिदानंद घन रामा। अज बिग्यान रूप बल धामा॥
ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता। अखिल अमोघसक्ति भगवंता॥
श्रीरामजी वही सच्चिदानन्दघन हैं जो अजन्मा, विज्ञानस्वरूप, रूप और बलके धाम, सर्वव्यापक एवं व्याप्य (सर्वरूप), अखण्ड, अनन्त, सम्पूर्ण, अमोघशक्ति (जिसकी शक्ति कभी व्यर्थ नहीं होती) और छः ऐश्वर्योंसे युक्त भगवान् हैं॥ २॥

अगुन अदभ्र गिरा गोतीता। सबदरसी अनवद्य अजीता॥
निर्मम निराकार निरमोहा। नित्य निरंजन सुख संदोहा॥
वे निर्गुण (मायाके गुणोंसे रहित), महान्, वाणी और इन्द्रियोंसे परे, सबकुछ देखनेवाले, निर्दोष, अजेय, ममतारहित, निराकार (मायिक आकारसे रहित), मोहरहित, नित्य, मायारहित, सुखकी राशि, ॥ ३॥

प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी। ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी॥
इहाँ मोह कर कारन नाहीं। रबि सन्मुख तम कबहुँ कि जाहीं॥
प्रकृतिसे परे, प्रभु (सर्वसमर्थ), सदा सबके हृदयमें बसनेवाले, इच्छारहित, विकाररहित, अविनाशी ब्रह्म हैं। यहाँ (श्रीराममें) मोहका कारण ही नहीं है। क्या अन्धकारका समूह कभी सूर्यके सामने जा सकता है?॥ ४॥

दो०-भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप।
किए चरित पावन परम प्राकृत नर अनुरूप॥ ७२ (क)॥
भगवान् प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने भक्तोंके लिये राजाका शरीर धारण किया और साधारण मनुष्योंके-से अनेकों परम पावन चरित्र किये॥ ७२ (क)॥

जथा अनेक बेष धरि नृत्य करइ नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावइ आपुन होइ न सोइ॥ ७२ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जैसे कोई नट (खेल करनेवाला) अनेक वेष धारण करके नृत्य करता है, वही-वही (जैसा वेष होता है, उसीके अनुकूल) भाव दिखलाता है, पर स्वयं उनमेंसे कोई हो नहीं जाता, ॥ ७२ (ख) ॥

असि रघुपति लीला उरगारी। दनुज बिमोहनि जन सुखकारी॥
जे मति मलिन बिषयबस कामी। प्रभु पर मोह धरहिं इमि स्वामी॥

हे गरुड़जी ! ऐसी ही श्रीरघुनाथजीकी यह लीला है, जो राक्षसोंको विशेष हित करनेवाली और भक्तोंको सुख देनेवाली है। हे स्वामी ! जो मनुष्य मलिनबुद्धि, विषयोंके वश और कामी हैं, वे ही प्रभुपर इस प्रकार मोहका आरोप करते हैं॥ १ ॥

नयन दोष जा कहँ जब होई। पीत बरन ससि कहुँ कह सोई॥
जब जेहि दिसि भ्रम होइ खगेसा। सो कह पच्छिम उयउ दिनेसा॥

जब जिसको [कवँल आदि] नेत्रदोष होता है, तब वह चन्द्रमाको पीले रंगका कहता है। हे पक्षिराज ! जब जिसे दिशाभ्रम होता है, तब वह कहता है कि सूर्य पश्चिममें उदय हुआ है॥ २ ॥

नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोह बस आपुहि लेखा॥
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी। कहहिं परस्पर मिथ्याबादी॥

नौकापर चढ़ा हुआ मनुष्य जगत्‌को चलता हुआ देखता है और मोहवश अपनेको अचल समझता है। बालक घूमते (चक्राकार दौड़ते) हैं, घर आदि नहीं घूमते। पर वे आपसमें एक दूसरेको झूठा कहते हैं॥ ३ ॥

हरि बिषइक अस मोह बिहंगा। सपनेहुँ नहिं अग्यान प्रसंगा॥
मायाबस मतिमंद अभागी। हृदयँ जमनिका बहुबिधि लागी॥

हे गरुड़जी ! श्रीहरिके विषयमें मोहकी कल्पना भी ऐसी ही है, भगवान्‌में तो स्वप्नमें भी अज्ञानका प्रसङ्ग (अवसर) नहीं है। किन्तु जो मायाके वश, मन्दबुद्धि और भाग्यहीन हैं और जिनके हृदयपर अनेकों प्रकारके परदे पड़े हैं, ॥ ४ ॥

ते सठ हठ बस संसय करहीं। निज अग्यान राम पर धरहीं॥

वे मूर्ख हठके वश होकर सन्देह करते हैं और अपना अज्ञान श्रीरामजीपर आरोपित करते हैं॥ ५ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digiti...

दो०—काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुखरूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे तम कूप ॥ ७३ (क)॥

जो काम, क्रोध, मद और लोभमें रत हैं और दुःखरूप घरमें आसक्त हैं, वे श्रीरघुनाथजीको कैसे जान सकते हैं? वे मूर्ख तो अंधकाररूपी कूएँमें पड़े हुए हैं॥ ७३ (क)॥

निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ॥ ७३ (ख)॥

निर्गुणरूप अत्यन्त सुलभ (सहज ही समझमें आ जानेवाला) है, परन्तु [गुणातीत दिव्य] सगुणरूपको कोई नहीं जानता। इसलिये उन सगुण भगवान्के अनेक प्रकारके सुगम और अगम चरित्रोंको सुनकर मुनियोंके भी मनको भ्रम हो जाता है॥ ७३ (ख)॥

चौ०—सुनु खगेस रघुपति प्रभुताई। कहउँ जथामति कथा सुहाई॥
जेहि बिधि मोह भयउ प्रभु मोही। सो सब कथा सुनावउँ तोही॥

हे पक्षिराज गरुड़जी! श्रीरघुनाथजीकी प्रभुता सुनिये। मैं अपनी बुद्धिके अनुसार वह सुहावनी कथा कहता हूँ। हे प्रभो! मुझे जिस प्रकार मोह हुआ, वह सब कथा भी आपको सुनाता हूँ॥ १॥

राम कृपा भाजन तुम्ह ताता। हरि गुन प्रीति मोहि सुखदाता॥
ताते नहिं कछु तुम्हहिं दुरावउँ। परम रहस्य मनोहर गावउँ॥

हे तात! आप श्रीरामजीके कृपापात्र हैं। श्रीहरिके गुणोंमें आपकी प्रीति है, इसीलिये आप मुझे सुख देनेवाले हैं। इसीसे मैं आपसे कुछ भी नहीं छिपाता और अत्यन्त रहस्यकी बातें आपको गाकर सुनाता हूँ॥ २॥

सुनहु राम कर सहज सुभाऊ। जन अभिमान न राखहिं काऊ॥
संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोक दायक अभिमाना॥

श्रीरामचन्द्रजीका सहज स्वभाव सुनिये। वे भक्तमें अभिमान कभी नहीं रहने देते। क्योंकि अभिमान जन्म-मरणरूप संसारका मूल है और अनेक प्रकारके क्लेशों तथा समस्त शोकोंका देनेवाला है॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तातें करहिं कृपानिधि दूरी। सेवक पर ममता अति भूरी॥
जिमि सिसु तन ब्रन होइ गोसाईं। मातु चिराव कठिन की नाईं॥

इसीलिये कृपानिधि उसे दूर कर देते हैं; क्योंकि सेवकपर उनकी बहुत ही अधिक ममता है। हे गोसाईं! जैसे बच्चेके शरीरमें फोड़ा हो जाता है, तो माता उसे कठोर हृदयकी भाँति चिरा डालती है॥ ४॥

दो०—जदपि प्रथम दुख पावइ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नास हित जननी गनति न सो सिसु पीर॥ ७४ (क)॥

यद्यपि बच्चा पहले (फोड़ा चिराते समय) दुःख पाता है और अधीर होकर रोता है, तो भी रोगके नाशके लिये माता बच्चेकी उस पीड़ाको कुछ भी नहीं गिनती (उसकी परवा नहीं करती और फोड़ेको चिरवा ही डालती है)॥ ७४ (क)॥

तिमि रघुपति निज दास कर हरहिं मान हित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहि कस न भजहु भ्रम त्यागि॥ ७४ (ख)॥

उसी प्रकार श्रीरघुनाथजी अपने दासका अभिमान उसके हितके लिये हर लेते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि ऐसे प्रभुको भ्रम त्याग कर क्यों नहीं भजते॥ ७४ (ख)॥

चौ०—राम कृपा आपनि जड़ताई। कहउँ खगेस सुनहु मन लाई॥
जब जब राम मनुज तनु धरहीं। भक्त हेतु लीला बहु करहीं॥

हे पक्षिराज गरुड़जी! श्रीरामजीकी कृपा और अपनी जड़ता (मूर्खता) की बात कहता हूँ, मन लगाकर सुनिये। जब-जब श्रीरामचन्द्रजी मनुष्यशरीर धारण करते हैं और भक्तोंके लिये बहुत-सी लीलाएँ करते हैं,॥ १॥

तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ। बालचरित बिलोकि हरषाऊँ॥
जन्म महोत्सव देखउँ जाई। बरष पाँच तहँ रहउँ लोभाई॥

तब-तब मैं अयोध्यापुरी जाता हूँ और उनकी बाललीला देखकर हर्षित होता हूँ। वहाँ जाकर मैं जन्ममहोत्सव देखता हूँ और [भगवान्‌की शिशुलीलामें] लुभाकर पाँच वर्षतक वहीं रहता हूँ॥ २॥

इष्टदेव मम बालक रामा। सोभा बपुष कोटि सत कामा॥
निज प्रभु बदन निहारि निहारी। लोचन सुफल करउँ उरगारी॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized b

बालकरूप श्रीरामचन्द्रजी मेरे इष्टदेव हैं, जिनके शरीरमें अरबों कामदेवोंकी शोभा है। हे गरुड़जी! अपने प्रभुका मुख देख-देखकर मैं नेत्रोंको सफल करता हूँ॥ ३॥

लघु बायस बपु धरि हरि संगा। देखउँ बालचरित बहुरंगा॥

छोटे-से कौएका शरीर धरकर और भगवान्‌के साथ-साथ फिरकर मैं उनके भाँति-भाँतिके बालचरित्रोंको देखा करता हूँ॥ ४॥

दो०—लरिकाईं जहँ जहँ फिरहिं तहँ तहँ संग उड़ाउँ।
जूठनि परइ अजिर महँ सो उठाइ करि खाउँ॥ ७५ (क)॥

लड़कपनमें वे जहाँ-जहाँ फिरते हैं, वहाँ-वहाँ मैं साथ-साथ उड़ता हूँ। और आँगनमें उनकी जो जूठन पड़ती है, वही उठाकर खाता हूँ॥ ७५ (क)॥

एक बार अतिसय सब चरित किए रघुबीर।
सुमिरत प्रभु लीला सोइ पुलकित भयउ सरीर॥ ७५ (ख)॥

एक बार श्रीरघुवीरने सब चरित्र बहुत अधिकतासे किये। प्रभुकी उस लीलाका स्मरण करते ही काकभुशुण्डिजीका शरीर [प्रेमानन्दवश] पुलकित हो गया॥ ७५ (ख)॥

चौ०—कहइ भसुंड सुनहु खगनायक। राम चरित सेवक सुखदायक॥
नृप मंदिर सुंदर सब भाँती। खचित कनक मनि नाना जाती॥

भुशुण्डिजी कहने लगे—हे पक्षिराज! सुनिये, श्रीरामजीका चरित्र सेवकोंको सुख देनेवाला है। [अयोध्याका] राजमहल सब प्रकारसे सुन्दर है। सोनेके महलमें नाना प्रकारके रत्न जड़े हुए हैं॥ १॥

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई। जहँ खेलहिं नित चारिउ भाई॥
बालबिनोद करत रघुराई। बिचरत अजिर जननि सुखदाई॥

सुन्दर आँगनका वर्णन नहीं किया जा सकता, जहाँ चारों भाई नित्य खेलते हैं। माताको सुख देनेवाले बालविनोद करते हुए श्रीरघुनाथजी आँगनमें विचर रहे हैं॥ २॥

मरकत मृदुल कलेवर स्यामा। अंग अंग प्रति छबि बहु कामा॥
नव राजीव अरुन मृदु चरना। पदज रुचिर नख ससि दुति हरना॥

मरकत मणिके समान हरिताभ श्याम और कोमल शरीर है। अंग-अंगमें बहुत-से कामदेवोंकी शोभा छायी हुई है। नवीन [लाल] कमलके समान लाल-लाल कोमल

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चरण हैं। सुन्दर अँगुलियाँ हैं और नख अपनी ज्योतिसे चन्द्रमाकी कान्तिको हरने-वाले हैं॥ ३॥

ललित अंक कुलिसादिक चारी। नूपुर चारु मधुर रवकारी॥
चारु पुरट मनि रचित बनाई। कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई॥

[तलवेमें] वज्रादि (वज्र, अंकुश, ध्वजा और कमल) के चार सुन्दर चिह्न हैं। चरणोंमें मधुर शब्द करनेवाले सुन्दर नूपुर हैं। मणियों (रत्नों) से जड़ी हुई सोनेकी बनी हुई सुन्दर करधनीका शब्द सुहावना लग रहा है॥ ४॥

दो०—रेखा त्रय सुंदर उदर नाभी रुचिर गँभीर।
उर आयत भ्राजत बिबिधि बाल बिभूषन चीर॥ ७६॥

उदरपर सुन्दर तीन रेखाएँ (त्रिवली) हैं, नाभि सुन्दर और गहरी है। विशाल वक्षःस्थलपर अनेकों प्रकारके बच्चोंके आभूषण और वस्त्र सुशोभित हैं॥ ७६॥

चौ०—अरुन पानि नख करज मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर॥
कंध बाल केहरि दर ग्रीवा। चारु चिबुक आनन छबि सींवा॥

लाल-लाल हथेलियाँ, नख और अँगुलियाँ मनको हरनेवाले हैं और विशाल भुजाओंपर सुन्दर आभूषण हैं। बालसिंह (सिंहके बच्चे) के-से कंधे और शंखके समान (तीन रेखाओंसे युक्त) गला है। सुन्दर ठुड्डी है और मुख तो छबिकी सीमा ही है॥ १॥

कलबल बचन अधर अरुनारे। दुइ दुइ दसन बिसद बर बारे॥
ललित कपोल मनोहर नासा। सकल सुखद ससि कर सम हासा॥

कलबल (तोतले) वचन हैं, लाल-लाल ओंठ हैं। उज्ज्वल सुन्दर और छोटी-छोटी [ऊपर और नीचे] दो-दो दँतुलियाँ हैं। सुन्दर गाल, मनोहर नासिका और सब सुखोंको देनेवाली चन्द्रमाकी [अथवा सुख देनेवाली समस्त कलाओंसे पूर्ण चन्द्रमाकी] किरणोंके समान मधुर मुसकान है॥ २॥

नील कंज लोचन भव मोचन। भ्राजत भाल तिलक गोरोचन॥
बिकट भृकुटि सम श्रवन सुहाए। कुंचित कच मेचक छबि छाए॥

नीले कमलके समान नेत्र जन्म-मृत्यु [के बन्धन] से छुड़ानेवाले हैं। ललाटपर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गोरोचनका तिलक सुशोभित है। भौंहें टेढ़ी हैं, कान सम और सुन्दर हैं, काले और घुँघराले केशोंकी छबि छा रही है॥ ३॥

पीत झीनि झगुली तन सोही। किलकनि चितवनि भावति मोही॥
रूप रासि नृप अजिर बिहारी। नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी॥

पीली और महीन झँगुली शरीरपर शोभा दे रही है। उनकी किलकारी और चितवन मुझे बहुत ही प्रिय लगती है। राजा दशरथजीके आँगनमें विहार करनेवाले रूपकी राशि श्रीरामचन्द्रजी अपनी परछाहीं देखकर नाचते हैं,॥ ४॥

मोहि सन करहिं बिबिधि बिधि क्रीड़ा। बरनत मोहि होति अति ब्रीड़ा॥
किलकत मोहि धरन जब धावहिं। चलउँ भागि तब पूप देखावहिं॥

और मुझसे बहुत प्रकारके खेल करते हैं, जिन चरित्रोंका वर्णन करते मुझे लज्जा आती है। किलकारी मारते हुए जब वे मुझे पकड़ने दौड़ते और मैं भाग चलता, तब मुझे पूआ दिखलाते थे॥ ५॥

दो०—आवत निकट हँसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहिं।
जाउँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितइ पराहिं॥७७ (क)॥

मेरे निकट आनेपर प्रभु हँसते हैं और भाग जानेपर रोते हैं। और जब मैं उनका चरण स्पर्श करनेके लिये पास जाता हूँ तब वे पीछे फिर-फिरकर मेरी ओर देखते हुए भाग जाते हैं॥ ७७ (क)॥

प्राकृत सिसु इव लीला देखि भयउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु चिदानंद संदोह॥ ७७ (ख)॥

साधारण बच्चों-जैसी लीला देखकर मुझे मोह (शङ्का) हुआ कि सच्चिदानन्दघन प्रभु यह कौन [महत्त्वका] चरित्र (लीला) कर रहे हैं॥ ७७ (ख)॥

चौ०—एतना मन आनत खगराया। रघुपति प्रेरित ब्यापी माया॥
सो माया न दुखद मोहि काहीं। आन जीव इव संसृत नाहीं॥

हे पक्षिराज! मनमें इतनी [शङ्का] लाते ही श्रीरघुनाथजीके द्वारा प्रेरित माया मुझपर छा गयी। परन्तु वह माया न तो मुझे दुःख देनेवाली हुई और न दूसरे जीवोंकी भाँति संसारमें डालनेवाली हुई॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नाथ इहाँ कछु कारन आना। सुनहु सो सावधान हरिजाना॥
ग्यान अखंड एक सीताबर। माया बस्य जीव सचराचर॥

हे नाथ! यहाँ कुछ दूसरा ही कारण है। हे भगवान्‌के वाहन गरुड़जी! उसे सावधान होकर सुनिये। एक सीतापति श्रीरामजी ही अखण्ड ज्ञानस्वरूप हैं और जड-चेतन सभी जीव मायाके वश हैं॥ २॥

जौं सब कें रह ग्यान एकरस। ईस्वर जीवहि भेद कहहु कस॥
माया बस्य जीव अभिमानी। ईस बस्य माया गुन खानी॥

यदि जीवोंको एकरस (अखण्ड) ज्ञान रहे, तो कहिये, फिर ईश्वर और जीवमें भेद ही कैसा? अभिमानी जीव मायाके वश है और वह [सत्त्व, रज, तम—इन] तीनों गुणोंकी खान माया ईश्वरके वशमें है॥ ३॥

परबस जीव स्वबस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता॥
मुधा भेद जद्यपि कृत माया। बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया॥

जीव परतन्त्र है, भगवान् स्वतन्त्र हैं। जीव अनेक हैं, श्रीपति भगवान् एक हैं। यद्यपि मायाका किया हुआ यह भेद असत् है तथापि वह भगवान्‌के भजन बिना करोड़ों उपाय करनेपर भी नहीं जा सकता॥ ४॥

दो०—रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्बान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूँछ बिषान॥ ७८ (क)॥

श्रीरामचन्द्रजीके भजन बिना जो मोक्षपद चाहता है, वह मनुष्य ज्ञानवान् होनेपर भी बिना पूँछ और सींगका पशु है॥ ७८ (क)॥

राकापति षोड़स उअहिं तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रबि राति न जाइ॥ ७८ (ख)॥

सभी तारागणोंके साथ सोलह कलाओंसे पूर्ण चन्द्रमा उदय हो और जितने पर्वत हैं उन सबमें दावाग्नि लगा दी जाय, तो भी सूर्यके उदय हुए बिना रात्रि नहीं जा सकती॥ ७८ (ख)॥

चौ०—ऐसेहिं हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा॥
हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। प्रभु प्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection

हे पक्षिराज ! इसी प्रकार श्रीहरिके भजन बिना जीवोंका क्लेश नहीं मिटता। श्रीहरिके सेवकको अविद्या नहीं व्यापती। प्रभुकी प्रेरणासे उसे विद्या व्यापती है॥१॥

तातें नास न होइ दास कर। भेद भगति बाढ़इ बिहंगबर॥
भ्रम तें चकित राम मोहि देखा। बिहँसे सो सुनु चरित बिसेषा॥

हे पक्षिश्रेष्ठ ! इसीसे दासका नाश नहीं होता और भेद-भक्ति बढ़ती है। श्रीरामजीने मुझे जब भ्रमसे चकित देखा, तब वे हँसे। वह विशेष चरित्र सुनिये॥ २॥

तेहि कौतुक कर मरमु न काहूँ। जाना अनुज न मातु पिताहूँ॥
जानु पानि धाए मोहि धरना। स्यामल गात अरुन कर चरना॥

उस खेलका मर्म किसीने नहीं जाना, न छोटे भाइयोंने और न माता-पिताने ही। वे श्याम शरीर और लाल-लाल हथेली और चरणतलवाले बालरूप श्रीरामजी घुटने और हाथोंके बल मुझे पकड़नेको दौड़े॥ ३॥

तब मैं भागि चलेउँ उरगारी। राम गहन कहँ भुजा पसारी॥
जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा। तहँ भुज हरि देखउँ निज पासा॥

हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी ! तब मैं भाग चला। श्रीरामजीने मुझे पकड़नेके लिये भुजा फैलायी। मैं जैसे-जैसे आकाशमें दूर उड़ता वैसे-वैसे ही वहाँ श्रीहरिकी भुजाको अपने पास देखता था॥ ४॥

दो०—ब्रह्मलोक लगि गयउँ मैं चितयउँ पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब राम भुजहि मोहि तात॥७९ (क)॥

मैं ब्रह्मलोकतक गया और जब उड़ते हुए मैंने पीछेकी ओर देखा, तो हे तात ! श्रीरामजीकी भुजामें और मुझमें केवल दो ही अंगुलका बीच था॥ ७९ (क)॥

सप्ताबरन भेद करि जहाँ लगें गति मोरि।
गयउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि ब्याकुल भयउँ बहोरि॥७९ (ख)॥

सातों आवरणोंको भेदकर जहाँतक मेरी गति थी वहाँतक मैं गया। पर वहाँ भी प्रभुकी भुजाको [अपने पीछे] देखकर मैं व्याकुल हो गया॥ ७९ (ख)॥

चौ०—मूदेउँ नयन त्रसित जब भयऊँ। पुनि चितवत कोसलपुर गयऊँ॥
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं। बिहँसत तुरत गयउँ मुख माहीं॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जब मैं भयभीत हो गया, तब मैंने आँखें मूँद लीं। फिर आँखें खोलकर देखते ही अवधपुरीमें पहुँच गया। मुझे देखकर श्रीरामजी मुसकराने लगे। उनके हँसते ही मैं तुरंत उनके मुखमें चला गया ॥ १ ॥

उदर माझ सुनु अंडज राया। देखेउँ बहु ब्रह्मांड निकाया ॥
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका। रचना अधिक एक ते एका ॥

हे पक्षिराज ! सुनिये, मैंने उनके पेटमें बहुत-से ब्रह्माण्डोंके समूह देखे। वहाँ (उन ब्रह्माण्डोंमें) अनेकों विचित्र लोक थे, जिनकी रचना एक-से-एककी बढ़कर थी।

कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा। अगनित उडगन रबि रजनीसा ॥
अगनित लोकपाल जम काला। अगनित भूधर भूमि बिसाला ॥

करोड़ों ब्रह्माजी और शिवजी, अनगिनत तारागण, सूर्य और चन्द्रमा, अनगिनत लोकपाल, यम और काल, अनगिनत विशाल पर्वत और भूमि, ॥ ३ ॥

सागर सरि सर बिपिन अपारा। नाना भाँति सृष्टि बिस्तारा ॥
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किंनर। चारि प्रकार जीव सचराचर ॥

असंख्य समुद्र, नदी, तालाब और वन तथा और भी नाना प्रकारकी सृष्टिका विस्तार देखा। देवता, मुनि, सिद्ध, नाग, मनुष्य, किन्नर तथा चारों प्रकारके जड़ और चेतन जीव देखे ॥ ४ ॥

दो०—जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहूँ न समाइ।
सो सब अद्भुत देखेउँ बरनि कवनि बिधि जाइ ॥ ८० (क) ॥

जो कभी न देखा था, न सुना था और जो मनमें भी नहीं समा सकता था (अर्थात् जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी), वही सब अद्भुत सृष्टि मैंने देखी। तब उसका किस प्रकार वर्णन किया जाय ! ॥ ८० (क) ॥

एक एक ब्रह्मांड महुँ रहउँ बरष सत एक।
एहि बिधि देखत फिरउँ मैं अंड कटाह अनेक ॥ ८० (ख) ॥

मैं एक-एक ब्रह्माण्डमें एक-एक सौ वर्षतक रहता। इस प्रकार मैं अनेकों ब्रह्माण्ड देखता फिरा ॥ ८० (ख) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०-लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता। भिन्न बिष्नु सिव मनु दिसित्राता॥
नर गंधर्ब भूत बेताला। किंनर निसिचर पसु खग ब्याला॥

प्रत्येक लोकमें भिन्न-भिन्न ब्रह्मा, भिन्न-भिन्न विष्णु, शिव, मनु, दिक्पाल, मनुष्य, गन्धर्व, भूत, वैताल, किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, सर्प, ॥ १ ॥

देव दनुज गन नाना जाती। सकल जीव तहँ आनहि भाँती॥
महि सरि सागर सर गिरि नाना। सब प्रपंच तहँ आनइ आना॥

तथा नाना जातिके देवता एवं दैत्यगण थे। सभी जीव वहाँ दूसरे ही प्रकारके थे। अनेक पृथ्वी, नदी, समुद्र, तालाब, पर्वत तथा सब सृष्टि वहाँ दूसरी-ही-दूसरी प्रकारकी थी।

अंडकोस प्रति प्रति निज रूपा। देखेउँ जिनस अनेक अनूपा॥
अवधपुरी प्रति भुवन निनारी। सरजू भिन्न भिन्न नर नारी॥

प्रत्येक ब्रह्माण्ड-ब्रह्माण्डमें मैंने अपना रूप देखा तथा अनेकों अनुपम वस्तुएँ देखीं। प्रत्येक भुवनमें न्यारी ही अवधपुरी, भिन्न ही सरयूजी और भिन्न प्रकारके ही नर-नारी थे।

दसरथ कौसल्या सुनु ताता। बिबिध रूप भरतादिक भ्राता॥
प्रति ब्रह्मांड राम अवतारा। देखउँ बालबिनोद अपारा॥

हे तात! सुनिये, दशरथजी, कौसल्याजी और भरतजी आदि भाई भी भिन्न-भिन्न रूपोंके थे। मैं प्रत्येक ब्रह्माण्डमें रामावतार और उनकी अपार बाललीलाएँ देखता फिरता।

दो०-भिन्न भिन्न मैं दीख सबु अति बिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु राम न देखेउँ आन॥ ८१ (क)॥

हे हरिवाहन! मैंने सभी कुछ भिन्न-भिन्न और अत्यन्त विचित्र देखा। मैं अनगिनत ब्रह्माण्डोंमें फिरा, पर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको मैंने दूसरी तरहका नहीं देखा॥ ८१ (क)॥

सोइ सिसुपन सोइ सोभा सोइ कृपाल रघुबीर।
भुवन भुवन देखत फिरउँ प्रेरित मोह समीर॥ ८१ (ख)॥

सर्वत्र वही शिशुपन, वही शोभा और वही कृपालु श्रीरघुवीर! इस प्रकार मोहरूपी पवनकी प्रेरणासे मैं भुवन-भुवनमें देखता फिरता था॥ ८१ (ख)॥

चौ०-भ्रमत मोहि ब्रह्मांड अनेका। बीते मनहुँ कल्प सत एका॥
फिरत फिरत निज आश्रम आयउँ। तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयउँ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेक ब्रह्माण्डोंमें भटकते मुझे मानो एक सौ कल्प बीत गये। फिरता-फिरता अपने आश्रममें आया और कुछ काल वहाँ रहकर बिताया ॥ १ ॥

निज प्रभु जन्म अवध सुनि पायउँ। निर्भर प्रेम हरषि उठि धायउँ॥
देखउँ जन्म महोत्सव जाई। जेहि बिधि प्रथम कहा मैं गाई॥

फिर जब अपने प्रभुका अवधपुरीमें जन्म (अवतार) सुन पाया, तब प्रेमसे परिपूर्ण होकर मैं हर्षपूर्वक उठ दौड़ा। जाकर मैंने जन्म-महोत्सव देखा, जिस प्रकार पहले वर्णन कर चुका हूँ ॥ २ ॥

राम उदर देखेउँ जग नाना। देखत बनइ न जाइ बखाना॥
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना। माया पति कृपाल भगवाना॥

श्रीरामचन्द्रजीके पेटमें मैंने बहुत-से जगत् देखे, जो देखते ही बनते थे, वर्णन नहीं किये जा सकते। वहाँ फिर मैंने सुजान मायाके स्वामी कृपालु भगवान् श्रीरामको देखा ॥ ३ ॥

करउँ बिचार बहोरि बहोरी। मोह कलिल ब्यापित मति मोरी॥
उभय घरी महँ मैं सब देखा। भयउँ भ्रमित मन मोह बिसेषा॥

मैं बार-बार विचार करता था। मेरी बुद्धि मोहरूपी कीचड़से व्याप्त थी। यह सब मैंने दो ही घड़ीमें देखा। मनमें विशेष मोह होनेसे मैं थक गया ॥ ४ ॥

दो०—देखि कृपाल बिकल मोहि बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतहीं मुख बाहेर आयउँ सुनु मतिधीर ॥८२ (क)॥

मुझे व्याकुल देखकर तब कृपालु श्रीरघुवीर हँस दिये। हे धीरबुद्धि गरुड़जी! सुनिये, उनके हँसते ही मैं मुँहसे बाहर आ गया ॥ ८२ (क) ॥

सोइ लरिकाई मो सन करन लगे पुनि राम।
कोटि भाँति समुझावउँ मनु न लहइ बिश्राम ॥८२(ख)॥

श्रीरामचन्द्रजी मेरे साथ, फिर वही लड़कपन करने लगे। मैं करोड़ों (असंख्य) प्रकारसे मनको समझाता था, पर वह शान्ति नहीं पाता था ॥ ८२ (ख) ॥

चौ०—देखि चरित यह सो प्रभुताई। समुझत देह दसा बिसराई॥
धरनि परेउँ मुख आव न बाता। त्राहि त्राहि आरत जन त्राता॥

यह [बाल] चरित्र देखकर और [पेटके अंदर देखी हुई] उस प्रभुताका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्मरण कर मैं शरीरकी सुध भूल गया और 'हे आर्त्तजनोंके रक्षक ! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये' पुकारता हुआ पृथ्वीपर गिर पड़ा। मुखसे बात नहीं निकलती थी ! ॥ १ ॥

प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी। निज माया प्रभुता तब रोकी॥
कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ। दीनदयाल सकल दुख हरेऊ॥

तदनन्तर प्रभुने मुझे प्रेमविह्वल देखकर अपनी मायाकी प्रभुता (प्रभाव) को रोक लिया। प्रभुने अपना कर-कमल मेरे सिरपर रक्खा। दीनदयालुने मेरा सम्पूर्ण दुःख हर लिया ॥ २ ॥

कीन्ह राम मोहि बिगत बिमोहा। सेवक सुखद कृपा संदोहा॥
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी। मन महुँ होइ हरष अति भारी॥

सेवकोंको सुख देनेवाले, कृपाके समूह (कृपामय) श्रीरामजीने मुझे मोहसे सर्वथा रहित कर दिया। उनकी पहलेवाली प्रभुताको विचार-विचारकर (याद कर-करके) मेरे मनमें बड़ा भारी हर्ष हुआ ॥ ३ ॥

भगत बछलता प्रभु कै देखी। उपजी मम उर प्रीति बिसेषी॥
सजल नयन पुलकित कर जोरी। कीन्हिउँ बहु बिधि बिनय बहोरी॥

प्रभुकी भक्तवत्सलता देखकर मेरे हृदयमें बहुत ही प्रेम उत्पन्न हुआ। फिर मैंने [आनन्दसे] नेत्रोंमें जल भरकर, पुलकित होकर और हाथ जोड़कर बहुत प्रकारसे विनती की ॥ ४ ॥

दो०—सुनि सप्रेम मम बानी देखि दीन निज दास।
बचन सुखद गंभीर मृदु बोले रमानिवास ॥ ८३ (क)॥

मेरी प्रेमयुक्त वाणी सुनकर और अपने दासको दीन देखकर रमानिवास श्रीरामजी सुखदायक, गम्भीर और कोमल वचन बोले—॥ ८३ (क)॥

काकभसुंडि मागु बर अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर रिधि मोच्छ सकल सुख खानि॥ ८३ (ख)॥

हे काकभुशुण्डि ! तू मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानकर वर माँग। अणिमा आदि अष्ट सिद्धियाँ, दूसरी ऋद्धियाँ तथा सम्पूर्ण सुखोंकी खान मोक्ष, ॥ ८३ (ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०-ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना। मुनि दुर्लभ गुन जे जग नाना॥
आजु देउँ सब संसय नाहीं। मागु जो तोहि भाव मन माहीं॥

ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान (तत्त्वज्ञान) और वे अनेकों गुण जो जगत्‌में मुनियोंके लिये भी दुर्लभ हैं, ये सब मैं आज तुझे दूँगा, इसमें सन्देह नहीं। जो मन भावे, सो माँग ले॥ १॥

सुनि प्रभु बचन अधिक अनुरागेउँ। मन अनुमान करन तब लागेउँ॥
प्रभु कह देन सकल सुख सही। भगति आपनी देन न कही॥

प्रभुके वचन सुनकर मैं बहुत ही प्रेममें भर गया। तब मनमें अनुमान करने लगा कि प्रभुने सब सुखोंके देनेकी बात कही, यह तो सत्य है; पर अपनी भक्ति देनेकी बात नहीं कही॥ २॥

भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे॥
भजन हीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेउँ खगराजा॥

भक्तिसे रहित सब गुण और सब सुख वैसे ही (फीके) हैं जैसे नमकके बिना बहुत प्रकारके भोजनके पदार्थ! भजनसे रहित सुख किस कामके? हे पक्षिराज! ऐसा विचारकर मैं बोला—॥ ३॥

जौं प्रभु होइ प्रसन्न बर देहू। मो पर करहु कृपा अरु नेहू॥
मन भावत बर मागउँ स्वामी। तुम्ह उदार उर अंतरजामी॥

हे प्रभो! यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वर देते हैं और मुझपर कृपा और स्नेह करते हैं, तो हे स्वामी! मैं अपना मन-भाया वर माँगता हूँ। आप उदार हैं और हृदयके भीतरकी जाननेवाले हैं॥ ४॥

दो०—अबिरल भगति बिसुद्ध तव श्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद कोउ पाव॥ ८४ (क)॥

आपकी जिस अविरल (प्रगाढ़) एवं विशुद्ध (अनन्य निष्काम) भक्तिको श्रुति और पुराण गाते हैं, जिसे योगीश्वर मुनि खोजते हैं और प्रभुकी कृपासे कोई विरला ही जिसे पाता है॥ ८४ (क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम ॥८४(ख)॥

हे भक्तोंके [मन-इच्छित फल देनेवाले] कल्पवृक्ष! हे शरणागतके हितकारी! हे कृपासागर! हे सुखधाम श्रीरामजी! दया करके मुझे अपनी वही भक्ति दीजिये ॥ ८४(ख)॥

चौ०—एवमस्तु कहि रघुकुलनायक। बोले बचन परम सुखदायक॥
सुनु बायस तैं सहज सयाना। काहे न मागसि अस बरदाना॥

'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) कहकर रघुवंशके स्वामी परम सुख देनेवाले वचन बोले— हे काक! सुन, तू स्वभावसे ही बुद्धिमान् है। ऐसा वरदान कैसे न माँगता ? ॥ १ ॥

सब सुख खानि भगति तैं मागी। नहिं जग कोउ तोहि सम बड़भागी॥
जो मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं। जे जप जोग अनल तन दहहीं॥

तूने सब सुखोंकी खान भक्ति माँग ली, जगत्‌में तेरे समान बड़भागी कोई नहीं है। वे मुनि जो जप और योगकी अग्निसे शरीर जलाते रहते हैं, करोड़ों यत्न करके भी जिसको (जिस भक्तिको) नहीं पाते ॥ २ ॥

रीझेउँ देखि तोरि चतुराई। मागेहु भगति मोहि अति भाई॥
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरें। सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरें॥

वही भक्ति तूने माँगी। तेरी चतुरता देखकर मैं रीझ गया। यह चतुरता मुझे बहुत ही अच्छी लगी। हे पक्षी! सुन, मेरी कृपासे अब समस्त शुभ गुण तेरे हृदयमें बसेंगे॥ ३॥

भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य बिभागा॥
जानब तैं सबही कर भेदा। मम प्रसाद नहिं साधन खेदा॥

भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, योग, मेरी लीलाएँ और उनके रहस्य तथा विभाग— इन सबके भेदको तू मेरी कृपासे ही जान जायगा। तुझे साधनका कष्ट नहीं होगा ॥ ४॥

दो०—माया संभव भ्रम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।
जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि ॥ ८५(क)॥

मायासे उत्पन्न सब भ्रम अब तुझको नहीं व्यापेंगे। मुझे अनादि, अजन्मा, अगुण (प्रकृतिके गुणोंसे रहित) और [गुणातीत दिव्य] गुणोंकी खान ब्रह्म जानना ॥ ८५(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मोहि भगत प्रिय संतत अस बिचारि सुनु काग।
कायँ बचन मन मम पद करेसु अचल अनुराग ॥८५(ख)॥

हे काक ! सुन, मुझे भक्त निरन्तर प्रिय हैं, ऐसा विचारकर, शरीर, वचन र मनसे मेरे चरणोंमें अटल प्रेम करना ॥ ८५ (ख) ॥

०-अब सुनु परम बिमल मम बानी। सत्य सुगम निगमादि बखानी ॥
निज सिद्धांत सुनावउँ तोही। सुनु मन धरु सब तजि भजु मोही ॥

अब मेरी सत्य, सुगम, वेदादिके द्वारा वर्णित परम निर्मल वाणी सुन। मैं तुझको यह ज सिद्धान्त' सुनाता हूँ। सुनकर मनमें धारणकर और सब तजकर मेरा भजन कर ॥१॥

मम माया संभव संसारा। जीव चराचर बिबिधि प्रकारा ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सब ते अधिक मनुज मोहि भाए ॥

यह सारा संसार मेरी मायासे उत्पन्न है। [इसमें] अनेकों प्रकारके चराचर व हैं। वे सभी मुझे प्रिय हैं; क्योंकि सभी मेरे उत्पन्न किये हुए हैं। [किन्तु] नुष्य मुझको सबसे अधिक अच्छे लगते हैं ॥ २ ॥

तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी। तिन्ह महुँ निगम धरम अनुसारी ॥
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ग्यानी। ग्यानिहु ते अति प्रिय बिग्यानी ॥

उन मनुष्योंमें भी द्विज, द्विजोंमें भी वेदोंको [कण्ठमें] धारण करनेवाले, नमें भी वेदोक्त धर्मपर चलनेवाले, उनमें भी विरक्त (वैराग्यवान्) मुझे प्रिय हैं। ग्यवानोंमें फिर ज्ञानी और ज्ञानियोंसे भी अत्यन्त प्रिय विज्ञानी हैं ॥ ३ ॥

तिन्ह ते पुनि मोहि प्रिय निज दासा। जेहि गति मोरि न दूसरि आसा ॥
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं ॥

विज्ञानियोंसे भी प्रिय मुझे अपना दास है, जिसे मेरी ही गति (आश्रय) है, ई दूसरी आशा नहीं है। मैं तुझसे बार-बार सत्य ('निज सिद्धान्त') कहता हूँ मुझे अपने सेवकके समान प्रिय कोई भी नहीं है ॥ ४ ॥

भगति हीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई ॥
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी ॥

भक्तिहीन ब्रह्मा ही क्यों न हो, वह मुझे सब जीवोंके समान ही प्रिय है। परन्तु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्तिमान् अत्यन्त नीच भी प्राणी मुझे प्राणोंके समान प्रिय है; यह मेरी घोषणा है ॥५॥

दो०—सुचि सुसील सेवक सुमति प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग ॥ ८६ ॥

पवित्र, सुशील और सुन्दर बुद्धिवाला सेवक, बता, किसको प्यारा नहीं लगता? वेद और पुराण ऐसी ही नीति कहते हैं। हे काक! सावधान होकर सुन ॥ ८६ ॥

चौ०—एक पिता के बिपुल कुमारा। होहिं पृथक गुन सील अचारा॥
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता। कोउ धनवंत सूर कोउ दाता॥

एक पिताके बहुत-से पुत्र पृथक्-पृथक् गुण, स्वभाव और आचरणवाले होते हैं। कोई पण्डित होता है, कोई तपस्वी, कोई ज्ञानी, कोई धनी, कोई शूरवीर, कोई दानी, ॥१॥

कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई। सब पर पितहि प्रीति सम होई॥
कोउ पितु भगत बचन मन कर्मा। सपनेहुँ जान न दूसर धर्मा॥

कोई सर्वज्ञ और कोई धर्मपरायण होता है। पिताका प्रेम इन सभीपर समान होता है। परन्तु इनमेंसे यदि कोई मन, वचन और कर्मसे पिताका ही भक्त होता है, स्वप्नमें भी दूसरा धर्म नहीं जानता, ॥ २ ॥

सो सुत प्रिय पितु प्रान समाना। जद्यपि सो सब भाँति अयाना॥
एहि बिधि जीव चराचर जेते। त्रिजग देव नर असुर समेते॥

वह पुत्र पिताको प्राणोंके समान प्रिय होता है, यद्यपि (चाहे) वह सब प्रकारसे अज्ञान (मूर्ख) ही हो। इसी प्रकार तिर्यक् (पशु-पक्षी), देव, मनुष्य और असुरों समेत जितने भी चेतन और जड जीव हैं, ॥ ३ ॥

अखिल बिस्व यह मोर उपाया। सब पर मोहि बराबरि दाया॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया। भजै मोहि मन बच अरु काया॥

[उनसे भरा हुआ] यह सम्पूर्ण विश्व मेरा ही पैदा किया हुआ है। अतः सबपर मेरी बराबर दया है। परन्तु इनमेंसे जो मद और माया छोड़कर मन, वचन और शरीरसे मुझको भजता है, ॥ ४ ॥

दो०—पुरुष नपुंसक नारि वा जीव चराचर कोइ।
सर्ब भाव भज कपट तजि मोहि परम प्रिय सोइ ॥ ८७ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह पुरुष हो, नपुंसक हो, स्त्री हो अथवा चर-अचर कोई भी जीव हो, कपट छोड़कर जो भी सर्वभावसे मुझे भजता है वही मुझे परम प्रिय है ॥ ८७ (क) ॥

सो०—सत्य कहउँ खग तोहि सुचि सेवक मम प्रानप्रिय ।
अस बिचारि भजु मोहि परिहरि आस भरोस सब ॥ ८७(ख) ॥

हे पक्षी ! मैं तुझसे सत्य कहता हूँ, पवित्र (अनन्य एवं निष्काम) सेवक मुझे प्राणोंके समान प्यारा है । ऐसा विचारकर सब आशा-भरोसा छोड़कर मुझीको भज ॥ ८७ (ख) ॥

चौ०—कबहूँ काल न ब्यापिहि तोही । सुमिरेसु भजेसु निरंतर मोही ॥
प्रभु बचनामृत सुनि न अघाऊँ । तनु पुलकित मन अति हरषाऊँ ॥

तुझे काल कभी नहीं व्यापेगा । निरन्तर मेरा स्मरण और भजन करते रहना । प्रभुके वचनामृत सुनकर मैं तृप्त नहीं होता था । मेरा शरीर पुलकित था और मनमें अत्यन्त ही हर्षित हो रहा था ॥ १ ॥

सो सुख जानइ मन अरु काना । नहिं रसना पहिं जाइ बखाना ॥
प्रभु सोभा सुख जानहिं नयना । कहि किमि सकहिं तिन्हहि नहिं बयना ॥

वह सुख मन और कान ही जानते हैं । जीभसे उसका बखान नहीं किया जा सकता । प्रभुकी शोभाका वह सुख नेत्र ही जानते हैं । पर वे कह कैसे सकते हैं ? उनके वाणी तो है नहीं ॥ २ ॥

बहु बिधि मोहि प्रबोधि सुख देई । लगे करन सिसु कौतुक तेई ॥
सजल नयन कछु मुख करि रूखा । चितइ मातु लागी अति भूखा ॥

मुझे बहुत प्रकारसे भलीभाँति समझाकर और सुख देकर प्रभु फिर वही बालकोंके खेल करने लगे । नेत्रोंमें जल भरकर और मुखको कुछ रूखा [-सा] बनाकर उन्होंने माताकी ओर देखा—[और मुखाकृति तथा चितवनसे माताको समझा दिया कि] बहुत भूख लगी है ॥ ३ ॥

देखि मातु आतुर उठि धाई । कहि मृदु बचन लिए उर लाई ॥
गोद राखि कराव पय पाना । रघुपति चरित ललित कर गाना ॥

यह देखकर माता तुरंत उठ दौड़ीं और कोमल वचन कहकर उन्होंने श्रीरामजीको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

छातीसे लगा लिया। वे गोदमें लेकर उन्हें दूध पिलाने लगीं और श्रीरघुनाथजी (उन्हीं) की ललित लीलाएँ गाने लगीं ॥ ४ ॥

सो०—जेहि सुख लागि पुरारि असुभ बेष कृत सिव सुखद।
अवधपुरी नर नारि तेहि सुख महुँ संतत मगन ॥ ८८(क)॥

जिस सुखके लिये [सबको] सुख देनेवाले कल्याणरूप त्रिपुरारि शिवजीने अशुभ वेष धारण किया, उस सुखमें अवधपुरीके नर-नारी निरन्तर निमग्न रहते हैं ॥ ८८(क)॥

सोई सुख लवलेस जिन्ह बारक सपनेहुँ लहेउ।
ते नहिं गनहिं खगेस ब्रह्मसुखहि सज्जन सुमति ॥ ८८(ख)॥

उस सुखका लवलेशमात्र जिन्होंने एक बार स्वप्नमें भी प्राप्त कर लिया, हे पक्षिराज! वे सुन्दर बुद्धिवाले सज्जन पुरुष उसके सामने ब्रह्मसुखको भी कुछ नहीं गिनते ॥ ८८(ख)॥

चौ०—मैं पुनि अवध रहेउँ कछु काला। देखेउँ बालबिनोद रसाला॥
राम प्रसाद भगति बर पायउँ। प्रभु पद बंदि निजाश्रम आयउँ॥

मैं और कुछ समयतक अवधपुरीमें रहा और मैंने श्रीरामजीकी रसीली बाललीलाएँ देखीं। श्रीरामजीकी कृपासे मैंने भक्तिका वरदान पाया। तदनन्तर प्रभुके चरणोंकी वन्दना करके मैं अपने आश्रमपर लौट आया ॥ १ ॥

तब ते मोहि न ब्यापी माया। जब ते रघुनायक अपनाया॥
यह सब गुप्त चरित मैं गावा। हरि मायाँ जिमि मोहि नचावा॥

इस प्रकार जबसे श्रीरघुनाथजीने मुझको अपनाया, तबसे मुझे माया कभी नहीं व्यापी। श्रीहरिकी मायाने मुझे जैसे नचाया, वह सब गुप्त चरित्र मैंने कहा ॥ २ ॥

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा॥
राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई॥

हे पक्षिराज गरुड़! अब मैं आपसे अपना निजी अनुभव कहता हूँ। [वह यह है कि] भगवान्‌के भजन बिना क्लेश दूर नहीं होते। हे पक्षिराज! सुनिये, श्रीरामजीकी कृपा बिना श्रीरामजीकी प्रभुता नहीं जानी जाती; ॥ ३ ॥

जानें बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती॥
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुता जाने बिना उनपर विश्वास नहीं जमता, विश्वासके बिना प्रीति नहीं होती और प्रीति बिना भक्ति वैसे ही दृढ़ नहीं होती जैसे हे पक्षिराज! जलकी चिकनाई ठहरती नहीं ॥ ४ ॥

सो०—बिनु गुर होइ कि ग्यान ग्यान किं होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु ॥ ८९ (क) ॥

गुरुके बिना कहीं ज्ञान हो सकता है? अथवा वैराग्यके बिना कहीं ज्ञान हो सकता है? इसी तरह बेद और पुराण कहते हैं कि श्रीहरिकी भक्तिके बिना क्या सुख मिल सकता है? ॥ ८९ (क) ॥

कोउ बिश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिअ ॥ ८९ (ख) ॥

हे तात! स्वाभाविक सन्तोषके बिना क्या कोई शान्ति पा सकता है? [चाहे] करोड़ों उपाय करके पच-पच मरिये, [फिर भी] क्या कभी जलके बिना नाव चल सकती है?

चौ०—बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं ॥
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा ॥

सन्तोषके बिना कामनाका नाश नहीं होता और कामनाओंके रहते स्वप्नमें भी सुख नहीं हो सकता। और श्रीरामके भजन बिना कामनाएँ कहीं मिट सकती हैं? बिना धरतीके भी कहीं पेड़ उग सकता है? ॥ १ ॥

बिनु बिग्यान कि समता आवइ। कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावइ कोई ॥

विज्ञान (तत्त्वज्ञान) के बिना क्या समभाव आ सकता है? आकाशके बिना क्या कोई अवकाश (पोल) पा सकता है? श्रद्धाके बिना धर्म [का आचरण] नहीं होता। क्या पृथ्वीतत्त्वके बिना कोई गन्ध पा सकता है? ॥ २ ॥

बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ संसारा ॥
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गोसाँई ॥

तपके बिना क्या तेज फैल सकता है? जल-तत्त्वके बिना संसारमें क्या रस हो सकता है? पण्डितजनोंकी सेवा बिना क्या शील (सदाचार) प्राप्त हो सकता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है? हे गोसाईं! जैसे बिना तेज (अग्नि-तत्त्व) के रूप नहीं मिलता ॥ ३ ॥

निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा॥
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भव भय नासा॥

निज-सुख (आत्मानन्द) के बिना क्या मन स्थिर हो सकता है? वायु-तत्त्वके बिना क्या स्पर्श हो सकता है? क्या विश्वासके बिना कोई भी सिद्धि हो सकती है? इसी प्रकार श्रीहरिके भजन बिना जन्म-मृत्युके भयका नाश नहीं होता ॥ ४ ॥

दो०—बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु ॥ ९० (क)॥

बिना विश्वासके भक्ति नहीं होती, भक्तिके बिना श्रीरामजी पिघलते (ढरते) नहीं और श्रीरामजीकी कृपाके बिना जीव स्वप्नमें भी शान्ति नहीं पाता ॥ ९० (क)॥

सो०—अस बिचारि मतिधीर तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुंदर सुखद ॥ ९० (ख)॥

हे धीरबुद्धि! ऐसा विचारकर सम्पूर्ण कुतर्कों और सन्देहोंको छोड़कर करुणाकी खान सुन्दर और सुख देनेवाले श्रीरघुवीरका भजन कीजिये ॥ ९० (ख)॥

चौ०—निज मति सरिस नाथ मैं गाई। प्रभु प्रताप महिमा खगराई॥
कहेउँ न कछु करि जुगुति बिसेषी। यह सब मैं निज नयनन्हि देखी॥

हे पक्षिराज! हे नाथ! मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार प्रभुके प्रताप और महिमाका गान किया। मैंने इसमें कोई बात युक्तिसे बढ़ाकर नहीं कही है। यह सब अपनी आँखों देखी कही है ॥ १ ॥

महिमा नाम रूप गुन गाथा। सकल अमित अनंत रघुनाथा॥
निज निज मति मुनि हरि गुन गावहिं। निगम सेष सिव पार न पावहिं॥

श्रीरघुनाथजीकी महिमा, नाम, रूप और गुणोंकी कथा सभी अपार एवं अनन्त हैं, तथा श्रीरघुनाथजी स्वयं भी अनन्त हैं। मुनिगण अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार श्रीहरिके गुण गाते हैं। वेद, शेष और शिवजी भी उनका पार नहीं पाते ॥ २ ॥

तुम्हहि आदि खग मसक प्रजंता। नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता॥
तिमि रघुपति महिमा अवगाहा। तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आपसे लेकर मच्छरपर्यन्त सभी छोटे-बड़े जीव आकाशमें उड़ते हैं, किन्तु आकाशका अन्त कोई नहीं पाते। इसी प्रकार हे तात! श्रीरघुनाथजीकी महिमा भी अथाह है। क्या कभी कोई उसकी थाह पा सकता है? ॥ ३ ॥

रामु काम सत कोटि सुभग तन। दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन॥
सक्र कोटि सत सरिस बिलासा। नभ सत कोटि अमित अवकासा॥

श्रीरामजीका अरबों कामदेवोंके समान सुन्दर शरीर है। वे अनन्त कोटि दुर्गाओंके समान शत्रुनाशक हैं। अरबों इन्द्रोंके समान उनका विलास (ऐश्वर्य) है। अरबों आकाशोंके समान उनमें अनन्त अवकाश (स्थान) है॥ ४॥

दो०—मरुत कोटि सत बिपुल बल रबि सत कोटि प्रकास।
ससि सत कोटि सुसीतल समन सकल भव त्रास॥९१(क)॥

अरबों पवनके समान उनमें महान् बल है और अरबों सूर्योंके समान प्रकाश है। अरबों चन्द्रमाओंके समान वे शीतल और संसारके समस्त भयोंका नाश करनेवाले हैं॥ ९१ (क)॥

काल कोटि सत सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरंत।
धूमकेतु सत कोटि सम दुराधरष भगवंत॥९१(ख)॥

अरबों कालोंके समान वे अत्यन्त दुस्तर, दुर्गम और दुरन्त हैं। वे भगवान् अरबों धूमकेतुओं (पुच्छल तारों) के समान अत्यन्त प्रबल हैं॥ ९१ (ख)॥

चौ०—प्रभु अगाध सत कोटि पताला। समन कोटि सत सरिस कराला॥
तीरथ अमित कोटि सम पावन। नाम अखिल अघ पूग नसावन॥

अरबों पातालोंके समान प्रभु अथाह हैं। अरबों यमराजोंके समान भयानक हैं। अनन्तकोटि तीर्थोंके समान वे पवित्र करनेवाले हैं। उनका नाम सम्पूर्ण पापसमूहका नाश करनेवाला है॥ १॥

हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा। सिंधु कोटि सत सम गंभीरा॥
कामधेनु सत कोटि समाना। सकल काम दायक भगवाना॥

श्रीरघुवीर करोड़ों हिमालयोंके समान अचल (स्थिर) हैं और अरबों समुद्रोंके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान गहरे हैं। भगवान् अरबों कामधेनुओंके समान सब कामनाओं (इच्छित पदार्थों) के देनेवाले हैं ॥ २ ॥

सारद कोटि अमित चतुराई। बिधि सत कोटि सृष्टि निपुनाई ॥
बिष्नु कोटि सम पालन कर्ता। रुद्र कोटि सत सम संहर्ता ॥

उनमें अनन्तकोटि सरस्वतियोंके समान चतुरता है। अरबों ब्रह्माओंके समान सृष्टिरचनाकी निपुणता है। वे अरबों विष्णुओंके समान पालन करनेवाले और अरबों रुद्रोंके समान संहार करनेवाले हैं ॥ ३ ॥

धनद कोटि सत सम धनवाना। माया कोटि प्रपंच निधाना ॥
भार धरन सत कोटि अहीसा। निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा ॥

वे अरबों कुबेरोंके समान धनवान् और करोड़ों मायाओंके समान सृष्टिके खजाने हैं। बोझ उठानेमें वे अरबों शेषोंके समान हैं। [अधिक क्या] जगदीश्वर प्रभु श्रीरामजी [सभी बातोंमें] सीमारहित और उपमारहित हैं ॥ ४ ॥

छं०—निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै।
जिमि कोटि सत खद्योत सम रबि कहत अति लघुता लहै ॥
एहि भाँति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहि बखानहीं।
प्रभु भाव गाहक अति कृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं ॥

श्रीरामजी उपमारहित हैं, उनकी कोई दूसरी उपमा है ही नहीं। श्रीरामके समान श्रीराम ही हैं, ऐसा वेद कहते हैं। जैसे अरबों जुगुनुओंके समान कहनेसे सूर्य [प्रशंसाको नहीं वरं] अत्यन्त लघुताको ही प्राप्त होता है (सूर्यकी निन्दा ही होती है)। इसी प्रकार अपनी-अपनी बुद्धिके विकासके अनुसार मुनीश्वर श्रीहरिका वर्णन करते हैं। किन्तु प्रभु भक्तोंके भावमात्रको ग्रहण करनेवाले और अत्यन्त कृपालु हैं। वे उस वर्णनको प्रेमसहित सुनकर सुख मानते हैं।

दो०—रामु अमित गुन सागर थाह कि पावइ कोइ।
संतन्ह सन जस किछु सुनेउँ तुम्हहि सुनायउँ सोइ ॥ ९२(क)॥

श्रीरामजी अपार गुणोंके समुद्र हैं, क्या उनकी कोई थाह पा सकता है? संतोंसे मैंने जैसा कुछ सुना था, वही आपको सुनाया ॥ ९२ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो०—भाव बस्य भगवान सुख निधान करुना भवन।
तजि ममता मद मान भजिअ सदा सीता रवन ॥ ९२ (ख) ॥

सुखके भण्डार, करुणाधाम भगवान् भाव (प्रेम) के वश हैं। [अतएव] ममता, मद और मानको छोड़कर सदा श्रीजानकीनाथजीका ही भजन करना चाहिये ॥ ९२ (ख) ॥

चौ०—सुनि भुसुंडि के बचन सुहाए। हरषित खगपति पंख फुलाए ॥
नयन नीर मन अति हरषाना। श्रीरघुपति प्रताप उर आना ॥

भुशुण्डिजीके सुन्दर वचन सुनकर पक्षिराजने हर्षित होकर अपने पंख फुला लिये। उनके नेत्रोंमें [प्रेमानन्दके आँसुओंका] जल आ गया और मन अत्यन्त हर्षित हो गया। उन्होंने श्रीरघुनाथजीका प्रताप हृदयमें धारण किया ॥ १ ॥

पाछिल मोह समुझि पछिताना। ब्रह्म अनादि मनुज करि माना ॥
पुनि पुनि काग चरन सिरु नावा। जानि राम सम प्रेम बढ़ावा ॥

वे अपने पिछले मोहको समझकर (याद करके) पछताने लगे कि मैंने अनादि ब्रह्मको मनुष्य करके माना। गरुड़जीने बार-बार काकभुशुण्डिजीके चरणोंपर सिर नवाया और उन्हें श्रीरामजीके ही समान जानकर प्रेम बढ़ाया ॥ २ ॥

गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई ॥
संसय सर्प ग्रसेउ मोहि ताता। दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता ॥

गुरुके बिना कोई भवसागर नहीं तर सकता, चाहे वह ब्रह्माजी और शंकरजीके समान ही क्यों न हो। [गरुड़जीने कहा—] हे तात ! मुझे सन्देहरूपी सर्पने डस लिया था और [साँपके डसनेपर जैसे विष चढ़नेसे लहरें आती हैं वैसे ही] बहुत-सी कुतर्करूपी दुःख देनेवाली लहरें आ रही थीं ॥ ३ ॥

तव सरूप गारुड़ि रघुनायक। मोहि जिआयउ जन सुखदायक ॥
तव प्रसाद मम मोह नसाना। राम रहस्य अनूपम जाना ॥

आपके स्वरूपरूपी गारुड़ी (साँपका विष उतारनेवाले) के द्वारा भक्तोंको सुख देनेवाले श्रीरघुनाथजीने मुझे जिला लिया। आपकी कृपासे मेरा मोह नाश हो गया और मैंने श्रीरामजीका अनुपम रहस्य जाना ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—ताहि प्रसंसि बिबिधि बिधि सीस नाइ कर जोरि।
बचन बिनीत सप्रेम मृदु बोलेउ गरुड़ बहोरि ॥ ९३ (क)॥

उनकी (भुशुण्डिजीकी) बहुत प्रकारसे प्रशंसा करके, सिर नवाकर और हाथ जोड़कर फिर गरुड़जी प्रेमपूर्वक विनम्र और कोमल वचन बोले—॥ ९३ (क)॥

प्रभु अपने अबिबेक ते बूझउँ स्वामी तोहि।
कृपासिंधु सादर कहहु जानि दास निज मोहि ॥ ९३ (ख)॥

हे प्रभो! हे स्वामी! मैं अपने अविवेकके कारण आपसे पूछता हूँ। हे कृपाके समुद्र! मुझे अपना 'निज दास' जानकर आदरपूर्वक (विचारपूर्वक) मेरे प्रश्नका उत्तर कहिये।

चौ०—तुम्ह सर्बग्य तग्य तम पारा। सुमति सुसील सरल आचारा॥
ग्यान बिरति बिग्यान निवासा। रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा॥

आप सब कुछ जाननेवाले हैं, तत्त्वके ज्ञाता हैं, अन्धकार (माया) से परे, उत्तम बुद्धिसे युक्त, सुशील, सरल आचरणवाले, ज्ञान, वैराग्य और विज्ञानके धाम और श्रीरघुनाथजीके प्रिय दास हैं॥ १॥

कारन कवन देह यह पाई। तात सकल मोहि कहहु बुझाई॥
राम चरित सर सुंदर स्वामी। पायहु कहाँ कहहु नभगामी॥

आपने यह काकशरीर किस कारणसे पाया? हे तात! सब समझाकर मुझसे कहिये। हे स्वामी! हे आकाशगामी! यह सुन्दर रामचरितमानस आपने कहाँ पाया, सो कहिये॥ २॥

नाथ सुना मैं अस सिव पाहीं। महा प्रलयहुँ नास तव नाहीं॥
मुधा बचन नहिं ईस्वर कहई। सोउ मोरें मन संसय अहई॥

हे नाथ! मैंने शिवजीसे ऐसा सुना है कि महाप्रलयमें भी आपका नाश नहीं होता और ईश्वर (शिवजी) कभी मिथ्या वचन कहते नहीं। वह भी मेरे मनमें सन्देह है॥ ३॥

अग जग जीव नाग नर देवा। नाथ सकल जगु काल कलेवा॥
अंड कटाह अमित लय कारी। कालु सदा दुरतिक्रम भारी॥

[क्योंकि] हे नाथ! नाग, मनुष्य, देवता आदि चर-अचर जीव तथा यह सारा जगत् कालका कलेवा है। असंख्य ब्रह्माण्डोंका नाश करनेवाला काल सदा बड़ा ही अनिवार्य है॥ ४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो०—तुम्हहि न ब्यापत काल अति कराल कारन कवन ।
मोहि सो कहहु कृपाल ग्यान प्रभाव कि जोग बल ॥ ९४ (क) ॥

[ऐसा वह] अत्यन्त भयङ्कर काल आपको नहीं व्यापता (आपपर प्रभाव नहीं दिखलाता) इसका क्या कारण है ? हे कृपालु ! मुझे कहिये, यह ज्ञानका प्रभाव है या योगका बल है ? ॥ ९४ (क) ॥

दो०—प्रभु तव आश्रम आएँ मोर मोह भ्रम भाग ।
कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुराग ॥ ९४ (ख) ॥

हे प्रभो ! आपके आश्रममें आते ही मेरा मोह और भ्रम भाग गया । इसका क्या कारण है ? हे नाथ ! यह सब प्रेमसहित कहिये ॥ ९४ (ख) ॥

चौ०—गरुड़ गिरा सुनि हरषेउ कागा । बोलेउ उमा परम अनुरागा ॥
धन्य धन्य तव मति उरगारी । प्रस्न तुम्हारि मोहि अति प्यारी ॥

हे उमा ! गरुड़जीकी वाणी सुनकर काकभुशुण्डिजी हर्षित हुए और परम प्रेमसे बोले— हे सर्पोंके शत्रु ! आपकी बुद्धि धन्य है ! धन्य है ! आपके प्रश्न मुझे बहुत ही प्यारे लगे ॥ १ ॥

सुनि तव प्रस्न सप्रेम सुहाई । बहुत जनम कै सुधि मोहि आई ॥
सब निज कथा कहउँ मैं गाई । तात सुनहु सादर मन लाई ॥

आपके प्रेमयुक्त सुन्दर प्रश्न सुनकर मुझे अपने बहुत जन्मोंकी याद आ गयी । मैं अपनी सब कथा विस्तारसे कहता हूँ । हे तात ! आदरसहित मन लगाकर सुनिये ॥ २ ॥

जप तप मख सम दम ब्रत दाना । बिरति बिबेक जोग बिग्याना ॥
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा । तेहि बिनु कोउ न पावइ छेमा ॥

अनेक जप, तप, यज्ञ, शम (मनको रोकना), दम (इन्द्रियोंको रोकना), व्रत, दान, वैराग्य, विवेक, योग, विज्ञान आदि सबका फल श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें प्रेम होना है । इसके बिना कोई कल्याण नहीं पा सकता ॥ ३ ॥

एहिं तन राम भगति मैं पाई । ताते मोहि ममता अधिकाई ॥
जेहि तें कछु निज स्वारथ होई । तेहि पर ममता कर सब कोई ॥

मैंने इसी शरीरसे श्रीरामजीकी भक्ति प्राप्त की है । इसीसे इसपर मेरी ममता अधिक है । जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है, उसपर सभी कोई प्रेम करते हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो०—पन्नगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं ।
अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज परम हित ॥ ९५ (क)॥

हे गरुड़जी ! वेदोंमें मानी हुई ऐसी नीति है और सज्जन भी कहते हैं कि अपना परम हित जानकर अत्यन्त नीचसे भी प्रेम करना चाहिये ॥ ९५ (क) ॥

पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटंबर रुचिर ।
कृमि पालइ सबु कोइ परम अपावन प्रान सम ॥ ९५ (ख)॥

रेशम कीड़ेसे होता है, उससे सुन्दर रेशमी वस्त्र बनते हैं। इसीसे उस परम अपवित्र कीड़ेको भी सब कोई प्राणोंके समान पालते हैं ॥ ९५ (ख) ॥

चौ०—स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा । मन क्रम बचन राम पद नेहा ॥
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा । जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा ॥

जीवके लिये सच्चा स्वार्थ यही है कि मन, वचन और कर्मसे श्रीरामजीके चरणोंमें प्रेम हो। वही शरीर पवित्र और सुन्दर है जिस शरीरको पाकर श्रीरघुवीरका भजन किया जाय।१

राम बिमुख लहि बिधि सम देही । कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही ॥
राम भगति एहिं तन उर जामी । ताते मोहि परम प्रिय स्वामी ॥

जो श्रीरामजीके विमुख है वह यदि ब्रह्माजीके समान शरीर पा जाय तो भी कवि और पण्डित उसकी प्रशंसा नहीं करते। इसी शरीरसे मेरे हृदयमें रामभक्ति उत्पन्न हुई। इसीसे हे स्वामी ! यह मुझे परम प्रिय है ॥ २ ॥

तजउँ न तन निज इच्छा मरना । तन बिनु बेद भजन नहिं बरना ॥
प्रथम मोहँ मोहि बहुत बिगोवा । राम बिमुख सुख कबहुँ न सोवा ॥

मेरा मरण अपनी इच्छापर है, परन्तु फिर भी मैं यह शरीर नहीं छोड़ता क्योंकि वेदोंने वर्णन किया है कि शरीरके बिना भजन नहीं होता। पहले मोहने मेरी बड़ी दुर्दशा की। श्रीरामजीके विमुख होकर मैं कभी सुखसे नहीं सोया ॥ ३ ॥

नाना जनम कर्म पुनि नाना । किए जोग जप तप मख दाना ॥
कवन जोनि जनमेउँ जहँ नाहीं । मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जग माहीं ॥

अनेकों जन्मोंमें मैंने अनेकों प्रकारके योग, जप, तप, यज्ञ और दान आदि कर्म

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

...ये। हे गरुड़जी ! जगत्‌में ऐसी कौन योनि है, जिसमें मैंने [बार-बार] घूम-फिरकर जन्म न लिया हो ॥ ४ ॥

देखेउँ करि सब करम गोसाईं। सुखी न भयउँ अबहिं की नाईं ॥
सुधि मोहि नाथ जनम बहु केरी। सिव प्रसाद मति मोहँ न घेरी ॥

हे गुसाईं ! मैंने सब कर्म करके देख लिये, पर अब (इस जन्म) की तरह कभी सुखी नहीं हुआ। हे नाथ ! मुझे बहुत-से जन्मोंकी याद है। [क्योंकि] शिवजीकी कृपासे मेरी बुद्धिको मोहने नहीं घेरा ॥ ५ ॥

दो०—प्रथम जन्म के चरित अब कहउँ सुनहु बिहगेस।
सुनि प्रभु पद रति उपजइ जातें मिटहिं कलेस ॥ ९६ (क)॥

हे पक्षिराज ! सुनिये, अब मैं अपने प्रथम जन्मके चरित्र कहता हूँ, जिन्हें सुनकर प्रभुके चरणोंमें प्रीति उत्पन्न होती है, जिससे सब क्लेश मिट जाते हैं ॥ ९६ (क) ॥

पूरुब कल्प एक प्रभु जुग कलिजुग मल मूल।
नर अरु नारि अधर्म रत सकल निगम प्रतिकूल ॥ ९६ (ख)॥

हे प्रभो ! पूर्वके एक कल्पमें पापोंका मूल युग कलियुग था, जिसमें पुरुष और स्त्री सभी अधर्मपरायण और वेदके विरोधी थे ॥ ९६ (ख)॥

चौ०—तेहिं कलिजुग कोसलपुर जाई। जन्मत भयउँ सूद्र तनु पाई ॥
सिव सेवक मन क्रम अरु बानी। आन देव निंदक अभिमानी ॥

उस कलियुगमें मैं अयोध्यापुरीमें जाकर शूद्रका शरीर पाकर जन्मा। मैं मन, वचन और कर्मसे शिवजीका सेवक और दूसरे देवताओंकी निन्दा करनेवाला अभिमानी था।

धन मद मत्त परम बाचाला। उग्रबुद्धि उर दंभ बिसाला ॥
जदपि रहेउँ रघुपति रजधानी। तदपि न कछु महिमा तब जानी ॥

मैं धनके मदसे मतवाला, बहुत ही बकवादी और उग्रबुद्धिवाला था; मेरे हृदयमें बड़ा भारी दम्भ था। यद्यपि मैं श्रीरघुनाथजीकी राजधानीमें रहता था, तथापि मैंने उस समय उसकी महिमा कुछ भी नहीं जानी ॥ २ ॥

अब जाना मैं अवध प्रभावा। निगमागम पुरान अस गावा ॥
कवनेहुँ जन्म अवध बस जोई। राम परायन सो परि होई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अब मैंने अवधका प्रभाव जाना। वेद, शास्त्र और पुराणोंने ऐसा गाया है कि किसी भी जन्ममें जो कोई भी अयोध्यामें बस जाता है, वह अवश्य ही श्रीरामजीके परायण हो जायगा ॥ ३ ॥

अवध प्रभाव जान तब प्रानी। जब उर बसहिं रामु धनुपानी ॥
सो कलिकाल कठिन उरगारी। पाप परायन सब नर नारी ॥

अवधका प्रभाव जीव तभी जानता है, जब हाथमें धनुष धारण करनेवाले श्रीरामजी उसके हृदयमें निवास करते हैं। हे गरुड़जी ! वह कलिकाल बड़ा कठिन था। उसमें सभी नर-नारी पापपरायण (पापोंमें लिप्त) थे ॥ ४ ॥

दो०—कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदग्रंथ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ ॥ ९७ (क)॥

कलियुगके पापोंने सब धर्मोंको ग्रस लिया, सद्ग्रन्थ लुप्त हो गये, दम्भियोंने अपनी बुद्धिसे कल्पना कर-करके बहुत-से पंथ प्रकट कर दिये ॥ ९७ (क) ॥

भए लोग सब मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म।
सुनु हरिजान ग्यान निधि कहउँ कछुक कलिधर्म ॥ ९७ (ख)॥

सभी लोग मोहके वश हो गये, शुभ कर्मोंको लोभने हड़प लिया। हे ज्ञानके भण्डार ! हे श्रीहरिके वाहन ! सुनिये, अब मैं कलिके कुछ धर्म कहता हूँ ॥ ९७ (ख) ॥

चौ०—बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी ॥
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम अनुसासन ॥

कलियुगमें न वर्णधर्म रहता है, न चारों आश्रम रहते हैं। सब पुरुष-स्त्री वेदके विरोधमें लगे रहते हैं। ब्राह्मण वेदोंके बेचनेवाले और राजा प्रजाको खा डालनेवाले होते हैं। वेदकी आज्ञा कोई नहीं मानता ॥ १ ॥

मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥
मिथ्यारंभ दंभ रत जोई। ता कहुँ संत कहइ सब कोई ॥

जिसको जो अच्छा लग जाय, वही मार्ग है। जो डींग मारता है, वही पण्डित है। जो मिथ्या आरम्भ करता (आडम्बर रचता) है और जो दम्भमें रत है, उसीको सब कोई संत कहते हैं ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सोइ सयान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी ॥
जो कह झूँठ मसखरी जाना। कलिजुग सोइ गुनवंत बखाना ॥

जो [जिस किसी प्रकारसे] दूसरेका धन हरण कर ले, वही बुद्धिमान् है। जो भ करता है, वही बड़ा आचारी है। जो झूठ बोलता है और हँसी-दिल्लगी करना नता है, कलियुगमें वही गुणवान् कहा जाता है ॥ ३ ॥

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी सो बिरागी ॥
जाकें नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥

जो आचारहीन है और वेदमार्गको छोड़े हुए है, कलियुगमें वही ज्ञानी और वही ग्यवान् है। जिसके बड़े-बड़े नख और लंबी-लंबी जटाएँ हैं, वही कलियुगमें सिद्ध तपस्वी है ॥ ४ ॥

दो०—असुभ बेष भूषन धरें भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं ॥ ९८ (क)॥

जो अमङ्गल वेष और अमङ्गल भूषण धारण करते हैं और भक्ष्य-अभक्ष्य (खाने य और न खाने योग्य) सब कुछ खा लेते हैं; वे ही योगी हैं, वे ही सिद्ध हैं र वे ही मनुष्य कलियुगमें पूज्य हैं ॥ ९८ (क) ॥

सो०—जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ।
मन क्रम बचन लबार तेइ बकता कलिकाल महुँ ॥ ९८ (ख)॥

जिनके आचरण दूसरोंका अपकार (अहित) करनेवाले हैं, उन्हींका बड़ा गौरव ता है और वे ही सम्मानके योग्य होते हैं। जो मन, वचन और कर्मसे लबार ठ बकनेवाले) हैं, वे ही कलियुगमें वक्ता माने जाते हैं ॥ ९८ (ख) ॥

०—नारि बिबस नर सकल गोसाईं। नाचहिं नट मर्कट की नाईं ॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना ॥

हे गोसाईं ! सभी मनुष्य स्त्रियोंके विशेष वशमें हैं और बाजीगरके बंदरकी तरह उनके नचाये] नाचते हैं। ब्राह्मणोंको शूद्र ज्ञानोपदेश करते हैं और गलेमें जनेऊ लकर कुत्सित दान लेते हैं ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव बिप्र श्रुति संत बिरोधी॥
गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि पर पुरुष अभागी॥

सभी पुरुष काम और लोभमें तत्पर और क्रोधी होते हैं। देवता, ब्राह्मण, वेद और संतोंके विरोधी होते हैं। अभागिनी स्त्रियाँ गुणोंके धाम सुन्दर पतिको छोड़कर परपुरुषका सेवन करती हैं॥ २॥

सौभागिनीं बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नबीना॥
गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा॥

सुहागिनी स्त्रियाँ तो आभूषणोंसे रहित होती हैं, पर विधवाओंके नित्य नये शृङ्गार होते हैं। शिष्य और गुरुमें बहरे और अंधेका-सा हिसाब होता है। एक (शिष्य) गुरुके उपदेशको सुनता नहीं, एक (गुरु) देखता नहीं (उसे ज्ञानदृष्टि प्राप्त नहीं है)॥ ३॥

हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई॥
मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं। उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं॥

जो गुरु शिष्यका धन हरण करता है, पर शोक नहीं हरण करता, वह घोर नरकमें पड़ता है। माता-पिता बालकोंको बुलाकर वही धर्म सिखलाते हैं, जिससे पेट भरे॥ ४॥

दो०—ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस करहिं बिप्र गुर घात॥ ९९ (क)॥

स्त्री-पुरुष ब्रह्मज्ञानके सिवा दूसरी बात नहीं करते, पर वे लोभवश कौड़ियों (बहुत थोड़े लाभ) के लिये ब्राह्मण और गुरुकी हत्या कर डालते हैं॥ ९९ (क)॥

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर आँखि देखावहिं डाटि॥ ९९ (ख)॥

शूद्र ब्राह्मणोंसे विवाद करते हैं [और कहते हैं] कि हम क्या तुमसे कुछ कम हैं? जो ब्रह्मको जानता है वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है [ऐसा कहकर] वे उन्हें डाँटकर आँखें दिखलाते हैं॥ ९९ (ख)॥

चौ०—पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने॥
तेइ अभेदबादी ग्यानी नर। देखा मैं चरित्र कलिजुग कर॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो परायी स्त्रीमें आसक्त, कपट करनेमें चतुर और मोह, द्रोह और ममतामें ल्पटे हुए हैं, वे ही मनुष्य अभेदवादी (ब्रह्म और जीवको एक बतानेवाले) ज्ञानी । मैंने उस कलियुगका यह चरित्र देखा ॥ १ ॥

आपु गए अरु तिन्हहू घालहिं । जे कहुँ सत मारग प्रतिपालहिं ॥
कल्प कल्प भरि एक एक नरका । परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका ॥

वे स्वयं तो नष्ट हुए ही रहते हैं; जो कहीं सन्मार्गका प्रतिपालन करते हैं, नको भी वे नष्ट कर देते हैं । जो तर्क करके वेदकी निन्दा करते हैं, वे लोग ल्प-कल्पभर एक-एक नरकमें पड़े रहते हैं ॥ २ ॥

जे बरनाधम तेलि कुम्हारा । स्वपच किरात कोल कलवारा ॥
नारि मुई गृह संपति नासी । मूड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी ॥

तेली, कुम्हार, चाण्डाल, भील, कोल और कलवार आदि जो वर्णमें नीचे हैं, कि मरनेपर अथवा घरकी सम्पत्ति नष्ट हो जानेपर सिर मुँड़ाकर संन्यासी हो जाते हैं ॥ ३ ॥

ते बिप्रन्ह सन आपु पुजावहिं । उभय लोक निज हाथ नसावहिं ॥
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी । निराचार सठ बृषली स्वामी ॥

वे अपनेको ब्राह्मणोंसे पुजवाते हैं और अपने ही हाथों दोनों लोक नष्ट करते । ब्राह्मण, अपढ़, लोभी, कामी, आचारहीन, मूर्ख और नीची जातिकी व्यभिचारिणी यों के स्वामी होते हैं ॥ ४ ॥

सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना । बैठि बरासन कहहिं पुराना ॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा । जाइ न बरनि अनीति अपारा ॥

शूद्र नाना प्रकारके जप, तप और व्रत करते हैं तथा ऊँचे आसन (व्यासगद्दी) बैठकर पुराण कहते हैं । सब मनुष्य मनमाना आचरण करते हैं । अपार अनीतिका न नहीं किया जा सकता ॥ ५ ॥

दो०—भए बरन संकर कलि भिन्नसेतु सब लोग ।
करहिं पाप पावहिं दुख भय रुज सोक बियोग ॥ १००(क)॥

कलियुगमें सब लोग वर्णसंकर और मर्यादासे च्युत हो गये । वे पाप करते हैं और नके फलस्वरूप] दुःख, भय, रोग, शोक और [प्रिय वस्तुका] वियोग पाते हैं ॥ १००(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक ।
तेहिं न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक ॥ १०० (ख)॥

वेदसम्मत तथा वैराग्य और ज्ञानसे युक्त जो हरिभक्तिका मार्ग है, मोहवश मनुष्य उसपर नहीं चलते और अनेकों नये-नये पंथोंकी कल्पना करते हैं ॥ १०० (ख)॥

छं०—बहु दाम सँवारहिं धाम जती । बिषया हरि लीन्हि न रहि बिरती ॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही । कलि कौतुक तात न जात कही ॥

संन्यासी बहुत धन लगाकर घर सजाते हैं । उनमें वैराग्य नहीं रहा, उसे विषयोंने हर लिया । तपस्वी धनवान् हो गये और गृहस्थ दरिद्र । हे तात ! कलियुगकी लीला कुछ कही नहीं जाती ॥ १ ॥

कुलवंति निकारहिं नारि सती । गृह आनहिं चेरि निबेरि गती ॥
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं । अबलानन दीख नहीं जब लौं ॥

कुलवती और सती स्त्रीको पुरुष घरसे निकाल देते हैं और अच्छी चालको छोड़कर घरमें दासीको ला रखते हैं । पुत्र अपने माता-पिताको तभीतक मानते हैं, जबतक स्त्रीका मुँह नहीं दिखायी पड़ा ॥ २ ॥

ससुरारि पिआरि लगी जब तें । रिपुरूप कुटुंब भए तब तें ॥
नृप पाप परायन धर्म नहीं । करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं ॥

जबसे ससुराल प्यारी लगने लगी, तबसे कुटुम्बी शत्रुरूप हो गये । राजा लोग पापपरायण हो गये, उनमें धर्म नहीं रहा । वे प्रजाको नित्य ही [बिना अपराध] दण्ड देकर उसकी विडम्बना (दुर्दशा) किया करते हैं ॥ ३ ॥

धनवंत कुलीन मलीन अपी । द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी ॥
नहिं मान पुरान न बेदहि जो । हरि सेवक संत सही कलि सो ॥

धनी लोग मलिन (नीच जातिके) होनेपर भी कुलीन माने जाते हैं । द्विजका चिह्न जनेऊमात्र रह गया और नंगे बदन रहना तपस्वीका । जो वेदों और पुराणोंको नहीं मानते, कलियुगमें वे ही हरिभक्त और सच्चे संत कहलाते हैं ॥ ४ ॥

कबि बृंद उदार दुनी न सुनी । गुन दूषक ब्रात न कोपि गुनी ॥
कलि बारहिं बार दुकाल परै । बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कवियोंके तो झुंड हो गये, पर दुनियामें उदार (कवियोंका आश्रय-दाता) सुनायी नहीं पड़ता। गुणमें दोष लगानेवाले बहुत हैं, पर गुणी कोई भी नहीं है। कलियुगमें बार-बार अकाल पड़ते हैं। अन्नके बिना सब लोग दुखी होकर मरते हैं ॥ ५ ॥

दो०—सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाषंड।
मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड ॥ १०१(क)॥

हे पक्षिराज गरुड़जी ! सुनिये, कलियुगमें कपट, हठ (दुराग्रह), दम्भ, द्वेष, पाखण्ड, मान, मोह और काम आदि (अर्थात् काम, क्रोध और लोभ) और मद ब्रह्माण्डभरमें व्याप्त हो गये (छा गये) ॥ १०१ (क) ॥

तामस धर्म करहिं नर जप तप ब्रत मख दान।
देव न बरषहिं धरनीं बए न जामहिं धान ॥ १०१(ख)॥

मनुष्य जप, तप, यज्ञ, व्रत और दान आदि धर्म तामसी भावसे करने लगे। देवता (इन्द्र) पृथ्वीपर जल नहीं बरसाते और बोया हुआ अन्न उगता नहीं।

छं०—अबला कच भूषन भूरि छुधा। धनहीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्म रता। मति थोरि कठोरि न कोमलता ॥

स्त्रियोंके बाल ही भूषण हैं (उनके शरीरपर कोई आभूषण नहीं रह गया) और उनको भूख बहुत लगती है (अर्थात् वे सदा अतृप्त ही रहती हैं) वे धनहीन और बहुत प्रकारकी ममता होनेके कारण दुखी रहती हैं। वे मूर्ख सुख चाहती हैं, पर धर्ममें उनका प्रेम नहीं है। बुद्धि थोड़ी है और कठोर है; उनमें कोमलता नहीं है ॥ १ ॥

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारनहीं ॥
लघु जीवन संबतु पंच दसा। कलपांत न नास गुमानु असा ॥

मनुष्य रोगोंसे पीड़ित हैं, भोग (सुख) कहीं नहीं है। बिना ही कारण अभिमान और विरोध करते हैं। दस-पाँच वर्षका थोड़ा-सा जीवन है परन्तु घमंड ऐसा है मानो कल्पान्त (प्रलय) होनेपर भी उनका नाश नहीं होगा ॥ २ ॥

कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहिं मानत क्वौ अनुजा तनुजा ॥
नहिं तोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भए मगता ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कलिकालने मनुष्यको बेहाल (अस्त-व्यस्त) कर डाला। कोई बहिन-बेटीका भी विचार नहीं करता। [लोगोंमें] न सन्तोष है, न विवेक है और न शीतलता है। जाति, कुजाति सभी लोग भीख माँगनेवाले हो गये॥ ३॥

इरिषा परुषाच्छर लोलुपता। भरि पूरि रही समता बिगता॥
सब लोग बियोग बिसोक हए। बरनाश्रम धर्म अचार गए॥

ईर्ष्या (डाह), कड़ुवे वचन और लालच भरपूर हो रहे हैं, समता चली गयी। सब लोग वियोग और विशेष शोकसे मरे पड़े हैं। वर्णाश्रम-धर्मके आचरण नष्ट हो गये॥ ४॥

दम दान दया नहिं जानपनी। जड़ता परबंचनताति घनी॥
तनु पोषक नारि नरा सगरे। परनिंदक जे जग मो बगरे॥

इन्द्रियोंका दमन, दान, दया और समझदारी किसीमें नहीं रही। मूर्खता और दूसरोंको ठगना, यह बहुत अधिक बढ़ गया। स्त्री-पुरुष सभी शरीरके ही पालन-पोषणमें लगे रहते हैं। जो परायी निन्दा करनेवाले हैं जगत्‌में वे ही फैले हैं॥ ५॥

दो०—सुनु ब्यालारि काल कलि मल अवगुन आगार।
गुनउ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार॥१०२(क)॥

हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी! सुनिये, कलिकाल पाप और अवगुणोंका घर है किन्तु कलियुगमें एक गुण भी बड़ा है कि उसमें बिना ही परिश्रम भवबन्धनसे छुटकारा मिल जाता है॥ १०२ (क)॥

कृतजुग त्रेताँ द्वापर पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग॥१०२(ख)॥

सत्ययुग, त्रेता और द्वापरमें जो गति पूजा, यज्ञ और योगसे प्राप्त होती है, वही गति कलियुगमें लोग केवल भगवान्‌के नामसे पा जाते हैं॥१०२ (ख)॥

चौ०—कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी॥
त्रेताँ बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं॥

सत्ययुगमें सब योगी और विज्ञानी होते हैं। हरिका ध्यान करके सब प्राणी भवसागरसे तर जाते हैं। त्रेतामें मनुष्य अनेक प्रकारके यज्ञ करते हैं और सब कर्मोंको प्रभुके समर्पण करके भवसागरसे पार हो जाते हैं॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा॥
कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा॥

द्वापरमें श्रीरघुनाथजीके चरणोंकी पूजा करके मनुष्य संसारसे तर जाते हैं, दूसरा कोई उपाय नहीं है। और कलियुगमें तो केवल श्रीहरिकी गुणगाथाओंका गान करनेसे मनुष्य भवसागरकी थाह पा जाते हैं॥ २॥

कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना॥
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि॥

कलियुगमें न तो योग और यज्ञ है और न ज्ञान ही है। श्रीरामजीका गुणगान एकमात्र आधार है। अतएव सारे भरोसे त्याग कर जो श्रीरामजीको भजता है और प्रेमसहित उनके गुणसमूहोंको गाता है,॥ ३॥

सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा॥

वही भवसागरसे तर जाता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। नामका प्रताप कलियुगमें प्रत्यक्ष है। कलियुगका एक पवित्र प्रताप (महिमा) है कि मानसिक पुण्य तो होते हैं, पर [मानसिक] पाप नहीं होते॥ ४॥

दो०—कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास॥ १०३(क)॥

यदि मनुष्य विश्वास करे, तो कलियुगके समान दूसरा युग नहीं है। [क्योंकि] इस युगमें श्रीरामजीके निर्मल गुणसमूहोंको गा-गाकर मनुष्य बिना ही परिश्रम संसार [रूपी समुद्र] से तर जाता है॥ १०३ (क)॥

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान॥ १०३ (ख)॥

धर्मके चार चरण (सत्य, दया, तप और दान) प्रसिद्ध हैं, जिनमेंसे कलिमें एक [दानरूपी] चरण ही प्रधान है। जिस किसी प्रकारसे भी दिये जानेपर दान कल्याण ही करता है।

चौ०—नित जुग धर्म होहिं सब केरे। हृदयँ राम माया के प्रेरे॥
सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामजीकी मायासे प्रेरित होकर सबके हृदयोंमें सभी युगोंके धर्म नित्य होते रहते हैं। शुद्ध सत्त्वगुण, समता, विज्ञान और मनका प्रसन्न होना, इसे सत्ययुगका प्रभाव जाने।

सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा॥
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस॥

सत्त्वगुण अधिक हो, कुछ रजोगुण हो, कर्मोंमें प्रीति हो, सब प्रकारसे सुख हो, यह त्रेताका धर्म है। रजोगुण बहुत हो, सत्त्वगुण बहुत ही थोड़ा हो, कुछ तमोगुण हो, मनमें हर्ष और भय हों, यह द्वापरका धर्म है॥ २॥

तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा॥
बुध जुग धर्म जानि मन माहीं। तजि अधर्म रति धर्म कराहीं॥

तमोगुण बहुत हो, रजोगुण थोड़ा हो, चारों ओर वैर-विरोध हो, यह कलियुगका प्रभाव है। पण्डित लोग युगोंके धर्मको मनमें जान (पहिचान) कर, अधर्म छोड़कर धर्ममें प्रीति करते हैं॥ ३॥

काल धर्म नहिं ब्यापहिं ताही। रघुपति चरन प्रीति अति जाही॥
नट कृत बिकट कपट खगराया। नट सेवकहि न ब्यापइ माया॥

जिसका श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रेम है, उसको कालधर्म (युगधर्म) नहीं व्यापते। हे पक्षिराज! नट (बाजीगर) का किया हुआ कपट-चरित्र (इन्द्रजाल) देखनेवालोंके लिये बड़ा विकट (दुर्गम) होता है, पर नटके सेवक (जंभूरे) को उसकी माया नहीं व्यापती॥ ४॥

दो०—हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजिअ राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहिं॥१०४(क)॥

श्रीहरिकी मायाके द्वारा रचे हुए दोष और गुण श्रीहरिके भजन बिना नहीं जाते। मनमें ऐसा विचार कर, सब कामनाओंको छोड़कर (निष्कामभावसे) श्रीरामजीका भजन करना चाहिये॥ १०४ (क)॥

तेहिं कलिकाल बरष बहु बसेउँ अवध बिहगेस।
परेउ दुकाल बिपति बस तब मैं गयउँ बिदेस॥१०४(ख)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हे पक्षिराज ! उस कलिकालमें मैं बहुत वर्षोंतक अयोध्यामें रहा। एक बार वहाँ अकाल पड़ा, तब मैं विपत्तिका मारा विदेश चला गया॥ १०४ (ख)॥

चौ०-गयउँ उजेनी सुनु उरगारी। दीन मलीन दरिद्र दुखारी॥
गएँ काल कछु संपति पाई। तहँ पुनि करउँ संभु सेवकाई॥

हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी ! सुनिये, मैं दीन, मलिन (उदास), दरिद्र और दुखी होकर उज्जैन गया। कुछ काल बीतनेपर कुछ सम्पत्ति पाकर फिर मैं वहीं भगवान् शङ्करकी आराधना करने लगा॥ १॥

बिप्र एक बैदिक सिव पूजा। करइ सदा तेहि काजु न दूजा॥
परम साधु परमारथ बिंदक। संभु उपासक नहिं हरि निंदक॥

एक ब्राह्मण वेदविधिसे सदा शिवजीकी पूजा करते, उन्हें दूसरा कोई काम न था। वे परम साधु और परमार्थके ज्ञाता थे, वे शम्भुके उपासक थे, पर श्रीहरिकी निन्दा करनेवाले न थे॥ २॥

तेहि सेवउँ मैं कपट समेता। द्विज दयाल अति नीति निकेता॥
बाहिज नम्र देखि मोहि साईं। बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाईं॥

मैं कपटपूर्वक उनकी सेवा करता। ब्राह्मण बड़े ही दयालु और नीतिके घर थे। हे स्वामी ! बाहरसे नम्र देखकर ब्राह्मण मुझे पुत्रकी भाँति मानकर पढ़ाते थे॥ ३॥

संभु मंत्र मोहि द्विजबर दीन्हा। सुभ उपदेस बिबिध बिधि कीन्हा॥
जपउँ मंत्र सिव मंदिर जाई। हृदयँ दंभ अहमिति अधिकाई॥

उन ब्राह्मणश्रेष्ठने मुझको शिवजीका मन्त्र दिया और अनेकों प्रकारके शुभ उपदेश किये। मैं शिवजीके मन्दिरमें जाकर मन्त्र जपता। मेरे हृदयमें दम्भ और अहंकार बढ़ गया॥ ४॥

दो०-मैं खल मल संकुल मति नीच जाति बस मोह।
हरि जन द्विज देखें जरउँ करउँ बिष्नु कर द्रोह॥ १०५(क)॥

मैं दुष्ट, नीच जाति और पापमयी मलिन बुद्धिवाला मोहवश श्रीहरिके भक्तों और द्विजोंको देखते ही जल उठता और विष्णुभगवान्से द्रोह करता था॥ १०५ (क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सो०—गुर नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम ।
मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति कि भावई ॥ १०५(ख)॥

गुरुजी मेरे आचरण देखकर दुखित थे। वे मुझे नित्य ही भलीभाँति समझाते, पर [मैं कुछ भी नहीं समझता,] उलटे मुझे अत्यन्त क्रोध उत्पन्न होता। दम्भीको कभी नीति अच्छी लगती है ? ॥ १०५ (ख)॥

चौ०—एक बार गुर लीन्ह बोलाई। मोहि नीति बहु भाँति सिखाई ॥
सिव सेवा कर फल सुत सोई। अबिरल भगति राम पद होई ॥

एक बार गुरुजीने मुझे बुला लिया और बहुत प्रकारसे [परमार्थ] नीतिकी शिक्षा दी कि हे पुत्र ! शिवजीकी सेवाका फल यही है कि श्रीरामजीके चरणोंमें प्रगाढ़ भक्ति हो ॥ १ ॥

रामहि भजहिं तात सिव धाता। नर पावँर कै केतिक बाता ॥
जासु चरन अज सिव अनुरागी। तासु द्रोहँ सुख चहसि अभागी ॥

हे तात ! शिवजी और ब्रह्माजी भी श्रीरामजीको भजते हैं [फिर] नीच मनुष्यकी तो बात ही कितनी है ? ब्रह्माजी और शिवजी जिनके चरणोंके प्रेमी हैं, अरे अभागे ! उनसे द्रोह करके तू सुख चाहता है ? ॥ २ ॥

हर कहुँ हरि सेवक गुर कहेऊ। सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥
अधम जाति मैं बिद्या पाएँ। भयउँ जथा अहि दूध पिआएँ ॥

गुरुजीने शिवजीको हरिका सेवक कहा। यह सुनकर हे पक्षिराज ! मेरा हृदय जल उठा। नीच जातिका मैं विद्या पाकर ऐसा हो गया जैसे दूध पिलानेसे साँप ॥ ३ ॥

मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती। गुर कर द्रोह करउँ दिनु राती ॥
अति दयाल गुर स्वल्प न क्रोधा। पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा ॥

अभिमानी, कुटिल, दुर्भाग्य और कुजाति मैं दिन-रात गुरुजीसे द्रोह करता। गुरुजी अत्यन्त दयालु थे, उनको थोड़ा-सा भी क्रोध नहीं आता। [मेरे द्रोह करनेपर भी] वे बार-बार मुझे उत्तम ज्ञानकी ही शिक्षा देते थे ॥ ४ ॥

जेहि ते नीच बड़ाई पावा। सो प्रथमहिं हति ताहि नसावा ॥
धूम अनल संभव सुनु भाई। तेहि बुझाव घन पदवी पाई ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नीच मनुष्य जिससे बड़ाई पाता है, वह सबसे पहले उसीको मारकर उसीका नाश करता है। हे भाई ! सुनिये, आगसे उत्पन्न हुआ धुआँ मेघकी पदवी पाकर उसी अग्निको बुझा देता है ॥ ५ ॥

रज मग परी निरादर रहई। सब कर पद प्रहार नित सहई ॥
मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई। पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई ॥

धूल रास्तेमें निरादरसे पड़ी रहती है और सदा सब [राह चलनेवालों] के लातोंकी मार सहती है। पर जब पवन उसे उड़ाता (ऊँचा उठाता) है, तो सबसे पहले वह उसी (पवन) को भर देती है और फिर राजाओंके नेत्रों और किरीटों (मुकुटों) पर पड़ती है ॥ ६ ॥

सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा ॥
कबि कोबिद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती ॥

हे पक्षिराज गरुड़जी ! सुनिये, ऐसी बात समझकर बुद्धिमान् लोग अधम (नीच) का सङ्ग नहीं करते। कवि और पण्डित ऐसी नीति कहते हैं कि दुष्टसे न कलह ही अच्छा है, न प्रेम ही ॥ ७ ॥

उदासीन नित रहिअ गोसाईं। खल परिहरिअ स्वान की नाईं ॥
मैं खल हृदयँ कपट कुटिलाई। गुर हित कहइ न मोहि सोहाई ॥

हे गोसाईं ! उससे तो सदा उदासीन ही रहना चाहिये। दुष्टको कुत्तेकी तरह दूरसे ही त्याग देना चाहिये। मैं दुष्ट था, हृदयमें कपट और कुटिलता भरी थी। [इसीलिये यद्यपि] गुरुजी हितकी बात कहते थे, पर मुझे वह सुहाती न थी ॥ ८ ॥

दो०—एक बार हर मंदिर जपत रहेउँ सिव नाम।
गुर आयउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम ॥१०६(क)॥

एक दिन मैं शिवजीके मन्दिरमें शिवनाम जप रहा था। उसी समय गुरुजी वहाँ आये, पर अभिमानके मारे मैंने उठकर उनको प्रणाम नहीं किया ॥ १०६ (क) ॥

सो दयाल नहिं कहेउ कछु उर न रोष लवलेस।
अति अघ गुर अपमानता सहि नहिं सके महेस ॥१०६(ख)॥

गुरुजी दयालु थे, [मेरा दोष देखकर भी] उन्होंने कुछ नहीं कहा; उनके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हृदयमें लेशमात्र भी क्रोध नहीं हुआ। पर गुरुका अपमान बहुत बड़ा पाप है; अतः महादेवजी उसे नहीं सह सके॥ १०६ (ख)॥

चौ०—मंदिर माझ भई नभबानी। रे हतभाग्य अग्य अभिमानी॥
जद्यपि तव गुर कें नहिं क्रोधा। अति कृपाल चित सम्यक बोधा॥

मन्दिरमें आकाशवाणी हुई कि अरे हतभाग्य! मूर्ख! अभिमानी! यद्यपि तेरे गुरुको क्रोध नहीं है, वे अत्यन्त कृपालु चित्तके हैं और उन्हें [पूर्ण तथा] यथार्थ ज्ञान है,॥ १॥

तदपि साप सठ दैहउँ तोही। नीति बिरोध सोहाइ न मोही॥
जौं नहिं दंड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुतिमारग मोरा॥

तो भी हे मूर्ख! तुझको मैं शाप दूँगा। [क्योंकि] नीतिका विरोध मुझे अच्छा नहीं लगता। अरे दुष्ट! यदि मैं तुझे दण्ड न दूँ, तो मेरा वेदमार्ग ही भ्रष्ट हो जाय॥ २॥

जे सठ गुर सन इरिषा करहीं। रौरव नरक कोटि जुग परहीं॥
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा। अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा॥

जो मूर्ख गुरुसे ईर्ष्या करते हैं, वे करोड़ों युगोंतक रौरव नरकमें पड़े रहते हैं। फिर (वहाँसे निकलकर) वे तिर्यक् (पशु, पक्षी आदि) योनियोंमें शरीर धारण करते हैं और दस हजार जन्मोंतक दुःख पाते रहते हैं॥ ३॥

बैठ रहेसि अजगर इव पापी। सर्प होहि खल मल मति ब्यापी॥
महा बिटप कोटर महुँ जाई। रहु अधमाधम अधगति पाई॥

अरे पापी! तू गुरुके सामने अजगरकी भाँति बैठा रहा। रे दुष्ट! तेरी बुद्धि पापसे ढक गयी है, [अतः] तू सर्प हो जा। और अरे अधमसे भी अधम! इस अधोगति (सर्पकी नीची योनि) को पाकर किसी बड़े भारी पेड़के खोखलेमें जाकर रह॥ ४॥

दो०—हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिव साप।
कंपित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप॥१०७(क)॥

शिवजीका भयानक शाप सुनकर गुरुजीने हाहाकार किया। मुझे काँपता हुआ देखकर उनके हृदयमें बड़ा संताप उत्पन्न हुआ॥ १०७ (क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करि दंडवत सप्रेम द्विज सिव सन्मुख कर जोरि।
बिनय करत गदगद स्वर समुझि घोर गति मोरि ॥१०७(ख)॥

प्रेमसहित दण्डवत् करके वे ब्राह्मण श्रीशिवजीके सामने हाथ जोड़कर मेरी भयङ्कर गति (दण्ड) का विचार कर गद्‌गद वाणीसे विनती करने लगे—॥ १०७ (ख)॥

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं॥
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं। चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं॥ १॥

हे मोक्षस्वरूप, विभु, व्यापक, ब्रह्म और वेदस्वरूप, ईशान दिशाके ईश्वर तथा सबके स्वामी श्रीशिवजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निजस्वरूपमें स्थित (अर्थात् मायादिरहित), [मायिक] गुणोंसे रहित, भेदरहित, इच्छारहित, चेतन आकाशरूप एवं आकाशको ही वस्त्ररूपमें धारण करनेवाले दिगम्बर [अथवा आकाशको भी आच्छादित करनेवाले] आपको मैं भजता हूँ॥ १॥

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं॥
करालं महाकाल कालं कृपालं। गुणागार संसारपारं नतोऽहं॥ २॥

निराकार, ओङ्कारके मूल, तुरीय (तीनों गुणोंसे अतीत), वाणी, ज्ञान और इन्द्रियोंसे परे, कैलासपति, विकराल, महाकालके भी काल, कृपालु गुणोंके धाम, संसारसे परे आप परमेश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं। मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं॥
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा। लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा॥ ३॥

जो हिमाचलके समान गौरवर्ण तथा गम्भीर हैं, जिनके शरीरमें करोड़ों कामदेवोंकी ज्योति एवं शोभा है, जिनके सिरपर सुन्दर नदी गङ्गाजी विराजमान हैं, जिनके ललाटपर द्वितीयाका चन्द्रमा और गलेमें सर्प सुशोभित हैं॥ ३॥

चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं। प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं॥
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालं। प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि॥ ४॥

जिनके कानोंमें कुण्डल हिल रहे हैं, सुन्दर भ्रुकुटी और विशाल नेत्र हैं; जो प्रसन्नमुख, नीलकण्ठ और दयालु हैं; सिंहचर्मका वस्त्र धारण किये और मुण्डमाला पहने हैं; उन सबके प्यारे और सबके नाथ, [कल्याण करनेवाले] श्रीशंकरजीको मैं भजता हूँ॥४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं। अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं॥
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं॥ ५॥

प्रचण्ड (रुद्ररूप), श्रेष्ठ, तेजस्वी परमेश्वर, अखण्ड, अजन्मा, करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशवाले, तीनों प्रकारके शूलों (दुःखों) को निर्मूल करनेवाले, हाथमें त्रिशूल धारण किये, भाव (प्रेम) के द्वारा प्राप्त होनेवाले भवानीके पति श्रीशङ्करजीको मैं भजता हूँ॥ ५॥

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी। सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी॥
चिदानंद संदोह मोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥ ६॥

कलाओंसे परे, कल्याणस्वरूप, कल्पका अन्त (प्रलय) करनेवाले, सज्जनोंको सदा आनन्द देनेवाले, त्रिपुरके शत्रु, सच्चिदानन्दघन, मोहको हरनेवाले, मनको मथ डालनेवाले कामदेवके शत्रु, हे प्रभो! प्रसन्न हूजिये, प्रसन्न हूजिये॥ ६॥

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं। भजंतीह लोके परे वा नराणां॥
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं॥ ७॥

जबतक पार्वतीके पति आपके चरणकमलोंको मनुष्य नहीं भजते, तबतक उन्हें न तो इहलोक और परलोकमें सुख-शान्ति मिलती है और न उनके तापोंका नाश होता है। अतः हे समस्त जीवोंके अंदर (हृदयमें) निवास करनेवाले प्रभो! प्रसन्न हूजिये॥ ७॥

न जानामि योगं जपं नैव पूजां। नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं॥
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥ ८॥

मैं न तो योग जानता हूँ, न जप और न पूजा ही। हे शम्भो! मैं तो सदा-सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो! बुढ़ापा तथा जन्म [-मृत्यु] के दुःखसमूहोंसे जलते हुए मुझ दुखीकी दुःखसे रक्षा कीजिये। हे ईश्वर! हे शम्भो! मैं आपको नमस्कार करता हूँ॥ ८॥

श्लोक—रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥ ९॥

भगवान् रुद्रकी स्तुतिका यह अष्टक उन शङ्करजीकी तुष्टि (प्रसन्नता) के लिये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मणद्वारा कहा गया। जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उनपर भगवान् शम्भु प्रसन्न होते हैं ॥ ९ ॥

दो०—सुनि बिनती सर्बग्य सिव देखि बिप्र अनुरागु।
पुनि मंदिर नभबानी भइ द्विजबर बर मागु ॥ १०८(क)॥

सर्वज्ञ शिवजीने विनती सुनी और ब्राह्मणका प्रेम देखा। तब मन्दिरमें आकाशवाणी हुई कि हे द्विजश्रेष्ठ! वर माँगो ॥ १०८ (क)॥

जौं प्रसन्न प्रभु मो पर नाथ दीन पर नेहु।
निज पद भगति देइ प्रभु पुनि दूसर बर देहु ॥ १०८(ख)॥

[ब्राह्मणने कहा—] हे प्रभो! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं और हे नाथ! यदि इस दीनपर आपका स्नेह है, तो पहले अपने चरणोंकी भक्ति देकर फिर दूसरा वर दीजिये ॥ १०८ (ख)॥

तव माया बस जीव जड़ संतत फिरइ भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिअ प्रभु कृपासिंधु भगवान ॥ १०८(ग)॥

हे प्रभो! यह अज्ञानी जीव आपकी मायाके वश होकर निरन्तर भूला फिरता है। हे कृपाके समुद्र भगवान्! उसपर क्रोध न कीजिये ॥ १०८ (ग)॥

संकर दीनदयाल अब एहि पर होहु कृपाल।
साप अनुग्रह होइ जेहिं नाथ थोरेहीं काल ॥ १०८(घ)॥

हे दीनोंपर दया करनेवाले [कल्याणकारी] शंकर! अब इसपर कृपालु होइये (कृपा कीजिये), जिससे हे नाथ! थोड़े ही समयमें इसपर शापके बाद अनुग्रह (शापसे मुक्ति) हो जाय ॥ १०८ (घ)॥

चौ०—एहि कर होइ परम कल्याना। सोइ करहु अब कृपानिधाना ॥
बिप्र गिरा सुनि परहित सानी। एवमस्तु इति भइ नभबानी ॥

हे कृपानिधान! अब वही कीजिये जिससे इसका परम कल्याण हो। दूसरेके हितसे सनी हुई ब्राह्मणकी वाणी सुनकर फिर आकाशवाणी हुई—'एवमस्तु' (ऐसा ही हो) ॥ १ ॥

जदपि कीन्ह एहिं दारुन पापा। मैं पुनि दीन्हि कोप करि सापा ॥
तदपि तुम्हारि साधुता देखी। करिहउँ एहि पर कृपा बिसेषी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यद्यपि इसने भयानक पाप किया है और मैंने भी इसे क्रोध करके शाप दिया है, तो भी तुम्हारी साधुता देखकर मैं इसपर विशेष कृपा करूँगा ॥ २ ॥

छमासील जे पर उपकारी। ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी ॥
मोर श्राप द्विज ब्यर्थ न जाइहि। जन्म सहस अवस्य यह पाइहि ॥

हे द्विज! जो क्षमाशील एवं परोपकारी होते हैं, वे मुझे वैसे ही प्रिय हैं जैसे खरारि श्रीरामचन्द्रजी। हे द्विज! मेरा शाप व्यर्थ नहीं जायगा। यह हजार जन्म अवश्य पावेगा॥३॥

जनमत मरत दुसह दुख होई। एहि स्वल्पउ नहिं ब्यापिहि सोई ॥
कवनेउँ जन्म मिटिहि नहिं ग्याना। सुनहि सूद्र मम बचन प्रवाना ॥

परन्तु जन्मने और मरनेमें जो दुःसह दुःख होता है, इसको वह दुःख जरा भी न व्यापेगा और किसी भी जन्ममें इसका ज्ञान नहीं मिटेगा। हे शूद्र! मेरा प्रामाणिक (सत्य) वचन सुन ॥ ४ ॥

रघुपति पुरीं जन्म तव भयऊ। पुनि तैं मम सेवाँ मन दयऊ ॥
पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरें। राम भगति उपजिहि उर तोरें ॥

[प्रथम तो] तेरा जन्म श्रीरघुनाथजीकी पुरीमें हुआ। फिर तूने मेरी सेवामें मन लगाया। पुरीके प्रभाव और मेरी कृपासे तेरे हृदयमें रामभक्ति उत्पन्न होगी ॥ ५ ॥

सुनु मम बचन सत्य अब भाई। हरितोषन ब्रत द्विज सेवकाई ॥
अब जनि करहि बिप्र अपमाना। जानेसु संत अनंत समाना ॥

हे भाई! अब मेरा सत्य वचन सुन। द्विजोंकी सेवा ही भगवान्‌को प्रसन्न करनेवाला व्रत है। अब कभी ब्राह्मणका अपमान न करना। संतोंको अनन्त श्रीभगवान्‌हीके समान जानना ॥ ६ ॥

इंद्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरि चक्र कराला ॥
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई। बिप्र द्रोह पावक सो जरई ॥

इन्द्रके वज्र, मेरे विशाल त्रिशूल, कालके दण्ड और श्रीहरिके विकराल चक्रके मारे भी जो नहीं मरता, वह भी विप्रद्रोहरूपी अग्निसे भस्म हो जाता है ॥ ७ ॥

अस बिबेक राखेहु मन माहीं। तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
औरउ एक आसिषा मोरी। अप्रतिहत गति होइहि तोरी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा विवेक मनमें रखना। फिर तुम्हारे लिये जगत्में कुछ भी दुर्लभ न होगा। मेरा एक और भी आशीर्वाद है कि तुम्हारी सर्वत्र अबाध गति होगी (अर्थात् तुम जहाँ जाना चाहोगे, वहीं बिना रोक-टोकके जा सकोगे) ॥ ८ ॥

दो०—सुनि सिव बचन हरषि गुर एवमस्तु इति भाषि।
मोहि प्रबोधि गयउ गृह संभु चरन उर राखि ॥१०९ (क)॥

[आकाशवाणीके द्वारा] शिवजीके वचन सुनकर गुरुजी हर्षित होकर 'ऐसा ही हो' यह कहकर मुझे बहुत समझाकर और शिवजीके चरणोंको हृदयमें रखकर अपने घर गये ॥ १०९ (क) ॥

प्रेरित काल बिंधिगिरि जाइ भयउँ मैं ब्याल।
पुनि प्रयास बिनु सो तनु तजेउँ गएँ कछु काल ॥१०९(ख)॥

कालकी प्रेरणासे मैं विन्ध्याचलमें जाकर सर्प हुआ। फिर कुछ काल बीतनेपर बिना ही परिश्रम (कष्ट) के मैंने वह शरीर त्याग दिया ॥ १०९ (ख)॥

जोइ तनु धरउँ तजउँ पुनि अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट पहिरइ नर परिहरइ पुरान ॥१०९(ग)॥

हे हरिवाहन! मैं जो भी शरीर धारण करता, उसे बिना ही परिश्रम वैसे ही सुखपूर्वक त्याग देता था जैसे मनुष्य पुराना वस्त्र त्याग देता है और नया पहिन लेता है ॥१०९ (ग)॥

सिवँ राखी श्रुति नीति अरु मैं नहिं पावा क्लेस।
एहि बिधि धरेउँ बिबिधि तनु ग्यान न गयउ खगेस ॥१०९(घ)॥

शिवजीने वेदकी मर्यादाकी रक्षा की और मैंने क्लेश भी नहीं पाया। इस प्रकार हे पक्षिराज! मैंने बहुत-से शरीर धारण किये, पर मेरा ज्ञान नहीं गया॥ १०९ (घ)॥

चौ०—त्रिजग देव नर जोइ तनु धरऊँ। तहँ तहँ राम भजन अनुसरऊँ॥
एक सूल मोहि बिसर न काऊ। गुर कर कोमल सील सुभाऊ॥

तिर्यक् योनि (पशु-पक्षी), देवता या मनुष्यका, जो भी शरीर धारण करता, वहाँ-वहाँ (उस-उस शरीरमें) मैं श्रीरामजीका भजन जारी रखता। [इस प्रकार मैं सुखी हो गया] परन्तु एक शूल मुझे बना रहा। गुरुजीका कोमल, सुशील स्वभाव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुझे कभी नहीं भूलता (अर्थात् मैंने ऐसे कोमलस्वभाव दयालु गुरुका अपमान किया, यह दुःख मुझे सदा बना रहा) ॥ १ ॥

चरम देह द्विज कै मैं पाई। सुर दुर्लभ पुरान श्रुति गाई॥
खेलउँ तहूँ बालकन्ह मीला। करउँ सकल रघुनायक लीला॥

मैंने अन्तिम शरीर ब्राह्मणका पाया, जिसे पुराण और वेद देवताओंको भी दुर्लभ बताते हैं। मैं वहाँ (ब्राह्मण-शरीरमें) भी बालकोंमें मिलकर खेलता तो श्रीरघुनाथजीकी ही सब लीलाएँ किया करता ॥ २ ॥

प्रौढ़ भएँ मोहि पिता पढ़ावा। समझउँ सुनउँ गुनउँ नहिं भावा॥
मन ते सकल बासना भागी। केवल राम चरन लय लागी॥

सयाना होनेपर पिताजी मुझे पढ़ाने लगे। मैं समझता, सुनता और विचारता, पर मुझे पढ़ना अच्छा नहीं लगता था। मेरे मनसे सारी वासनाएँ भाग गयीं। केवल श्रीरामजीके चरणोंमें लव लग गयी ॥ ३ ॥

कहु खगेस अस कवन अभागी। खरी सेव सुरधेनुहि त्यागी॥
प्रेम मगन मोहि कछु न सोहाई। हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई॥

हे गरुड़जी ! कहिये, ऐसा कौन अभागा होगा जो कामधेनुको छोड़कर गदहीकी सेवा करेगा ? प्रेममें मग्न रहनेके कारण मुझे कुछ भी नहीं सुहाता। पिताजी पढ़ा-पढ़ाकर हार गये ॥ ४ ॥

भए कालबस जब पितु माता। मैं बन गयउँ भजन जनत्राता॥
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावउँ। आश्रम जाइ जाइ सिरु नावउँ॥

ज़ब पिता-माता कालवश हो गये (मर गये), तब मैं भक्तोंकी रक्षा करनेवाले श्रीरामजीका भजन करनेके लिये वनमें चला गया। वनमें जहाँ-जहाँ मुनीश्वरोंके आश्रम पाता, वहाँ-वहाँ जा-जाकर उन्हें सिर नवाता ॥ ५ ॥

बूझउँ तिन्हहि राम गुन गाहा। कहहिं सुनउँ हरषित खगनाहा॥
सुनत फिरउँ हरि गुन अनुबादा। अब्याहत गति संभु प्रसादा॥

हे गरुड़जी ! उनसे मैं श्रीरामजीके गुणोंकी कथाएँ पूछता। वे कहते और मैं हर्षित होकर सुनता। इस प्रकार मैं सदा-सर्वदा श्रीहरिके गुणानुवाद सुनता फिरता। शिवजीकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कृपासे मेरी सर्वत्र अबाधित गति थी (अर्थात् मैं जहाँ चाहता वहीं जा सकता था) ॥६॥

छूटी त्रिबिधि ईषना गाढ़ी। एक लालसा उर अति बाढ़ी ॥
राम चरन बारिज जब देखौं। तब निज जन्म सफल करि लेखौं ॥

मेरी तीनों प्रकारकी (पुत्रकी, धनकी और मानकी) गहरी प्रबल वासनाएँ छूट गयीं और हृदयमें एक यही लालसा अत्यन्त बढ़ गयी कि जब श्रीरामजीके चरण-कमलोंके दर्शन करूँ तब अपना जन्म सफल हुआ समझूँ ॥ ७ ॥

जेहि पूँछउँ सोइ मुनि अस कहई। ईस्वर सर्ब भूतमय अहई ॥
निर्गुन मत नहिं मोहि सोहाई। सगुन ब्रह्म रति उर अधिकाई ॥

जिनसे मैं पूछता, वे ही मुनि ऐसा कहते कि ईश्वर सर्वभूतमय हैं। यह निर्गुण मत मुझे नहीं सुहाता था। हृदयमें सगुण ब्रह्मपर प्रीति बढ़ रही थी ॥ ८ ॥

दो०—गुर के बचन सुरति करि राम चरन मनु लाग।
रघुपति जस गावत फिरउँ छन छन नव अनुराग ॥ ११० (क) ॥

गुरुजीके वचनोंका स्मरण करके मेरा मन श्रीरामजीके चरणोंमें लग गया। मैं क्षण-क्षण नया-नया प्रेम प्राप्त करता हुआ श्रीरघुनाथजीका यश गाता फिरता था ॥ ११० (क) ॥

मेरु सिखर बट छायाँ मुनि लोमस आसीन।
देखि चरन सिरु नायउँ बचन कहेउँ अति दीन ॥ ११० (ख) ॥

सुमेरुपर्वतके शिखरपर बड़की छायामें लोमश मुनि बैठे थे। उन्हें देखकर मैंने उनके चरणोंमें सिर नवाया और अत्यन्त दीन वचन कहे ॥ ११० (ख) ॥

सुनि मम बचन बिनीत मृदु मुनि कृपाल खगराज।
मोहि सादर पूँछत भए द्विज आयहु केहि काज ॥ ११० (ग) ॥

हे पक्षिराज! मेरे अत्यन्त नम्र और कोमल वचन सुनकर कृपालु मुनि मुझसे आदरके साथ पूछने लगे—हे ब्राह्मण! आप किस कार्यसे यहाँ आये हैं? ॥ ११० (ग) ॥

तब मैं कहा कृपानिधि तुम्ह सर्बग्य सुजान।
सगुन ब्रह्म अवराधन मोहि कहहु भगवान ॥ ११० (घ) ॥

तब मैंने कहा—हे कृपानिधि! आप सर्वज्ञ हैं और सुजान हैं। हे भगवन्! मुझे सगुण ब्रह्मकी आराधना [की प्रक्रिया] कहिये ॥ ११० (घ) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चौ०—तब मुनीस रघुपति गुन गाथा। कहे कछुक सादर खगनाथा॥
ब्रह्मग्यान रत मुनि बिग्यानी। मोहि परम अधिकारी जानी॥

तब हे पक्षिराज! मुनीश्वरने श्रीरघुनाथजीके गुणोंकी कुछ कथाएँ आदरसहित कहीं। फिर वे ब्रह्मज्ञानपरायण विज्ञानवान् मुनि मुझे परम अधिकारी जानकर—॥ १ ॥

लागे करन ब्रह्म उपदेसा। अज अद्वैत अगुन हृदयेसा॥
अकल अनीह अनाम अरूपा। अनुभव गम्य अखंड अनूपा॥

ब्रह्मका उपदेश करने लगे कि वह अजन्मा है, अद्वैत है, निर्गुण है और हृदयका स्वामी (अन्तर्यामी) है। उसे कोई बुद्धिके द्वारा माप नहीं सकता, वह इच्छारहित, नामरहित, रूपरहित, अनुभवसे जानने योग्य, अखण्ड और उपमारहित है, ॥ २ ॥

मन गोतीत अमल अबिनासी। निर्बिकार निरवधि सुख रासी॥
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा। बारि बीचि इव गावहिं बेदा॥

वह मन और इन्द्रियोंसे परे, निर्मल, विनाशरहित, निर्विकार, सीमारहित और सुखकी राशि है। वेद ऐसा गाते हैं कि वही तू है (तत्त्वमसि), जल और जलकी लहरकी भाँति उसमें और तुझमें कोई भेद नहीं है॥ ३ ॥

बिबिधि भाँति मोहि मुनि समुझावा। निर्गुन मत मम हृदयँ न आवा॥
पुनि मैं कहेउँ नाइ पद सीसा। सगुन उपासन कहहु मुनीसा॥

मुनिने मुझे अनेकों प्रकारसे समझाया, पर निर्गुण मत मेरे हृदयमें नहीं बैठा। मैंने फिर मुनिके चरणोंमें सिर नवाकर कहा—हे मुनीश्वर! मुझे सगुण ब्रह्मकी उपासना कहिये॥ ४ ॥

राम भगति जल मम मन मीना। किमि बिलगाइ मुनीस प्रबीना॥
सोइ उपदेस कहहु करि दाया। निज नयनन्हि देखौं रघुराया॥

मेरा मन रामभक्तिरूपी जलमें मछली हो रहा है (उसीमें रम रहा है)। हे चतुर मुनीश्वर! ऐसी दशामें वह उससे अलग कैसे हो सकता है? आप दया करके मुझे वही उपदेश (उपाय) कहिये जिससे मैं श्रीरघुनाथजीको अपनी आँखोंसे देख सकूँ॥ ५ ॥

भरि लोचन बिलोकि अवधेसा। तब सुनिहउँ निर्गुन उपदेसा॥
मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा। खंडि सगुन मत अगुन निरूपा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[पहले] नेत्र भरकर श्रीअयोध्यानाथको देखकर, तब निर्गुणका उपदेश सुनूँगा। मुनिने फिर अनुपम हरिकथा कहकर, सगुण मतका खण्डन करके निर्गुणका निरूपण किया ॥ ६ ॥

तब मैं निर्गुन मत कर दूरी। सगुन निरूपउँ करि हठ भूरी ॥
उत्तर प्रतिउत्तर मैं कीन्हा। मुनि तन भए क्रोध के चीन्हा ॥

तब मैं निर्गुण मतको हटाकर (काटकर) बहुत हठ करके सगुणका निरूपण करने लगा। मैंने उत्तर-प्रत्युत्तर किया, इससे मुनिके शरीरमें क्रोधके चिह्न उत्पन्न हो गये ॥ ७ ॥

सुनु प्रभु बहुत अवग्या किएँ। उपज क्रोध ग्यानिन्ह के हिएँ ॥
अति संघरषन जौं कर कोई। अनल प्रगट चंदन ते होई ॥

हे प्रभो ! सुनिये, बहुत अपमान करनेपर ज्ञानीके भी हृदयमें क्रोध उत्पन्न हो जाता है। यदि कोई चन्दनकी लकड़ीको बहुत अधिक रगड़े, तो उससे भी अग्नि प्रकट हो जायगी ॥ ८ ॥

दो०—बारंबार सकोप मुनि करइ निरूपन ग्यान।
मैं अपनें मन बैठ तब करउँ बिबिधि अनुमान ॥ १११ (क) ॥

मुनि बार-बार क्रोधसहित ज्ञानका निरूपण करने लगे। तब मैं बैठा-बैठा अपने मनमें अनेकों प्रकारके अनुमान करने लगा— ॥ १११ (क) ॥

क्रोध कि द्वैतबुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान ॥ १११ (ख) ॥

बिना द्वैतबुद्धिके क्रोध कैसा और बिना अज्ञानके क्या द्वैतबुद्धि हो सकती है ? मायाके वश रहनेवाला परिच्छिन्न जड जीव क्या ईश्वरके समान हो सकता है ? ॥ १११ (ख) ॥

चौ०—कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें। तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें ॥
परद्रोही की होहिं निसंका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका ॥

सबका हित चाहनेसे क्या कभी दुःख हो सकता है ? जिसके पास पारसमणि है, उसके पास क्या दरिद्रता रह सकती है ? दूसरेसे द्रोह करनेवाले क्या निर्भय हो सकते हैं ? और कामी क्या कलङ्करहित (बेदाग) रह सकते हैं ? ॥ १ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें। कर्म कि होहिं स्वरूपहि चीन्हें॥
काहू सुमति कि खल सँग जामी। सुभ गति पाव कि परत्रिय गामी॥

ब्राह्मणका बुरा करनेसे क्या वंश रह सकता है? स्वरूपकी पहिचान (आत्मज्ञान) होनेपर क्या [आसक्तिपूर्वक] कर्म हो सकते हैं? दुष्टोंके सङ्गसे क्या किसीके सुबुद्धि उत्पन्न हुई है? परस्त्रीगामी क्या उत्तम गति पा सकता है?॥ २॥

भव कि परहिं परमात्मा बिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ हरि निंदक॥
राजु कि रहइ नीति बिनु जानें। अघ कि रहहिं हरिचरित बखानें॥

परमात्माको जाननेवाले कहीं जन्म-मरण [के चक्कर] में पड़ सकते हैं? भगवान्‌की निन्दा करनेवाले कभी सुखी हो सकते हैं? नीति बिना जाने क्या राज्य रह सकता है? श्रीहरिके चरित्र वर्णन करनेपर क्या पाप रह सकते हैं?॥ ३॥

पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावइ कोई॥
लाभु कि किछु हरि भगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना॥

बिना पुण्यके क्या पवित्र यश [प्राप्त] हो सकता है? बिना पापके भी क्या कोई अपयश पा सकता है? जिसकी महिमा वेद, संत और पुराण गाते हैं उस हरिभक्तिके समान क्या कोई दूसरा लाभ भी है?॥ ४॥

हानि कि जग एहि सम किछु भाई। भजिअ न रामहि नर तनु पाई॥
अघ कि पिसुनता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना॥

हे भाई! जगत्‌में क्या इसके समान दूसरी भी कोई हानि है कि मनुष्यका शरीर पाकर भी श्रीरामजीका भजन न किया जाय? चुगलखोरीके समान क्या कोई दूसरा पाप है? और हे गरुड़जी! दयाके समान क्या कोई दूसरा धर्म है?॥ ५॥

एहि बिधि अमिति जुगुति मन गुनऊँ। मुनि उपदेस न सादर सुनऊँ॥
पुनि पुनि सगुन पच्छ मैं रोपा। तब मुनि बोलेउ बचन सकोपा॥

इस प्रकार मैं अनगिनत युक्तियाँ मनमें विचारता था और आदरके साथ मुनिका उपदेश नहीं सुनता था। जब मैंने बार-बार सगुणका पक्ष स्थापित किया, तब मुनि क्रोधयुक्त वचन बोले—॥ ६॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मूढ़ परम सिख देउँ न मानसि । उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि ॥
सत्य बचन बिस्वास न करही । बायस इव सबही ते डरही ॥

अरे मूढ़ ! मैं तुझे सर्वोत्तम शिक्षा देता हूँ, तो भी तू उसे नहीं मानता और बहुत-से उत्तर-प्रत्युत्तर (दलीलें) लाकर रखता है । मेरे सत्य वचनपर विश्वास नहीं करता ! कौएकी भाँति सभीसे डरता है ॥ ७ ॥

सठ स्वपच्छ तव हृदयँ बिसाला । सपदि होहि पच्छी चंडाला ॥
लीन्ह श्राप मैं सीस चढ़ाई । नहिं कछु भय न दीनता आई ॥

अरे मूर्ख ! तेरे हृदयमें अपने पक्षका बड़ा भारी हठ है । अतः तू शीघ्र चाण्डाल पक्षी (कौआ) हो जा । मैंने आनन्दके साथ मुनिके शापको सिरपर चढ़ा लिया । उससे मुझे न कुछ भय हुआ, न दीनता ही आयी ॥ ८ ॥

दो०—तुरत भयउँ मैं काग तब पुनि मुनि पद सिरु नाइ ।
सुमिरि राम रघुबंस मनि हरषित चलेउँ उड़ाइ ॥११२(क)॥

तब मैं तुरंत ही कौआ हो गया । फिर मुनिके चरणोंमें सिर नवाकर और रघुकुलशिरोमणि श्रीरामजीका स्मरण करके मैं हर्षित होकर उड़ चला ॥ ११२ (क) ॥

उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध ।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं बिरोध ॥११२(ख)॥

[शिवजी कहते हैं—] हे उमा ! जो श्रीरामजीके चरणोंके प्रेमी हैं और काम, अभिमान तथा क्रोधसे रहित हैं, वे जगत्को अपने प्रभुसे भरा हुआ देखते हैं, फिर वे किससे वैर करें ॥ ११२ (ख) ॥

चौ०—सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूषन । उर प्रेरक रघुबंस बिभूषन ॥
कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी । लीन्ही प्रेम परिच्छा मोरी ॥

[काकभुशुण्डिजीने कहा—] हे पक्षिराज गरुड़जी ! सुनिये, इसमें ऋषिका कुछ भी दोष नहीं था । रघुवंशके विभूषण श्रीरामजी ही सबके हृदयमें प्रेरणा करनेवाले हैं । कृपासागर प्रभुने मुनिकी बुद्धिको भोली करके (भुलावा देकर) मेरे प्रेमकी परीक्षा ली ॥ १ ॥

मन बच क्रम मोहि निज जन जाना । मुनि मति पुनि फेरी भगवाना ॥
रिषि मम महत सीलता देखी । राम चरन बिस्वास बिसेषी ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मन, वचन और कर्मसे जब प्रभुने मुझे अपना दास जान लिया, तब भगवान्‌ने मुनिकी बुद्धि फिर पलट दी। ऋषिने मेरा महान् पुरुषोंका-सा स्वभाव (धैर्य, अक्रोध, विनय आदि) और श्रीरामजीके चरणोंमें विशेष विश्वास देखा, ॥ २ ॥

अति बिसमय पुनि पुनि पछिताई। सादर मुनि मोहि लीन्ह बोलाई॥
मम परितोष बिबिधि बिधि कीन्हा। हरषित राममंत्र तब दीन्हा॥

तब मुनिने बहुत दुःखके साथ बार-बार पछताकर मुझे आदरपूर्वक बुला लिया। उन्होंने अनेकों प्रकारसे मेरा सन्तोष किया और तब हर्षित होकर मुझे राममन्त्र दिया ॥ ३ ॥

बालकरूप राम कर ध्याना। कहेउ मोहि मुनि कृपानिधाना॥
सुंदर सुखद मोहि अति भावा। सो प्रथमहिं मैं तुम्हहि सुनावा॥

कृपानिधान मुनिने मुझे बालकरूप श्रीरामजीका ध्यान (ध्यानकी विधि) बतलाया। सुन्दर और सुख देनेवाला यह ध्यान मुझे बहुत ही अच्छा लगा। वह ध्यान मैं आपको पहले ही सुना चुका हूँ ॥ ४ ॥

मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा। रामचरितमानस तब भाषा॥
सादर मोहि यह कथा सुनाई। पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई॥

मुनिने कुछ समयतक मुझको वहाँ (अपने पास) रक्खा। तब उन्होंने रामचरितमानस वर्णन किया। आदरपूर्वक मुझे यह कथा सुनाकर फिर मुनि मुझसे सुन्दर वाणी बोले—॥ ५ ॥

रामचरित सर गुप्त सुहावा। संभु प्रसाद तात मैं पावा॥
तोहि निज भगत राम कर जानी। ताते मैं सब कहेउँ बखानी॥

हे तात! यह सुन्दर और गुप्त रामचरितमानस मैंने शिवजीकी कृपासे पाया था। तुम्हें श्रीरामजीका 'निज भक्त' जाना, इसीसे मैंने तुमसे सब चरित्र विस्तारके साथ कहा ॥ ६॥

राम भगति जिन्ह कें उर नाहीं। कबहुँ न तात कहिअ तिन्ह पाहीं॥
मुनि मोहि बिबिधि भाँति समुझावा। मैं सप्रेम मुनि पद सिरु नावा॥

हे तात! जिनके हृदयमें श्रीरामजीकी भक्ति नहीं है, उनके सामने इसे कभी भी नहीं कहना चाहिये। मुनिने मुझे बहुत प्रकारसे समझाया। तब मैंने प्रेमके साथ मुनिके चरणोंमें सिर नवाया ॥ ७ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निज कर कमल परसि मम सीसा । हरषित आसिष दीन्ह मुनीसा ॥
राम भगति अबिरल उर तोरें । बसिहि सदा प्रसाद अब मोरें ॥

मुनीश्वरने अपने कर-कमलोंसे मेरा सिर स्पर्श करके हर्षित होकर आशीर्वाद दिया कि अब मेरी कृपासे तेरे हृदयमें सदा प्रगाढ़ रामभक्ति बसेगी ॥ ८ ॥

दो०—सदा राम प्रिय होहु तुम्ह सुभ गुन भवन अमान ।
कामरूप इच्छामरन ग्यान बिराग निधान ॥११३(क)॥

तुम सदा श्रीरामजीको प्रिय होओ और कल्याणरूप गुणोंके धाम, मानरहित, इच्छानुसार रूप धारण करनेमें समर्थ, इच्छामृत्यु (जिसकी शरीर छोड़नेकी इच्छा करनेपर ही मृत्यु हो, बिना इच्छाके मृत्यु न हो), एवं ज्ञान और वैराग्यके भण्डार होओ ॥ ११३ (क)॥

जेहिं आश्रम तुम्ह बसब पुनि सुमिरत श्रीभगवंत ।
ब्यापिहि तहँ न अबिद्या जोजन एक प्रजंत ॥ ११३ (ख) ॥

इतना ही नहीं, श्रीभगवान्‌को स्मरण करते हुए तुम जिस आश्रममें निवास करोगे वहाँ एक योजन (चार कोस) तक अविद्या (माया-मोह) नहीं व्यापेगी ॥ ११३ (ख)॥

चौ०—काल कर्म गुन दोष सुभाऊ । कछु दुख तुम्हहि न ब्यापिहि काऊ ॥
राम रहस्य ललित बिधि नाना । गुप्त प्रगट इतिहास पुराना ॥

काल, कर्म, गुण, दोष और स्वभावसे उत्पन्न कुछ भी दुःख तुमको कभी नहीं व्यापेगा। अनेकों प्रकारके सुन्दर श्रीरामजीके रहस्य (गुप्त मर्मके चरित्र और गुण),जो इतिहास और पुराणोंमें गुप्त और प्रकट हैं (वर्णित और लक्षित हैं) ॥ १ ॥

बिनु श्रम तुम्ह जानब सब सोऊ । नित नव नेह राम पद होऊ ॥
जो इच्छा करिहहु मन माहीं । हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥

तुम उन सबको भी बिना ही परिश्रम जान जाओगे। श्रीरामजीके चरणोंमें तुम्हारा नित्य नया प्रेम हो। अपने मनमें तुम जो कुछ इच्छा करोगे, श्रीहरिकी कृपासे उसकी पूर्ति कुछ भी दुर्लभ नहीं होगी ॥ २ ॥

सुनि मुनि आसिष सुनु मतिधीरा । ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥
एवमस्तु तव बच मुनि ग्यानी । यह मम भगत कर्म मन बानी ॥

हे धीरबुद्धि गरुड़जी ! सुनिये, मुनिका आशीर्वाद सुनकर आकाशमें गम्भीर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मवाणी हुई कि हे ज्ञानी मुनि! तुम्हारा वचन ऐसा ही (सत्य) हो। यह कर्म, मन और वचनसे मेरा भक्त है!॥ ३॥

सुनि नभगिरा हरष मोहि भयऊ। प्रेम मगन सब संसय गयऊ॥
करि बिनती मुनि आयसु पाई। पद सरोज पुनि पुनि सिरु नाई॥

आकाशवाणी सुनकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ। मैं प्रेममें मग्न हो गया और मेरा सब सन्देह जाता रहा। तदनन्तर मुनिकी विनती करके, आज्ञा पाकर और उनके चरणकमलोंमें बार-बार सिर नवाकर—॥ ४॥

हरष सहित एहिं आश्रम आयउँ। प्रभु प्रसाद दुर्लभ बर पायउँ॥
इहाँ बसत मोहि सुनु खग ईसा। बीते कलप सात अरु बीसा॥

मैं हर्षसहित इस आश्रममें आया। प्रभु श्रीरामजीकी कृपासे मैंने दुर्लभ वर पा लिया। हे पक्षिराज! मुझे यहाँ निवास करते सत्ताईस कल्प बीत गये॥ ५॥

करउँ सदा रघुपति गुन गाना। सादर सुनहिं बिहंग सुजाना॥
जब जब अवधपुरीं रघुबीरा। धरहिं भगत हित मनुज सरीरा॥

मैं यहाँ सदा श्रीरघुनाथजीके गुणोंका गान किया करता हूँ और चतुर पक्षी उसे आदरपूर्वक सुनते हैं। अयोध्यापुरीमें जब-जब श्रीरघुवीर भक्तोंके [हितके] लिये मनुष्यशरीर धारण करते हैं,॥ ६॥

तब तब जाइ राम पुर रहऊँ। सिसुलीला बिलोकि सुख लहऊँ॥
पुनि उर राखि राम सिसुरूपा। निज आश्रम आवउँ खगभूपा॥

तब-तब मैं जाकर श्रीरामजीकी नगरीमें रहता हूँ और प्रभुकी शिशुलीला देखकर सुख प्राप्त करता हूँ। फिर हे पक्षिराज! श्रीरामजीके शिशुरूपको हृदयमें रखकर मैं अपने आश्रममें आ जाता हूँ॥ ७॥

कथा सकल मैं तुम्हहि सुनाई। काग देह जेहिं कारन पाई॥
कहिउँ तात सब प्रस्न तुम्हारी। राम भगति महिमा अति भारी॥

जिस कारणसे मैंने कौएकी देह पायी, वह सारी कथा आपको सुना दी। हे तात! मैंने आपके सब प्रश्नोंके उत्तर कहे। अहा! रामभक्तिकी बड़ी भारी महिमा है॥ ८॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—ताते यह तन मोहि प्रिय भयउ राम पद नेह ।
निज प्रभु दरसन पायउँ गए सकल संदेह ॥११४(क)॥

मुझे अपना यह काकशरीर इसीलिये प्रिय है कि इसमें मुझे श्रीरामजीके चरणोंका प्रेम प्राप्त हुआ । इसी शरीरसे मैंने अपने प्रभुके दर्शन पाये और मेरे सब सन्देह जाते रहे (दूर हुए)॥ ११४ (क)॥

मासपारायण, उन्तीसवाँ विश्राम

भगति पच्छ हठ करि रहेउँ दीन्हि महारिषि साप ।
मुनि दुर्लभ बर पायउँ देखहु भजन प्रताप ॥११४(ख)॥

मैं हठ करके भक्तिपक्षपर अड़ा रहा जिससे महर्षि लोमशने मुझे शाप दिया । परन्तु उसका फल यह हुआ कि जो मुनियोंको भी दुर्लभ है, वह वरदान मैंने पाया । भजनका प्रताप तो देखिये ! ॥ ११४ (ख)॥

चौ०—जे असि भगति जानि परिहरहीं । केवल ग्यान हेतु श्रम करहीं ॥
ते जड़ कामधेनु गृहँ त्यागी । खोजत आकु फिरहिं पय लागी ॥

जो भक्तिकी ऐसी महिमा जानकर भी उसे छोड़ देते हैं और केवल ज्ञानके लिये श्रम (साधन) करते हैं, वे मूर्ख घरपर खड़ी हुई कामधेनुको छोड़कर दूधके लिये मदारके पेड़को खोजते फिरते हैं ॥ १ ॥

सुनु खगेस हरि भगति बिहाई । जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी । पैरि पार चाहहिं जड़ करनी ॥

हे पक्षिराज ! सुनिये, जो लोग श्रीहरिकी भक्तिको छोड़कर दूसरे उपायोंसे सुख चाहते हैं, वे मूर्ख और जड करनीवाले (अभागे) बिना ही जहाजके तैरकर महासमुद्रके पार जाना चाहते हैं ॥ २ ॥

सुनि भसुंडि के बचन भवानी । बोलेउ गरुड़ हरषि मृदु बानी ॥
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं । संसय सोक मोह भ्रम नाहीं ॥

[शिवजी कहते हैं—] हे भवानी ! भुशुण्डिके वचन सुनकर गरुड़जी हर्षित होकर कोमल वाणीसे बोले—हे प्रभो ! आपके प्रसादसे मेरे हृदयमें अब सन्देह, शोक, मोह और भ्रम कुछ भी नहीं रह गया ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुनेउँ पुनीत राम गुन ग्रामा। तुम्हरी कृपाँ लहेउँ बिश्रामा॥
एक बात प्रभु पूँछउँ तोही। कहहु बुझाइ कृपानिधि मोही॥

मैंने आपकी कृपासे श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र गुणसमूहोंको सुना और शान्ति प्राप्त की। हे प्रभो! अब मैं आपसे एक बात और पूछता हूँ। हे कृपासागर! मुझे समझाकर कहिये।

कहहिं संत मुनि बेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना॥
सोइ मुनि तुम्ह सन कहेउ गोसाईं। नहिं आदरेहु भगति की नाईं॥

संत, मुनि, वेद और पुराण यह कहते हैं कि ज्ञानके समान दुर्लभ कुछ भी नहीं है। हे गोसाईं! वही ज्ञान मुनिने आपसे कहा; परन्तु आपने भक्तिके समान उसका आदर नहीं किया॥ ५॥

ग्यानहि भगतिहि अंतर केता। सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता॥
सुनि उरगारि बचन सुख माना। सादर बोलेउ काग सुजाना॥

हे कृपाके धाम! हे प्रभो! ज्ञान और भक्तिमें कितना अन्तर है? यह सब मुझसे कहिये। गरुड़जीके वचन सुनकर सुजान काकभुशुण्डिजीने सुख माना और आदरके साथ कहा—॥ ६॥

भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर। सावधान सोउ सुनु बिहंगबर॥

भक्ति और ज्ञानमें कुछ भी भेद नहीं है। दोनों ही संसारसे उत्पन्न क्लेशोंको हर लेते हैं। हे नाथ! मुनीश्वर इनमें कुछ अन्तर बतलाते हैं। हे पक्षिश्रेष्ठ! उसे सावधान होकर सुनिये॥ ७॥

ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भाँती। अबला अबल सहज जड़ जाती॥

हे हरिवाहन! सुनिये; ज्ञान, वैराग्य, योग, विज्ञान—ये सब पुरुष हैं। पुरुषका प्रताप सब प्रकारसे प्रबल होता है। अबला (माया) स्वाभाविक ही निर्बल और जाति (जन्म) से ही जड़ (मूर्ख) होती है॥ ८॥

दो०—पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मति धीर।
न तु कामी बिषयाबस बिमुख जो पद रघुबीर॥११५(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु जो वैराग्यवान् और धीरबुद्धि पुरुष हैं, वही स्त्रीको त्याग सकते हैं, न कि वे कामी पुरुष, जो विषयोंके वशमें हैं (उनके गुलाम हैं) और श्रीरघुवीरके चरणोंसे विमुख हैं ॥ ११५ (क)॥

सो०—सोउ मुनि ग्यानिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि ।
बिबस होइ हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट ॥ ११५(ख)॥

वे ज्ञानके भण्डार मुनि भी मृगनयनी (युवती स्त्री) के चन्द्रमुखको देखकर विवश (उसके अधीन) हो जाते हैं। हे गरुड़जी ! साक्षात् भगवान् विष्णुकी माया ही स्त्रीरूपसे प्रकट है ॥ ११५ (ख)॥

चौ०—इहाँ न पच्छपात कछु राखउँ । बेद पुरान संत मत भाषउँ ॥
मोह न नारि नारि कें रूपा । पन्नगारि यह रीति अनूपा ॥

यहाँ मैं कुछ पक्षपात नहीं रखता । वेद, पुराण और संतोंका मत (सिद्धान्त) ही कहता हूँ । हे गरुड़जी ! यह अनुपम (विलक्षण) रीति है कि एक स्त्रीके रूपपर दूसरी स्त्री मोहित नहीं होती ॥ १ ॥

माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ । नारि बर्ग जानइ सब कोऊ ॥
पुनि रघुबीरहि भगति पिआरी । माया खलु नर्तकी बिचारी ॥

आप सुनिये, माया और भक्ति—ये दोनों ही स्त्रीवर्गकी हैं, यह सब कोई जानते हैं। फिर श्रीरघुवीरको भक्ति प्यारी है। माया बेचारी तो निश्चय ही नाचनेवाली (नटिनीमात्र) है ॥ २ ॥

भगतिहि सानुकूल रघुराया । ताते तेहि डरपति अति माया ॥
राम भगति निरुपम निरुपाधी । बसइ जासु उर सदा अबाधी ॥

श्रीरघुनाथजी भक्तिके विशेष अनुकूल रहते हैं। इसीसे माया उससे अत्यन्त डरती रहती है । जिसके हृदयमें उपमारहित और उपाधिरहित (विशुद्ध) रामभक्ति सदा बिना किसी बाधा (रोक-टोक) के बसती है; ॥ ३ ॥

तेहि बिलोकि माया सकुचाई । करि न सकइ कछु निज प्रभुताई ॥
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी । जाचहिं भगति सकल सुख खानी ॥

उसे देखकर माया सकुचा जाती है। उसपर वह अपनी प्रभुता कुछ भी नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर (चला) सकती । ऐसा विचार कर ही जो विज्ञानी मुनि हैं, वे भी सब सुखोंकी खान भक्तिकी ही याचना करते हैं ॥ ४ ॥

दो०—यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ कोइ ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ सपनेहुँ मोह न होइ ॥ ११६(क) ॥

श्रीरघुनाथजीका यह रहस्य (गुप्त मर्म) जल्दी कोई भी नहीं ज़ान पाता । श्रीरघुनाथजीकी कृपासे जो इसे जान जाता है, उसे स्वप्नमें भी मोह नहीं होता॥ ११६(क)॥

औरउ ग्यान भगति कर भेद सुनहु सुप्रबीन ।
जो सुनि होइ राम पद प्रीति सदा अबिछीन ॥ ११६(ख) ॥

हे सुचतुर गरुड़जी ! ज्ञान और भक्तिका और भी भेद सुनिये, जिसके सुननेसे श्रीरामजीके चरणोंमें सदा अविच्छिन्न (एकतार) प्रेम हो जाता है ॥ ११६ (ख) ॥

चौ०—सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनइ न जाइ बखानी ॥
ईस्वर अंस जीव अबिनासी । चेतन अमल सहज सुख रासी ॥

हे तात ! यह अकथनीय कहानी (वार्ता) सुनिये । यह समझते ही बनती है, कही नहीं जा सकती । जीव ईश्वरका अंश है । [अतएव] वह अविनाशी, चेतन, निर्मल और स्वभावसे ही सुखकी राशि है ॥ १ ॥

सो मायाबस भयउ गोसाईं । बँध्यो कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि गई । जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥

हे गोसाईं ! वह मायाके वशीभूत होकर तोते और वानरकी भाँति अपने-आप ही बँध गया । इस प्रकार जड और चेतनमें ग्रन्थि (गाँठ) पड़ गयी । यद्यपि वह ग्रन्थि मिथ्या ही है, तथापि उसके छूटनेमें कठिनता है ॥ २ ॥

तब ते जीव भयउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥
श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥

तभीसे जीव संसारी (जन्मने-मरनेवाला) हो गया । अब न तो गाँठ छूटती है और न वह सुखी होता है । वेदों और पुराणोंने बहुत-से उपाय बतलाये हैं, पर वह (ग्रन्थि) छूटती नहीं वरं अधिकाधिक उलझती ही जाती है ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीव हृदयँ तम मोह बिसेषी। ग्रंथि छूट किमि परइ न देखी॥
अस संजोग ईस जब करई। तबहुँ कदाचित सो निरुअरई॥

जीवके हृदयमें अज्ञानरूपी अन्धकार विशेषरूपसे छा रहा है, इससे गाँठ देख ही नहीं पड़ती, छूटे तो कैसे? जब कभी ईश्वर ऐसा संयोग (जैसा आगे कहा जाता है) उपस्थित कर देते हैं तब भी कदाचित् ही वह (ग्रन्थि) छूट पाती है॥ ४॥

सात्त्विक श्रद्धा धेनु सुहाई। जौं हरि कृपाँ हृदयँ बस आई॥
जप तप ब्रत जम नियम अपारा। जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा॥

श्रीहरिकी कृपासे यदि सात्त्विकी श्रद्धारूपी सुन्दर गौ हृदयरूपी घरमें आकर बस जाय; असंख्यों जप, तप, व्रत, यम और नियमादि शुभ धर्म और आचार (आचरण), जो श्रुतियोंने कहे हैं, ॥ ५॥

तेइ तृन हरित चरै जब गाई। भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई॥
नोइ निबृत्ति पात्र बिस्वासा। निर्मल मन अहीर निज दासा॥

उन्हीं [धर्माचाररूपी] हरे तृणों (घास) को जब वह गौ चरे और आस्तिक भावरूपी छोटे बछड़ेको पाकर वह पेन्हावे। निवृत्ति (सांसारिक विषयोंसे और प्रपञ्चसे हटना) नोई (गौके दूहते समय पिछले पैर बाँधनेकी रस्सी) है, विश्वास [दूध दुहनेका] बरतन है, निर्मल (निष्पाप) मन जो स्वयं अपना दास है (अपने वशमें है), दुहनेवाला अहीर है॥ ६॥

परम धर्ममय पय दुहि भाई। अवटै अनल अकाम बनाई॥
तोष मरुत तब छमाँ जुड़ावै। धृति सम जावनु देइ जमावै॥

हे भाई! इस प्रकार (धर्माचारमें प्रवृत्त सात्त्विकी श्रद्धारूपी गौसे भाव, निवृत्ति और वशमें किये हुए निर्मल मनकी सहायतासे) परम धर्ममय दूध दुहकर उसे निष्काम भावरूपी अग्निपर भलीभाँति औंटावे। फिर क्षमा और सन्तोषरूपी हवासे उसे ठंढा करे और धैर्य तथा शम (मनका निग्रह) रूपी जामन देकर उसे जमावे॥ ७॥

मुदिताँ मथै बिचार मथानी। दम अधार रजु सत्य सुबानी॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता। बिमल बिराग सुभग सुपुनीता॥

तब मुदिता (प्रसन्नता) रूपी कमोरीमें तत्त्वविचाररूपी मथानीसे दम (इन्द्रियदमन)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

के आधारपर (दमरूपी खंभे आदिके सहारे) सत्य और सुन्दर वाणीरूपी रस्सी लगाकर उसे मथे और मथकर तब उसमेंसे निर्मल, सुन्दर और अत्यन्त पवित्र वैराग्यरूपी मक्खन निकाल ले ॥ ८ ॥

दो०—जोग अगिनि करि प्रगट तब कर्म सुभासुभ लाइ ।
बुद्धि सिरावै ग्यान घृत ममता मल जरि जाइ ॥ ११७(क)॥

तब योगरूपी अग्नि प्रकट करके उसमें समस्त शुभाशुभ कर्मरूपी ईंधन लगा दे (सब कर्मोंको योगरूपी अग्निमें भस्म कर दे) । जब [वैराग्यरूपी मक्खनका] ममतारूपी मल जल जाय, तब [बचे हुए] ज्ञानरूपी घीको [निश्चयात्मिका] बुद्धिसे ठंढा करे ॥ ११७ (क) ॥

तब बिग्यानरूपिनी बुद्धि बिसद घृत पाइ ।
चित्त दिआ भरि धरै दृढ़ समता दिअटि बनाइ ॥ ११७(ख)॥

तब विज्ञानरूपिणी बुद्धि उस [ज्ञानरूपी] निर्मल घीको पाकर उससे चित्तरूपी दियेको भरकर, समताकी दीवट बनाकर, उसपर उसे दृढ़तापूर्वक (जमाकर) रक्खे ॥ ११७ (ख) ॥

तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि ।
तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करै सुगाढ़ि ॥ ११७(ग)॥

[जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति] तीनों अवस्थाएँ और [सत्त्व, रज और तम] तीनों गुणरूपी कपाससे तुरीयावस्थारूपी रूईको निकालकर और फिर उसे सँवारकर उसकी सुन्दर कड़ी बत्ती बनावे ॥ ११७ (ग) ॥

सो०—एहि बिधि लेसै दीप तेज रासि बिग्यानमय ।
जातहिं जासु समीप जरहिं मदादिक सलभ सब ॥ ११७(घ)॥

इस प्रकार तेजकी राशि विज्ञानमय दीपकको जलावे, जिसके समीप जाते ही मद आदि सब पतंगे जल जायँ ॥ ११७ (घ) ॥

चौ०—सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा । दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा ॥
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा । तब भव मूल भेद भ्रम नासा ॥

'सोऽहमस्मि' (वह ब्रह्म मैं हूँ) यह जो अखण्ड (तैलधारावत् कभी न टूटनेवाली)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वृत्ति है, वही [उस ज्ञानदीपककी] परम प्रचण्ड दीपशिखा (लौ) है। [इस प्रकार] जब आत्मानुभवके सुखका सुन्दर प्रकाश फैलता है, तब संसारके मूल भेदरूपी भ्रमका नाश हो जाता है, ॥ १ ॥

प्रबल अबिद्या कर परिवारा। मोह आदि तम मिटइ अपारा॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उँजिआरा। उर गृहँ बैठि ग्रंथि निरुआरा॥

और महान् बलवती अविद्याके परिवार मोह आदिका अपार अन्धकार मिट जाता है। तब वही (विज्ञानरूपिणी) बुद्धि [आत्मानुभवरूप] प्रकाशको पाकर हृदयरूपी घरमें बैठकर उस जड़-चेतनकी गाँठको खोलती है॥ २ ॥

छोरन ग्रंथि पाव जौं सोई। तब यह जीव कृतारथ होई॥
छोरत ग्रंथि जानि खगराया। बिघ्न अनेक करइ तब माया॥

यदि वह (विज्ञानरूपिणी बुद्धि) उस गाँठको खोलने पावे, तब यह जीव कृतार्थ हो। परन्तु हे पक्षिराज गरुड़जी ! गाँठ खोलते हुए जानकर माया फिर अनेकों विघ्न करती है॥ ३ ॥

रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई। बुद्धिहि लोभ दिखावहिं आई॥
कल बल छल करि जाहिं समीपा। अंचल बात बुझावहिं दीपा॥

हे भाई ! वह बहुत-सी ऋद्धि-सिद्धियोंको भेजती है, जो आकर बुद्धिको लोभ दिखाती हैं। और वे ऋद्धि-सिद्धियाँ कल (कला), बल और छल करके समीप जाती और आँचलकी वायुसे उस ज्ञानरूपी दीपकको बुझा देती हैं॥ ४ ॥

होइ बुद्धि जौं परम सयानी। तिन्ह तन चितव न अनहित जानी॥
जौं तेहि बिघ्न बुद्धि नहिं बाधी। तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी॥

यदि बुद्धि बहुत ही सयानी हुई, तो वह उन (ऋद्धि-सिद्धियों) को अहितकर (हानिकर) समझकर उनकी ओर ताकती नहीं। इस प्रकार यदि मायाके विघ्नोंसे बुद्धिको बाधा न हुई, तो फिर देवता उपाधि (विघ्न) करते हैं॥ ५ ॥

इंद्री द्वार झरोखा नाना। तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना॥
आवत देखहिं बिषय बयारी। ते हठि देहिं कपाट उघारी॥

इन्द्रियोंके द्वार हृदयरूपी घरके अनेकों झरोखे हैं। वहाँ-वहाँ (प्रत्येक झरोखेपर)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देवता थाना किये (अड्डा जमाकर) बैठे हैं। ज्यों ही वे विषयरूपी हवाको आते देखते हैं, त्यों ही हठपूर्वक किवाड़ खोल देते हैं ॥ ६ ॥

जब सो प्रभंजन उर गृहँ जाई। तबहिं दीप बिग्यान बुझाई ॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा। बुद्धि बिकल भइ बिषय बतासा ॥

ज्यों ही वह तेज हवा हृदयरूपी घरमें जाती है, त्यों ही वह विज्ञानरूपी दीपक बुझ जाता है। गाँठ भी नहीं छूटी और वह (आत्मानुभवरूप) प्रकाश भी मिट गया। विषयरूपी हवासे बुद्धि व्याकुल हो गयी (सारा किया-कराया चौपट हो गया) ॥ ७ ॥

इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई। बिषय भोग पर प्रीति सदाई ॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी। तेहि बिधि दीप को बार बहोरी ॥

इन्द्रियों और उनके देवताओंको ज्ञान [स्वाभाविक ही] नहीं सुहाता; क्योंकि उनकी विषय-भोगोंमें सदा ही प्रीति रहती है। और बुद्धिको भी विषयरूपी हवाने बावली बना दिया। तब फिर (दुबारा) उस ज्ञानदीपकको उसी प्रकारसे कौन जलावे ? ॥ ८ ॥

दो०—तब फिरि जीव बिबिधि बिधि पावइ संसृति क्लेस।
हरि माया अति दुस्तर तरि न जाइ बिहगेस ॥ ११८ (क)॥

[इस प्रकार ज्ञानदीपकके बुझ जानेपर] तब फिर जीव अनेकों प्रकारसे संसृति (जन्म-मरणादि) के क्लेश पाता है। हे पक्षिराज ! हरिकी माया अत्यन्त दुस्तर है, वह सहजहीमें तरी नहीं जा सकती ॥ ११८ (क) ॥

कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक ॥ ११८ (ख)॥

ज्ञान कहने (समझाने) में कठिन, समझनेमें कठिन और साधनेमें भी कठिन है। यदि घुणाक्षरन्यायसे (संयोगवश) कदाचित् यह ज्ञान हो भी जाय, तो फिर [उसे बचाये रखनेमें] अनेकों विघ्न हैं ॥ ११८ (ख) ॥

चौ०—ग्यान पंथ कृपान कै धारा। परत खगेस होइ नहिं बारा ॥
जो निर्बिघ्न पंथ निर्बहई। सो कैवल्य परम पद लहई ॥

ज्ञानका मार्ग कृपाण (दुधारी तलवार) की धारके समान है। हे पक्षिराज !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस मार्गसे गिरते देर नहीं लगती। जो इस मार्गको निर्विघ्न निबाह ले जाता है, वही कैवल्य (मोक्ष) रूप परमपदको प्राप्त करता है ॥ १ ॥

अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद॥
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवइ बरिआईं॥

संत, पुराण, वेद और [तन्त्र आदि] शास्त्र [सब] यह कहते हैं कि कैवल्यरूप परमपद अत्यन्त दुर्लभ है; किन्तु हे गोसाईं! वही [अत्यन्त दुर्लभ] मुक्ति श्रीरामजीको भजनेसे बिना इच्छा किये भी जबरदस्ती आ जाती है ॥ २ ॥

जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई। कोटि भाँति कोउ करै उपाई॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई। रहि न सकइ हरि भगति बिहाई॥

जैसे स्थलके बिना जल नहीं रह सकता, चाहे कोई करोड़ों प्रकारके उपाय क्यों न करे। वैसे ही, हे पक्षिराज! सुनिये, मोक्षसुख भी श्रीहरिकी भक्तिको छोड़कर नहीं रह सकता॥ ३॥

अस बिचारि हरि भगत सयाने। मुक्ति निरादर भगति लुभाने॥
भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृति मूल अबिद्या नासा॥

ऐसा विचार कर बुद्धिमान् हरिभक्त भक्तिपर लुभाये रहकर मुक्तिका तिरस्कार कर देते हैं। भक्ति करनेसे संसृति (जन्म-मृत्युरूप संसार) की जड़ अविद्या बिना ही यत्न और परिश्रमके (अपने-आप) वैसे ही नष्ट हो जाती है, ॥ ४ ॥

भोजन करिअ तृपिति हित लागी। जिमि सो असन पचवै जठरागी॥
असि हरि भगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सोहाई॥

जैसे भोजन किया तो जाता है तृप्तिके लिये और उस भोजनको जठराग्नि अपने-आप (बिना हमारी चेष्टाके) पचा डालती है, ऐसी सुगम और परम सुख देनेवाली हरिभक्ति जिसे न सुहावे, ऐसा मूढ़ कौन होगा ? ॥ ५ ॥

दो०—सेवक सेब्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धांत बिचारि ॥११९(क)॥

हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी! मैं सेवक हूँ और भगवान् मेरे सेव्य (स्वामी) हैं, इस भावके बिना संसाररूपी समुद्रसे तरना नहीं हो सकता। ऐसा सिद्धान्त विचार कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका भजन कीजिये ॥ ११९ (क) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो चेतन कहँ जड़ करइ जड़हि करइ चैतन्य।
अस समर्थ रघुनायकहि भजहिं जीव ते धन्य ॥११९(ख)॥

जो चेतनको जड कर देता है और जडको चेतन कर देता है, ऐसे समर्थ श्रीरघुनाथजीको जो जीव भजते हैं, वे धन्य हैं ॥ ११९ (ख) ॥

चौ०—कहेउँ ग्यान सिद्धांत बुझाई। सुनहु भगति मनि कै प्रभुताई ॥
राम भगति चिंतामनि सुंदर। बसइ गरुड़ जाके उर अंतर ॥

मैंने ज्ञानका सिद्धान्त समझाकर कहा, अब भक्तिरूपी मणिकी प्रभुता (महिमा) सुनिये। श्रीरामजीकी भक्ति सुन्दर चिन्तामणि है। हे गरुड़जी! यह जिसके हृदयके अंदर बसती है, ॥ १ ॥

परम प्रकास रूप दिन राती। नहिं कछु चहिअ दिआ घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥

वह दिन-रात [अपने-आप ही] परम प्रकाशरूप रहता है। उसको दीपक, घी और बत्ती कुछ भी नहीं चाहिये। [इस प्रकार मणिका एक तो स्वाभाविक प्रकाश रहता है] फिर मोहरूपी दरिद्रता समीप नहीं आती [क्योंकि मणि स्वयं धनरूप है]; और [तीसरे] लोभरूपी हवा उस मणिमय दीपको बुझा नहीं सकती [क्योंकि मणि स्वयं प्रकाशरूप है, वह किसी दूसरेकी सहायतासे नहीं प्रकाश करती] ॥ २ ॥

प्रबल अबिद्या तम मिटि जाई। हारहिं सकल सलभ समुदाई ॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसइ भगति जाके उर माहीं ॥

[उसके प्रकाशसे] अविद्याका प्रबल अन्धकार मिट जाता है। मदादि पतंगोंका सारा समूह हार जाता है। जिसके हृदयमें भक्ति बसती है, काम, क्रोध और लोभ आदि दुष्ट तो उसके पास भी नहीं जाते ॥ ३ ॥

गरल सुधासम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई ॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी ॥

उसके लिये विष अमृतके समान और शत्रु मित्र हो जाता है। उस मणिके बिना कोई सुख नहीं पाता। बड़े-बड़े मानस-रोग, जिनके वश होकर सब जीव दुखी हो रहे हैं, उसको नहीं व्यापते ॥ ४ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राम भगति मनि उर बस जाकें। दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥

श्रीरामभक्तिरूपी मणि जिसके हृदयमें बसती है, उसे स्वप्नमें भी लेशमात्र दुःख नहीं होता। जगत्‌में वे ही मनुष्य चतुरोंके शिरोमणि हैं जो उस भक्तिरूपी मणिके लिये भलीभाँति यत्न करते हैं ॥ ५ ॥

सो मनि जदपि प्रगट जग अहई। राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई ॥
सुगम उपाय पाइबे केरे। नर हतभाग्य देहिं भटभेरे ॥

यद्यपि वह मणि जगत्‌में प्रकट (प्रत्यक्ष) है, पर बिना श्रीरामजीकी कृपाके उसे कोई पा नहीं सकता। उसके पानेके उपाय भी सुगम ही हैं, पर अभागे मनुष्य उन्हें ठुकरा देते हैं।

पावन पर्बत बेद पुराना। राम कथा रुचिराकर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी। ग्यान बिराग नयन उरगारी ॥

वेद-पुराण पवित्र पर्वत हैं। श्रीरामजीकी नाना प्रकारकी कथाएँ उन पर्वतोंमें सुन्दर खानें हैं। संत पुरुष [उनकी इन खानोंके रहस्यको जाननेवाले] मर्मी हैं और सुन्दर बुद्धि [खोदनेवाली] कुदाल है। हे गरुड़जी! ज्ञान और वैराग्य—ये दो उनके नेत्र हैं ॥ ७ ॥

भाव सहित खोजइ जो प्रानी। पाव भगति मनि सब सुख खानी ॥
मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा ॥

जो प्राणी उसे प्रेमके साथ खोजता है, वह सब सुखोंकी खान इस भक्तिरूपी मणिको पा जाता है। हे प्रभो! मेरे मनमें तो ऐसा विश्वास है कि श्रीरामजीके दास श्रीरामजीसे भी बढ़कर हैं ॥ ८ ॥

राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरि संत समीरा ॥
सब कर फल हरि भगति सुहाई। सो बिनु संत न काहूँ पाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी समुद्र हैं तो धीर संत पुरुष मेघ हैं। श्रीहरि चन्दनके वृक्ष हैं तो संत पवन हैं। सब साधनोंका फल सुन्दर हरिभक्ति ही है। उसे संतके बिना किसीने नहीं पाया।

अस बिचारि जोइ कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा ॥

ऐसा विचारकर जो भी संतोंका संग करता है, हे गरुड़जी! उसके लिये श्रीरामजीकी भक्ति सुलभ हो जाती है ॥ १० ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो०—ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं ॥१२०(क)॥

ब्रह्म (वेद) समुद्र है, ज्ञान मन्दराचल है और संत देवता हैं; जो उस समुद्रको मथकर कथारूपी अमृत निकालते हैं, जिसमें भक्तिरूपी मधुरता बसी रहती है ॥ १२० (क)॥

बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि ॥१२०(ख)॥

वैराग्यरूपी ढालसे अपनेको बचाते हुए और ज्ञानरूपी तलवारसे मद, लोभ और मोहरूपी वैरियोंको मारकर जो विजय प्राप्त करती है, वह हरिभक्ति ही है; हे पक्षिराज! इसे विचारकर देखिये ॥ १२० (ख) ॥

चौ०—पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ। जौं कृपाल मोहि ऊपर भाऊ ॥
नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रस्न मम कहहु बखानी ॥

पक्षिराज गरुड़जी फिर प्रेमसहित बोले—हे कृपालु! यदि मुझपर आपका प्रेम है, तो हे नाथ! मुझे अपना सेवक जानकर मेरे सात प्रश्नोंके उत्तर बखानकर कहिये ॥ १ ॥

प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा। सब ते दुर्लभ कवन सरीरा ॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संछेपहिं कहहु बिचारी ॥

हे नाथ! हे धीरबुद्धि! पहले तो यह बताइये कि सबसे दुर्लभ कौन-सा शरीर है? फिर सबसे बड़ा दुःख कौन है और सबसे बड़ा सुख कौन है, यह भी विचारकर संक्षेपमें ही कहिये।

संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु ॥
कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला। कहहु कवन अघ परम कराला ॥

संत और असंतका मर्म (भेद) आप जानते हैं, उनके सहज स्वभावका वर्णन कीजिये। फिर कहिये कि श्रुतियोंमें प्रसिद्ध सबसे महान् पुण्य कौन-सा है और सबसे महान् भयंकर पाप कौन है ॥ ३ ॥

मानस रोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई ॥
तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं संछेप कहउँ यह नीती ॥

फिर मानस-रोगोंको समझाकर कहिये। आप सर्वज्ञ हैं और मुझपर आपकी कृपा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भी बहुत है। [काकभुशुण्डिजीने कहा—] हे तात ! अत्यन्त आदर और प्रेमके साथ सुनिये। मैं यह नीति संक्षेपसे कहता हूँ ॥ ४ ॥

नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही ॥
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी ॥

मनुष्यशरीरके समान कोई शरीर नहीं है। चर-अचर सभी जीव उसकी याचना करते हैं। यह मनुष्यशरीर नरक, स्वर्ग और मोक्षकी सीढ़ी है तथा कल्याणकारी ज्ञान, वैराग्य और भक्तिको देनेवाला है ॥ ५ ॥

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषय रत मंद मंद तर ॥
काँच किरिच बदलें ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं ॥

ऐसे मनुष्य-शरीरको धारण (प्राप्त) करके भी जो लोग श्रीहरिका भजन नहीं करते और नीचसे भी नीच विषयोंमें अनुरक्त रहते हैं, वे पारसमणिको हाथसे फेंक देते हैं और बदलेमें काँचके टुकड़े ले लेते हैं ॥ ६ ॥

नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं ॥
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया ॥

जगत्‌में दरिद्रताके समान दुःख नहीं है तथा संतोंके मिलनके समान जगत्‌में सुख नहीं है। और हे पक्षिराज ! मन, वचन और शरीरसे परोपकार करना, यह संतोंका सहज स्वभाव है ॥ ७ ॥

संत सहहिं दुख पर हित लागी। पर दुख हेतु असंत अभागी ॥
भूर्ज तरू सम संत कृपाला। पर हित निति सह बिपति बिसाला ॥

संत दूसरोंकी भलाईके लिये दुःख सहते हैं और अभागे असंत दूसरोंको दुःख पहुँचानेके लिये। कृपालु संत भोजके वृक्षके समान दूसरोंके हितके लिये भारी विपत्ति सहते हैं (अपनी खालतक उधड़वा लेते हैं) ॥ ८ ॥

सन इव खल पर बंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई ॥
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥

किन्तु दुष्ट लोग सनकी भाँति दूसरोंको बाँधते हैं और [उन्हें बाँधनेके लिये] अपनी खाल खिंचवाकर विपत्ति सहकर मर जाते हैं। हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी ! सुनिये,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुष्ट बिना किसी स्वार्थके साँप और चूहेके समान अकारण ही दूसरोंका अपकार करते हैं।९।

पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं॥
दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू॥

वे परायी सम्पत्तिका नाश करके स्वयं नष्ट हो जाते हैं, जैसे खेतीका नाश करके ओले नष्ट हो जाते हैं। दुष्टका अभ्युदय (उन्नति) प्रसिद्ध अधम ग्रह केतुके उदयकी भाँति जगत्के दुःखके लिये ही होता है॥ १०॥

संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी॥
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा॥

और संतोंका अभ्युदय सदा ही सुखकर होता है, जैसे चन्द्रमा और सूर्यका उदय विश्वभरके लिये सुखदायक है। वेदोंमें अहिंसाको परम धर्म माना है और परनिन्दाके समान भारी पाप नहीं है॥ ११॥

हर गुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्र पाव तन सोई॥
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ बायस सरीर धरि॥

शंकरजी और गुरुकी निन्दा करनेवाला मनुष्य [अगले जन्ममें] मेढक होता है और वह हजार जन्मतक वही मेढकका शरीर पाता है। ब्राह्मणोंकी निन्दा करनेवाला व्यक्ति बहुत-से नरक भोगकर फिर जगतमें कौएका शरीर धारण करके जन्म लेता है॥ १२॥

सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी॥
होहिं उलूक संत निंदा रत। मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत॥

जो अभिमानी जीव देवताओं और वेदोंकी निन्दा करते हैं, वे रौरव नरकमें पड़ते हैं। संतोंकी निन्दामें लगे हुए लोग उल्लू होते हैं, जिन्हें मोहरूपी रात्रि प्रिय होती है और ज्ञानरूपी सूर्य जिनके लिये बीत गया (अस्त हो गया) रहता है॥ १३॥

सब कै निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं॥
सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा॥

जो मूर्ख मनुष्य सबकी निन्दा करते हैं, वे चमगीदड़ होकर जन्म लेते हैं। हे तात! अब मानस-रोग सुनिये, जिनसे सब लोग दुःख पाया करते हैं॥ १४॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला । तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥
काम बात कफ लोभ अपारा । क्रोध पित्त नित छाती जारा ॥

सब रोगोंकी जड़ मोह (अज्ञान) है । उन व्याधियोंसे फिर और बहुत-से शूल उत्पन्न होते हैं । काम वात है, लोभ अपार (बढ़ा हुआ) कफ है और क्रोध पित्त है जो सदा छाती जलाता रहता है ॥ १५ ॥

प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई । उपजइ सन्यपात दुखदाई ॥
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना । ते सब सूल नाम को जाना ॥

यदि कहीं ये तीनों भाई (वात, पित्त और कफ) प्रीति कर लें (मिल जायँ), तो दुःखदायक सन्निपात रोग उत्पन्न होता है । कठिनतासे प्राप्त (पूर्ण) होनेवाले जो विषयोंके मनोरथ हैं, वे ही सब शूल (कष्टदायक रोग) हैं; उनके नाम कौन जानता है (अर्थात् वे अपार हैं) ॥ १६ ॥

ममता दादु कंडु इरषाई । हरष बिषाद गरह बहुताई ॥
पर सुख देखि जरनि सोइ छई । कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई ॥

ममता दाद है, ईर्ष्या (डाह) खुजली है, हर्ष-विषाद गलेके रोगोंकी अधिकता है (गलगंड, कण्ठमाला या घेघा आदि रोग हैं), पराये सुखको देखकर जो जलन होती है, वही क्षयी है । दुष्टता और मनकी कुटिलता ही कोढ़ है ॥ १७ ॥

अहंकार अति दुखद डमरुआ । दंभ कपट मद मान नेहरुआ ॥
तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी । त्रिबिधि ईषना तरुन तिजारी ॥

अहंकार अत्यन्त दुःख देनेवाला डमरू (गाँठका) रोग है । दम्भ, कपट, मद और मान नहरुआ (नसोंका) रोग है । तृष्णा बड़ा भारी उदरवृद्धि (जलोदर) रोग है । तीन प्रकार (पुत्र, धन और मान) की प्रबल इच्छाएँ प्रबल तिजारी हैं ॥ १८ ॥

जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका । कहँ लगि कहौं कुरोग अनेका ॥

मत्सर और अविवेक दो प्रकारके ज्वर हैं । इस प्रकार अनेकों बुरे रोग हैं, जिन्हें कहाँतक कहूँ ॥ १९ ॥

दो०—एक ब्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु ब्याधि ।
पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि ॥१२१(क)॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक ही रोगके वश होकर मनुष्य मर जाते हैं, फिर ये तो बहुत-से असाध्य रोग हैं। ये जीवको निरन्तर कष्ट देते रहते हैं, ऐसी दशामें वह समाधि (शान्ति) को कैसे प्राप्त करे ? ॥ १२१ (क) ॥

नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान ॥१२१(ख)॥

नियम, धर्म, आचार (उत्तम आचरण), तप, ज्ञान, यज्ञ, जप, दान तथा और भी करोड़ों ओषधियाँ हैं, परन्तु हे गरुड़जी ! उनसे ये रोग नहीं जाते ॥ १२१ (ख)॥

चौ०—एहि बिधि सकल जीव जग रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी ॥
मानस रोग कछुक मैं गाए। हहिं सब कें लखि बिरलेन्ह पाए ॥

इस प्रकार जगत्‌में समस्त जीव रोगी हैं, जो शोक, हर्ष, भय, प्रीति और वियोगके दुःखसे और भी दुखी हो रहे हैं। मैंने ये थोड़े-से मानस-रोग कहे हैं। ये हैं तो सबको, परन्तु इन्हें जान पाये हैं कोई विरले ही ॥ १ ॥

जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी ॥
बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे ॥

प्राणियोंको जलानेवाले ये पापी (रोग) जान लिये जानेसे कुछ क्षीण अवश्य हो जाते हैं; परन्तु नाशको नहीं प्राप्त होते। विषयरूप कुपथ्य पाकर ये मुनियोंके हृदयोंमें भी अंकुरित हो उठते हैं, तब बेचारे साधारण मनुष्य तो क्या चीज हैं ॥ २ ॥

राम कृपाँ नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संयोगा ॥
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा ॥

यदि श्रीरामजीकी कृपासे इस प्रकारका संयोग बन जाय तो ये सब रोग नष्ट हो जायँ। सद्‌गुरुरूपी वैद्यके वचनमें विश्वास हो। विषयोंकी आशा न करे, यही संयम (परहेज) हो ॥ ३ ॥

रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी ॥
एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं ॥

श्रीरघुनाथजीकी भक्ति सञ्जीवनी जड़ी है। श्रद्धासे पूर्ण बुद्धि ही अनुपान (दवाके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

साथ लिया जानेवाला मधु आदि) है। इस प्रकारका संयोग हो तो वे रोग भले ही नष्ट हो जायँ, नहीं तो करोड़ों प्रयत्नोंसे भी नहीं जाते ॥ ४ ॥

जानिअ तब मन बिरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिकाई ॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई। बिषय आस दुर्बलता गई ॥

हे गोसाईं ! मनको नीरोग हुआ तब जानना चाहिये, जब हृदयमें वैराग्यका बल बढ़ जाय, उत्तम बुद्धिरूपी भूख नित-नयी बढ़ती रहे और विषयोंकी आशारूपी दुर्बलता मिट जाय ॥ ५ ॥

बिमल ग्यान जल जब सो नहाई। तब रह राम भगति उर छाई ॥
सिव अज सुक सनकादिक नारद। जे मुनि ब्रह्म बिचार बिसारद ॥

[इस प्रकार सब रोगोंसे छूटकर] जब मनुष्य निर्मल ज्ञानरूपी जलमें स्नान कर लेता है, तब उसके हृदयमें रामभक्ति छा रहती है। शिवजी, ब्रह्माजी, शुकदेवजी, सनकादि और नारद आदि ब्रह्मविचारमें परम निपुण जो मुनि हैं, ॥ ६ ॥

सब कर मत खगनायक एहा। करिअ राम पद पंकज नेहा ॥
श्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं। रघुपति भगति बिना सुख नाहीं ॥

हे पक्षिराज ! उन सबका मत यही है कि श्रीरामजीके चरणकमलोंमें प्रेम करना चाहिये। श्रुति, पुराण और सभी ग्रन्थ कहते हैं कि श्रीरघुनाथजीकी भक्तिके बिना सुख नहीं है ॥ ७ ॥

कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। बंध्या सुत बरु काहुहि मारा ॥
फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला ॥

कछुएकी पीठपर भले ही बाल उग आवें, बाँझका पुत्र भले ही किसीको मार डाले, आकाशमें भले ही अनेकों प्रकारके फूल खिल उठें; परन्तु श्रीहरिसे विमुख होकर जीव सुख नहीं प्राप्त कर सकता ॥ ८ ॥

तृषा जाइ बरु मृगजल पाना। बरु जामहिं सस सीस बिषाना ॥
अंधकारु बरु रबिहि नसावै। राम बिमुख न जीव सुख पावै ॥

मृगतृष्णाके जलको पीनेसे भले ही प्यास बुझ जाय, खरगोशके सिरपर भले ही सींग निकल आवें, अन्धकार भले ही सूर्यका नाश कर दे; परन्तु श्रीरामसे विमुख होकर जीव सुख नहीं पा सकता ॥ ९ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हिम ते अनल प्रगट बरु होई। बिमुख राम सुख पाव न कोई॥

बर्फसे भले ही अग्नि प्रकट हो जाय (ये सब अनहोनी बातें चाहे हो जायँ), परन्तु श्रीरामसे विमुख होकर कोई भी सुख नहीं पा सकता॥ १०॥

दो०—बारि मथें घृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल॥ १२२ (क)॥

जलको मथनेसे भले ही घी उत्पन्न हो जाय और बालू [को पेरने] से भले ही तेल निकल आवे; परन्तु श्रीहरिके भजन बिना संसाररूपी समुद्रसे नहीं तरा जा सकता, यह सिद्धान्त अटल है॥ १२२ (क)॥

मसकहि करइ बिरंचि प्रभु अजहि मसक ते हीन।
अस बिचारि तजि संसय रामहि भजहिं प्रबीन॥ १२२(ख)॥

प्रभु मच्छरको ब्रह्मा कर सकते हैं और ब्रह्माको मच्छरसे भी तुच्छ बना सकते हैं। ऐसा विचार कर चतुर पुरुष सब सन्देह त्यागकर श्रीरामजीको ही भजते हैं॥ १२२(ख)॥

श्लोक—विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते॥ १२२ (ग)॥

मैं आपसे भलीभाँति निश्चित किया हुआ सिद्धान्त कहता हूँ—मेरे वचन अन्यथा (मिथ्या) नहीं हैं—कि जो मनुष्य श्रीहरिका भजन करते हैं, वे अत्यन्त दुस्तर संसारसागरको [सहज ही] पार कर जाते हैं॥ १२२ (ग)॥

चौ०—कहेउँ नाथ हरि चरित अनूपा। ब्यास समास स्वमति अनुरूपा॥
श्रुति सिद्धांत इहइ उरगारी। राम भजिअ सब काज बिसारी॥

हे नाथ! मैंने श्रीहरिका अनुपम चरित्र अपनी बुद्धिके अनुसार कहीं विस्तारसे और कहीं संक्षेपसे कहा। हे सर्पोंके शत्रु गरुड़जी! श्रुतियोंका यही सिद्धान्त है कि सब काम भुलाकर (छोड़कर) श्रीरामजीका भजन करना चाहिये॥ १॥

प्रभु रघुपति तजि सेइअ काही। मोहि से सठ पर ममता जाही॥
तुम्ह बिग्यानरूप नहिं मोहा। नाथ कीन्हि मो पर अति छोहा॥

प्रभु श्रीरघुनाथजीको छोड़कर और किसका सेवन (भजन) किया जाय, जिनका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुझ-जैसे मूर्खपर भी ममत्व (स्नेह) है। हे नाथ ! आप विज्ञानरूप हैं, आपको मोह नहीं है। आपने तो मुझपर बड़ी कृपा की है ॥ २ ॥

पूँछिहु राम कथा अति पावनि। सुक सनकादि संभु मन भावनि ॥
सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा ॥

जो आपने मुझसे शुकदेवजी, सनकादि और शिवजीके मनको प्रिय लगनेवाली अति पवित्र रामकथा पूछी। संसारमें घड़ीभरका अथवा पलभरका एक बारका भी सत्सङ्ग दुर्लभ है ॥ ३ ॥

देखु गरुड़ निज हृदयँ बिचारी। मैं रघुबीर भजन अधिकारी ॥
सकुनाधम सब भाँति अपावन। प्रभु मोहि कीन्ह बिदित जग पावन ॥

हे गरुड़जी! अपने हृदयमें विचार कर देखिये, क्या मैं भी श्रीरामजीके भजनका अधिकारी हूँ ? पक्षियोंमें सबसे नीच और सब प्रकारसे अपवित्र हूँ। परन्तु ऐसा होनेपर भी प्रभुने मुझको सारे जगत्‌को पवित्र करनेवाला प्रसिद्ध कर दिया [अथवा प्रभुने मुझको जगत्प्रसिद्ध पावन कर दिया] ॥ ४ ॥

दो०—आजु धन्य मैं धन्य अति जद्यपि सब बिधि हीन।
निज जन जानि राम मोहि संत समागम दीन ॥ १२३(क)॥

यद्यपि मैं सब प्रकारसे हीन (नीच) हूँ, तो भी आज मैं धन्य हूँ, अत्यन्त धन्य हूँ, जो श्रीरामजीने मुझे अपना 'निज जन' जानकर संत-समागम दिया (आपसे मेरी भेंट करायी) ॥ १२३ (क) ॥

नाथ जथामति भाषेउँ राखेउँ नहिं कछु गोइ।
चरित सिंधु रघुनायक थाह कि पावइ कोइ ॥ १२३(ख)॥

हे नाथ! मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार कहा, कुछ भी छिपा नहीं रक्खा। [फिर भी] श्रीरघुवीरके चरित्र समुद्रके समान हैं; क्या उनकी कोई थाह पा सकता है ?॥ १२३ (ख)॥

चौ०—सुमिरि राम के गुन गन नाना। पुनि पुनि हरष भुसुंडि सुजाना ॥
महिमा निगम नेति करि गाई। अतुलित बल प्रताप प्रभुताई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके बहुत-से गुणसमूहोंका स्मरण कर-करके सुजान भुशुण्डिजी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बार-बार हर्षित हो रहे हैं। जिनकी महिमा वेदोंने 'नेति-नेति' कहकर गायी है; जिनका बल, प्रताप और प्रभुत्व (सामर्थ्य) अतुलनीय है; ॥ १ ॥

सिव अज पूज्य चरन रघुराई। मो पर कृपा परम मृदुलाई ॥
अस सुभाउ कहुँ सुनउँ न देखउँ। केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥

जिन श्रीरघुनाथजीके चरण शिवजी और ब्रह्माजीके द्वारा पूज्य हैं, उनकी मुझपर कृपा होनी उनकी परम कोमलता है। किसीका ऐसा स्वभाव कहीं न सुनता हूँ, न देखता हूँ। अतः हे पक्षिराज गरुड़जी! मैं श्रीरघुनाथजीके समान किसे गिनूँ (समझूँ)? ॥ २ ॥

साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी। कबि कोबिद कृतग्य संन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी। धर्म निरत पंडित बिग्यानी ॥

साधक, सिद्ध, जीवन्मुक्त, उदासीन (विरक्त), कवि, विद्वान्, कर्म [रहस्य] के ज्ञाता, संन्यासी, योगी, शूरवीर, बड़े तपस्वी, ज्ञानी, धर्मपरायण, पण्डित और विज्ञानी—

तरहिं न बिनु सेएँ मम स्वामी। राम नमामि नमामि नमामी ॥
सरन गएँ मो से अघ रासी। होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी ॥

ये कोई भी मेरे स्वामी श्रीरामजीका सेवन (भजन) किये बिना नहीं तर सकते। मैं उन्हीं श्रीरामजीको बार-बार नमस्कार करता हूँ। जिनकी शरण जानेपर मुझ जैसे पापराशि भी शुद्ध (पापरहित) हो जाते हैं, उन अविनाशी श्रीरामजीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥

दो०—जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल।
सो कृपाल मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल ॥ १२४ (क) ॥

जिनका नाम जन्म-मरणरूपी रोगकी [अव्यर्थ] औषध और तीनों भयङ्कर पीड़ाओं (आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक दुःखों) को हरनेवाला है, वे कृपालु श्रीरामजी मुझपर और आपपर सदा प्रसन्न रहें ॥ १२४ (क) ॥

सुनि भुसुंडि के बचन सुभ देखि राम पद नेह।
बोलेउ प्रेम सहित गिरा गरुड़ बिगत संदेह ॥ १२४ (ख) ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भुशुण्डिजीके मंगलमय वचन सुनकर और श्रीरामजीके चरणोंमें उनका अतिशय प्रेम देखकर सन्देहसे भलीभाँति छूटे हुए गरुड़जी प्रेमसहित वचन बोले—॥ १२४ (ख)॥

चौ०—मैं कृतकृत्य भयउँ तव बानी। सुनि रघुबीर भगति रस सानी॥
राम चरन नूतन रति भई। माया जनित बिपति सब गई॥

श्रीरघुवीरके भक्तिरसमें सनी हुई आपकी वाणी सुनकर मैं कृतकृत्य हो गया। श्रीरामजीके चरणोंमें मेरी नवीन प्रीति हो गयी और मायासे उत्पन्न सारी विपत्ति चली गयी॥ १॥

मोह जलधि बोहित तुम्ह भए। मो कहँ नाथ बिबिध सुख दए॥
मो पहिं होइ न प्रति उपकारा। बंदउँ तव पद बारहिं बारा॥

मोहरूपी समुद्रमें डूबते हुए मेरे लिये आप जहाज हुए। हे नाथ! आपने मुझे बहुत प्रकारके सुख दिये (परम सुखी कर दिया)। मुझसे इसका प्रत्युपकार (उपकारके बदलेमें उपकार) नहीं हो सकता। मैं तो आपके चरणोंकी बार-बार वन्दना ही करता हूँ॥ २॥

पूरन काम राम अनुरागी। तुम्ह सम तात न कोउ बड़भागी॥
संत बिटप सरिता गिरि धरनी। पर हित हेतु सबन्ह कै करनी॥

आप पूर्णकाम हैं और श्रीरामजीके प्रेमी हैं। हे तात! आपके समान कोई बड़भागी नहीं है। संत, वृक्ष, नदी, पर्वत और पृथ्वी—इन सबकी क्रिया पराये हितके लिये ही होती है॥ ३॥

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता॥

संतोंका हृदय मक्खनके समान होता है, ऐसा कवियोंने कहा है; परन्तु उन्होंने [असली बात] कहना नहीं जाना; क्योंकि मक्खन तो अपनेको ताप मिलनेसे पिघलता है और परम पवित्र संत दूसरोंके दुःखसे पिघल जाते हैं॥ ४॥

जीवन जन्म सुफल मम भयऊ। तव प्रसाद संसय सब गयऊ॥
जानेहु सदा मोहि निज किंकर। पुनि पुनि उमा कहइ बिहंगबर॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरा जीवन और जन्म सफल हो गया। आपकी कृपासे सब सन्देह चला गया। मुझे सदा अपना दास ही जानियेगा। [शिवजी कहते हैं—] हे उमा! पक्षिश्रेष्ठ गरुड़जी बार-बार ऐसा कह रहे हैं॥ ५॥

दो०—तासु चरन सिरु नाइ करि प्रेम सहित मतिधीर।
गयउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदयँ राखि रघुबीर॥१२५ (क)॥

उन (भुशुण्डिजी) के चरणोंमें प्रेमसहित सिर नवाकर और हृदयमें श्रीरघुवीरको धारण करके धीरबुद्धि गरुड़जी तब वैकुण्ठको चले गये॥ १२५ (क)॥

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान॥१२५ (ख)॥

हे गिरिजे! संत-समागमके समान दूसरा कोई लाभ नहीं है। पर वह (संत-समागम) श्रीहरिकी कृपाके बिना नहीं हो सकता, ऐसा वेद और पुराण गाते हैं॥ १२५ (ख)॥

चौ०—कहेउँ परम पुनीत इतिहासा। सुनत श्रवन छूटहिं भव पासा॥
प्रनत कल्पतरु करुना पुंजा। उपजइ प्रीति राम पद कंजा॥

मैंने यह परम पवित्र इतिहास कहा, जिसे कानोंसे सुनते ही भवपाश (संसारके बन्धन) छूट जाते हैं और शरणागतोंको [उनके इच्छानुसार फल देनेवाले] कल्पवृक्ष तथा दयाके समूह श्रीरामजीके चरणकमलोंमें प्रेम उत्पन्न होता है॥ १॥

मन क्रम बचन जनित अघ जाई। सुनहिं जे कथा श्रवन मन लाई॥
तीर्थाटन साधन समुदाई। जोग बिराग ग्यान निपुनाई॥

जो कान और मन लगाकर इस कथाको सुनते हैं, उनके मन, वचन और कर्म (शरीर) से उत्पन्न सब पाप नष्ट हो जाते हैं। तीर्थयात्रा आदि बहुत-से साधन, योग, वैराग्य और ज्ञानमें निपुणता—॥ २॥

नाना कर्म धर्म ब्रत दाना। संजम दम जप तप मख नाना॥
भूत दया द्विज गुर सेवकाई। बिद्या बिनय बिबेक बड़ाई॥

अनेकों प्रकारके कर्म, धर्म, व्रत और दान; अनेकों संयम, दम, जप, तप और यज्ञ, प्राणियोंपर दया, ब्राह्मण और गुरुकी सेवा; विद्या, विनय और विवेककी बड़ाई [आदि]—॥ ३॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जहँ लगि साधन बेद बखानी । सब कर फल हरि भगति भवानी ॥
सो रघुनाथ भगति श्रुति गाई । राम कृपाँ काहूँ एक पाई ॥

जहाँतक वेदोंने साधन बतलाये हैं, हे भवानी ! उन सबका फल श्रीहरिकी भक्ति ही है । किन्तु श्रुतियोंमें गायी हुई वह श्रीरघुनाथजीकी भक्ति श्रीरामजीकी कृपासे किसी एक (विरले) ने ही पायी है ॥ ४ ॥

दो०—मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहिं बिनहिं प्रयास ।
जे यह कथा निरंतर सुनहिं मानि बिस्वास ॥ १२६ ॥

किन्तु जो मनुष्य विश्वास मानकर यह कथा निरन्तर सुनते हैं, वे बिना ही परिश्रम उस मुनिदुर्लभ हरिभक्तिको प्राप्त कर लेते हैं ॥ १२६ ॥

चौ०—सोइ सर्बग्य गुनी सोइ ग्याता । सोइ महि मंडित पंडित दाता ॥
धर्म परायन सोइ कुल त्राता । राम चरन जा कर मन राता ॥

जिसका मन श्रीरामजीके चरणोंमें अनुरक्त है, वही सर्वज्ञ (सब कुछ जाननेवाला) है, वही गुणी है, वही ज्ञानी है । वही पृथ्वीका भूषण, पण्डित और दानी है । वही धर्मपरायण है और वही कुलका रक्षक है ॥ १ ॥

नीति निपुन सोइ परम सयाना । श्रुति सिद्धांत नीक तेहिं जाना ॥
सोइ कबि कोबिद सोइ रनधीरा । जो छल छाड़ि भजइ रघुबीरा ॥

जो छल छोड़कर श्रीरघुवीरका भजन करता है, वही नीतिमें निपुण है, वही परम बुद्धिमान् है । उसीने वेदोंके सिद्धान्तको भलीभाँति जाना है । वही कवि, वही विद्वान् तथा वही रणधीर है ॥ २ ॥

धन्य देस सो जहँ सुरसरी । धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी ॥
धन्य सो भूपु नीति जो करई । धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई ॥

वह देश धन्य है जहाँ श्रीगङ्गाजी हैं, वह स्त्री धन्य है जो पातिव्रत-धर्मका पालन करती है । वह राजा धन्य है जो न्याय करता है और वह ब्राह्मण धन्य है जो अपने धर्मसे नहीं डिगता ॥ ३ ॥

सो धन धन्य प्रथम गति जाकी । धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी ॥
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा । धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह धन धन्य है जिसकी पहली गति होती है (जो दान देनेमें व्यय होता है)। वही बुद्धि धन्य और परिपक्व है जो पुण्यमें लगी हुई है। वही घड़ी धन्य है जब सत्सङ्ग हो और वही जन्म धन्य है जिसमें ब्राह्मणकी अखण्ड भक्ति हो ॥ ४ ॥

[धनकी तीन गतियाँ होती हैं—दान, भोग और नाश। दान उत्तम है, भोग मध्यम है और नाश नीच गति है। जो पुरुष न देता है, न भोगता है, उसके धनकी तीसरी गति होती है।]

दो०—सो कुल धन्य उमा सुनु जगत पूज्य सुपुनीत।
श्रीरघुबीर परायन जेहिं नर उपज बिनीत ॥ १२७ ॥

हे उमा ! सुनो वह कुल धन्य है, संसारभरके लिये पूज्य है और परम पवित्र है, जिसमें श्रीरघुवीरपरायण (अनन्य रामभक्त) विनम्र पुरुष उत्पन्न हो ॥ १२७ ॥

चौ०—मति अनुरूप कथा मैं भाषी। जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ॥
तव मन प्रीति देखि अधिकाई। तब मैं रघुपति कथा सुनाई ॥

मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार यह कथा कही, यद्यपि पहले इसको छिपाकर रक्खा था। जब तुम्हारे मनमें प्रेमकी अधिकता देखी तब मैंने श्रीरघुनाथजीकी यह कथा तुमको सुनायी ॥ १ ॥

यह न कहिअ सठही हठसीलहि। जो मन लाइ न सुन हरि लीलहि ॥
कहिअ न लोभिहि क्रोधिहि कामिहि। जो न भजइ सचराचर स्वामिहि ॥

यह कथा उनसे न कहनी चाहिये। जो शठ (धूर्त) हों, हठी स्वभावके हों और श्रीहरिकी लीलाको मन लगाकर न सुनते हों। लोभी, क्रोधी और कामीको, जो चराचरके स्वामी श्रीरामजीको नहीं भजते, यह कथा नहीं कहनी चाहिये ॥ २ ॥

द्विज द्रोहिहि न सुनाइअ कबहूँ। सुरपति सरिस होइ नृप जबहूँ ॥
राम कथा के तेइ अधिकारी। जिन्ह कें सत संगति अति प्यारी ॥

ब्राह्मणोंके द्रोहीको, यदि वह देवराज (इन्द्र) के समान ऐश्वर्यवान् राजा भी हो, तब भी यह कथा कभी न सुनानी चाहिये। श्रीरामकी कथाके अधिकारी वे ही हैं जिनको सत्संगति अत्यन्त प्रिय है ॥ ३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुर पद प्रीति नीति रत जेई। द्विज सेवक अधिकारी तेई॥
ता कहँ यह बिसेष सुखदाई। जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुराई॥

जिनकी गुरुके चरणोंमें प्रीति है, जो नीतिपरायण हैं और ब्राह्मणोंके सेवक हैं, इसके अधिकारी हैं। और उसको तो यह कथा बहुत ही सुख देनेवाली है, जिसको रघुनाथजी प्राणके समान प्यारे हैं॥ ४॥

दो०—राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्बान।
भाव सहित सो यह कथा करउ श्रवन पुट पान॥१२८॥

जो श्रीरामजीके चरणोंमें प्रेम चाहता हो या मोक्षपद चाहता हो, वह इस कथा-अमृतको प्रेमपूर्वक अपने कानरूपी दोनेसे पिये॥ १२८॥

—राम कथा गिरिजा मैं बरनी। कलि मल समनि मनोमल हरनी॥
संसृति रोग सजीवन मूरी। राम कथा गावहिं श्रुति सूरी॥

हे गिरिजे! मैंने कलियुगके पापोंका नाश करनेवाली और मनके मलको दूर करनेवाली रामकथाका वर्णन किया। यह रामकथा संसृति (जन्म-मरण) रूपी रोगके [नाशके] लिये संजीवनी जड़ी है, वेद और विद्वान् पुरुष ऐसा कहते हैं॥ १॥

एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना। रघुपति भगति केर पंथाना॥
अति हरि कृपा जाहि पर होई। पाउँ देइ एहिं मारग सोई॥

इसमें सात सुन्दर सीढ़ियाँ हैं, जो श्रीरघुनाथजीकी भक्तिको प्राप्त करनेके मार्ग हैं। जिसपर श्रीहरिकी अत्यन्त कृपा होती है, वही इस मार्गपर पैर रखता है॥ २॥

मन कामना सिद्धि नर पावा। जे यह कथा कपट तजि गावा॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं। ते गोपद इव भवनिधि तरहीं॥

जो कपट छोड़कर यह कथा गाते हैं, वे मनुष्य अपनी मनःकामनाकी सिद्धि पा लेते हैं। जो इसे कहते-सुनते और अनुमोदन (प्रशंसा) करते हैं, वे संसाररूपी समुद्रको गौके खुरसे बने हुए गड्ढेकी भाँति पार कर जाते हैं॥ ३॥

सुनि सब कथा हृदय अति भाई। गिरिजा बोली गिरा सुहाई॥
नाथ कृपाँ मम गत संदेहा। राम चरन उपजेउ नव नेहा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

[याज्ञवल्क्यजी कहते हैं—] सब कथा सुनकर श्रीपार्वतीजीके हृदयको बहु ही प्रिय लगी और वे सुन्दर वाणी बोलीं—स्वामीकी कृपासे मेरा सन्देह जाता रहा अ श्रीरामजीके चरणोंमें नवीन प्रेम उत्पन्न हो गया ॥ ४ ॥

दो०—मैं कृतकृत्य भइउँ अब तव प्रसाद बिस्वेस ।
उपजी राम भगति दृढ़ बीते सकल कलेस ॥१२९॥

हे विश्वनाथ ! आपकी कृपासे अब मैं कृतार्थ हो गयी । मुझमें दृढ़ रामभ उत्पन्न हो गयी और मेरे सम्पूर्ण क्लेश बीत गये (नष्ट हो गये) ॥ १२९ ॥

चौ०—यह सुभ संभु उमा संबादा । सुख संपादन समन बिषादा ।
भव भंजन गंजन संदेहा । जन रंजन सज्जन प्रिय एहा ।

शम्भु-उमाका यह कल्याणकारी संवाद सुख उत्पन्न करनेवाला और शोकका न करनेवाला है । जन्म-मरणका अन्त करनेवाला, सन्देहोंका नाश करनेवाला, भक्तो आनन्द देनेवाला और संत पुरुषोंको प्रिय है ॥ १ ॥

राम उपासक जे जग माहीं । एहि सम प्रिय तिन्ह कें कछु नाहीं
रघुपति कृपाँ जथामति गावा । मैं यह पावन चरित सुहावा

जगत्में जो (जितने भी) रामोपासक हैं, उनको तो इस रामकथाके समान कु भी प्रिय नहीं है । श्रीरघुनाथजीकी कृपासे मैंने यह सुन्दर और पवित्र करनेव चरित्र अपनी बुद्धिके अनुसार गाया है ॥ २ ॥

एहिं कलिकाल न साधन दूजा । जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि । संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि

[तुलसीदासजी कहते हैं—] इस कलिकालमें योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत पूजन आदि कोई दूसरा साधन नहीं है । बस, श्रीरामजीका ही स्मरण करना, श्रीरामज ही गुण गाना और निरन्तर श्रीरामजीके ही गुणसमूहोंको सुनना चाहिये ॥ ३ ॥

जासु पतित पावन बड़ बाना । गावहिं कबि श्रुति संत पुरान
ताहि भजहि मन तजि कुटिलाई । राम भजें गति केहिं नहिं पाई

पतितोंको पवित्र करना जिनका महान् (प्रसिद्ध) बाना है—ऐसा कवि,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संत और पुराण गाते हैं—रे मन ! कुटिलता त्याग कर उन्हींको भज। श्रीरामको भजनेसे किसने परम गति नहीं पायी ? ॥ ४ ॥

छं०—पाई न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना ॥
आभीर जमन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते ॥ १ ॥

अरे मूर्ख मन ! सुन, पतितोंको भी पावन करनेवाले श्रीरामको भजकर किसने परमगति नहीं पायी ? गणिका, अजामिल, व्याध, गीध, गज आदि बहुत-से दुष्टोंको उन्होंने तार दिया। आभीर, यवन, किरात, खस, श्वपच (चाण्डाल) आदि जो अत्यन्त पापरूप ही हैं, वे भी केवल एक बार जिनका नाम लेकर पवित्र हो जाते हैं, उन श्रीरामजीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं ॥
सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै ॥ २ ॥

जो मनुष्य रघुवंशके भूषण श्रीरामजीका यह चरित्र कहते हैं, सुनते हैं और गाते हैं, वे कलियुगके पाप और मनके मलको धोकर बिना ही परिश्रम श्रीरामजीके परम धामको चले जाते हैं। [अधिक क्या] जो मनुष्य पाँच-सात चौपाइयोंको भी मनोहर जानकर [अथवा रामायणकी चौपाइयोंको श्रेष्ठ पंच (कर्तव्याकर्तव्यका सच्चा निर्णायक) जानकर उनको] हृदयमें धारण कर लेता है, उसके भी पाँच प्रकारकी अविद्याओंसे उत्पन्न विकारोंको श्रीरामजी हरण कर लेते हैं (अर्थात् सारे रामचरित्रकी तो बात ही क्या है, जो पाँच-सात चौपाइयोंको भी समझकर उनका अर्थ हृदयमें धारण कर लेते हैं, उनके भी अविद्याजनित सारे क्लेश श्रीरामचन्द्रजी हर लेते हैं।) ॥ २ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुंदर सुजान कृपा निधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को॥
जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥ ३॥

[परम] सुन्दर, सुजान और कृपानिधान तथा जो अनाथोंपर प्रेम करते हैं, ऐसे एक श्रीरामचन्द्रजी ही हैं। इनके समान निष्काम (निःस्वार्थ) हित करनेवाला (सुहृद्) और मोक्ष देनेवाला दूसरा कौन है ? जिनकी लेशमात्र कृपासे मन्दबुद्धि तुलसीदासने भी परम शान्ति प्राप्त कर ली, उन श्रीरामजीके समान प्रभु कहीं भी नहीं हैं॥ ३॥

दो०—मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर॥ १३० (क)॥

हे श्रीरघुवीर ! मेरे समान कोई दीन नहीं है और आपके समान कोई दीनोंका हित करनेवाला नहीं है। ऐसा विचार कर हे रघुवंशमणि ! मेरे जन्म-मरणके भयानक दुःखका हरण कर लीजिये॥ १३० (क)॥

कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम॥ १३० (ख)॥

जैसे कामीको स्त्री प्रिय लगती है और लोभीको जैसे धन प्यारा लगता है, वैसे ही हे रघुनाथजी ! हे रामजी ! आप निरन्तर मुझे प्रिय लगिये॥ १३० (ख)॥

श्लोक—यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम्।
मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम्॥ १॥

श्रेष्ठ कवि भगवान् श्रीशंकरजीने पहले जिस दुर्गम मानस-रामायणकी, श्रीरामजीके चरणकमलोंमें नित्य निरन्तर [अनन्य] भक्ति प्राप्त होनेके लिये, रचना की थी, उस मानस-रामायणको श्रीरघुनाथजीके नाममें निरत मानकर अपने अन्तःकरणके अन्धकारको मिटानेके लिये तुलसीदासने इस मानसके रूपमें भाषाबद्ध किया॥ १॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
मद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः ॥ २ ॥

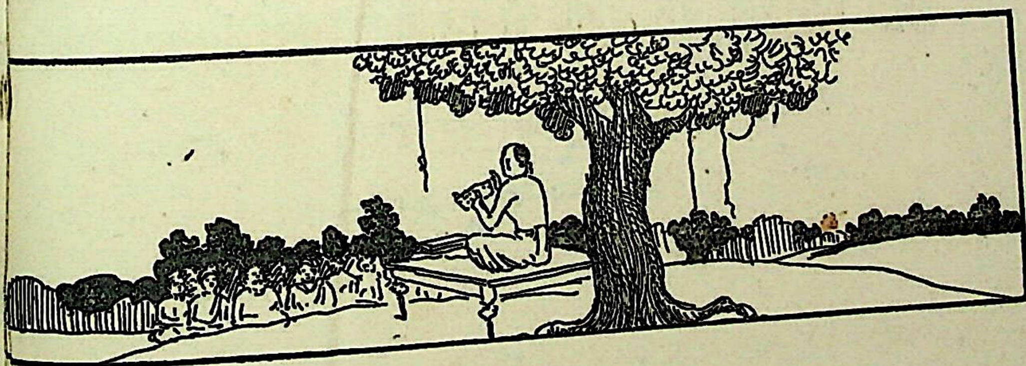
रामचरितमानस पुण्यरूप, पापोंका हरण करनेवाला, सदा कल्याणकारी, क्तिको देनेवाला, माया, मोह और मलका नाश करनेवाला, परम जलसे परिपूर्ण तथा मंगलमय है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस मानस- लगाते हैं, वे संसाररूपी सूर्यकी अति प्रचण्ड किरणोंसे नहीं जलते॥२॥

मासपारायण, तीसवाँ विश्राम।
नवाह्नपारायण, नवाँ विश्राम॥

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने सप्तमः सोपानः समाप्तः।

गके समस्त पापोंका नाश करनेवाले श्रीरामचरितमानसका यह सातवाँ त हुआ।

(उत्तरकाण्ड समाप्त)



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीरामायणजीकी आरती

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी॥
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिसारद।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी॥
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की॥
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड के ही की॥
कलि मल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीके कुछ ग्रन्थ

विनय-पत्रिका—सरल हिन्दी-टीकासहित, टीकाकार—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, पृष्ठ-संख्या ४७२, चित्र १ सुनहरी, मू० १), सजिल्द .... १।=)

गीतावली—हिन्दी-अनुवादसहित, अनुवादक—श्रीमुनिलालजी, पृष्ठ ४४४, चित्र १ रंगीन, मू० १), स० १।=)

कवितावली—हिन्दी-अनुवादसहित, अनुवादक—श्रीइन्द्रदेवनारायणजी, पृष्ठ २२४, एक सुन्दर तिरंगा चित्र, मूल्य .... ।।-)

दोहावली—भाषानुवादसहित, अनुवादक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार, श्रीराम-चतुष्टयका सुन्दर तिरंगा चित्र, पृष्ठ १९६, मूल्य .... ।।)

श्रीरामचरितमानस—मोटा टाइप, सानुवाद, रंगीन चित्र ८, पृष्ठ १२००, सजिल्द, मूल्य ७।।)

श्रीरामचरितमानस—बड़े अक्षरोंमें केवल मूल पाठ, रंगीन चित्र ८, पृष्ठ ५१६, सजिल्द, मूल्य ४)

श्रीरामचरितमानस—मूल, मोटा टाइप, पाठभेदवाली, सचित्र, पृष्ठ ७९६, सजिल्द, मूल्य ३।।)

श्रीरामचरितमानस—सटीक, मझला साइज, महीन टाइप, रंगीन चित्र ८, पृष्ठ १००८, सजि० मू० ३।।)

श्रीरामचरितमानस—मूल, मझली साइज पृष्ठ-संख्या ६०८, चित्र रंगीन १, मूल्य .... २)

श्रीरामचरितमानस—मूल, गुटका, पृष्ठ-संख्या ६८०, श्रीरामदरबारका रंगीन चित्र और ७ लाइन ब्लाक सजिल्द, मूल्य .... ।।।)

श्रीरामचरितमानस—बालकाण्ड—मूल, पृष्ठ १९२, सचित्र, मूल्य .... ।।=)

" " —सटीक पृष्ठ ३१२, सचित्र, मूल्य .... १=)

" अयोध्याकाण्ड—मूल, पृष्ठ १६०, सचित्र, मूल्य .... ।।)

" " —सटीक, पृष्ठ २६४, सचित्र, मूल्य .... ।।।-)

" अरण्यकाण्ड—मूल, पृष्ठ ४०, मूल्य .... ≡)

" " —सटीक, पृष्ठ ६४, मूल्य .... ।)

" किष्किन्धाकाण्ड—मूल, पृष्ठ २४, मूल्य .... =)

" " —सटीक, पृष्ठ ३६, मूल्य .... =)

" सुन्दरकाण्ड—मूल, पृष्ठ ३८, मूल्य .... ≡)

" " —सटीक, पृष्ठ ६०, मूल्य .... ।)

" लंकाकाण्ड—मूल, पृष्ठ ८२, मूल्य .... ।)

" " —सटीक, पृष्ठ १३२, मूल्य .... ।।)

" उत्तरकाण्ड—मूल, पृष्ठ ८८, मूल्य .... ।)

" " —सटीक, पृष्ठ १४४, मूल्य .... ।।)

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

अन्य पुस्तकोंका सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीहरिः

गीताप्रेस, गोरखपुरकी गीताएँ

श्रीमद्भगवद्गीता-तत्त्वविवेचनी—'कल्याण'के 'गीता-तत्त्वाङ्क'में प्रकाशित गीताकी हिंदी-टीकाका संशोधित संस्करण, टीकाकार—श्रीजयदयालजी गोयन्दका, पृष्ठ ६८४, रंगीन चित्र ४, मूल्य .... ४)

श्रीमद्भगवद्गीता—[श्रीशांकरभाष्यका सरल हिन्दी-अनुवाद] इसमें मूल भाष्य तथा भाष्यके सामने ही अर्थ लिखकर पढ़ने और समझनेमें सुगमता कर दी गयी है। पृष्ठ ५२०, चित्र ३, मूल्य सजिल्द .... २॥।)

श्रीमद्भगवद्गीता-रामानुजभाष्य—[हिंदी-अनुवादसहित] पृष्ठ ६०८, चित्र ३, सजिल्द मूल्य २॥)

श्रीमद्भगवद्गीता—मूल, पदच्छेद, अन्वय, साधारण भाषाटीका, टिप्पणी, प्रधान और सूक्ष्म विषय एवं त्यागसे भगवत्प्राप्तिसहित, मोटा टाइप, कपड़ेकी जिल्द, पृष्ठ ५७२, चित्र ४, मूल्य .... १।)

श्रीमद्भगवद्गीता—[मझली] प्रायः सभी विषय १।) वाली नं० ३ के समान, विशेषता यह है कि श्लोकोंके सिरेपर भावार्थ छपा हुआ है, साइज और टाइप कुछ छोटे, पृष्ठ ४६८, मूल्य ॥=), सजिल्द .... १)

श्रीमद्भगवद्गीता—श्लोक, साधारण भाषाटीका, टिप्पणी, प्रधान विषय, मोटा टाइप, पृष्ठ ३१६, मूल्य ॥), सजिल्द .... ॥।=)

श्रीमद्भगवद्गीता—मूल, मोटे अक्षरवाली, सचित्र, पृष्ठ २१६, मूल्य ।-), सजिल्द .... ॥-)

श्रीमद्भगवद्गीता—केवल भाषा, अक्षर मोटे हैं, पृष्ठ १९२, १ चित्र, मूल्य .... ।)

श्रीमद्भगवद्गीता—पञ्चरत्न, मूल, सचित्र, गुटका साइज, पृष्ठ १८०, मूल्य .... ≡)

श्रीमद्भगवद्गीता—साधारण भाषाटीका, पाकेट साइज, सचित्र, पृष्ठ ३५२, मूल्य =)॥ सजिल्द, ... ।)॥

श्रीमद्भगवद्गीता—विष्णुसहस्रनामसहित, पृष्ठ १२८, सचित्र, मूल्य .... -)॥

श्रीमद्भगवद्गीता—(अंग्रेजी-अनुवादसहित) पाकेट साइज, सचित्र, पृष्ठ ४०४, मूल्य ।), सजिल्द ।=)

डाकखर्च अलग।

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

अन्य पुस्तकोंका सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri